अपनी बात-

शिवराज विजय संस्कृत का सुप्रसिद्ध एवं गरिमा मय उपन्यास है। स्वर्गीय पण्डित अम्बिकादत्त व्यास जी ने इस में अपनी लेखनी का जो चमत्कार दिखाया है, उसका अनुभव तो सुधी पाठक वर्ग सम्पूर्ण ग्रन्थ का अवलोकन करने के पश्चात् ही कर सकेंगे। मैंने तो इसे और अधिक सरल सुबोध तथा ललित बनाने का प्रयास मात्र किया है। प्रस्तुत ग्रन्थ विभिन्न विश्व विद्यालयों के एम० ए० पाठय क्रम में निर्धारित है। इसलिये इसे अधिक बोध-गम्य बनाने का ही मैंने इसमें प्रयास किया है। शिवराज विजय से सम्बन्धित समस्त प्रष्टव्य प्रश्नों के उत्तर विभिन्न परिच्छेदों में आरम्भ में ही दे दिये गये हैं। इतनी विशद सामग्री एक जगह शायद ही आप को शिवराज विजय के अन्य संस्करणों में मिलेगी, जितनी इसमें दे दी गई है।

गद्य भाग को भी सरल हिन्दी पर्यायों से सुबोध बनाया गया है। मेरा विश्वास है कि इस पुस्तक की सहायता से छात्र वृन्द आसानी से इसे समझ सकेंगे। यदि विद्यार्थियों को मेरे इस कार्य से थोड़ा भी लाभ पहुँचा तो निश्चय ही मैं अपने श्रम को सार्थक समझूँगा। मुझे आशा है सुधी विद्यार्थी वर्ग मेरी—अन्य कृतियों के समान ही इसे भी अपना कर मुझे और अधिक मां-भारती की सेवा करने की प्रेरणा देगें।

अन्त में मैं अपने उन परमपूज्य गुरुजनों का तो ऋणी हूँ ही जिनके चरण-कमलों के पास बैठकर मैं इस योग्य बन सका।

किन्तु इस जीवन में उनके ऋण से उऋण हो पाना क्या मेरे लिए सम्भव है ? इतना ही क्यों ? मैं अपने बन्धुओं का भी आभारी हूँ जिन्होंने मुझे सदैव इस कार्य के लिये प्रेरित किया। क्या उन्हे मात्र धन्यवाद देकर अपने कर्तव्य कर्म की इति समझ बैठना, उन बन्धुओं के प्रति कृतघ्नता न होगी ? इससे तो अच्छा है सब को अपना मौन प्रणाम कहकर चुप ही रहूँ। बस।

विनीत—

पीलीभीत} श्रीधर प्रसाद पन्त 'सुधांशु'

१

शिवराज विजय

संस्कृत में गद्य साहित्य की उत्पत्ति एवं विकास

यद्यपि संस्कृत में गद्य का प्रयोग वैदिक काल से ही होता आया है तथापि इसका व्याहारिक रूप में प्रयोग टीकाओं, व्याकरण भाष्यों तथा ज्योतिष ग्रन्थों में हुआ है। सर्व प्रथम संस्कृत गद्य का प्रयोग—कृष्ण यजुर्वेद, ब्राह्मण ग्रन्थों एवं उपनिषदों में दृष्टिगोचर हुआ है। बाद में महाभारतकार ने भी अपने ग्रन्थ में यत्र-तत्र इसका प्रयोग किया है। अनन्तर महर्षि पतञ्जलि (१५० ई० पू०) ने अपना महा-भाष्य गद्य में लिखा। यास्क (७०० ई० पू०) ने भी निरुक्त की रचना गद्य में करके इसकी महनीयता को प्रमाणित किया है।

संस्कृत साहित्य में पद्य की अपेक्षा गद्य को कम स्थान मिला है। इसका कारण यह था कि प्राचीन काल में हमारे यहाँ ग्रन्थों को कण्ठस्थ करने की मान्य परम्परा थी। वही सर्वमान्य विद्वान माना जाता था और समाज में उसी को प्रतिष्ठा मिल पाती थी जिसे सर्वा-धिक ग्रन्थ कण्ठस्थ होते थे और जो गङ्गा के प्रवाह के समान अनेक ग्रन्थों—को मौखिक रूप से श्रवण कराने में सक्षम होता था। गद्य की अपेक्षा पद्य कण्ठस्थ करने में अधिक सौविध्यपूर्ण होता है अतः तत्कालीन प्रायः सभी चिन्तकों, मनीषियों किंवा विचारकों का ध्यान गद्य की अपेक्षा पद्य की ओर अधिक रहा। फलतः पद्य काव्य का प्रचुर परिमाण में निर्माण हुआ, गद्य की स्थिति गौण ही बनी रही।

किन्तु इसका यह तात्पर्य कदापि नहीं है कि गद्य का कोई महत्व है ही नहीं। गद्य अपने ढंग की महत्व पूर्ण विधा है। जब पद्य

के द्वारा अपना अभिप्राय स्पष्ट करने में विद्वान् जन असमर्थ हो जाते है, या यों कहिये कि जब पद्य अपना आशय स्पष्ट एवं विशद नहीं कर पाता, तब मनीषियों को गद्य की ही शरण लेनी पड़ती है। टीका और भाष्य इसके उदाहरण हैं। वस्तुतः किसी वस्तु की विवेचना करने के लिये गद्य की महती आवश्यकता होती है। बिना गद्य के वस्तु का साङ्गोपाङ्ग विवेचन कर पाना सम्भव नहीं होता। इसी आवश्यकता ने संस्कृत मे गद्य को जन्म दिया।

यद्यपि संस्कृत में गद्य की उत्पत्ति कब हुई? इसके बारे में निर्विवाद रूप से कुछ कह सकना सम्भव नहीं है, तथापि इतना तो निर्विवाद रूप से कहा ही जा सकता है कि जिस परिष्कृत संस्कृत गद्य का दर्शन दण्डी, सुबन्धु एवं बाण आदि की कृतियों मे होता है, वह निश्चय ही प्राचीन गद्य का परिष्कृत, प्रौढ एवं प्राञ्जल रूप है। दण्डी, सुबन्धु एवं बाण के गद्य को ही संस्कृत का आदि गद्य नहीं माना जा सकता। यह तो उसका अत्यधिक विकसित स्वरूप है।

इसके अतिरिक्त पतञ्जलि ने अपने महाभाष्य में तीन आख्यायिकाओं का उल्लेख किया है :—

(१) वासवदत्ता।
(२) सुमनोत्तरा।
(३) भैरवी।

किन्तु आज ये ग्रन्थ उपलब्ध नहीं होते, फिर भी इतना तो ज्ञात होता ही है कि इन उपर्युक्त ग्रन्थों में गद्य का प्रयोग किया गया होगा जिसे हम बाण आदि के गद्य का प्राचीन रूप मान सकते हैं। लोक कथाओं के माध्यम से भी गद्य काव्य की सृष्टि हुई है, अनन्तर शिलालेखों के द्वारा संस्कृत गद्य का प्रचार-प्रसार हुआ। उदाहरण के रूप मे रुद्रदामन का शिलालेख लिया जा सकता है। इसमें अलङ्कृत संस्कृत गद्य का प्रयोग किया गया

है। इसके साथ ही एक गुप्त कालीन शिला लेख मिला है जिसकी गद्य शैली की तुलना बाण की गद्य शैली से की जा सकती है।

इन उपर्युक्त प्रमाणों के आधार पर हम कह सकते हैं संस्कृत गद्य का जन्म दण्डी, सुबन्धु और बाण से कई शताब्दी पूर्व हो गया होगा, किन्तु दण्डी, सुबन्धु एवं बाण जैसे गद्यकारों ने अपने उत्कृष्ट गद्य-काव्यों के प्रभाव से अपने पूर्ववर्ती गद्यकारों को ऐसा ढक दिया कि आज उनमें से बहुतों का नाम भी उपलब्ध नहीं होता। वस्तुतः दण्डी, सुबन्धु और बाणभट्ट गद्य काव्य के विकास काल की चरमोन्नति के प्रतिनिधि गद्यकार हैं। इनसे पहले भी लम्बे समय तक साहित्य के इस अंग का अभ्यास होता रहा होगा—इसमें दो मत नहीं हो सकते। वररुचि कृत चारुमती, रोमिल-सोमिल कृत शूद्रककथा और श्रीपालि कृत तरङ्गवती आदि ग्रन्थ इस बात के प्रमाण हैं। यद्यपि आज उपर्युक्त ग्रन्थ उपलब्ध नहीं होते, तथापि ये गद्य काव्य की उत्तरोत्तर वृद्धि किंवा विकास के परिचायक तो हैं ही।

अतः निष्कर्ष रूप से कहा जा सकता है कि अभिव्यक्ति की स्पष्टता के लिये संस्कृत गद्य की सृष्टि हुई। तदनन्तर शनैः शनैः लोक साहित्य के रूप में, शिलालेखों के रूप में टीकाओं और भाष्यों के रूप में, कथा और आख्यायिका के रूप में, इसका विकास हुआ। बाद में दण्डी, सुबन्धु एवं बाण ने अपनी अद्भुत कल्पना शक्ति, अभिनव शब्द सौष्ठव, नूतन वाग्विलास के द्वारा इसको विकासकी चरम सीमा में, उन्नति के उत्तुङ्ग शिखर पर बिठा दिया।

इसका परवर्ती गद्य साहित्य पर सुन्दर प्रभाव नहीं पड़ा। क्योंकि परवर्ती गद्यकारों का बाण आदि गद्यकारों की कोटि का गद्य लिखपाने का साहस ही नहीं हुआ और यदि किसी लेखक ने साहस करके कुछ लिखा भी तो उसे विद्वत्समाज की ओर से प्रतिष्ठा नहीं मिल पाई, प्रोत्साहन नहीं मिल सका। परिणाम यह हुआ कि संस्कृत में उच्च कोटि के गद्यकार दण्डी, सुबन्धु एवं बाणभट्ट ही होकर रह गये।

यह सच है कि साहित्य में प्रोत्साहन न मिल पाने के कारण ही संस्कृत का गद्य साहित्य अपने सीमित परिवेश के अन्दर ही घिर कर रह गया। उसका स्वरूप उस सरोवर के समान हो गया जिसमे स्वच्छ एव निर्मल जल तो भरा हुआ है, पर जिससे जल के कोई उत्स प्रवाहित नही होते। इतना होने पर भी यह कहना अनुचित न होगा कि संस्कृत गद्य साहित्य के उपर्युक्त कवित्रयों ने अपनी रचनाओ मे कल्पना की प्राञ्जलता, भावो की सौष्ठवता, विचारो की उच्चता, आदर्शों की महनीयता, कलात्मकता की अपूर्वता जो प्रदर्शित की है, उससे उनके ग्रन्थ न केवल भारतीय गद्य साहित्य मे, अपितु विश्व के गद्य साहित्य में सिर मौर बन पड़े है। संख्या मे कम होने पर भी संस्कृत का गद्य साहित्य संसार की समृद्धतम भाषा के गद्य से टक्कर ले सकता है। बाण की कादम्बरी के टक्कर का गद्य आज भी संसार के किसी भी गद्य साहित्य में उपलब्ध नही होता।

२

संस्कृत साहित्य में शिवराज विजय का स्थान एवं महत्व

पण्डित अम्बिकादत्त व्यास कृत शिवराज विजय संस्कृत का एक कलात्मक उपन्यास है। इसका रूप शिल्प आधुनिक उपन्यासों जैसा है। इसे हम संस्कृत वाङ्मय का प्रथम ऐतिहासिक उपन्यास कह सकते हैं। क्योंकि उपन्यास उसे कहते है—जो जन जीवन के परस्पर सम्बन्ध चरित्रों एवं कार्यो का प्रतिनिधित्व करता है।

यद्यपि इसका वाक्य विन्यास, अलंकार प्रयोग तथा शब्दश्लेष बाण की कादम्बरी से प्रभावित है, तथापि इसका रूपशिल्प बंकिमबाबू के उपन्यासों के निकट है। व्यास जी ने अपने इस ग्रन्थ में प्राचीन एवं अर्वाचीन लेखन शैलियो का सुन्दर सम्मिश्रण कर एक अपूर्व शैली का सृजन किया है। इसका कथानक भी दण्डी के दशकुमार चरित सा बिखरा-बिखरा न होकर उलझी हुई पुष्पित लतिका के समान है। इसका रूप शिल्प पौराणिक कथाओं सा है। इसमें एक वक्ता कथाकार है और एक या एकाधिक श्रोता।

इसमें अपने में पूर्ण अनेक लघु आख्यायिकाये मिलकर एक बड़े आख्यान को जन्म देती है। लेखक उपयुक्त वातावरण का निर्माण करने मे अत्यन्त कुशल है। वह वातावरण बनाकर पाठकों को अपने चरित्रों के बीच में बिठा देता है, जहाँ वे तटस्थ दर्शक की तरह उनके क्रिया कलापों को देखते हैं। इसमें दो स्वतन्त्र कथा-धारायें समानान्तर बहतीहै। एक का नायक रामसिह (रघुवीर सिह) है तो दूसरी धारा के

नायक शिवाजी है। इसमें दो कथाधारायें विद्यमान होने पर भी वे एक दूसरे से निरपेक्ष न होकर सापेक्ष है।

यह सच है कि ऐतिहासिक उपन्यासकार सामाजिक उपन्यासकार की तरह स्वतन्त्र नही होता, क्योंकि उसे अतीत के अनुरूप ही चरित्रो एवं घटनाओं का संघटन करना पड़ता है। इसके विपरीत चलने पर उसकी कृति को समाज में प्रतिष्ठा नही मिल पाती। क्योंकि इतिहास के मुख्यपात्र पाठक के इतने निकट होते हैं, या यों कहिये पाठक उनके चरित्र के बारे में इतना अधिक जानते है कि उपन्यासकार को अपनी कल्पना के पंख फैलाने का बिल्कुल अवकाश ही नही मिल पाता। दूसरी बात यह है कि ऐतिहासिक कथावस्तु के बहुश्रुत होने के कारण उसके कौतूहल तत्व पर भी आघात पहुँचता है। इसके साथ ही ऐतिहासिक तथ्यो का अधिक ध्यान रखने पर रचना ऐतिहासिक उपन्यास न होकर औपन्यासिक इतिहास होकर रह जाती है। यदि लेखक ऐतिहासिक तथ्यो की अवहेलना अपने ग्रन्थ में करता है तो इससे लेखक का अज्ञान ही प्रकट होता है। इन सारी बातों से बचकर ही ऐतिहासिक उपन्यासकार को अपने ग्रन्थ की रचना करनी पड़ती है। यही कारण है कि ऐतिहासिक उपन्यासकार अपने उपन्यास को रोचक और कौतूहलपूर्ण बनाने के लिये अनेक प्रासंगिक कथाओ एवं काल्पनिक चरित्रों की भी सृष्टि कर लेते है। इतिहासकार जहाँ केवल वस्तु-स्थिति को देखता है, वहाँ साहित्यकार संभावनाओं पर चलता है। इतिहास और साहित्य मे समन्वय स्थापित कर उसमें तालमेल बैठाना मामूली साहित्यकार का काम नही है। इसे तो समर्थ साहित्यकार ही कर सकता है। शिवराज विजय में पण्डित अम्बिकादत्त व्यास जी ने इतिहास और साहित्य का बड़ी निपुणता से समन्वय स्थापित किया है।

शिवराज विजय में जहाँ तक पात्रों का प्रश्न है वे दो प्रकार

(१) ऐतिहासिक ।
(२) काल्पनिक ।

ऐतिहासिक पात्रों में छत्रपति शिवाजी, भूषण, माल्यश्रीक, अफजल खाँ, शाइस्त खाँ, कुमार मुअज्जम, जयसिंह और यशवन्तसिंह हैं । काल्पनिक पात्रों में—रघुवीर सिंह, सोवर्णी, पुरोहित देव शर्मा, ब्रह्मचारीगुरु, गौरसिंह, श्याम सिंह, क्रूर सिंह, बदरुद्दीन, चाँद खाँ आदि हैं।

इसमें ऐतिहासिक चरित्रों के आचार-व्यवहार का अंकन ऐतिहासिक ढंग से हुआ है । व्यास जी ने ऐतिहासिक मान्यताओं का पूर्णतः ध्यान रखते हुये भी कई ऐसे स्थल ढूँढ निकाले हैं, जहाँ उनकी विलक्षण साहित्यिक प्रतिभा को खुलकर खेलने का अवसर मिला है ।

कुछ लोगों का यह आरोप निराधार है कि व्यास जी ने औरंगजेब की पुत्री रौशनारा के स्थान पर बीजापुर की राजकुमारी का बन्दी बनाना लिखा है, जो इतिहास विरुद्ध है । किन्तु यहाँ पर यह बात ध्यान में रखनी चाहिये कि व्यास जी ने नायक की गरिमा बढ़ाने एवं कथा को विकसित करने के लिये ही शिवाजी पर शत्रुतनया की अनुरक्ति दिखाई है । व्यास जी न तो ऐतिहासिक तथ्यों से अनभिज्ञ थे और न ही उनका उद्देश्य ऐतिहासिक तथ्यों को गलत ढंग से प्रस्तुत करना था । उनका उद्देश्य तो केवल नायक शिवाजी की गरिमा बढ़ाना और कथानक का विस्तार करना था । क्योंकि कथानक में जो चमत्कृति शिवाजी पर शत्रुतनया की अनुरक्ति दिखाने से आई है, वैसी ऐतिहासिक घटना के पिष्टपेषण से शायद नहीं आपाती । उनकी यह कल्पना ऐतिहासिक सत्य भले ही न कहा जा सके, साहित्यकार का सत्य तो कहा ही जा सकता है ।

व्यास जी का शिवराज विजय संस्कृत गद्य साहित्य में अपना विशिष्ट स्थान रखता है । अपनी सरस, कोमल एवं मधुर रचना शैली

से उन्होंने दण्डी, सुवन्धु एवं वाण के बाद द्वितीय पंक्ति में अपना स्थान सुरक्षित कर लिया है। वस्तुतः व्यास जी को वाण के परवर्ती गद्यकारों में सर्वश्रेष्ठ गद्यकार कहा जा सकता है। जहाँ तक ऐतिहासिक उपन्यास की दृष्टि से शिवराज विजय के महत्व की बात है, वह अपने आप में एकाकी और समग्र है। इस दृष्टि से तो व्यास जी ने दण्डी, सुवन्धु और वाण को भी बहुत पीछे छोड़ दिया है। शिवराज विजय संस्कृत का प्रथम एवं एकमात्र ऐतिहासिक उपन्यास है। इस दृष्टि से शिवराज विजय का स्थान पूर्वोक्त गद्य साहित्य के कवित्रयों (दण्ड, सुवन्धु, वाण) से भी सर्वोच्च है।

शिवराज विजय की सबसे बड़ी उपादेयता यह है कि सन् १८५७ की प्रथम सशस्त्र क्रान्ति की विफलता के बाद भारतीय जन-मन से उसका आत्म विश्वास छिन गया था। भारतीय जन-जीवन आंग्ल शासकों के क्रूर अत्याचारों से अत्यन्त संत्रस्त हो गया था। किंकर्तव्य विमूढता की स्थिति हमारे सामने आ गई थी। ऐसे विषम समय में व्यास जी ने शिवाजी के कान्त आदर्श हमारे सम्मुख रखकर हमारे जीवन में नयी स्फूर्ति नया बल और नूतन-उत्साह को भरा, हमारे सोये हुये शौर्य और खोये हुये धैर्य को फिर से जागृत कर हम में अभिनव चेतना का संचार किया। उन्होंने हमारे बीच से ही एक साधारण जागीरदार के पुत्र को अपना नायक चुनकर हमें यह अच्छी तरह दिखा दिया कि इस धरती को स्वर्ग बनाने के लिये स्वयं हमें स्वर्ग नहीं जाना होता, प्रत्युत हम सच्ची लगन और एक निष्ट ध्येय से इस धरती को ही स्वर्ग बना सकते हैं।

दूसरी सबसे बड़ी बात शिवराज विजय के निर्माण से व्यास जी ने यह की कि—संस्कृत को मृत भाषा कहने वाले अंग्रेजी परस्त लोगों को संस्कृत में ऐतिहासिक उपन्यास लिखकर यह बता दिया कि संस्कृत मृत नहीं, जीवित भाषा है, संस्कृत को मृत भाषा कहने वाले स्वयं मृत हो गये।

इस प्रकार हम कह सकते हैं कि शिवराज विजय न केवल व्यास जी की उत्कृष्ट रचना है अपितु संस्कृत गद्य साहित्य की एक अमूल्य थाती है। उसकी गरिमा एवं महत्ता को शब्दों के दायरे मे निवद्ध करने का प्रयास वस्तुतः उपहासस्पद होगा।

३ संस्कृत गद्य काव्य का वैशिष्ट्य

प्रत्येक भाषा के गद्य का अपना स्वरूप, अपना वैशिष्ठ्य, और अपना सौन्दर्य हुआ करता है। उसके इस स्वरूप, इस वैशिष्ठ्य और सौन्दर्य को इतर भाषा का गद्य साहित्य चाहने पर भी प्राप्त नही कर सकता, इसी क्रम में जब हम संस्कृत के गद्य साहित्य पर दृष्टिपात करते है तो हमें स्पष्टतः उसका सर्वातिशायी वैशिष्टय दृष्टिगोचर होता है। संस्कृत के गद्य साहित्य में जो लालित्य है, जो माधुर्य है, प्रसंगानुकूल कोमल और कठोर पदावली है, उसकी जो सुधा स्रविणी प्रचुर भाव गुम्फित कोमल-कान्त पद शैय्या है, वह अन्य भाषाओं के गद्य साहित्य में दुर्लभ है। प्रभूत अर्थ राशि को संक्षेप में अभिव्यक्त करने की उसकी जो क्षमता है, वह अन्यत्र कहाँ ?

संस्कृत के गद्य साहित्य में उत्कृष्ट एवं अलंकृत भाषा का प्रचुर प्रयोग तो हुआ ही है, साथ ही दीर्घकाय समास, अनुप्रास, श्लेष, यमक, परिसंख्या, अतिशयोक्ति, दीपक, समासोक्ति आदि अलकारों एव सूक्ष्म पौराणिक संकेतों का अत्यन्त निपुणता के साथ प्रयोग हुआ है। प्रकृति चित्रण जितना सुन्दर संस्कृत के गद्य साहित्य में बन पड़ा है, उतना सुन्दर अन्यत्र दृष्टिगोचर नही होता। पण्डित अम्बिकादत्त व्यास की शैली में प्रकृति चित्रण का एक उदाहरण देखिये.—

"धीर-समीर स्पर्शेन मन्दमन्दमान्दोल्य मानासु व्रततिषु, समुदिते यामिनी-कामिनीचन्दनबिन्दौ इव इन्दौ, कौमुदी-कपटेन सुधाधारामिव

वर्षति गगने, अस्मन्नीति वार्ताशुश्रूषुषु इव मौनमाकलयत्सुपतग-कुलेषु, कैरव-विकाश-हर्ष-प्रकाश मुखरेषु चञ्चरीकेषु," इत्यादि ।

इसके अतिरिक्त नायक-नायिका के शारीरिक सौन्दर्य का भी सुन्दर और अलंकृत वर्णन संस्कृत के गद्य साहित्य में प्रचुरता के साथ हुआ है। यद्यपि इस प्रकार का वर्णन अतिरंजित अवश्य हो गया है, फिर भी कला की दृष्टि से महत्वपूर्ण तो है ही। नायक-नायिका के शारीरिक सौन्दर्य का एक-एक चित्र देखिये :—

"वटुरसौ आकृत्या सुन्दरः, वर्णेन गौरः जटाभिर्ब्रह्मचारी, वयसा षोडशवर्षदेशीयः, कम्बुकण्ठः, आयतललाटः, सुबाहुर्विशाललोचनश्चाऽऽसीत् ।"

(शिवराज विजय)

अब नायिका का सौन्दर्य वर्णन देखिये :—

"सेयं वर्णेन सुवर्णम्, कलरवेण पुंस्कोकिलान्, केशैः रोलम्ब-कदम्बान्, ललाटेन कलाधर-कलाम्, लोचनाभ्यां खञ्जनान्, अधरेण बन्धु-जीवम्, हासेन ज्योत्स्नां तिरस्कुर्वती, वयसा एकादशमिव वर्षं स्पृशन्ती, श्याम-कौशेय वस्त्र-परिधाना, श्वेतविन्दु-सन्दोह-संकुल रक्ताम्बर-कञ्चुकिका, कण्ठे एक यष्टिकां नक्षत्रमाला बिभ्रती, सिन्दूरचर्चारहित-धम्मिल्लेन परिशिष्टं पाणिपीडनमिति प्रकटयन्ती, हस्ते पाटलिकुसुम-स्तवकमेक-मादाय शनैः शनैर्भ्रामयन्ती, तमेवावलोकयन्ती च, अविदित-बहुल-तान-तारतम्यं मन्द-मन्दं मुग्ध-मुग्ध मधुर-मधुर किञ्चिद् गायति ।"

संस्कृत के गद्य साहित्य में यद्यपि प्रयोग तो प्रायः सभी रसों का हुआ है तथापि उसका मुख्य रस शृंगार ही है, यत्र-तत्र लोक कथाओं के सरस और प्रवाहयुक्त आख्यानों पर कल्पना और पाण्डित्य का गहरा रंग चढ़ाया गया है, इससे कहीं-कहीं कथा भाग गौण और अलंकृत वर्णन शैली मुख्य हो गई है। पद्य काव्यों के परोक्ष किन्तु प्रत्यक्ष व्यापक

प्रभाव के कारण संस्कृत में व्यावहारिक गद्य शैली का विकास बहुतकम दृष्टिगोचर होता है।

संस्कृत के गद्य साहित्य में प्रायः यह बात परिलक्षित होती है कि कविता के लिये छन्दोवद्धता अनिवार्य नहीं है। काव्य का छन्द तो केवल वाह्य परिच्छद मात्र है, उसका आवश्यक तत्व नहीं। अतः गद्य और पद्य दोनों में हीं समान रूप से काव्य रचना हो सकती है। भाषा सौष्ठव, कल्पना वैचित्र्य, पद लालित्य, वर्णन वैशिष्ठ्य, श्लेष चातुर्य, अलंकार वैभव एवं रसास्वाद के अनुपम सम्मिश्रण से ही संस्कृत गद्य काव्य सहृदय हृदयों को वास्तविक काव्यानन्द प्रदान किया करते हैं। उपर्युक्त गुणों से युक्त सरस पदावली चाहे गद्य की हो या पद्य की काव्य कही जा सकती हैं।

आज भी प्राचीन संस्कृत गद्यकारों की इस मान्यता के सम्वन्ध में दो मत नहीं हो सकते। इसी मान्यता से अनुप्रेरित होकर आज साहित्य के क्षेत्र में अभिनव क्रान्ति हो रही है। जो उचित ही है। क्योंकि साहित्यकार परम्पराओं और रूढ़ियों से चिपका रहकर उत्तम कोटि का साहित्य सर्जन नहीं कर सकता। उसे स्वानुभव के द्वारा उन्नत एवं परिष्कृत विधा को जन्म देना ही चाहियें। तभी वह सही अर्थो में साहित्य का निर्माण कर सकेगा, महाकवि विल्हण ने अपने विक्रमाङ्कदेव चरित नामक महाकाव्य में इसी बात का प्रतिपादन किया है :—

प्रौढ़िप्रकर्षेण पुराणरीति-
व्यतिक्रमः श्लाघ्यतमः कवीनाम्।
अत्युन्नति स्फोटित कञ्चुकानि,
वन्द्यानि कान्ता कुचमण्डलानि ॥

अतः स्पष्ट है कि संस्कृत गद्य साहित्य का अपना विशिष्ट

स्वरूप और अपना विशिष्ट व्यक्तित्व है। संक्षेप को विस्तार के साथ और विस्तृत को संक्षिप्त करके कहने की उसकी अपनी विशेषता है। उसकी यह कला उधार ली हुई न होकर उसकी अपनी है। गद्य में भी काव्य का सा आनन्द प्रदान करना, भगवती भागीरथी के निर्मल निर्झर के समान श्रोता या पाठक को अबाध रूप से आप्यायित करना संस्कृत गद्य का अपना गुण है। न केवल भारतीय साहित्य अपितु विश्व साहित्य भी संस्कृत गद्य के इस वैशिष्ट्य का सदैव ऋणी रहेगा।

४ पण्डित अम्बिकादत्त व्यास

फूल शूलों में खिलते हैं, गुलाब कांटों में पलते हैं, लाल गुदड़ियों में होते हैं, साहित्यकार विपत्तियों में बढ़ते हैं। यह बात झूठ नहीं, सच है। अम्बिकादत्त व्यास जैसे प्रौढ़ साहित्यकार विपत्तियों में बढ़े हैं, उत्पीड़नों से निखरे हैं। श्री व्यास जी मूलतः राजस्थान के निवासी थे। इनके पूर्वज राजस्थान के 'रावत जी की धूला' नामक ग्राम में रहा करते थे जो कालान्तर में सकुटुम्ब आकर काशी में बस गये। इनके पितामह का नाम राजाराम शास्त्री और इनके पिता का नाम दुर्गादत्त जी था। श्री दुर्गादत्त जी बहुमुखी प्रतिभा के धनी थे, वे संस्कृत तथा हिन्दी के लेखक भी थे। जयपुर के सिलावटों के मुहल्ले में इनकी ससुराल थी, वहीं चैत्र शुक्ल अष्टमी सं० १९१५ विक्रमी में दुर्गादत्त जी के द्वितीय पुत्र का जन्म हुआ। नवरात्र के अष्टमी के दिन जन्म लेने के कारण पुत्र का नाम अम्बिकादत्त रखा गया। अम्बिकादत्त जी बचपन से ही चतुरस्त्र प्रतिभा सम्पन्न थे। बारह वर्ष की अल्पायु में ही ये भारतेन्दु हरिश्चन्द्र जी द्वारा आयोजित कवि-गोष्ठियों में समस्या पूर्ति करने लगे थे। उन दिनों बाल विवाह की प्रथा थी। अतः तेरह वर्ष की अवस्था में व्यास जी का विवाह हो गया।

सीमित आय होने के कारण परिवार पर अर्थ कष्ट के काले बादल मंडराने लगे। पैतृक सम्पत्ति के रूप में केवल एक तिमंजिला मकान था। पिता दुर्गादत्त जी कथा-वार्ता एवं यजमानी आदि से जो

कुछ थोड़ा बहुत कमा लेते थे इसी से सात प्राणियो के कुटुम्ब का भरण-पोषण होता था। किन्तु अर्थभाव के कारण भी अम्बिकादत्त व्यास जी का अध्ययन येन केन प्रकार से चलता रहा। इन्होंने तत्कालीन दिग्गज विद्वानों से संस्कृत, न्याय, सांख्य, वैद्यक एवं बंगला की शिक्षा प्राप्त की। वे संगीत के भी जानकार थे। इन्होंने अठारह कोस पैदल चल कर नियम पूर्वक गदका, फरई, बनेठी आदि को भी सीखा था।

किन्तु व्यास जी का पारिवारिक जीवन सुखमय न था। असमय में ही विधाता ने आपसे माता-पिता का स्नेह-सम्बल छीन लिया। बड़े भाई तो आपसे अकारण द्वेष रखते ही थे अठारह वर्षीय छोटा भाई भी यौवन की चौखट पर पाँव रखती हुई पत्नी का सिन्दूर पोंछ कर चल बसा। इतना नहीं, उन्ही दिनों जीवन के वसन्त में ही आपकी बहिन की भी संसार-वाटिका उजड़ गई। व्यास जी ने एक के बाद एक इस प्रकार के मानसिक आघातों को अचल हिमालय के से धैर्य के साथ सहन किया। जीवन के सारे दु:खों, सारे कष्टों, सारे अभावों, सारी पीड़ाओं, सारी कटुताओं का गरल स्वयं पीकर, व्यास जी ने अपने अन्तस के सारे अमृत को समाज को बाँट दिया। इतने भयंकर मानसिक अस्थिरता के समय भी इनकी रचनाओं में कहीं पर भी अपने मानसिक अवसाद की धूमिल छाया भी दृष्टिगोचर नही होती। वस्तुतः वे स्वयं हलाहल पी नील कण्ठ बन गये। सारे दु:खों को स्वय भोगते हुये भी समाज को अमृत पिलाया।

व्यास जी को अपनी आजीविका जुटाने में भी बड़े कष्टों का अनुभव करना पड़ा। बाईस वर्ष की अल्पायु में ही पूरे परिवार का बोझ इनके कन्धों पर आ पड़ा। इस सरस्वती के वरद पुत्र ने लक्ष्मी और सरस्वती के संघर्ष में सरस्वती को ही सदा गले लगाया। एक बार राजस्थान के महाराज कुमार वैरीसाल काशी आपको बुलाने आये,

किन्तु आपने उनके प्रस्ताव को स्वीकार नहीं किया और अपने बड़े भाई को राजस्थान के उस मन्दिर तथा ६५० बीघे भूमि की सम्पत्ति दे दी। बड़े भाई के सदा विद्वेष करने पर भी आपने उसके प्रति भ्रातृ-स्नेह का पूरा पालन किया।

सं० १६४० वि० में आप मधुवनी संस्कृत पाठशाला के प्रधानाचार्य के पद पर नियुक्त हुये। यद्यपि इससे आर्थिक कठिनाइयाँ कुछ कम अवश्य हुई तथापि आप आर्थिक दृष्टि से निश्चिन्त न हो सके। क्योंकि आप की आय का अधिकांश भाग स्वसम्पादित "पीयूष प्रवाह" नामक पत्रिका का घाटा पूरा करने में जाने लगा। अधिक समय तक मधुवनी में आपका मन न रम सका। फलतः वहाँ से त्याग पत्र देकर आप मुजफ्फरपुर चले गये। वहाँ आपकी नियुक्त जिला स्कूल के हेड पण्डित के पद पर हो गई। अन्त तक आप वहीं बने रहे।

प्रतिभा के अनुरूप ही व्यास जी का व्यक्तित्व बड़ा आकर्षक प्रभावशाली था। तत्कालीन साहित्यकारों में आपकी मित्र मण्डली सर्वाधिक थी। आपने स्वल्पायु में ही 'धर्मसभा' 'सुनीति सञ्चारिणी सभा' 'विहार संस्कृत संजीवन' आदि की स्थापना की और इनको अपना पूर्ण सहयोग दिया। संस्कृत की श्रीवृद्धि में व्यास जी ने भगीरथ प्रयत्न किया जो संस्कृत के इतिहास में सदैव सुवर्ण वर्णों में अंकित रहेगा।

उन दिनों आर्य समाज और ब्रह्मसमाज का सुधार आन्दोलन जोरों के साथ चल रहा था। अपने व्यय से उत्तर भारत के प्रमुख स्थानों में घूम-घूम कर व्यास जी ने आर्यसमाज का विरोध किया। स्वामी सहजानन्द और स्वामी दयानन्द सरस्वती को भी आपकी प्रतिभा का लोहा मानना पड़ा था। अत्यधिक बोलने के कारण ही आपको हृदयरोग हो गया।

व्यास जी विलक्षण प्रतिभा के धनी थे। वक्ता और साहित्य-स्रष्टा होने के साथ-साथ व्यास जी चित्रकार, घुड़सवार, संगीतज्ञ तथा शतरंज के खिलाड़ी भी थे। संगीत में सितार, हारमोनियम, जलतरंग, नसतरंग और मृदंग बजाने में अत्यन्त निपुण थे। कविता लिखने का तो यह हाल था कि आप एक घड़ी मे सौ श्लोक लिख सकते थे। सौ प्रश्नो को लगातार सुनकर उनका उसी क्रम से उत्तर देने की भी आप मे अद्भुत क्षमता थी। इसीलिये आपको विद्वत्समाज की ओर से 'शतावधान' और 'घटिका शतक' की सम्मानपूर्ण उपाधि मिली थी।

व्यास जी साहित्य के तो आचार्य थे ही साथ ही न्याय, व्याकरण, वेदान्त और दर्शन पर भी आपका असाधारण अधिकार था। हिन्दी, संस्कृत और बंगला में आप धाराप्रवाह बोल सकते थे। अंग्रेजी के भी अच्छे जानकार थे। आपकी असाधारण तेजस्विता एवं वक्तृता से प्रभावित होकर थियोसोफिस्ट कर्नल अल्काट एवं जार्ज ग्रियर्सन ने मुक्त-कण्ठ से आपकी प्रशसा की थी। आपकी रचनायें एक से एक बढ़कर और विलक्षण है, उनमें भी आपका लिखा "सामवतम् नाटक" आपकी असाधारण प्रतिभा का ज्वलन्त उदाहरण है।

इस प्रकार अप्रतिम प्रतिभा के धनी श्री अम्बिकादत्त जी व्यास अपने सात वर्षीय पुत्र को बिलखता छोड़ कर मार्गशीर्ष कृष्ण १३ सोमवार सं० १९५७ विक्रमी को गोलोक वासी हो गये। किन्तु व्यास जी अपनी कृतियों से मरकर भी अमर हो गये।

५ शिवराज विजय: एक अध्ययन

जैसा कि हम पिछले अध्यायों में ही कह चुके है कि शिवराज विजय एक ऐतिहासिक उपन्यास है। इसमें व्यास जी ने नवीन उद्भावनाओं के साथ-साथ ऐतिहासिकता का सुन्दर निर्वाह किया है। उन्होंने अपनी इस कृति में इतिहास और साहित्य दोनों का ही समन्वय करने का सफल प्रयत्न किया है। भाषा एवं आर्थिक सौन्दर्य की दृष्टि से शिवराज विजय उत्तम कोटि का ग्रन्थ कहा जा सकता है। उत्तम शब्दावली, अर्थपूर्ण वाक्य विन्यास, ओजस्विनी गतिमयता विषय और अवसर के अनुरूप कोमल और कठोर पदावली अत्यन्त उपयुक्त बनपड़ी है। एक ओर कहीं पर व्यास जी ने बाण की सी दीर्घ समास बहुल पदावली का प्रयोग किया है तो कहीं पर अत्यन्त सरल और लघु पदावली का। व्यास जी की दीर्घ समस्त पदावली का एक उदाहरण देखिये :—

"इतन्तु स्वतन्त्र-यवनकुल-भुज्यमान-विजयपुराधीश-प्रेषित: पुण्य-नगरस्य समीपे एव प्रक्षालित-गण्डशैल-मण्डलाया: निर्झर-वारिधारा-पूर-पूरित-प्रबल-प्रवाहाया: पश्चिम - पारावार-प्रान्त - प्रसूतगिरि-ग्राम-गुहा-गर्भ-निर्गताया अपिप्राच्य-पयोनिधि चुम्बन-चञ्चुराया:, रिङ्गत्-तरङ्ग-भङ्गोद्भूतावर्त-गत-भीमा या:, भीमाया नद्या:, अनवरत-निपतद्बकुल-कुल-कुसुम-कदम्ब सुरभीकृतमपि नीरं वगाहमान-मत्त-मतङ्गज-मद धाराभि: कटू कुर्वन्: हय-हेषा-ध्वनि-प्रतिध्वनि-बधिरीकृत-गव्यूति-मध्यगाध्वनीनवर्ग:, पट-कुटीर-कूट-विहित शारदाम्भोधर-विडम्बन:,

निरपराध-भारताभिजन-जन-पीडन-पातक-पटलैरिव समुद्धूयमान-नील-ध्वजैरूपलक्षित:,"

अब लघु पदावली का एक उदाहरण भी देखते चलिये—

"वटुरसौ आकृत्या सुन्दर:, वर्णेन गौर:, जटाभिर्ब्रह्मचारी, वयसा षोडशवर्षदेशीय:, कम्बुकण्ठ:, आयतललाट:, सुवाहुर्विशाल लोचनश्चासीत् ।"

व्यास जी शब्दो के शिल्पी हैं। भाषा उनकी सेविका होकर रही है। उनके शब्दचित्र अत्यन्त सुन्दर और हृदय हारी है। जिस चीज का भी उन्होने वर्णन किया है, शब्दों के माध्यम से उसका चित्र खीचकर रख दिया है। शान्त, स्निग्ध एवं नीरव रात्रि का एक चित्र व्यास जी के शब्दो में देखिये :—

"धीर-समीर-स्पर्शेन मन्दमन्द मन्दोल्यमानासु व्रततिषु, समुदिते यामिनी-कामिनी-चन्दनविन्दौ इव इन्दौ, कौमुदी-कपटेन सुधाधारामिव वर्षति गगने, अस्मन्नीति वार्ता शुश्रूषुषु इव मौनमाकलयत्सु पतग-कुलेषु, कौरव-विकाश-हर्ष-प्रकाश मुखरेषु चञ्चरीकेषु,"

अलङ्कार प्रयोग मे भी विशेषकर विरोधाभास अलङ्कार के प्रयोग में व्यास जी बरबस ही बाण की कादम्बरी की याद दिला देते हैं। उनका विरोधाभास अलङ्कार का प्रयोग महाकवि बाण से किसी हालत में कम नही है। बाण ने कादम्बरी में महर्षि जावालि का जिस ढग से वर्णन किया है, ठीक उसी ढंग से व्यास जी ने छत्रपति शिवाजी का वर्णन किया है। एक उदाहरण द्रष्टव्य है :—

"खर्वामप्यखर्व-पराक्रमां, श्यामामपियश: समूह-श्वेतीकृत त्रिभुवनां, कुशासना श्रयामपि सुशासनाश्रयां, पठन-पाठनादि परिश्रमान-भिज्ञामपि नीति निष्णातां, स्थूलदर्शनामपि सूक्ष्मदर्शनां, ध्वंसकाण्डव्य-सिनिनीमपि धर्म धौरेयी, कठिनामपि कोमलाम्, उग्रामपि शान्तांम्, शोभित विग्रहामपि दृढ़सन्धिवन्धाम्, कलित गौरवामपि कलित लाघवाम्,"

प्रकृति वर्णन संस्कृत साहित्य की एक अपनी विशेषता रही है चाहे पद्य काव्य हो या गद्य काव्य, दोनों ही में प्रकृति का सुन्द और संश्लिष्ट वर्णन उपलब्ध होता है। व्यास जी भी अपने शिवरा विजय में प्रकृति वर्णन का लोभ संवरण न कर सके। व्यास जी शब्दों में चैत के महीने का चन्द्रोदय का एक चित्र देखिये—

"ततश्च दुग्ध धाराभिरिव प्रथमं प्राचीं संक्षाल्य, भसित च्छुरितामिव विधाय, चन्दनैरिव संचर्च्य, कुन्द-कुसुमै-रिवाकीर्य, गगन सागर मीने इव, मनोज मनोज्ञ हंसे इव, विरहि-निकृन्तन-रौप्य-कुन्त प्रान्ते इव, पुण्डरीकाक्ष-पत्नी-कर-पुण्डरीक पत्रे इव, शारदाभ्रसारे इव सप्तसप्ति-सप्ति-पादच्युते राजत-खुरत्रे इव, मनोहरता-महिला-लल इव, कन्दर्प-कीर्ति-लताङ्कुरे इव, प्रजा-जन-नयन-कर्पूर खण्डे इव, तम तिमिर-कर्तन-शाणोल्लीढ-निस्त्रिंशे इव च समुदिते चैत्र-चन्द्रखण्डे,"

इतना ही नहीं, व्यास जी का वर्षा वर्णन भी अनोखा है। शब्द के माध्यम से उन्होंने वर्षा का चित्र उपस्थित किया है, उससे पाठक अषाढ़ के महीने की वर्षा में भीगने की अनुभूति हुये बिना नहीं र पाती। वर्षा की एक बहार देखिये :—

"मासोऽयमाषाढः, अस्ति च सायं समयः, अस्तं जिगमिषुर्भगवा भास्करः सिन्दूर-द्रव-स्नातानामिव वरुण-दिगवलम्बिनामरुण-वारिव हानामभ्यन्तरं प्रविष्टः। कलविङ्काश्चा-टकैररुतैः परिपूर्णेषु नीडेषु प्र निवर्तन्ते। वनानि प्रतिक्षणमधिकाधिकां श्यामतां कलयन्ति। अथा स्मात् परितोमेघमाला पर्वतश्रेणीव प्रादुरभूत। क्षणं सूक्ष्मविस्ता परतः प्रकटित-शिखरि-शिखर-विडम्बना, अथ दर्शित-दीर्घशुण्ड-मण्डि दिगन्त-दन्तावल-भयानकाकारा, ततः पारस्परिक-सश्लेष-विहित महान्ध कारा च समस्तं गगनतलं पर्यच्छदीत्।"

शिवराज विजय की रस योजना भी अत्यन्त सुन्दर है। यद्य

इसमें कवि ने प्रायः सभी रसों का प्रयोग किया है तथापि इसका मुख्य रस वीर ही है। इसमें शृङ्गार रस का प्रयोग अत्यन्त सात्विक ढंग से हुआ है। व्यास जी ने इसमें तत्कालीन समाज एवं उसकी व्यवस्था पर भी प्रकाश डाला है। शिवराज विजय के अध्ययन से हमें तत्कालीन राजाओं का रणकौशल, चारचातुरी और सामाजिक व्यवहारों का अच्छा परिचय मिल जाता है। व्यास जी ने अपने इस ग्रन्थ में देश-भक्ति, राजभक्ति, जन्मभूमिभक्ति एवं स्वधर्म प्रेम आदि उदात्त भावनाओं को तो कूट-कूट कर भरा ही है, साथ ही भारतीय प्राचीन गौरव का भी मुक्त कण्ठ से गान किया है। एक उदाहरण देखिए—

"अस्मिन्नेव भारतेवर्षे यायजुकैः राजसूयादि यज्ञाः व्ययाजिपत। कदाचिदिहैव-वर्षावातातप हिमसहानि तपांसि अतापिपत,"

इसमें कथावस्तु की संघटना भी पौर्वात्य एवं पाश्चात्य शिल्प का समन्वय कर की गई है। इसमें यद्पि दो स्वतन्त्र कथा धारायें समानान्तर रूप से वहती हैं जिनमें एक के नायक शिवाजी है तो दूसरी का नायक रघुवीर सिंह, तथापि ये दोनों कथायें एक दूसरे से निरपेक्ष्य नहीं हैं। वस्तुतः ये दोनों एक दूसरे की पूरक है। एक के विना दूसरे का महत्व, उसका गौरव प्रकट नहीं हो पाता।

व्यास जी ने शिवराज विजव में इतिहास और कल्पना, यथार्थ और आदर्श दोनों का ही सफलता के साथ निर्वाह किया है। उनके पात्र अपने-अपने चरित्र के निर्वाह में पूर्णतः खरे उतरते हैं। उदाहरण रूप में-शिवाजी, गौर सिंह, यशवन्त सिह, अफजल खां, शाइस्त खां, ब्रह्मचारी आदि का नाम लिया जा सकता है।

इस प्रकार हम देखते हैं कि प्रतिभा की प्रौढ़ता, कल्पना की उच्चता, आदर्श की स्थिरता, ध्येय की एक निष्ठता, विश्वास की पराकाष्ठता, वाग्वैदग्ध्य की चारुता, भाषा की मनोहरता, भावों की रमणीयता, पदों की माधुर्यता, कथानक की प्रवहमानता, रूप शिल्प की

हृदय हारिता आदि की दृष्टि से व्यास जी का 'शिवराज विजय पूर्णतः भारतीय सैद्धान्तिक आधारों पर खरा उतरा है। औपन्यासिक तत्वों की दृष्टि से भी घटनावैचित्र्य, कथानक का आरोहा-वरोह, चरित्रों का संघर्ष मानसिक अन्तर्द्वन्द्व, कौतूहल आदि सभी कुछ इसमें विद्यमान है। इस दृष्टि से भी यह खरा ही उतरता है। वास्तव में किसी ने ठीक ही कहा है :—

It is a well known historical romance in Sanskrit prose based on the story of Maharastra, Chief Sivaji and written in a graceful lucid style."

६ महाकवि बाण और अम्बिकादत्त व्यास

महाकवि बाण भट्ट संस्कृत साहित्य के अन्यतम गद्यकार सर्व-श्रेष्ठ कथाकार तो हैं ही, साथ ही शब्दों के अनुपम शिल्पी भी हैं। भाषा उनकी वशंवदा क्रीत दासी के समान होकर रही है। उन्होंने जब, जहाँ और जिस प्रकार चाहा भाषा से अपने इच्छानुसार नर्तन कराया है। यद्यपि उनकी कई कृतियों के बारे में अभी तक विद्वानों में एकमत्य नहीं हो पाया है, तथापि संस्कृत गद्य की अमूल्य निधि हर्ष चरित एवं कादम्बरी के सम्बन्ध में विद्वत्समुदाय एक मत है। हर्ष चरित और कादम्बरी का पर्यालोचन करने से यह स्पष्ट प्रतीत होता है कि हर्षचरित बाण की आरम्भिक रचना है। हर्ष चरित में वह प्रौढ़ता दृष्टिगत नही होती, जो कादम्बरी में परिलक्षित होती है। फिर भी यह निर्विवाद रूप से स्वीकार किया जा सकता है कि हर्ष चरित बाण की आरम्भिक कृति होते हुये भी अन्य साहित्यों के उत्कृष्ट गद्यों का सुन्दरता से मुकाबला कर सकती है।

हर्ष चरित में आठ उच्छ्वास हैं जिनमें प्रथम तीन में तो बाण ने अपनी आत्मकथा का वर्णन किया है। शेष में सम्राट हर्ष वर्धन का जीवन वृत्त अंकित किया गया है। इसमें ऐतिहासिक वृत्त पर कल्पना की कलई बड़े सुन्दर ढंग से की गई है जिससे इसका काव्य सौन्दर्य हृदय हारी हो गया है। इसमें बाण ने अपनी अद्भुत वर्णना शक्ति का स्थान-स्थान पर बड़े प्रभविष्णु ढंग से परिचय दिया है। उदाहरण के लिए—प्रभाकर वर्धन के अन्तिम क्षणों का वर्णन ओज और कारुण्य से परिपूर्ण है।

सती होने से पूर्व यशोवती से उद्गार बाण ने कहलाये हैं, वे अनन्यता, तेजस्विता एवं करुणा से परिपूर्ण हैं।

सिंहनाद ने जो उपदेश दिया है, वह बरबस ही कादम्बरी के शुकनासोपदेश की स्मृति दिला देता है। हर्षवर्धन सर्वत्र ही एक महान् सम्राट, एक निर्भीक योद्धा, एक साहसी नवयुवक, एक कर्तव्य-परायण सम्राट और एक स्नेहशील शासक के रूप में हमारे सामने आते हैं। इतना ही नहीं, राज्य वर्धन भी एक आज्ञाकारी पुत्र, एक स्नेहशील भाई और एक साहसी योद्धा के रूप में हमारे सामने आते हैं। तभी तो सोड्ढल ने हर्ष चरित की मुक्त कण्ठ से प्रशंसा करते हुये इस प्रकार कहा था—

"बाणस्य हर्षचरिते निशितामुदीक्ष्य।
शक्तिं न केऽत्र कवितास्त्र मदं त्यजन्ति॥"

यह तो हुई बात हर्ष चरित की। अब रही बात कादम्बरी की। वह तो संस्कृत का सर्वोत्कृष्ट उपन्यास है ही, साथ ही बाण की सूक्ष्म निरीक्षण शक्ति एवं उनकी चतुरस्त प्रतिभा का भी ज्वलन्त निदर्शन है। यद्यपि कादम्बरी में कथा और उपकथा के सम्मिश्रण से उसकी सरलता समाप्त हो गई है, तथापि कथा के स्वाभाविक विकास और उसके कुशल निर्वाह में पर्याप्त सफलता मिली है। सारी कथा औत्सुक्यपूर्ण रोचकता से ओत-प्रोत होने के कारण पाठक की उत्सुकता में कोई व्याघात नहीं आ पाता। बाण ने महाश्वेता और कादम्बरी की प्रणय-कथा को स्वाभाविक रूप से सम्बद्ध कर अपने वस्तु विन्यास-कौशल का परिचय दिया है।

यद्यपि कादम्बरी के सभी पात्र सुन्दर और सजीव हैं फिर भी कादम्बरी और महाश्वेता के चित्रण में कवि ने अपने अप्रतिम कल्पना वैभव का परिचय तो दिया ही है साथ ही वर्णन-कुशलता तथा मानव मनोवृत्तियों के सूक्ष्म एवं मार्मिक निरीक्षण शक्ति का भी परिचय दिया

है। यद्यपि कादम्बरी का प्रत्येक वर्णन बाण के बहुमुखी जीवन के विविध अनुभवों के रोचक रूप है, तथापि उनका वस्तु वर्णन उनके भ्रमणशील जीवन का परिचायक भी है। कादम्बरी का शुकनासोपदेश तो सारे शास्त्रों का निचोड़ है।

संक्षेप में कहे तो कह सकते हैं कि कादम्बरी बाण की चित्रशाला है। इसमें अनेक प्रकार के चित्र सुसज्जित हैं। कहीं एक ओर विन्ध्याटवी का रोमांचकारी दृश्य है तो कहीं जाबालि आश्रम की शान्त, सात्विक शोभा का चित्र। एक ओर शूद्रक और तारापीड के राजकीय वैभव का चित्र है तो दूसरी ओर विरह विधुरा, कृशकाय तपस्विनी महाश्वेता का हृदय हारी चित्र। किसी चित्र मे राजसी वैभव के साथ चन्द्रापीड़ विद्याध्ययन कर घर को जा रहा है तो कहीं शुकनास उसे पुनः दीक्षित कर रहा है। किसी चित्र मे कमनीय कलवेरा कादम्बरी का सलज्ज प्रणयोन्माद छलक रहा है तो कहीं प्रियतम विमुक्ता महाश्वेता पुण्डरीक की याद मे रोती हुई अपनी असफल प्रणय कहानी चन्द्रापीड़ को सुना रही है। कहीं अच्छोद सरोवर का सुन्दर दृश्य है तो कहीं हिमालय के भव्य दृश्य अंकित है। साधारणतः लोग घटना वर्णन के द्वारा कथा प्रारम्भ करते है, पर महाकवि बाण चित्र सज्जित करके कथा आगे बढ़ाते है। बाण की कादम्बरी में भारतीय संस्कृति, भारतीय सभ्यता भारत का भूगोल, भारत का प्रेम और भारत का आदर्श, भारत के तीर्थ और भारत के तपोवन सभी विद्यमान है। सच कहे तो कह सकते हैं कि बाण की कादम्बरी मे मानव हृदय की मूक प्रणय वेदना को व्यथा भरी भाषा मे कहा गया है। बाण के द्वारा अंकित प्रेम का उद्दाम वेग मर्यादा का उल्लंघन न करते हुये आदर्श प्रेम के सहारे मृत्यु के अन्धकार मे भी पावन आलोक आलोकित करता है। काल की कराल छाया उसे ग्रस्त नहीं कर पाती, समय का प्रबल प्रवाह उसे विस्मृत नहीं कर पाता, राजसी जीवन की विलासिता किंवा तपस्या की कठोरता उसे दबा नहीं पाती, अनन्त काल की प्रतीक्षा उसे उबा नहीं पाती।

वस्तुतः "आकृपरणा कवि प्रतिभा" के अनुसार कल्लोलमुखर समुद्र की लहर की तरह वाण की भाषा उद्वेलित हुई है, तभी तो प्रियतम की शय्या की ओर स्वेच्छा से सचरण करती हुई नवोढा वधू की तरह कादम्बरी अपने अमित रसास्वाद से पाठको के चित्त को निरन्तर आप्यायित करती आई है। कहा भी है :—

'स्फुरत्कलालाप विलास कोमला,
करोति रागं हृदि कौतुकाधिकम् ।
रसेन शय्या स्वयमभ्युपागता,
कथा जनस्याभिनवा वधू रिव ।।

संक्षेप में कहें तो कह सकते है कि वाण की कादम्बरी मे कवि की सूक्ष्म-निरीक्षण शक्ति, अलंकृत शब्दावली, उत्कृष्ट प्रकृति प्रेम, उर्वर कल्पना, मधुर एवं कठोर शब्द योजना, मौलिक अर्थो की उद्भावना और अप्वस्र शब्दशशि का उत्स आदि सर्वत्र समान रूप से नव्यता और भव्यता के साथ उपलब्ध होते है।

यह तो हुआ महा महाकवि और उनकी कृतियो का सक्षिप्त दिग्दर्शन। अब आइये इस परिप्रेक्ष्य में व्यास जी की कृति का अवलोकन करते चले। जहाँ तक व्यास जी की कृतियों का प्रश्न है, वे वाण से कई गुना अधिक है, पर, तुलना की दृष्टि से वाण के समक्ष सब फीकी, निस्तेज सी प्रतीत होती है। केवल व्यास जी का शिवराज-विजय वाण के हर्ष चरित की समकक्षता कुछ सीमा तक कर सकता है, पर पूर्णतया नही। फिर भी यह कहना अनुचित न होगा कि व्यास जी वाण की समकक्षता भले ही न कर पाये पर वाण वाद शब्दशिल्पी का मूर्धन्य स्थान उनके लिये सुरक्षित है ही। व्यास जी ने अपनी कृति में वाण का अनुकरण करने का प्रयास किया है, कही-कही वे अपने प्रयास में सफल भी हुये है, फिर भी अनुकरण तो अनुकरण ही है, वह वास्तविक कैसे हो सकता है?

अतः स्पष्ट है कि उच्चकोटि के गद्यकार होने पर भी व्यास

जी को वाण की समकक्षता प्रदान नही की जा सकती। फिर भी व्यास जी ने वाण की समक्षता में खड़े होने का प्रयास कर, द्वितीय पंक्ति में जो स्थान वना लिया, वह भी कम महत्व का नही है। वस्तुतः वाण की प्रखर प्रतिभा का प्रताप ही ऐसा था—

युक्तं कादम्बरीं श्रुत्वा कवयो मौनमाश्रिताः ।
वाणध्वनावनध्यायो भवतीति स्मृतिर्यतः ॥

सौभाग्य की वात है कि व्यास जी ने इस कीर्तिमान को तोड़ कर अपना स्थान वना लिया ।

७ दण्डी और बाण भट्ट

महाकवि दण्डी संस्कृत के प्रथम गद्यकार हैं। ये बाण के पूर्ववर्ती हैं, इनकी शैली अपनी और मौलिक है। इनकी सर्वाधिक महत्वपूर्ण रचनाएँ 'दशकुमार चरित' और 'काव्यादर्श' हैं। इन दोनों रचनाओं से यह स्पष्ट परिलक्षित होता है कि दण्डी का गद्य और पद्य दोनों में ही समान रूप से अधिकार था। दशकुमार चरित दण्डी की बड़ी सरस कृति है, इसमें महाकवि ने दस राज कुमारों के पर्यटनों, विचित्र-अनुभवों एवं पराक्रमों का मनोरञ्जक वर्णन तो किया ही है, साथ ही दम्भी तपस्वियों, कपटी ब्राह्मणों, धूर्त कुट्टिनियों, व्यभिचारिणी स्त्रियों एवं निर्दय वेश्याओं का भी भण्डाफोड़ हुआ है।

दण्डी का दशकुमार चरित ललित और मधुर होने के साथ-साथ सुबन्धु और बाण के गद्य से सरल भी है। इसका कथानक जहाँ विचित्र है, वहाँ उसके अनुरूप वर्णन शैली भी प्रवाहमय और सरस है। इसमें कहीं विलास का विकास हृदय को उन्मत्त करता है तो कहीं सौन्दर्य का सौरभ अन्तरात्मा को तृप्त करता है। कहीं हास की कोमल लहरी मानसतल को तरंगित करती है तो कहीं परिस्थिति की जटिलता कार्य की गुरुता जन मानस को गम्भीर बना देती है। वस्तुतः विशद चरित्र चित्रण, नैसर्गिक शैली, बुद्धि का अनुपम विलास, शिष्ट हास-परिहास, विषयान्तरों की न्यूनता, रसानुकूल शब्द योजना यथार्थ और आदर्श का मणि कांचन संयोग आदि विशेषताएँ दण्डी के दशकुमार को संस्कृत के गद्य साहित्य में विशिष्ट स्थान प्रदान करती हैं।

दण्डी की वर्णन प्रणाली सरल और स्वाभाविक है। अर्थ की स्पष्टता, रस की अभिव्यक्ति, शब्द विन्यास की चारुता, और कल्पना शक्ति की उर्वरता दण्डी की शैली के विशेष गुण हैं। उनका वाक्य विन्यास सरल, ओजस्वी, ललित एवं सुव्यक्त है। यत्र-तत्र दण्डी अपनी भाषा को अलंकृत करना नही भूलते, किन्तु उनके वाक्यालंकार परिमित मात्रा में ही प्रयुक्त हुए हैं। दण्डी ने जो वाक्यालंकार प्रयुक्त किये भी है, वे सर्वत्र ही मनोहर एवं उपयुक्त है। दुरूहता एवं सातत्यता उनमें नही आई। यही कारण है कि एक आलोचक ने "कविर्दण्डी कविर्दण्डी कविर्दण्डी न संशयः" कहकर दण्डी को ही एक मात्र कवि माना है।

भले ही यह आलोचना अतिशयोक्ति पूर्ण या एकांगी हो किन्तु इतना तो मानना ही पडेगा कि दण्डी भले ही एक मात्र कवि न माने जाँय, किन्तु उच्च कोटि के गद्य-कार तो माने ही जा सकते हैं। संस्कृत गद्य के लिये मार्ग प्रशस्त करने वाले होने के कारण दण्डी का महत्व और भी बढ गया है।

इसके विपरीत महाकवि बाण का स्थान और उनकी कृतियां अत्युत्कृष्ट है। दण्डी को यदि संस्कृत के गद्य साहित्य का प्रवर्तक मानें तो निश्चय ही बाण को संस्कृत गद्य का परिष्कारक कहने में कोई अत्युक्ति न होगी। बाण की गद्य रचना में जो प्रौढ़ता, जो सुगठित शब्द रचना, जो मौलिक उद्भावना उपलब्ध होती है, वह दंण्डी के दशकुमार चरित में दृष्टिगत नही होती। दण्डी के दशकुमार चरित का कथानक भी बाण के हर्षचरित या कादम्बरी के समान सुगठित नहीं है। दशकुमार चरित का कथानक उलझा सा, और अस्पष्ट तथा बिखरा-बिखरा है जब कि बाण का कथानक सुगठित, संश्लिष्ट तथा सुनियोजित है। यह बाण की ही प्रतिभा का अद्भुत चमत्कार है कि इतने छोटे से कथानक पर कादम्बरी जैसा विशालकाय ग्रन्थ रच

७ दण्डी और बाण भट्ट

महाकवि दण्डी संस्कृत के प्रथम गद्यकार हैं। ये वाण के पूर्ववर्ती है, इनकी शैली अपनी और मौलिक है। इनकी सर्वाधिक महत्वपूर्ण रचनाएँ 'दशकुमार चरित' और 'काव्यादर्श' है। इन दोनों रचनाओं से यह स्पष्ट परिलक्षित होता है कि दण्डी का गद्य और पद्य दोनो में ही समान रूप से अधिकार था। दशकुमार चरित दण्डी की बड़ी सरस कृति है, इसमे महाकवि ने दस राज कुमारो के पर्यटनो, विचित्र-अनुभवों एव पराक्रमों का मनोरञ्जक वर्णन तो किया ही है, साथ ही दम्भी तपस्वियो, कपटी ब्राह्मणों, धूर्त कुट्टिनियों, व्यभिचारिणी स्त्रियों एवं निर्दय वेश्याओं का भी भण्डाफोड़ हुआ है।

दण्डी का दशकुमार चरित ललित और मधुर होने के साथ-साथ सुबन्धु और बाण के गद्य से सरल भी है। इसका कथानक जहाँ विचित्र है, वहाँ उसके अनुरूप वर्णन शैली भी प्रवाहमय और सरस है। इसमें कही विलास का विकास हृदय को उन्मत्त करता है तो कही सौन्दर्य का सौरभ अन्तरात्मा को तृप्त करता है। कही हास की कोमल लहरी मानसतल को तरंगित करती है तो कही परिस्थिति की जटिलता कार्य की गुरुता जन मानस को गम्भीर बना देती है। वस्तुतः विशद चरित्र चित्रण, नैसर्गिक शैली, बुद्धि का अनुपम विलास, शिष्ट हास-परिहास, विषयान्तरों की न्यूनता, रसानुकूल शब्द योजना यथार्थ और आदर्श का मणि काचन संयोग आदि विशेषताएं दण्डी के दशकुमार को संस्कृत के गद्य साहित्य में विशिष्ट स्थान प्रदान करती है।

दण्डी की वर्णन प्रणाली सरल और स्वाभाविक है। अर्थ की स्पष्टता, रस की अभिव्यक्ति, शब्द विन्यास की चारुता, और कल्पना शक्ति की उर्वरता दण्डी की शैली के विशेष गुण हैं। उनका वाक्य विन्यास सरल, ओजस्वी, ललित एवं सुव्यक्त है। यत्र-तत्र दण्डी अपनी भाषा को अलंकृत करना नहीं भूलते, किन्तु उनके वाक्यालंकार परिमित मात्रा में ही प्रयुक्त हुए हैं। दण्डी ने जो वाक्यालंकार प्रयुक्त किये भी हैं, वे सर्वत्र ही मनोहर एवं उपयुक्त हैं। दुरूहता एवं सातत्यता उसमें नहीं आई। यही कारण है कि एक आलोचक ने "कविर्दण्डी कविर्दण्डी कविर्दण्डी न संशयः" कहकर दण्डी को ही एक मात्र कवि माना है।

भले ही यह आलोचना अतिशयोक्ति पूर्ण या एकांगी हो किन्तु इतना तो मानना ही पड़ेगा कि दण्डी भले ही एक मात्र कवि न माने जाँय, किन्तु उच्च कोटि के गद्य-कार तो माने ही जा सकते हैं। संस्कृत गद्य के लिये मार्ग प्रशस्त करने वाले होने के कारण दण्डी का महत्व और भी बढ़ गया है।

इसके विपरीत महाकवि बाण का स्थान और उनकी कृतियां अत्युत्कृष्ट हैं। दण्डी को यदि संस्कृत के गद्य साहित्य का प्रवर्तक मानें तो निश्चय ही बाण को संस्कृत गद्य का परिष्कारक कहने में कोई अत्युक्ति न होगी। बाण की गद्य रचना में जो प्रौढ़ता, जो सुगठित शब्द रचना, जो मौलिक उद्भावना उपलब्ध होती है, वह दण्डी के दशकुमार चरित में दृष्टिगत नहीं होती। दण्डी के दशकुमार चरित का कथानक भी बाण के हर्षचरित या कादम्बरी के समान सुगठित नहीं है। दशकुमार चरित का कथानक उलझा सा, और अस्पष्ट तथा बिखरा-बिखरा है जब कि बाण का कथानक सुगठित, संश्लिष्ट तथा सुनियोजित है। यह बाण की ही प्रतिभा का अद्भुत चमत्कार है कि इतने छोटे से कथानक पर कादंम्बरी जैसा विशालकाय ग्रन्थ रच

दिखाया। वस्तुतः दण्डी और बाण दोनों ही अपने-अपने समय के प्रतिनिधि लेखक और कथाकार रहे हैं। उनकी समानता कर उनमें एक को बड़ा और दूसरे को छोटा सिद्ध करने का प्रयास करने पर उक्त दोनों ही महाकवियों के साथ-न्याय नहीं हो सकता। इन दोनों को ही हमें उनके देश काल और परिस्थिति के परिप्रेक्ष्य में देखना चाहिये और उसी परिप्रेक्ष्य में ही उनके महत्व का निर्धारण करना चाहिये। तभी हम उन्हें सच्चे अर्थों में परख सकेंगे।

बाण के सामने तो दण्डी प्रभृति पूर्ववर्ती गद्य कारों के गद्य का अवश्य ही आदर्श रहा होगा। इस के विपरीत दण्डी ने अपने पूर्ववर्ती किसी कथाकार या गद्यकार का आदर्श सामने रखकर अपनी रचना की होगी, इसका कोई उल्लेख कहीं नहीं मिलता। दण्डी ने जो कुछ लिखा तथा जिस प्रकार भी लिखा, वह उनका अपना प्रकार था। उसको परिष्कृत किंवा परिष्कृत करने के लिये उनके समक्ष संस्कृत गद्य का संभवतः कोई उच्च आदर्श नहीं था। अन्यथा दण्डी सरीखा प्रतिभाशाली लेखक परिष्कृत किंवा प्रौढ़ गद्य रचना न कर सकता हो, ऐसा नहीं कहा जा सकता। उन्होंने अपनी इच्छा से संस्कृत गद्य का सूत्रपात किया।

बाण के सम्बन्ध में यह नहीं कहा जा सकता। बाण के सामने दण्डी और सुबन्धु की गद्य रचनाऐं थीं, जो अपने समय की प्रौढ़ और परिष्कृत रचनाएं कही जा सकती हैं। अतः निश्चय ही बाण ने दण्डी और सुबन्धु से अधिक सुन्दर, अधिक परिष्कृत एवं अधिक प्रौढ़ गद्य रचना करने का निश्चय किया होगा। बाण को अपनी प्रथम कृति हर्षचरित में अधिक सफलता नहीं मिल सकी। फलतः उन्होंने अपने जीवन के सारे ज्ञान, सारे अनुभव एवं अपने मस्तिष्क की सारी उच्च कल्पना को कादम्बरी के निर्माण में लगा डाला।

इसमें सन्देह नहीं है वाण की विद्वत्ता, उनका अनुभव, उनका वस्तु परिचय, उनकी कल्पना शक्ति, उनका ज्ञान अपने पूर्ववर्ती सभी कलाकारों से कहीं अधिक बढ़ा चढ़ा था। तभी तो कादम्बरी की रचना के बाद उनके सम्बन्ध में "वाणो वाणी बभूवह" की उक्ति चरितार्थ होने लगी। इस बात पर दो मत कदापि नहीं हो सकते कि "कविर्दण्डी कविर्दण्डी कविर्दण्डी" कहकर दण्डी को ही एक मात्र कवि मानने वाला आलोचक यदि वाण की कादम्बरी पढ़ लेता तो शायद ऐसा कहने में उसे अवश्य संकोच होता।

वस्तुतः वाण का सा प्रखर पाण्डित्य, उनका सा अक्षय शब्द भण्डार, उनका सा उर्वर मस्तिष्क, उनकी सी अद्भुत कल्पना शक्ति, उनका सा वर्णन कौशल, उनकी सी शब्द योजना, उनका सा अलंकार ज्ञान किसी अन्य के पास नहीं था। उनके वर्णन में कोई पर्यायवाची शब्द नहीं बचता, कोई श्लिष्ट या लाक्षणिक प्रयोग नहीं रह जाता, जिसका उपयोग वाण ने किया न हो। सबसे बड़ी बात तो यह है कि वाण के काव्य में कहीं भी पिष्ट-पेषण नहीं हुआ है। उनका प्रत्येक वर्णन, उनकी प्रत्येक पंक्ति, उनका प्रत्येक शब्द चित्र अपनी नूतना और अपनी भव्यता को लेकर सामने आता है। तभी तो धर्मदास ने बड़ी चतुरता और विदग्धता के साथ महाकवि वाण की इन शब्दों में प्रशंसा की है:—

'रुचिर स्वर वर्ण पदा,
रसभाववती जगन्मनो हरति।
सा किं तरुणी ?
नहि नहि वाणी वाणस्य मधुर शीलस्य॥"

प्रसन्न राघव कार जयदेव ने तो वाण को कविता-वनिता के हृदय में स्थित कामदेव ही कह डाला है। देखिये—

"यस्याश्चौरः चिकुर निकुरः कर्णपूरो मयूरः,
भासो हासः कविकुल गुरुः कालिदासो विलासः।
हर्षो हर्षः हृदय वसतिः पञ्चबाणस्तु बाणः,
केषां नैषः कथय कविता कामिनी कौतुकाय ॥"

इतना सब कुछ होने पर संस्कृत गद्य के जन्मदाता होने के कारण दण्डी का स्थान एवं महत्व संस्कृत गद्य साहित्य के इतिहास में श्लाघनीय है। महाकवि दण्डी ने संस्कृत में गद्य का सृजन करके साहित्य के एक महत्व पूर्ण अङ्ग के अधूरे पन को दूर किया, साथ ही पाठकों को गद्य में भी पद्य का सा काव्यानन्द प्रदान किया। दण्डी ने जिस परम्परा को जन्म दिया सुबन्धु ने अपनी 'वासवदत्ता' के द्वारा उस परम्परा को अक्षुण्ण रखते हुए उसका विकास किया। बाण ने उसे प्रौढ़ता प्रदान कर संस्कृत गद्य का चूड़ान्त निदर्शन उपस्थित कर दिखाया। इस प्रकार संस्कृत गद्य के ये लेखकत्रय समान रूप से वन्दनीय और नमस्करणीय है। इसमें जरा भी सन्देह नहीं है।

८ सुबन्धु और उनकी वासवदत्ता

संस्कृत के गद्यकारों में दण्डी और बाण के अतिरिक्त सुवन्धु का नाम भी उल्लेखनीय है। यद्यपि सुवन्धु की एक ही कृति उपलब्ध होती है, तथापि उसी से उनकी यशः पताका संस्कृत के साहित्याकाश में अनवरत रूप से फहरा रही है। किसी ने वास्तव में ठीक ही कहा है:—

"एकश्चन्द्रस्तमो हन्ति न च तारा सहस्रशः"।

सुवन्धु की वासवदत्ता संस्कृत के गद्य काव्य में इसलिये भी अधिक प्रसिद्ध है कि इसका कथानक संक्षिप्त, अत्यधिक वर्णन विस्तार और पाण्डित्य की प्रखरता है। यदि संक्षेप में हम वासवदत्ता के कथानक को कहें तो यों कह सकते है कि— राजकुमार कन्दर्प केतु स्वप्न में अपनी प्रियतमा के दर्शन करता है और अनन्तर काम पीड़ित होकर उसकी खोज में निकल पड़ता है। बस, संक्षेप में यही वासवदत्ता का कथानक है। किन्तु इस कथा वैशिष्ठ्य कथानक में दृष्टिगत न होकर नायक-नायिका के रूप-सौन्दर्य के वर्णन में, उनकी विशद गुणावली के गान में, उनकी तीव्र विरहातुरता में, उनकी मिलनाकांक्षा किंवा संयोग दशा के अंकन में दृष्टिगत होता है। यद्यपि यह सही है कि इस प्रकार के वर्णनों में रमकर सुवन्धु अपने कथानक को भुला सा बैठा है जिससे कथानक के विकास में बाधा आ गई है, तथापि इतना तो मानना ही पड़ता है कि किसी वस्तु का का विशद वर्णन करने की सुवन्धु में अद्भुत क्षमता थी।

सुबन्धु की वासवदत्ता में विषयान्तरों का बाहुल्य है। इन्हीं विषयान्तरों के द्वारा सुबन्धु ने अपने अलंकार कौशल को तो दिखलाया ही है, साथ ही अपने पाण्डित्य का भी प्रदर्शन किया है, जिससे उनकी कृति सहज, सुन्दर और सरल न होकर अलङ्कार भार से शिथिल पदविन्यासा स्थूल शरीरा रमणी के समान बोझिल हो गई है। उन्होंने एक सौ बीस पंक्तियों के एक वाक्य में वासवदत्ता विसाल विभ्रम का जो अंकन किया है, वह अतिरंजित तो है ही, साथ ही पाठक को उबा-देने वाला भी है। वासवदत्ता में जहाँ उसके वर्णन विस्तार एवं सुबन्धु के अक्षय शब्द भण्डार का पदे-पदे परिचय मिलता है, वहाँ कल्पना एवं चरित्र चित्रण का अभाव पाठक को अत्यन्त खटकता है।

सुबन्धु को आडम्बर पूर्ण अपनी अलकृत गद्य रचना पर स्वयं भी बड़ा गर्व था। उन्होंने अपने गर्व को इन पंक्तियों में अभिव्यक्त किया है—

"प्रत्यक्षरश्लेषमय प्रपंचविन्यास वैदग्ध्यनिधि प्रबन्धम्।
सरस्वतीदत्तवर "प्रशादश्चक्रे सुबन्धुः सुजनैकबन्धुः॥"

वस्तुतः सुबन्धु की वासवदत्ता श्लेष और विरोधाभास का ऐसा दुर्गम महा कान्तार है जिसमें से वास्तविक काव्य सौन्दर्य को ढूँढ निकालना सहृदय पाठक के लिए कठिन हो जाता है। अलंकारों की अख्यानी में भटका हुआ पाठक मुश्किल से ही काव्य सौंदर्य के दर्शन कर पाता है। इतना ही क्यों, अलंकारों, बड़े-बड़े समासों एवं पौराणिक संकेतों के प्रयोग में सुबंधु कहीं-कहीं औचित्य की सीमाओं का भी अति-क्रमण कर बैठे हैं। फलतः रस का आस्वादन कर पाना पाठक के लिये दुर्लभ हो जाता है।

जहां दण्डी में विचित्रता, वीरता एवं शृङ्गारिकता का स्निग्ध एवं मधुर चित्रण है, वहाँ सुबंधु चित्र काव्य लिखने के फेर में पड़कर

रम्य भावों का अंकन तो नहीं ही कर पाये, अपनी स्वाभाविकता भी खो बैठे। उनके काव्य में न तो दण्डी का सा हास, ओज और वैचित्र्य है और न ही बाण सरीखी कल्पना शक्ति तथा वर्णन प्रतिभा ही। उनकी समास बहुल भाषा मे सौंदर्य, प्रसाद और माधुर्य कम है, आडम्बर, कृत्रिमता तथा असंगति अधिक है।

सुबंधु ने पाण्डित्य प्रदर्शन के चक्कर में पड़ कर भावनाओं को कुचल सा डाला। उनके काव्य में मस्तिष्क के समक्ष हृदय पराभूत सा हो गया है। यह भी सही है कि सुबंधु ने अपने काव्य के लिये जिस कथानक को चुना, उसके लिये अलङ्कार विहीन शैली उपयुक्त भी न होती। शृङ्गारिक वैभव के अंकन में, तीव्र मनोराग की अभिव्यञ्जना में एवं प्रभावोत्पादक वर्णन में यदि वे पञ्चतन्त्र की सी सरल गद्यशैली को अपनाते तो काव्य का रहा-सहा सौंदर्य भी नष्ट हो जाता। एक ही क्रिया पर आश्रित बड़े-बड़े वाक्यों की रचना करने में सुबंधु अद्वितीय हैं। आवश्यकतानुरूप उन्होंने यत्र-तत्र छोटे छोटे वाक्यों का भी प्रयोग किया है। एक ओर जहाँ उनका काव्य अलंकार भार से बोझिल हुआ है, वहाँ दूसरी ओर उनके अनुप्रासों में अनुपम संगीत भी है। उनके समासों में स्वर माधुर्य भी विद्यमान है।

इस प्रकार हम देखते हैं कि सुबंधु का गद्य न तो दण्डी की शैली से मेल खाता है और नहीं बाण की। सुबंधु की वासवदत्ता में सुबंधु का व्यक्तित्व सर्वथा पृथक् और सर्वथा भिन्न ही दृष्टिगत होता है। इस अपने पृथक् व्यक्तित्व से ही सुबंधु अपनी एक मात्र कृति 'वासवदत्ता' से संस्कृत साहित्य में अमर हो गये हैं।

दण्डी ने जिस गद्य साहित्य को जन्म दिया था उसको सुबंधु ने न केवल आगे ही बढ़ाया प्रत्युत उसका परिष्कार भी किया, उसे अलंकृत कर सुसज्जित भी किया। यह बात दूसरी है कि अलंकारों का अत्यधिक

प्रयोग कर वे अपनी शैली के सौंदर्य किंवा लालित्य की रक्षा नहीं कर सके। फिर भी इतना तो मानना ही पड़ेगा कि सुबंधु में प्रतिभा तो थी ही साथ ही उनका शब्दशास्त्र एवं अलंकार शास्त्र सम्बंधी ज्ञान भी अगाध था। संस्कृत के वे प्रौढ पण्डित थे। उनका पाण्डित्य वासवदत्ता के पद-पद से बोल उठा है। उनके पाण्डित्य के समक्ष उनका कवि कुछ सहमा-सहमा है जिससे काव्य में पाण्डित्य प्रबल और काव्यत्व दुर्बल सा हो गया है।

९ संस्कृत साहित्य के गद्यकार

संस्कृत में हिन्दी आदि विभिन्न भाषाओं के समान गद्यकारों की एक लम्बी परम्परा किंवा लम्बी सूची नहीं है। संस्कृत में पद्य रचना करने की अपेक्षा गद्य रचना को अब भी कठिन माना जाता है। कहा है :—

"गद्यं कवीनां निकषं वदन्ति"

यही कारण है कि संस्कृत गद्य लेखन की ओर कतिपय मनीषियों ने ही लेखनी को उठाने का साहस किया है। संस्कृत के महिमा-मण्डित गद्यकारों में दण्डी का नाम सर्वप्रथम लिया जाता है। वैसे तो दण्डी ने दशकुमार चरित, काव्यादर्श एवं छन्दो विचिति नामक ग्रन्थत्रय का निर्माण किया, ऐसा प्रसिद्ध है किन्तु आधुनिक विद्वानों मे अन्तिम दो ग्रन्थो के सम्बंध में बड़ा मत-भेद है। कुछ लोग छन्दो विचिति के स्थान पर अवन्ति सुन्दरी-कथा को दण्डी की तीसरी कृति मानते है।

इसी प्रकार दण्डी के स्थिति काल के सम्बध मे भी विद्वत्समुदाय में मतैक्य नही है। कुछ लोग सिहली भाषा के अलकार ग्रन्थ 'शिव-वम-लंकर' नामक ग्रन्थ पर काव्यादर्श की छाप देखकर और उपर्युक्त ग्रन्थ के प्रणेता राजा सेन प्रथम का समय ८४६-८६६ ई० होने के कारण दण्डी का समय ८०० ई० से पूर्व निश्चित करते है। कुछ लोग अवन्ति सुन्दरी कथा मे वर्णित कथा के आधार पर दण्डी का समय सप्तम शताब्दी का अन्तिम चरण मानते है। काणे महोदय ने अपनी साहित्य

दर्पण की भूमिका में अनेक उदाहरण देकर यह सिद्ध किया है कि दण्डी आचार्य भामह के पूर्ववर्ती थे। काणे महोदय ने भामह का समय ६०० ई० के बाद का माना है। किन्तु अधिकांश विद्वान् भामह का समय ६०० ई० से पहले का मानते हैं। महाशय काणे ने विज्जिका का एक श्लोक उद्धृत कर अपने मत की पुष्टि की है। श्लोक इस प्रकार है—

'नीलोत्पलदलश्यामां विज्जकां मामजानता।
वृथैव दण्डिना प्रोक्तं सर्वशुक्ला सरस्वती॥'

विज्जका के अनेक श्लोकों का उदाहरण मुकल भट्ट एवं मम्मट भट्ट ने भी अपने ग्रन्थों में दिया है। यदि विज्जका ही विजयांका थी और वही द्वितीय पुलकेशी के कुमार चन्द्रादित्य की महारानी विजय भट्टारिका थी तो उसका समय ६६० ई० के समीप माना जाता है। यही कारण है कि काणे महोदय दण्डी का समय ६०० ई० समीप मानते हैं। किन्तु अन्य इतिहासकार दण्डी को सप्तम शताब्दी के अन्तिम चरण में मानते हैं। राजशेखरकृत शार्ङ्गधर पद्धति में एक और श्लोक मिलता है जिसके अनुसार दण्डी ने तीन ग्रन्थों की रचना की थी—

त्रयोऽग्नयस्त्रयो वेदा त्रयोदेवा त्रयोगुणाः।
त्रयो दण्डि प्रबन्धाश्च त्रिपुलोकेषु विश्रुताः॥

किन्तु यह कह पाना कठिन है कि कौन-कौन से तीन ग्रन्थों का प्रणयन दण्डी ने किया था। कुछ लोग मानते हैं कि दशकुमार चरित काव्यादर्श एवं अवन्ति सुन्दरी कथा को दण्डी ने लिखा, कुछ के मत से अवन्ति सुंदरी कथा तथा काव्यादर्श को दण्डी प्रतति मानते हैं। अधिकांश विद्वानों का मत है कि दशकुमार चरित, काव्यादर्श और छंदोविचिति ही दण्डी के ग्रंथ हैं। दशकुमार चरित की भाषा शैली भी सुबंधु और बाण से पहले की स्पष्ट प्रतीत होती है, यद्यपि पीटरसन

और याकोवी का मत इससे मेल नहीं खाता, वे दण्डी को वाण से वाद का सिद्ध करते है किंतु यदि दण्डी वाण के परवर्ती होते तो निश्चय ही उनकी शैली वाण की शैली से मिलती-जुलती होती। अतः दण्डी का स्थितिकाल ६०० ई० के आसपास स्वीकार किया जाना चाहिये। संस्कृत गद्य में दण्डी की दशकुमार चरित नामक कृति ही अधिक विश्रुत और लोकप्रिय हुई है।

दण्डी ने अपने दशकुमार चरित में तत्कालीन समाज के उच्च एवं निम्न वर्ग का बड़ी निपुणता के साथ अंकन किया है। दण्डी की सबसे बड़ी विशेषता यह है कि अनेक अवांतर कथाओं के होने पर भी वे मुख्य कथा में अवरोधक नहीं हुई। अर्थ की स्पष्टता, रस की सम्यक् अभिव्यक्ति, शव्यविन्यास की चारुता और कल्पना की उर्वरता दण्डी शैली के विशेष गुण हैं। वस्तुतः सुन्दर, सरल और सुवोध गद्य के निर्माता होने के नाते दण्डी संस्कृत साहित्य में अमर होकर रह गये है। दण्डी के सम्बंध में कवियित्री गंगा देवी का यह कथन उपयुक्त ही है—

"आचार्य दण्डिनो वाचामाचान्तामृत संपदाम्।
विकासो वेधसः पत्न्याः विलासमगि दर्पणम्॥"

इसके अनन्तर सुवंधु अपनी वासवदत्ता को लेकर सस्कृत के गद्य साहित्य में अवतरित होते है। किंतु यह संस्कृत का दुर्भाग्य ही कहा जायेगा कि संस्कृत के महाकवियो की तरह गद्यकारों ने भी अपने स्थितिकाल एवं जन्म स्थान आदि के वारे में अपनी कृतियों में जरा भी संकेत नहीं किया है। फलतः आज जो उनका तिथिकाल निर्धारित किया जाता है, वह केवल अनुमान के ही आधार पर होता है। सुवंधु का स्थितिकाल भी अनिश्चित ही है। कुछ विद्वान् लोग सुवंधु को वाण का परवर्ती मानते है, क्योंकि सुवंधु ने अपनी वासवदत्ता में वाण का अनुकरण किया है, जैसे—कादम्वरी में महाश्वेता और कादम्वरी

अपने-अपने प्रियतमों की मृत्यु पर स्वयं भी प्राण दे देने का संकल्प करती हैं, परन्तु आकाशवाणी उन्हें ऐसा करने से रोक देती है, वासवदत्ता में भी अपनी प्रेयसी के खोजाने पर कंदर्पकेतु की यही स्थिति दृष्टिगोचर होती है।

टीकाकार भानुचंद्र ने कहा है कि बाण ने अपनी कादम्बरी को अतिद्वयी कथा कहकर 'वासवदत्ता' और बृहत्कथा की ओर संकेत किया है। कारो महोदय का मत है कि बाण सुबन्धु के परवर्ती थे। बाण ने अपने हर्ष चरित में सुबंधुकृत वासवदत्ता का ही उल्लेख करते हुये कहा है :—

'कवीनामगलद्दर्पो नूनं वासवदत्तया ।
शक्त्येव पाण्डु पुत्राणां गतया कर्णगोचरम् ॥'

आचार्य वामन (८०० ई०) ने अपनी काव्यालंकार सूत्रवृत्ति में सुबंधु की वासवदत्ता और बाण की कादम्बरी का उल्लेख करते हुये इस प्रकार कहा है :—

"सुबन्धुबाण भट्टश्च कविराज इति त्रयः ।
वक्रोक्तिमार्गनिपुणाश्चतुर्थो विद्यते न वा ॥"

इससे स्पष्ट होता है कि ये दोनों बाण और सुबंधु सात सौ पचास ई० से पूर्व हुये होंगे। कविराज जिनका समय १२०० ई० है, ने अपने राघव पाण्डवीय में सुबंधु, बाणभट्ट तथा स्वयं को वक्रोक्ति में निपुण बताया है, ऐसा प्रतीत होता है कि कविराज ने इन तीनों का नामोल्लेख स्थितिकाल के अनुसार किया है। वाक्पतिराज ने अपने 'गौऽवहो' नामक पुस्तक में सुबंधु की रचना का तो उल्लेख किया है किन्तु बाण की रचना का नही। इससे यह प्रतीत होता है कि वाक्-पतिराज के समय तक सुबंधु प्रसिद्धि पा चुके थे किन्तु बाण प्रसिद्ध नही हो पाये थे। अतः सुबंधु बाण के पूर्ववर्ती लेखक सिद्ध होते हैं। सुबधु कृत वासवदत्ता के वर्णन में तथा भवभूतिकृत मालती माधव के वर्णन

में पर्याप्त साम्य दृष्टिगोचर होता है। सम्भव है कि भवभूति ने मालती-माधव के वर्णन में सुवंधु की रचना से प्रभावित होकर उसका कुछ अनुकरण किया हो। इस अनुमान के आधार पर भी सुवंधु भवभूति जिनका समय ७०० ई० है, के पूर्ववर्ती माने जा सकते है।

स्वर्गीय कीथ ने सुवंधु के इस वर्णन से—'न्यायस्थितिमिवोद्योत-करस्वरूपां, बौद्धसंगतिमिवालंकार भूषिताम्' यह निष्कर्ष निकाला है कि सुवंधु ने श्लेष द्वारा नैयायिक उद्योतकर एव बौद्ध धर्मकीर्त्ति के 'बौद्धसंगत्यलंकार' नामक ग्रन्थ की ओर इंगित किया है। इसके अति-रिक्त जिन भद्रक्षमा श्रमणकृत 'विशेषावश्यक भाष्य' में जिसका निर्माण छः सौ पचास ई० के लगभग हुआ था, वासवदत्ता और तरगवती का इस प्रकार उपलब्ध होता है :—

"जह वा निद्दिट्ठवसा वासवदत्ता तरगवइयाइ।
तह निद्देसम वसओ लोए मणुरवखवाओत्ति ॥"

अतः सुबन्धु का समय निर्विवाद रूप से ६०० ई० या इससे कुछ पहले मान लेना चाहिये।

दण्डी और सुवन्धु के वाद हमें हर्षचरित और कादम्बरी के प्रणेता श्री वाणभट्ट के संस्कृत गद्य साहित्य प्रखर एवं प्रौढ लेखक के रूप में दर्शन होते है। वाण ने संस्कृत गद्य का चरमोत्कर्ष कर दिखाया। वस्तुतः वाण सरीखे सुधी पुत्र को पाकर सुर भारती धन्य हो गई। हर्षचरित में उल्लिखित वाण की आत्मकथा से ज्ञात होता है कि ये शोणनद के पश्चिमी तट पर स्थित प्रीतिकूट नामक ग्राम के निवासी थे, वाल्यावस्था में ही इनके शिर से ममतामयी माँ के स्नेहिल आँचल की छाया उठ गई। पिता से ही उन्हें माता और पिता दोनों का प्यार मिला। थोड़े ही समय के वाद पिता की छत्र छाया भी विधि ने छीन ली। माता एव पिता के असमय में ही काल कवलित हो जाने से वाण का यौवन कुछ अव्यवस्थित तो हो ही गया, स्वेच्छाचारिता की ओर

भी उन्मुख हो गया। अपने मित्रों के साथ वे एक बार देशाटन के लिये निकल पड़े। उनके पास दैव प्रदत्त प्रखर प्रतिभा तो थी ही। इस प्रवास काल में वे कई राज दरबारों में गये, कई गुरुकुलों में शिक्षा प्राप्त की और अनेक विद्वानों का सत्संग कर ज्ञान और अनुभव के धनी होकर कई वर्षों के बाद अपने घर वापिस चले आये।

एक दिन राजा हर्षवर्धन के भाई कृष्ण के दूत ने आकर उन्हें एक पत्र दिया, जिसमें लिखा था कि कुछ लोगों ने महराज के पास तुम्हारी शिकायत की है। अतः यहाँ आकर शीघ्र ही तुम्हें अपने को निर्दोष सिद्ध करना चाहिये।

बाण ने राज दरबार में जाकर अपने को निर्दोष सिद्ध करते हुये राजा से अपनी स्वेच्छाचारिता के लिये क्षमायाचना करते हुये भविष्य में नियमित जीवन यापन करने की इच्छा प्रकट की। राजा ने पहले तो "महानयं भुजङ्गः" कहकर बाण की उपेक्षा की, किन्तु कुछ ही दिनों में बाण के चरित्र और उनकी विलक्षण प्रतिभा को देखकर वे बड़े प्रसन्न हुये। उन्होंने प्रसन्न होकर "वश्यवाणी कवि चक्रवर्ती" की उपाधि से बाण को सम्मानित किया, कुछ दिनों के उपरान्त जब बाण राजधानी से अपने घर लौटे तो उनके बन्धु बान्धवों ने उनका हार्दिक स्वागत किया, अपने सबसे छोटे चचेरे भाई के आग्रह पर इन्होंने हर्ष-चरित का प्रवचन किया। यहाँ तक तो बाण ने स्वयं ही अपने जीवन के बारे में लिखा है, किन्तु इसके बाद के उनके जीवन चरित का कोई उल्लेख नहीं मिलता।

हर्षचरित के समाप्त होने से पूर्व ही हर्षवर्धन दिवंगत हो गये। अनन्तर हर्ष के चरित्र को विस्तार के साथ लिखने की ओर संभवतः बाण का ध्यान नहीं गया, कादम्बरी कथा समाप्त करने से पूर्व ही स्वयं बाण भी गोलोकवासी हो गये। कादम्बरी कथा की परिसमाप्ति योग्य पिता की सुयोग्य संतान भूषण भट्ट ने की। डा० बूलर ने बाण

के पुत्र का नाम भूषण वाण माना है। तिलक मञ्जरीकार धनपाल ने अपने ग्रन्थ में वाण के पुत्र का नाम 'पुलिन' बताया है। कुछ भी हो, यह तो निर्विवाद है कि कादम्बरी कथा के अवशिष्ट अंश की पूर्ति वाण के पुत्र ने की थी।

वाणभट्ट हर्षवर्धन के सभा पण्डित थे। हर्षवर्धन का राज्याभिषेक ताम्रपत्रों एवं सुप्रसिद्ध चीनी यात्री ह्वेनसांग के संस्मरणों के आधार पर, ६०६ ई० में हुआ और हर्षवर्धन की मृत्यु ६४८ ई० में हुई। अतः वाण का समय सप्तम शताब्दी का पूर्वार्द्ध होना चाहिये। लगभग आठवीं शताब्दी से बारहवीं शताब्दी के प्रायः सभी लेखकों ने वाण तथा उनकी कृतियों का स्पष्ट उल्लेख किया है। इससे यह स्पष्ट होता है कि वाण का समय सप्तम शताब्दी का पूर्वार्द्ध ही था।

यद्यपि वाण के सर्वमान्य ग्रन्थ तो हर्षचरित एवं कादम्बरी ही हैं, तथापि कुछ लोगों का मत है कि उन्होंने चण्डीशतक, पार्वती परिणय और मुकुटताड़ितक नामक अन्य ग्रन्थों की भी रचना की थी। किन्तु इनके वाणप्रणीत होने के सम्बन्ध में विद्वानों में बड़ा मत भेद है। अतः मत भेद वाले विषय को छोड़ कर हर्ष चरित एवं कादम्बरी को ही हम वाणप्रणीत मानते है।

१० संस्कृत के बाणोत्तर गद्यकार

यद्यपि बाणोत्तर काल में भी गद्य काव्य लिखे गये, किन्तु बाण की प्रखर प्रतिभा के समक्ष या तो हतश्रीक हो गये या फिर उनमें मौलिकता के स्थान पर अनुकरणात्मकता के अधिक आ जाने से विद्वत्समाज में वे आदर प्राप्त न कर सके। बाणोत्तर कालीन अधिकाश लेखकों ने बाण का अनुकरण करने का प्रयास किया किन्तु बाण जैसी विलक्षण प्रतिभा एवं-संसार की सूक्ष्म निरीक्षण शक्ति के अभाव में वे अपने प्रयास में सफल न हो सके।

लगभग ग्यारहवीं सदी के पूर्वार्द्ध में धनपाल ने कादम्बरी के अनुकरण पर तिलकमञ्जरी का निर्माण किया, किन्तु धनपाल ने अपनी तिलकमञ्जरी में चित्रकला, प्रस्तरकला, वास्तुकला आदि अनेक कला-कौशलो का विशद विवेचन किया है, जिससे तिलकमञ्जरी का अपना व्यक्तित्व उभर आया है। तत्कालीन समाज में प्रचलित विशेष कला-कौशलों का विवेचन होने से यह कादम्बरी का अनुकरणमात्र नहीं कही जा सकती।

इसके अतिरिक्त वादीभसिंह की गद्य चिन्तामणि का कथानक न केवल बाण की कादम्बरी से अनुप्राणित है, प्रत्युत कादम्बरी के समान ही है, किन्तु उसमें कोई विशेषता या चारुता न होने के कारण, उसे कोई महत्व नही दिया जा सकता। इसके बाद वामनभट्ट बाण रचित 'वेमभूपाल चरित' तो हर्ष चरित की अनुकृति मात्र है। इसके बाद बहुत दिनों तक संस्कृत गद्य साहित्यिक कोटि का प्रकाश में नही

आया। १६०१ में स्वर्गीय अम्बिकादत्त व्यास प्रणीत शिवराज विजय प्रकाश में आया। जो वास्तव में मौलिक होने के साथ-साथ प्राञ्जल और परिष्कृत गद्य साहित्य की कोटि में निःसंकोच रखा जा सकता है। इन्होंने अपने स्वल्प जीवन में ही लगभग ७८ पुस्तकें लिखकर सुरभारती के भण्डार की अतिवृद्धि की। ये सुन्दर कथा शिल्पी तो थे ही साथ ही पौरस्त्य एवं पाश्चात्य कथा शिल्पों के जानकार भी थे। संस्कृत में वीररसात्मक उपन्यास, वह भी ऐतिहासिक उपन्यास 'शिवराज विजय' को इन्होंने बड़ी निपुणता से लिखा है। यद्यपि इनकी इस कृति में कहीं-कहीं बाण के गद्य-काव्य की छाप परिलक्षित होती है, फिर भी यह कहना अनुचित नहीं होगा कि उनमें मौलिकता अधिक, अनुकरणात्मकता बहुत कम है। वे विद्वान कवि दोनों ही हैं। उनके ग्रन्थ में व्यास जी के कवि पर उनका पण्डित नहीं छा पाया है। तभी तो उनकी कृति आज न केवल संस्कृत के विद्वानों के लिये पठन-पाठन का विषय बनी हुई है, प्रत्युत अनुकरण का आदर्श भी बन गई है।

इसके बाद संस्कृत गद्यकारों किंवा निबन्ध लेखकों में श्री हृषीकेश शास्त्री भट्टाचार्य का नाम उल्लेखनीय है, उन्होंने 'विद्योदय' नामक संस्कृत पत्रिका का ४५ वर्षों तक सम्पादन तो किया ही, साथ ही अपने परिष्कृत और सरल निबन्धों से संस्कृत की सेवा भी की है। मैक्समूलर ने श्रीशास्त्री जी के कार्य की बड़ी प्रशंसा की थी। उनके निबन्धों के संग्रह का नाम 'प्रबन्धमञ्जरी' है। इस निबन्ध संग्रह में यद्यपि ग्यारह केवल निबन्ध हैं, तथापि ये बड़े ही महत्वपूर्ण हैं। इनकी भाषा बड़ी प्राञ्जल और प्रवाह पूर्ण है। संस्कृत में व्यंग्य शैली के गद्यकारों में शास्त्रीजी का नाम सदैव आदर से लिया जायेगा। इनके गद्य के सम्बन्ध में महामहोपाध्याय स्व० पं० गिरिधर शर्मा चतुर्वेदी का यह कथन सर्वथा सत्य और सटीक है :—

"मुद्रयति वदनविवरं मृतभाषावादिनां मुट्ठेराणाम् ।
स्मरयति च भट्टबाणं भट्टाचार्यस्य सा वाणी ॥"

संस्कृत गद्य के लेखन, उसके सम्वर्धन एवं प्रचार-प्रसार में न केवल विद्वान् पुरुषों का ही प्रत्युत विदुषी नारियों का भी महान् योगदान रहा है। इस क्रम में पण्डिता क्षमाराव का नाम विशेष उल्लेखनीय है। महाविदुषी क्षमाराव का जन्म ४ जुलाई सन् १८९० ई० में हुआ। इनके पिता का नाम शङ्कर पाण्डुरङ्ग था। संस्कृत के गद्य और पद्य दोनों ही में पण्डिता क्षमाराव को असाधारण अधिकार था। इन्होंने लगभग दस ग्रन्थों का प्रणयन किया था। इनकी कथामुक्तावली संस्कृत कथाओं की सुप्रसिद्ध पुस्तक है। इसमें पन्द्रह कहानियां संकलित है। इनकी गद्यशैली पण्डित अम्बिकादत्त व्यास जी के शिवराज विजय से अधिक प्रभावित है। कथा को कहते समय आस-पास के वस्तुओं का सरस दृश्य खींचते हुये चलना, इनकी प्रिय शैली है। ये उत्कृष्ट गद्य लेखिका थीं। अपनी साहित्य-साधना से भारती-भण्डार को आपूरित कर इन्होने सन् १९५४ ई० को इस असार संसार से विदा ले ली। यद्यपि उनका स्थूल शरीर अवश्य काल-कवलित हो गया तथापि संस्कृत गद्य लेखिकाओं के क्रम में उनका यशः शरीर सदैव अमर रहेगा।

संस्कृत गद्य साहित्य में पण्डित विश्वेश्वर पाण्डेय का नाम भी उल्लेखनीय है। उनकी एक मात्र उपलब्ध कृति मन्दारमञ्जरी संस्कृत साहित्य की अमूल्य निधि है। मन्दारमञ्जरी की गद्य शैली वाण की कादम्बरी से अनुप्राणित है। इन्होंने श्लेष का वर्णन करते समय अपने दार्शनिक ज्ञान का अच्छा परिचय दिया है किन्तु इससे कहीं-कहीं अश्लीलता दोष भी आ गया है। वस्तुतः इन्होंने अपने ग्रन्थ में साहित्य, दर्शन और व्याकरण की पावन त्रिवेणी प्रवाहित की है।

स्वातन्त्र्योत्तर काल में संस्कृत गद्य लेखन की ओर विद्वानों की अधिक अभिरुचि हुई है। यद्यपि बाण की कादम्बरी के टक्कर का

प्रौढ़ एवं परिष्कृत गद्य ग्रन्थ इस काल में भी दृष्टिगत नहीं होता तथापि अनेक मनीषियों ने इस दिशा में अपनी लेखनी को आगे बढ़ाया है। स्वातन्त्र्योत्तर संस्कृत साहित्य के गद्यकारों में भट्ट मथुरानाथ शास्त्री, कान्तानाथ शास्त्री, आचार्य दिवाकर देव शास्त्री, चारुदेव शास्त्री कलाधर शास्त्री, आचार्य श्रीधर प्रसाद पन्त 'सुधांशु', गजानन शास्त्री मुसलगांव कर, कान्तानाथ तैलंग, शिवदत्त शर्मा चतुर्वेदी, आदि विद्वानों के नाम विशेष उल्लेखनीय है। उपर्युक्त सभी महानुभाव आधुनिक शैली में संस्कृत-गद्य का प्रणयन कर गद्य साहित्य के विकास में अपना अपूर्व योगदान दे रहे हैं।

११ शिवराज-विजय में प्रकृति चित्रण

प्रकृति की रूप माधुरी का अंकन करना कवियों का प्रिय विषय रहा है। वह कवि ही क्या, जिसने प्रकृति के चित्रण में अपनी समस्त कल्पना शक्ति को न उरेहा हो। संस्कृत में तो यह प्रथा अत्यन्त पुरातनी रही है। शायद ही संस्कृत का कोई ऐसा कवि हुआ होगा जिसने किसी न किसी रूप में प्रकृति का हृदयहारी अंकन न किया हो। अपने इस अंकन में वे ही कवि सफल हो सके हैं जिन्होंने प्रकृति को समीप से देखा, परखा और समझा है। जो कवि जितना यायावर रहा और जिसकी कल्पना शक्ति जितनी उर्वर रही उसका अंकन उतना ही हृदयस्पर्शी, मनोहर, और चिरस्थायी हुआ है।

प्रकृति का रूप सर्वत्र और सर्वदा सौम्य और मधुर नहीं हुआ करता, कहीं वह चन्द्रमुखी तन्वङ्गी रमणी के समान कोमल और मधुर है, तो कहीं कालायस कर्कशा कृत्या के समान भयंकर और सर्वग्रासी। अनुभवी और प्रत्यक्षदर्शी कवियों ने प्रकृति के इन दोनों ही रूपों को लिपिवद्ध कर चिरस्थायी बनाया है।

इसी क्रम में चलते हुए श्री अम्बिकादत्त व्यास जी ने भी अपने शिवराज विजय में प्रकृति-नटी का सुन्दर अंकन किया है। यद्यपि उनकी कृति में प्रकृति-वधू के सौम्य एवं कठोर दोनों ही रूपों का अङ्कन हुआ है तथापि यह कहना असंगत नहीं है कि व्यास जी जिस कुशलता के साथ प्रकृति के सौम्य रूप का शब्द चित्र उतार पाये हैं, उस दक्षता के साथ उसके कठोर रूप का अंकन करने में सफल नहीं हो सके हैं।

उनके पास प्रकृति के सौम्य रूप के अनुरूप कोमल शब्द शैय्या, ललित वाक्य विन्यास आदि तो है, किन्तु उसके कठोर रूप के अनुरूप विकट शब्द योजना एवं दीर्घकाय समासों का दृढ़ बन्ध प्रायः नहीं है। व्यास जी की प्रकृति का एक कठोर रूप देखिये:—

"सुदूर मस्मात्स्थानात् कोङ्कण देशः, मध्ये च विकटा अटव्यः शतशः शैलश्रेणय, त्वरितधारा धुन्यः, पदे-पदे च भयानकभल्लूकाना-मम्वकृत-सङ्कलानाम्, मुस्ता-मूलो त्खनन घुर्घुशोयित-घोर-घोणानाम् घोणिनाम्, पङ्क-परीवर्तोन्मथित-कासाराणां, नरमांसं बुभुक्षूणां तरक्षूणाम्, विकट करटि-कट विपाटन-पाटव-पूरित-संहनानां सिंहानाम्, नासाग्र-विषाणशाण न-च्छल विहित-गण्डशैल-खण्डानां खङ्गिनाम्, दोदुल्यमान- द्विरेफ-दल- पेपीयमान-दान-धारा- धुरन्धराणां- सिन्धुराणां, कृपा-कृपण-कृपाण-च्छिन्न- दीनाध्वनीन-गल-तल गलत्पीनिधार-शोणित विन्दु-वृन्द- रञ्जित - वारवाण- सारसनोष्णीप धारणा- कलिता खर्व-गर्व-वर्वराणां-लुण्टक-निकराणां च सर्वथा साक्षात्कार-सम्भवः।"

(शिवराज विजय)

इसमें जहाँ प्रकृति के प्रखर रूप का चित्र खींचा गया है, वहाँ उसके अनुरूप शब्दों की योजना नहीं हो पाई है। फलतः विकट वर्णन में कुछ शौचित्य सा बना रहता हैं। इसके विपरीत प्रकृति के कान्त वर्णन में व्यास जी अत्यन्त सफल हुए हैं। चाहे चन्द्रोदय का वर्णन हो, चाहे सूर्यास्त का, चाहे सायङ्काल का अङ्कन हो अथवा अर्घ रात्रि का, व्यास जी ने बड़ी कुशलता का परिचय दिया है। प्रकृति सौम्य रूप के अंकन में तो व्यास जी का कवि कादम्बरी के कवि से किसी प्रकार कम नहीं है। सूर्यास्त का एक चित्र व्यास जी के शब्दों में देखिये:—

"जगतःप्रभाजालमाकृष्य, कमलानि-सम्मुद्रय, कोकान् सशोकी-कृत्य, सकल-चराचर-चक्षुः सञ्चार- शक्ति शिथिली-कृत्य, कुण्डलेनेव

निज मण्डलेन पश्चिमामाशां भूषयन्, वारुणी सेवनेनेव माञ्जिष्ठ-मञ्जिम रञ्जितः, अनवरत-भ्रमण-परिश्रम-श्रान्त इव सुषुप्सुः, म्लेच्छ-गण-दुराचार- दुःखाऽऽक्रान्त-वसुमती-वेदनामिव समुद्रशायिनि निविवेद-यिषुः, वैदिक-धर्म- ध्वंस-दर्शन- संजात निर्वेद इव गिरि-गहनेषु प्रविश्य तपश्चिकीर्षुः, घर्म-ताप तप्त इव समुद्रजले सिस्नासुः, सायं समय मवगत्य सन्ध्योपासन मिवविधित्सुः, "नास्ति कोऽपि मत्कुले, यः सकण्ठ-ग्रहं धर्म-ध्वसिनो यवन हतकात् यश्मिादस्मात् भारतगर्भान्निस्सारयेत" इति चिन्ताऽऽक्रान्त इव कन्दरि कन्दरेषु प्रविविक्षु भर्गवान् भास्वान्, क्रमशः क्रूर करानपहाय, दृश्य परिपूर्ण-मण्डलः संवृत्य, श्वेतीभूय, पीती भूय, रक्तीभूय च गगन धरातलाभ्यामुभयत आक्रम्यमाण इवाण्डाकृति मङ्गीकृत्य, कलि-कौतुक-कवलीकृत सदाचार-प्रचारस्य, पातक पुञ्ज-पिञ्जरित-धर्मस्य, च यवन-गण-ग्रस्तस्य भारतवर्षस्य च स्मारयन्, अन्धतमसे च जगत् पातयन्, चक्षुषामगोचर एवं सजातः।"

(शिवराज विजय)

इसी क्रम में बाण के सूर्यास्त का चित्र भी देखते चलिये। उन्होंने तपः पूत जाबालि के आश्रम मे सूर्यास्त का बड़ा ही सुन्दर चित्र खीचा है, जो इस प्रकार है:—

"अनेन च क्रमेण परिणतो दिवसः। स्नानोत्थितेन मुनिजनेनार्घविधिमुपपादयता यः क्षितितले दत्तस्तमम्बरतलगतः साक्षा दिव रक्तचन्दनाङ्गरागं रविरुदवहत्। ऊर्ध्वं मुखैरर्कबिम्बविनिहित दृष्टिभिरुष्मपैस्तपो धनरिवपरिपीयमानतेजः प्रसरो विरलातपो दिवसस्तनिमानमभजत्। उद्यत्सप्तर्षि- सार्थस्पर्श परिजिहीर्षयेव संहृतपादः पारावतचरणपाटलरागो रविरम्बर तलादलम्बत्। विहायधरणितल मुन्मुच्यकमलिनीवनानि शकुनय इव दिवसावसाने तपोवन तरुशिखरेषु पर्वताग्रेषु च रविकिरणाः स्थितिमकुर्वन्।"

(कादम्बरी)

देखा आपने? वाण के इस सूर्यास्त वर्णन से कहीं अधिक आकर्षक और प्रभविष्णु वन पड़ा है, व्यास जी का सूर्यास्त वर्णन। वस्तुतः प्रकृति के सौम्य और मधुर रूप के अंकन में व्यास जी के कवि का मन खूब रमा है। उन्होंने जिस चित्र को भी देखा, उसका साङ्गोपाङ्ग शब्दचित्र पाठकों के सामने उपस्थित कर दिया है। ब्रह्मचारि गुरु के शान्त, रम्य एवं मनोहर आश्रम की छटा व्यास जी के शब्दों में देखिये—

"कदलीदलकुञ्जायितस्य एतत्कुटीरस्य समन्तात् पुष्पवाटिका, पूर्वतः परम-पवित्र-पानीयं पेरस्सहस्र-पुण्डरीक-पटल-परिलसितं पतत्रि-कुल- कूजित-पूजितं पयः पूर पूरितंसर आसीत्। दक्षिणतश्चैको निर्भर-भर्भर ध्वनि-ध्वनित दिगन्तरः फल-पटलाऽऽस्वादचपलित चञ्चु-पतङ्ग-कुलाऽऽक्रमणाधिक-विनत-शाख-शाखि-समूह-व्याप्तः सुन्दर कन्दरः पर्वत खण्ड आसीत्।"

आश्रम का हृदयहारी दृश्य आंखों के समक्ष इसमें उपस्थित सा हो गया है। महाकवि वाण ने अपनी कादम्बरी में महर्षि जावालि के के आश्रम का जो वर्णन किया है, वह तो अपने ढंग का अनूठा है ही, किन्तु व्यास जी का ब्रह्मचारि गुरु आश्रम वर्णन भी कम सुन्दर नहीं है। अन्तर केवल इतना है कि वाण का वर्णन विस्तृत और विशद है। उन्होने वहाँ के एक-एक वस्तु एवं प्रत्येक कार्य-कलाप का अंकन किया है, किन्तु व्यास जी ने स्थूल रूप में केवल आश्रम का वाह्य परिवेश ही अंकित किया है। व्यास जी ने रात, की स्तब्धता का भी सटीक अंकन किया है। उदाहरण के रूप में एक सूनसान रात का चित्र देखिये:—

"धीर-समीर स्पर्शेन मन्दमन्दमान्दोल्यमानासु व्रततिषु, समुदिते यामिनी-कामिनी-चन्दन-बिन्दौ इव इन्दौ, कौमुदी-कपटेन सुधा धारामिव वर्षति गगने, अस्मन्नीतिवार्ता-शुश्रूषुषु इव मौनमाकलयत्सु पतग-कुलेषु, कैरव-विकाश-हर्ष-प्रकाश-मुखरेषु चञ्चरीकेषु,"

व्यास जी वस्तुतः वस्तु के यथा-तथ्य निरूपण में बड़े सफल हुए हैं। यह उनका सूक्ष्म प्रकृति निरीक्षण का ही परिणाम है कि उनके शब्द चित्र आज भी उतने ही सत्य है जितने पहले थे। उन्होंने अपनी भाषा को पाण्डित्य प्रदर्शन के फेर में पड़कर सुबन्धु की तरह बोझिल किंवा दुरूह भी नहीं बनाया। वे स्वाभाविक ढंग से उसे वह सकने में समर्थ हुए हैं। झञ्झावात का एक भयानक दृश्य व्यास जी के शब्दों में देखिये। जिसे पढ़ कर आपको ऐसा प्रतीत होगा कि आप अभी-अभी इस भयंकर आंधी से बड़ी कठिनाई से बच पाये हैं। देखिये—

"तावदकस्मादुत्थितो महान् झञ्झावातः, एकः सायंसमय प्रयुक्तः स्वभाव-वृत्तोऽन्धकारः, स च द्विगुणितो मेघमालाभिः। झञ्झा-वातोद्धूतैः रेणुभिः शीर्णपर्त्रैः कुसुम परागैः शुष्क पुष्पैश्च पुनरेष द्वैगुण्यं प्राप्तः। इह पर्वत-श्रेणीतः पर्वत श्रेणीः, वनाद् वनानि, शिखराच्छिखराणि, प्रपातात् प्रपाताः, अधित्यकातोऽधित्यकाः, उपत्य-कात् उपत्यकाः, न कोऽपि सरलोमार्गः, नानुद्भेदिनी भूमिः, पन्था अपि च नावलोक्यते।......पदे-पदे दोधूय माना वृक्ष-शाखाः सम्मुख माघ्नन्ति। परितः स-हडहडा-शब्दं दोधूयमानानां परस्सहस्र वृक्षाणां, वातावात-संजात-पाषाण पातानां प्रपातानाम्, महान्ध तमसेन ग्रस्य-मान इव सत्वानां क्रन्दनस्य च भयानकेन स्वनेन कवली कृतमिव गगन तलम्।"

इस प्रकार हम निःसंकोच कह सकते हैं कि शिवराज विजय के प्रणेता श्री व्यास जी का मन प्रकृति के सौम्य और कठोर दोनों ही रूपों के अंकन में खूब रमा है, किन्तु प्रकृति के कठोर रूप की अपेक्षा वे उसके सौम्य और मधुर रूप का ही अधिक कुशलता के साथ अंकन कर पाये हैं।

१२ शिवराज विजय में अलङ्कार योजना

अलंकार कविता-वनिता के शृङ्गार हुआ करते हैं, जिस तरह सुन्दर रमणी को अलङ्कार पहना देने से उसका सौंदर्य एवं माधुर्य कई गुना बढ़ जाता है, उसी तरह अलंकृत भाषा का चमत्कार अपूर्व ही हो जाता है। जिस तरह अनलंकृत रमणी रसिक जनों के मन को अपनी ओर आकृष्ट करने में असमर्थ रहती है, उसी तरह अनलंकृत भाषा भी सहृदय हृदयों को आह्लादित करने में समर्थ नहीं हो पाती। यही कारण है कि प्रत्येक सफल कवि या लेखक प्रसंगानुरूप अपनी भाषा अलंकृत करने की दिशा में प्रयत्नशील रहता है। जो लेखक जितनी बुद्धिमत्ता के अनुरूप अपने काव्य को अलंकृत कर पाता है, वह उतना ही साहित्य के क्षेत्र में महत्वपूर्ण स्थान बना लेता है।

महामनीषी पं० अम्बिकादत्त व्यास जी ने भी अपने शिवराज विजय में भारती को सजाया है जिससे उनकी गिरा मनोहरा हो उठी है। यद्यपि उन्होंने अपनी भाषा को अलंकार भार से बोझिल नही किया है तथापि अलंकारों का यथास्थान सन्निविष्ट कर उन्होंने सुरभारती को आधुनिका विदुषी रमणी की तरह विभूषित किया है। बाण की भारती को यदि हम अत्यधिक अलंकार विभूषिता प्राचीना प्रौढ़ा कहें तो व्यास जी की वाणी को विरलालंकार विभूषिता आधुनिका तन्वङ्गी रमणी की संज्ञा दे सकते हैं। व्यास जी ने अपनी कृति शब्दालंकार और

अर्थालंकार दोनों का ही प्रयोग किया है, किन्तु उनके अर्थालंकार अधिक कमनीय और मनोहर बन पड़े है । व्यास जी के शब्दों में उत्प्रेक्षालंकार का एक उदाहरण देखिये:—

"गगन-सागर मीने इव, मनोज-मनोज्ञ हंसे इव, विरहि-निकृन्तन रौप्य-कुन्त-प्रांते इव, पुण्डरीकाक्ष-पत्नी-कर-पुण्डरीक पत्रे इव, शारदाभ्र-सारे इव, सप्त-सप्ति-सप्ति-पाद-च्युते राजत-खुरत्रे इव, मनोहरता-महिला ललाटे इव, कन्दर्प कीर्तिलताङ्कुरे इव, प्रजा-जन-नयन कर्पूर खण्डे इव, तमी तिमिर-कर्तन-शाणोल्लीढ-निस्त्रिंशे इव च समुदिते-चैत्र-चन्द्र-खण्डे ।"

व्यास जी का अनुप्रास भी दर्शनीय है । छोटे-छोटे वाक्यों में भी वे समासा बांधते हुए चलते है । देखिये—

"चञ्चचन्द्रहास-चमत्कार-चाकचक्य-चिल्लीभूत-चक्षुष्काः... ... चिन्ता-चक्र-मारूढा अपि कथं कथमपि कैश्चित् वीरवरैर्वर्धितोत्साहाः समर भूमिमवातरन् ।"

विरोधाभास का प्रयोग तो व्यास जी ने वाण की कादम्बरी के ही टक्कर का कर दिखाया है । शिवाजी के वर्णन के प्रसंग प्रयुक्त उनका विरोधाभास वरवस ही पाठकों को वाण की कादम्बरी की याद दिला देता है। शिवराज-विजय में विरोधाभास का एक उदाहरण देखिये—

"खर्वामिप्यखर्व-पराक्रमां, श्यामामपि यशः समूह श्वेतीकृत-त्रिभुवनाम्, कुशासनाश्रया मपि सुशासना श्रयां, पठन-पाठनादि परिश्रयानाभिज्ञामपि नीति निष्णातां, स्थूल-दर्शनामपि सूक्ष्म-दर्शनां, ध्वंसकाण्ड- व्यसिनिनीमपि धर्म-धौरेयी, कठिना-मपि कोमलाम्, उग्रामपि शान्ताम्, शोभित विग्रहामपि दृढ़-सन्धिवन्धां, कलित- गौरवा-मपि कलित लाघवां ।"

(शिवराज विजय)

इसी परिप्रेक्ष पर बाण के विरोधाभास का भी एक उदाहरण देखिये, कितना मिलता जुलता सा है:—

"शिशिर स्यापि रिपुजन संताप कारिणः, स्थिर-स्यापि अनवरतं भ्रमतः, निर्मलस्यापि मलिनी-कृताराति वनिता मुख-कमलद्युतेः, अति धवल-स्यापि सर्वजनराग कारिणः।"

चित्तौढ़ दुर्ग की क्षत्राणियो का कितने सहज और कितने सुन्दर रूप में व्यास जी ने वर्णन किया है, इसका अनुमान एक छोटे से उदाहरण से हो जायेगा। इसमें भी विरोधाभास अलकार की छटा दृष्टव्य है:—

"यदीय-चित्रपूर-दुर्गे परस्सहस्राः क्षत्रिय-कुलाङ्गनाः कमला इव विमलाः, शारदा इव विशारदाः, अनसूया इवानसूयाः, यशोदा इव यशोदाः, सत्या इव सत्याः, रूक्मिण्य इव रूक्मिण्यः, सुवर्णा इव सुवर्णाः, सत्य इव सत्यः"

व्यास जी ने प्रायः सभी प्रमुख अलङ्कारों को अपने शिवराज विजय में सन्निविष्ट किया है। परन्तु जितना सुन्दर उनका विरोधाभास का प्रयोग हुआ है, उतना अन्य अलङ्कारो का नही। उपमा के प्रयोग में व्यास जी बाण की सी चारुता नहीं ला सके। बाण की मनोहर उपमा का एक उदाहरण देखिये.—

"कर्मेण च कृतं मे वपुषि वसन्त इव मधु मासेन, मधुमास इव नव पल्लवेन, नवपल्लव इव कुसुमेन, कुसुम इव मधुकरेण, मधुकर इव मदेन नवयौवनेन पदम्।"

(कादम्बरी)

बाण ने श्लिष्ट उपमाओं का भी प्रचुर प्रयोग किया है। उनकी श्लिष्ट उपमा का एक उदाहरण दृष्टव्य है:—

"यौवनमिवोत्कलिकावहुलं, षण्मुखचरितमिव श्रूयमाणक्रौञ्च-वनिता प्रलापम्, भारत- मिवपांडुधार्तराष्ट्रकुलकृत क्षोभं, कद्रूरतन युगलमिव नागसहस्रपीतपयोगण्डूषमच्छोदं नाम सरो दृष्टवान् ।"

(कादम्वरी)

इसके विपरीत व्यास जी ने सरल ढंग से तथा स्वाभाविक शैली में उपमा का प्रयोग किया है। ऐसा प्रतीत होता है कि उन्हें उपमाओं को ढूँढने में आयास नही करना पड़ा। स्वयं ही अलंकार उनकी वाणी में आते चले गये। व्यास जी की उपमा का एक नमूना पर्याप्त होगा—

"सेयं वर्णेन सुवर्णम्, कलरवेण पुंस्कोकिलान्, केशै रोलम्व कदम्बान्, ललाटेन कलाधर कलाम्, लोचनाभ्यां खञ्जनान् अधरेण वन्धुजीवम्, हासेन ज्योत्स्नाम्, ।"

(शिवराज विजय)

वाण की कादम्बरी की तरह व्यास जी के शिवराज विजय में भी एक ही ध्वनि उत्पन्न करने वाले ललित पद विन्यास की सुमधुर झंकार कर्णगोचर होती है। यथा—

"कर्पूरधूलिधूसरेषु मलयज रसलवलुलितेषु वकुलावलीवलयेषु स्तनेषु ।"

(कादम्वरी)

"गल-विलुलित-पद्मरागमाल:, मुक्तागुच्छ-चोचुम्ब्यमान भाल:, निश्वास प्रश्वास-परिमथित-मद्यगन्ध-परिपूरित-पार्श्व-देशान्तराल:, शोण-श्मश्रु-कूर्च-विजित नूतन-प्रवाल:, कञ्चुक-स्यूत-काञ्चन-कुसुम-जाल:,"

(शिवराज विजय)

डाक्टर स्वर्गीय भगवानदास जी के शब्दों में—"जहाँ वासवदत्ता और कादम्बरी के शब्दों की अरण्यानी में वेचारा अर्थपथिक सर्वथा

भूल-भटक कर खोजता है; उसका पता ही नहीं लगता, वहाँ शिवराज विजय के सुललित उद्यान में, उसकी सहज अलंकृत शैली में पाठक का मन खूब रमता है। कादम्बरी के शब्दों की विकट अरण्यानी की तरह शिवराज विजय के शब्द संसार को देखकर उसका मन घबरा नही उठता, अपितु उसमें प्रविष्ठ होकर उसके आनन्द को लेने की उत्सुकता को जगाता है।"

अतः स्पष्ट है कि व्यास जी अपने पूर्ववर्ती गद्यकारों के पद चिह्नों पर चलकर भी, उनसे असम्पृक्त ही रहे, उन्होंने प्राचीन गद्य कारो की तरह अलंकारो का प्रयोग तो किया, किन्तु अपने ढंग से। कविता-वनिता को अलंकृत किंवा सुसज्जित करने की उनकी कला उधार ली हुई न होकर स्वयं अपनी है जिससे उनकी कविता कामिनी अद्वितीय शोभाशालिनी हो उठी है।

१३ शिवराज विजय में वस्तु वर्णन

किसी वस्तु का यथातथ्य वर्णन करते हुये अपने कथानक को आगे बढ़ाना शिवराज विजय के प्रणेता व्यास जी की अपनी विशेषता है। वे जिस किसी वस्तु का भी वर्णन करते हैं, उसका वास्तविक स्वरूप अपने शब्दों के माध्यम से पाठकों के समक्ष खड़ा कर देते है। इस प्रकार की विशेषता यद्यपि संस्कृत के प्रत्येक गद्यकार में उपलब्ध होती है, तथापि व्यास के इस वैशिष्टय में एक अनिर्वचनीय स्वाभाविकता का सरल प्रवाह विद्यमान है। वे बड़े सहज ढंग से जिसका वर्णन करने लगते हैं, उसका पूरा चित्र पाठकों के समक्ष उपस्थित हो जाता है। गायक वेश में अफजल के शिविर की ओर प्रस्थान करते हुये गौर सिंह की छवि का व्यास के शब्दों में अवलोकन कीजिये—

"आत्मन: कुमारस्यापि च केशान् प्रसाधनिकया प्रसाध्य, मुखनार्द पटेन प्रोञ्छ्यचललाटे सिन्दूर विन्दुतिलकं विरचय्य, उष्णीषिकामपट्टाय, शिरशि सूचिस्यूतां-सौवर्ण-कुसुम-लतादिचित्र-विचित्रितामुष्णीषिका संधार्य-शरीरे हरित-कौशेय-कञ्चु—किकामायोज्य, पादयोः शोणपट्ट निर्मितमधो वसनमाकलय्य, दिल्लीनिर्मिते महार्हे उपानहौ धारयित्वा, लघीयसी तानपूरिकामेकां सहनेतुं सहचर हस्ते समर्प्य, गुप्तच्छुरिकां दन्तावलदन्त मुष्टिकां यष्टिकां मुष्टौ गृहीत्वा, पटवासैर्दिगन्तं दन्तुरयन्-करस्थपटखण्डेन च मुहुर्मुहुराननं प्रोच्छन् गायक वेशेण अपजलखान-शिविरा-मिमुखं प्रतस्थे।"

अफजल खां के वैभव का भी व्यास जी ने बड़े सुन्दर ढंग से अंकन किया है। तत्कालीन मुगल सामन्त वीर कम, विलासी अधिक हुआ करते थे, युद्धभूमि में भी उनकी संगीत सभा, वारवधू-नृत्य का आयोजन पुनीत परम्परा की तरह अक्षुण्ण रूप से चलता रहता था, सामन्त लोग आत्मश्लाघी हुआ करते थे, चापलूस लोग अपनी चिकनी-चुपड़ी बातों से हर समय उनको प्रसन्न करने की चेष्टा किया करते थे। श्री व्यास जी के शब्दों में अफजल खां के लोकोत्तर वैभव का एक उदाहरण देखिये—

"सम्मुखे च पृष्ठतः पार्श्वतश्चोपविष्टैः कैश्चित् ताम्बूलवाहकैः, अपरैर्निष्ठ्यूतादानभाजन हस्तैः, अन्यैरनवरत-चालित चामरैः, इतरै-र्बद्धाञ्जलिभिर्लालाटिकैः परिवृतम्, रत्नजटितोष्णीषिका मस्तकम्, सुवर्ण-सूत्र-रचित-विविध-कुसुम-कुड्मल-लता-प्रतानाङ्कित-कञ्चुकं, महोपबर्हमेकं क्रोडे संस्थाप्य, तदुपरि सन्धारित भुजद्वयम्, रजत-पर्यङ्के विविध-फेन-फेनिल-क्षीरधि-जल-तलच्छविमङ्गी कुर्वत्यां तूलिकायामुपविष्टमफजलखानं च ददर्श।"

पूर्वी बङ्गाल के वर्णन में तो व्यास जी ने अपनी अद्भुत देश दर्शन क्षमता एवं वर्णन कुशलता का परिचय दिया है। पूर्वी बङ्गाल के वर्णन को पढ़ते-पढ़ते आज भी वहाँ के जलते हुये अङ्गारों के समान लाल विश्व विख्यात सन्तरे और छोटी-छोटी नावों को लेकर हो-हो की आवाज करते हुये शिकार की खोज में निकल पड़ने वाले वहाँ के काले धीवरों के बच्चे आज भी पाठकों की आखों के समक्ष नाँच उठते है। पाठक यह भूल सा जाता है कि वह वर्णन पढ़ रहा है। उसे लगता है कि वह भी वहाँ की नदियों के किनारे खड़ा होकर उन लोगों के कोलाहल को अपनी आँखों से देख रहा हो। देखिये—

"पूर्वबङ्गमपि सम्यगवालुलोकदेष जनः। यत्र प्रान्त--प्ररूढां पद्मावली परिमर्दयन्तीपद्म व द्रवीभूता पयः-पूर-प्रवाह-परम्परा-भिः पद्मा

प्रवहति, यत्र ब्रह्मपुत्र इव शत्रुसेना-नाशन-कुशलः ब्रह्म-देशं विभजन् ब्रह्मपुत्रो नाम नदो भूभागं क्षालयति, यत्र साम्ल-सुमधुर-रस-परितानि फूत्कारोद्धूत-भूति-ज्वलदङ्गार-विजित्वर-वर्णानि जगत्प्रसिद्धानि नारङ्गाण्युद्भवन्ति, यद्देशीयानां जम्बीराणां रसालानां तालानां नारिकेलानां खर्जूराणां च महिमा सर्वदेश-रसज्ञानां साम्रेडं कर्णं स्पृशति, यत्र च भयंकराऽऽवर्त-सहस्राऽऽकुलासु स्रोतस्वतीषु सहोहोकार-क्षेपणी सिपन्तः अरित्रं चालयन्तः, वडिशं योजयन्तः, कुवेणीस्थ-म्रियमाण मत्स्य-परीवर्तनालोकमालोकमानन्दतः, अदृष्ट तटेष्वपि महाप्रवाहेषु स्वल्पया कूष्माण्ड फविककाकारया नौकया भिन्नाञ्जन-लिप्ता इव मसी स्नाता इव, साकारा अन्धकारा इव काला धीवर-वालानिर्भयाः क्रीडन्ति ।"

राजपूताने देश की महनीयता, वहाँ के क्षत्रियों की असाधारण वीरता का वर्णन व्यास जी के शब्दों में देखने योग्य वन पड़ा है। ये वे वीराग्रणी क्षत्रिय प्रवर हैं जिन्होंने मुसलमान राजाओं की अधीनता रूपी कीचड़ से अपने को कभी भी कलंकित नहीं होने दिया, अनेकानेक मुसीवतों के आने पर भी मुगल शासकों के समक्ष शिर नहीं झुकाया। जो टूट गये, विखर गये, पर झुके नहीं। जिनके पूर्वजों ने प्राण देकर भी अपने आन, वान और शान पर आँच नहीं आने दी। जिनकी क्षत्रियोचित ठसक और वीरोचित अकड़ के सामने वड़े-वड़े मुगल शासक पराभूत से वने रहे। उन्हीं क्षत्रिय वीरों का एक अंकन देखिये :—

'अस्ति कश्चन धैर्य-धारि-धुरन्धरैः, धर्मोद्धार-धौरेयैः, सोत्साह-साहस-चञ्चच्चन्द्रहासैः, सुशक्ति-सुशक्तिभिः, सद्यच्छिन्नपरिपन्थि-गल-च्छोणित-च्छुरित-च्छन्नच्छुरिकैः, भयोद्भेदनभिन्दिपालैः, स्वप्रतिकूल-कुलोन्मूलनानुकूल-व्यापार-व्यासक्तशूलैः, घन-विघ्न-विघट्टक-घर्घराघोष-घोर-शतघ्नीकैः, प्रत्यर्थिशुण्डि-शुण्डा-खण्डनोदण्ड-भुशुण्डीकैः, प्रचण्ड-दोर्दण्ड-वैदग्ध्य-भाण्ड-काण्ड-प्रकाण्डैः, क्षत्रियवर्यैरार्यवर्यैर्यवर्यैश्च व्याप्तो राजपूत्रदेशः।........अस्ति तस्मिन्नेव राजपुत्रदेशे उदयपुर नाम्नी

काचन राजधानी, यत्रत्याः क्षत्रियकुलतिलका यवनराज-वशंवदता-कर्दम-सम्मर्दैर्न कदाऽप्यात्मानं कलङ्कयामासुः।"

सुन्दर सरोवर के किनारे कुशासन बिछाकर नियमपूर्वक सन्ध्योपासन करने वाले मुनिजनों का व्यास जी ने कितना हृदयहारी चित्रण किया है, उसका एक उदाहरण देखिए :—

"तत्र वरटाभिरनुगम्यमानानां राजहंसानां पक्षति कण्डूति-कषण-चञ्चल-चञ्चुपुटानां मल्लिकाक्षाणां, लक्ष्मणा-कण्ठ-स्पर्श-हर्ष-वर्ष-प्रफुल्लाङ्गरुहाणां सारसानां, भ्रमद्-भ्रमर-झङ्कार-भार-विद्रावित-निद्राणां कारण्डवानां च तास्ताः शोभा पश्यन्तौ, तडाग तट एव पम्फुल्यमानानां मकरन्द-तुन्दिलानामिन्दीवराणां समीपत एवमसृण-पाषाण-पट्टिकासु कुशासनानि-मृगचर्मासनानि उर्णासनानि च विस्तीर्योपविष्टानां, गायत्री-जप-पराधीन-दशन वसनानां, कलित-ललित-तिलकालकानां, दर्भाङ्गुलीय-कालङ्कृता अंगुलीनां मूर्तिमतामिव ब्रह्मतेजसाम्, साकाराणामिव तपसाम्, घृतावतारामिव च ब्रह्मचर्याणां मुनीनां दर्शनं कृतवन्तौ।"

मन्दिर के पुजारी देवशर्मा जी के कक्ष का कितना स्वाभाविक वर्णन व्यास जी ने किया है। ऐसा प्रतीत होता है मानो पुजारी जी हमारे सामने बैठे हुये ऊँघ रहे हो और पान लगाने का सारा सामान हमारे समक्ष रखा हुआ हो :—

"एकस्यारकूट दीपिकायां प्रदीप एको ज्वलति, कुश-काशासनान्यनेकानि आस्तृतानि, आरक्त वेष्टनेषु वहुशः पुस्तकानि पीठिका अधिष्ठापितानि, नागदन्तिकासु धौतवस्त्राणि पट्टाम्बराणि च लम्बन्ते, एकस्मिन् शरावे मसीपात्रम्, लेखनी, छुरिका, गैरिकम्, उपनेत्रं चाऽऽयोजिनमस्ति। पात्रान्तरे च खादिरं चूर्णम्, आर्द्रवस्त्रवेष्टितानि नागवल्ली-दलानि, पूगानि, शंकुला, देव-कुसुमानि, एलाः जातिपत्राणि, कर्पूरं च विन्यस्त मस्ति। तन्मध्यत एव च महोपवर्हमेकंपृष्ठत आश्रित्य पादौ प्रसार्य उपविष्ट एकोवृद्धाः, सम्मुखस्थश्च छात्र एकः पादौ संवाहयति,

अपरश्च किञ्चित् तालीपत्र-पुस्तकं दीप समीपे पठति, वृद्धश्च किञ्चि-न्निद्रा-मन्थरश्छात्र-प्रश्नानुसारेण मध्ये-मध्ये आलस्य मुन्मुच्य, किमव्यर्द्ध-विशिथिल शब्दैरुत्तरयति।"

इस प्रकार हम देखते हैं कि श्री व्यास जी ने जिन वस्तुओं का अंकन किया है, उनका चित्र खींच कर रख दिया है। वस्तु वर्णन की कुशलता व्यास जी में कूट-कूट कर भरी हुई है। वस्तुतः व्यास जी अपने पूर्ववर्ती बाण आदि महाकवियों के समान ही वस्तु वर्णन में अत्यन्त सफल रहे हैं।

शिवराज-विजय में रस योजना

साहित्य का प्राण रस है। विना रस का कोई भी साहित्य निर्जीव लाश की तरह निरर्थक है। उसे साहित्य की कोटि में नही रखा जा सकता। अतः प्रत्येक कलमकार अपने साहित्य में रस-योजना की ओर विशेष रूप से सजग होता है। शिवराज विजय के प्रणेता श्री व्यास जी ने यद्यपि अपनी कृति मे नवों रसो का प्रयोग किया है किन्तु फिर भी इसमें मुख्य रस वीर ही है। अन्य रस इसके सहकारी या उपकारक होकर ही आये है। महाराष्ट्र केसरी शिवाजी के अप्रतिम शौर्य का अंकन करना, उनकी देशभक्ति, उनके स्वाभिमान का विशद रूप से चित्रण करना ही इस ग्रन्थ का मुख्य लक्ष्य है। शृङ्गार रस का इसमें अंकन बहुत थोडे रूप में हुआ। किन्तु जितना कुछ भी हुआ है, उसमें मादकता की लेशमात्र भी गन्ध नहीं है। शृंगार का इतना सुन्दर, शिष्ट और सात्विक रूप भी अंकित हो सकता है, यह देखकर आश्चर्य हुये विना नही रहता।

हाँ, करुण रस का कही-कहीं अत्यन्त मार्मिक वर्णन हुआ है। दो-एक उदाहरण पर्याप्त होंगे :—

"कोशले! कानि पातकानि पूर्वजन्मनि कृतवत्यसि? यद्-बाल्यएव त्वत्पितासंग्रामे म्लेच्छहतकैर्धर्मराज-नगरादुध्यन्यदुध्वन्यः कृतः। माता च तव ततोऽपि पूर्वमेव कथावशेषा संवृत्ता, यमलौभ्रातरौ च तव द्वादशवर्षदेश्यावेव आखेट व्यसनिनौ महार्ह-भूषण-भूषितौ तुरगावारुह्य वनं गतौ दस्युभिरपहृताविति न श्रूयेत तयोर्वार्ताऽपि, त्वं तु मम

यजमानस्य पुत्रीति स्वपुत्रीव मयैव सहनीता, वर्द्धयं से च अहह! वपतं वारं वारं वालैव मुन्दर कन्या-विक्रय-व्यसनिभिर्यवन-वराकैरप-ह्रयसे? भगवदनुग्रहेण च कथं कथमपि मत्कर-मुक्ता पुनः प्राप्यसे। परमात्मन्। त्वमेव रक्षैना मनाथां दीनां क्षत्रिय कुमारीम्।"

वीर रस की त्रिपथगा तो व्यास जी की रचना में शतधा प्रवाहित हुई है। सर्वत्र ही ओज गुण की प्रधानता दृष्टिगत होती है। गौर सिंह के मुख से अपने चरितनायक शिवाजी का जो अद्भुत शौर्य व्यास जी ने वर्णन कराया है, वह अद्भुत तो है ही, साथ ही स्पृहणीय भी है। तानरङ्क के वेष में गौरसिंह मुगल सेनापति अफजल खाँ को शिवाजी के शौर्य का इन शब्दों में परिचय देता हुआ कहता है :—

"को नामापरः शिववीरात्? स एव राजनीतौ निष्णातः, स एव सौन्धवाऽऽरोह-विद्या सिन्धुः, स एव चन्द्रहास चालन चतुरः, स एव मल्ल-विद्या-मर्मज्ञः, स एव वाण-विद्या-वारिधिः, स एवं पण्डित-मण्डल-मण्डनः, स एव धैर्य-वारि वारेयः, स एव वीर-वार-वरः, पुरुष-पौरुष परीक्षकः, स एव दीन-दुःख-दाव दहनः, स एव स्वधर्म-रक्षण-सक्षणः, स एव विलक्षण-विचक्षणः, स एव च यादृश गुणिजन-गुण-ग्रहणाऽऽग्रही वर्तते।"

\+ \+ \+ \+

"आगत एष शिव वीरः इति भ्रमेणापि सम्भाव्य अस्य विरोधिषु केचन मूर्च्छिताः निपतन्ति, अन्ये विस्मृत-शास्त्रास्त्राः पलायन्ते, इतरे महात्रासाऽऽकुञ्चितोदरा विशिथिल-वाससो नग्ना भवन्ति, अपरे च शुष्क मुखा दशनेषु तृणं सन्धाय साम्रेडं प्रणियात परम्परा रचयन्तो जीवनं याचन्ते।"

व्यास जी ने शिवराज विजय में वात्सल्य रस का भी एक स्थान पर बड़ा मनोहर अङ्कन किया है, डाकुओं के चुंगुल में पड़े हुये गौरसिंह

और श्याम सिंह अपनी छोटी बहिन सौवर्णी के अनुचिन्तन में किस अनुपम अनुराग के साथ डूबे हुए हैं, एक उदाहरण देखिये :—

"का दशा भवेत् साम्प्रतमावयोरनुजायाः सौवर्ण्याः! हन्त! हतभाग्या सा बालिका या अस्मिन्नेव वयसि पितृभ्यां परित्यक्ता, आवयोरप्यादर्शनेन क्रन्दनैः कण्ठं कदर्थयति। अहह! सततमस्मत्क्रोडैक क्रीडनिकाम्, सततमस्मन्मुखचन्द्र चकोरीम्, सततमस्मत्कण्ठरत्न मालाम्, सतत मस्मत्सह भोजिनीम्, बाल्यलुलितैः, मधुर-मधुरैः, सुधास्यन्दनैः, दाद-दादेति भाषणैः आवयोर्हृदयं हरन्तीम्, क्षणमात्रमस्मदनवलोकनेनापि वाष्प प्रवाहैः कपोलौ मलिनयन्तीम्, कथमेनां वृद्ध पुरोहितः सान्त्वयिष्यति।"

जैसा कि पहले ही कहा जा चुका है, शिवराज विजय में शृंगार रस अपने सात्विक स्वरूप को लेकर ही आया है। उसमें यौवन की मादकता न होकर हृदय का आकर्षण है, शरीर की वासना न होकर आत्मा का प्रेम है। प्रेम भी उत्फुल्ल कलिका की तरह अपने सौरभ से सुरभित करने वाला न होकर अन्तः स्थित सौरभ के अक्षय भण्डार युक्त विकाशमान कलिका की तरह मुकुलित है। इसमें न बाण की महाश्वेता की सी तड़पन है और न कादम्बरी का सा कामोत्ताप। इसमें तो एक ऐसा आकर्षण है, जो अपनी ओर खींचता तो है, पर मन के भावों को कलुषित नहीं करता। यह एक ऐसा सौन्दर्य और माधुर्य है जिसके सामीप्य की कामना तो होती है, पर उसे तोड़कर, मसल फेंकने का मन नहीं करता। उदाहरण के रूप में एक चित्र देखिये—

"सा चावलोक्य तमेव पूर्वावलोकितं युवानम्, व्रीडा-भर-मन्थराऽपि तातात्रया बलादिव प्रेरिता ग्रीवां नमयन्ती, आत्मनाऽऽत्मन्येव निविशमाना, स्वपादाग्रमेवाऽऽलोकयन्ती, मोदक-भाजन-सभाजितं सव्येतर-करं तदग्रे प्रसारयत्। स चात्मनो भावं कष्टेन संवृण्वंस्तद्धस्तादुदतूतुलत्।

पुनश्च सा अञ्चलकोणं कटि-कच्छ-प्रान्ते आयोज्य, हस्ताभ्यां मालिकां विस्तार्य नत-कन्धरस्य रघुवीर सिंहस्य ग्रीवायां चिक्षेप, ईषत्कम्पित-गात्रयष्टिश्च शनैर्यथागतं निववृते ।"

इस प्रकार हम देखते हैं कि श्री अम्बिकादत्त व्यास जी ने जिस रस की भी योजना की है, अधिकार पूर्वक की है। उनकी प्रत्येक रस योजना सुन्दर, शोभन, उपयुक्त और मनोहर है। मुख्य रूप से वीर रस के प्रणेता होते हुये भी उन्होंने सभी रसों पर जो अधिकार पूर्वक कलम चलाई है, वह कम सफलता की बात नहीं है।

---

१५ शिवराज विजय में सामाजिक चित्रण

अम्बिकादत्त व्यास जी ने अपने शिवराज विजय में मुगलकालीन समाज का सुन्दर चित्रण किया है। उन्होंने हिन्दुओं की असुरक्षित स्थिति, राजाओं का अकर्मण्य जीवन, सेनापतियों की विलासी प्रवृत्ति आदि को दिखाकर महाराज शिवाजी एवं उनके अनुचरों की जन्मभूमि भक्ति, उनकी राज भक्ति, उनके राष्ट्र का प्रेम मुक्त कण्ठ से वर्णन किया है। शिवराज विजय के अध्ययन से यह स्पष्ट होता है कि मुसलमानों के शासन काल में हिन्दू जनता का जीवन अत्यन्त असुरक्षित था। मुसलमान लोग सुन्दरी हिन्दू कन्याओं का अपहरण करके ,उन्हे बेंचा करते थे। मुसलमानों के लिये सदाचार की सारी सीमायें शिथिल हो गई थीं। हिन्दुओं के धर्मग्रन्थों, पवित्र स्थानों आदि को नष्ट करना मुसलमान लोग अपना पवित्र कर्तव्य समझते थे। हिन्दू राजाओं का स्वाभिमान तो नष्ट हो ही गया था, उनका बल और पराक्रम भी नष्ट हो गया था। वे मुगल शासकों की कृपा पर जीने वाले प्रशसा प्रिय मात्र रह गये थे। फलतः हिन्दू समाज में एक अनिर्वचनीय भय, एक अकल्पित कुण्ठा एक अकर्मण्य भावना घर करती जा रही थी। उनकी आस्था, उनका विश्वास उठता जा रहा था। ऐसे विकट समय में महाराष्ट्र केसरी ने अपने कान्त चरित्रों से हिन्दू जनता के साहस बल एवं पुरषार्थ की रक्षा की। उन्हें धैर्य एवं शक्ति प्रदान की। हिन्दुओं के अस्तगत शौर्य को पुनर्जीवृत कर तत्कालीन शासकों को नाकों चने चवबा दिये। उन्होंने अपने सैनिकों

मे आत्म विश्वास, देश भक्ति, राष्ट्र भक्ति एवं मातृभूमि सेवा की पुनीत भावनाओं को भरा। परिणाम यह हुआ कि औरङ्गजेब जैसा क्रूर शासक भी महाराज शिवाजी के नाम से त्रस्त होता रहा। उसने हर सम्भव उपाय किये, किन्तु महाराज शिवाजी के अद्भुत शौर्य के समक्ष उसे सदैव पराजित होना पड़ा। मुसलमान शासकों के अत्याचारों का एक हृदय विदारक दृश्य व्यास जी के शब्दों देखिए :—

"अधुना मन्दिरे मन्दिरे जय-जय ध्वनिः? क्व सम्प्रति तीर्थे-तीर्थे घण्टा नादः? क्वाद्यापि मठे-मठे वेदघोषः? अद्य हि वेदा विच्छिद्य वीथिषु विक्षिप्यन्ते, धर्मशास्त्राण्युद्धूय धूमध्वजेषु ध्मायन्ते, पुराणानि-पिष्ट्वा पानीयेषु पात्यन्ते, भाष्याणि भ्रंशयित्वा भ्राष्ट्रेषु भर्ज्यन्ते, क्वचि-न्मन्दिराणि भिद्यन्ते, क्वचित्तुलसी वनानि छिद्यन्ते, क्वचिद्दारा अपह्रियन्ते, क्वचिद्धनानि लुण्यन्ते, क्वचिदार्तनादाः, क्वचिद् रुधिरधाराः, क्वचिदग्नि-दाहः, क्वचिद्गृहनिपातः, इत्येव श्रूयते अवलोक्यते च परितः।"

तत्कालीन पारस्परिक वैर ग्रस्त राजाओं, नगरवधुओं के प्रेम-पाश में पड़ कर अपना सारा वैभव नष्ट करने वाले वीरों, एवं मिथ्या प्रशंसा करके अपना पेट पालने वालों विद्वज्जनों का एक वर्णन देखिये जिनके कारण भारतवर्ष को सैकड़ों वर्षों तक पराधीनता की वेड़ियों से जकड़ा रहना पड़ा।

'शनैः शनैः पारस्परिक-विरोध-विशिथिलीकृत-स्नेहबन्धनेषु राजसु, भामिनी-भ्रूभङ्ग-भूरिभाव-प्रभाव-पराभूत-वैभवेषु भटेषु, स्वार्थ-चिन्ता-सन्तान-वितानैक तानेषु अमात्य वर्गेषुप्रशंसामात्र प्रियेषु प्रभुषु, "इन्द्रस्त्वं वरुणस्त्वं कुवेरस्त्वं" इति वर्णनामात्र सक्तेषु बुद्धजनेषु,"।

मुगल सेनापति भी कम विलास प्रिय नही थे। उन्हें अपने कर्तव्य का कोई बोध नही था। नीति निपुण भी वे नही होते थे। उनका व्यक्तिगत चरित्र एक भ्रष्ट व्यक्ति से भी गिरा हुआ होता था। वे अपनी

विशाल वाहिनी के बल पर आक्रमण करते थे किन्तु उनकी भ्रष्टता किंवा अकर्ममण्यता से स्वयं उनके सैनिक लोग भी सन्तुष्ट नहीं रहते थे। इधर शिवाजी एक ऐसे शासक थे जिनकी सच्चरित्रता, कर्तव्य निष्ठा और राष्ट्र प्रेम का दुश्मन भी लोहा मानते थे। दुश्मन की सेना के सैनिक भी मुक्त कण्ठ से शिवाजी के अद्वितीय शौर्य, उनके रणकौशल, उनकी राजनीति पटुता की मुक्त कण्ठ से प्रशंसा करते थे तथा अपने सेनापति अफजल खाँ की इन शब्दों में भर्त्सना करते थे :—

"योऽयमपजलखानः सेनापति-पद-विडम्बनेऽपि "शिवेन योत्स्ये हनिस्यामि ग्रहीष्यामि वे" ति सप्रौढ़ि विजयपुराधीश महासभायां प्रतिज्ञाय समायातोऽपि शिव प्रतापञ्च विदन्नपि अद्य नृत्यम्, अद्य गानम्, अद्य लास्यम्, अद्यमद्यम्, अद्य वाराङ्गना, अद्य भ्रकुंसकः, अद्य वीणा-वादनमिति स्वच्छन्दैरुच्छिङ्खला चरणैर्दिनानि गमयति। न च यः कदापि विचारयति; यत् कदाचित् परिपन्थिभिः प्रेषिता काचन वारवधूरेव मामासवेन सह विषं पाययेत्, कोऽपिनट एव ताम्बूलेन सह गरलम् ग्रासयेत, कोऽपि गायक एव व वीणाया सह खड्ग मानीय खण्डयेदित्यादि। ध्रुव-ध्रुव एव तस्य विनाशः, ध्रुवमेव-पतनम्, ध्रुवमेव च पशुमारं मरणम्।"

देखा आपने यह स्थिति थी मुगल सेनापतियों की। यह हालत थी उनकी कर्तव्य परायणता की। इसके विपरीत शिवाजी स्वयं तो कर्तव्य निष्ठ, देशभक्त और वीर थे ही, साथ ही उनके अनुचर भी वीर और कर्तव्य परायण थे। उनके गुप्तचर बड़े सजग और प्रत्युत्पन्न मति थे। उनके गुप्त चरों की कुशलता का एक सुन्दर चित्र देखिये:—

"भगवन् सर्वं सुसिद्धम्, प्रतिगव्यूत्यन्तराल मङ्गीकृत सनातन-धर्म रक्षा महाव्रतानां धारित-मुनि-वेषाणां वीर वराणामाश्रमाः सन्ति। प्रत्याश्रमञ्च वलीकेषु गोपयित्वा स्थापिताः परश्शताः खड्गाः, पटलेषु तिरोभाविताः शक्तयः, कुशपुञ्जान्तः स्थापिताः भुशुण्डयश्च समुल्लसन्ति।

उञ्छस्य, शिलस्य, समिदाहरणस्य, इङ्गुदीपर्यन्वेषणस्य, भूर्जपत्र-परिमार्गणस्य, कुसुमावचयनस्य, तीर्थाटनस्य, सत्संगस्य च व्याजेन केचन जटिलाः, परे मुण्डिनः, इतरे काषायिणः, अन्ये मौनिनः, अपरे ब्रह्मचारिणश्च बहवः पटवो वटवश्चराः सञ्चरन्ति। विजयपुरा-दुड्डीयात्राऽऽगच्छन्त्या मक्षिकाया अप्यन्तः स्थितं वयं विद्मः, किं नाम एषां यवनहतकानाम्।"

शिवराज विजय के अध्ययन से यह भी स्पष्टतया परिलक्षित होता है कि तत्कालीन समाज में छल-बल से शत्रु पर विजय प्राप्त करना बुरा नहीं समझा जाता था। राजा लोग अपने से बलवान् प्रतिद्वन्दी को छल से अपने वश में करके विजयी हो जाया करते थे। अफजल खाँ भी इसी उद्देश्य से शिवाजी से मिलने के लिये गया था कि छल से, मित्रता की आड़ देकर शिवाजी को कैद कर लेगे और जीवित ही उन्हें पकड़कर बीजापुर नरेश के समक्ष उपस्थित कर देगे। उसकी यह योजना अपने कुशल गुप्तचरों के द्वारा शिवाजी को पहले ही ज्ञात हो चुकी थी, इसीलिये वे उससे भी अधिक सतर्क होकर, उससे मिलने के लिये गये थे। जहाँ एक ओर अफजल खाँ को अपनी विशाल-वाहिनी का भरोसा था, वहाँ दूसरी ओर शिवाजी को अपने बाहु बल पर, अपनी कुशाग्र बुद्धि पर, अपनी रण चातुरी पर तथा अपनी स्फूर्ति पर अधिक भरोसा था। तभी तो उन्होंने गले मिलने के बहाने ही अफजल खाँ को यमपुर का मार्ग दिखा दिया—

"शिव वीरस्तु आलिङ्गन-च्छलेनैव स्व हस्ताभ्यां तस्य स्कन्धौ दृढं ग्रहीत्वा, सिंह नखैर्जठरणी कन्धरां च व्यापादयत्, रुधिर दिग्धं च तच्छरीरं कटिप्रदेशे समुत्तोल्य भूपृष्ठेऽपोथयत्।

शिवाजी जैसे प्रबुद्ध वर्ग के शासक लोग गुप्तचरों की नियुक्ति एवं द्वारपालों की नियुक्ति बड़ी सावधानी से करते थे। इन पदों पर अत्यन्त विश्वास पात्र व्यक्तियों की ही नियुक्ति की जाती थी। द्वार-

पाल लोग न तो किसी बहकावे में आ सकते थे और न किसी प्रलोभन में ही। बड़े से बड़ा प्रलोभन भी उन्हें उनके कर्तव्य मार्ग से विचलित नहीं कर सकता था। स्वामी की आज्ञा के समक्ष वे ब्रह्मा तक की आज्ञा की परवाह भी नहीं करते थे। उनके लिये उनका स्वामी ही सर्वोपरि था। स्वामिभक्ति और कर्तव्य निष्ठा का एक सुन्दर उदाहरण शिवाजी के द्वारपाल के शब्दों में देखिये—

"संन्यासिन् ! संन्यासिन् !! बहूक्तम्, विरम, न वयं दौवारिका ब्रह्मणोप्याज्ञां प्रतीक्षामहे। किन्तु यो वैदिक धर्म रक्षाव्रती, यश्च संन्यासिनां ब्रह्मचारिणां तपस्विनाञ्च संन्यासस्य ब्रह्मचर्यस्य तपसश्चान्तरायाणां हन्ता, येन च वरि प्रसविनीयमुच्यते कोङ्कणदेश-भूमिः तस्यैव महाराज-शिववीरस्याऽऽज्ञां वयं शिरशा वहामः।"

इस गुप्तचर से यह गुप्त बात कहनी चाहिये या नही, यह इस गुप्त समाचार को गुप्त रख भी सकेगा या नहीं, इस बात को बहुत सोच-समझ कर, हर तरह से गुप्तचर की निपुणता, कार्यक्षमता, गाम्भीर्य आदि की परीक्षा लेने के उपरान्त ही राज पक्ष के लोग गुप्त चरों को कोई रहस्य की बात बतलाया करते थे, केवल उसके गुप्त चर होने मात्र से न तो उनकी सन्तुष्टि हो पाती थी और न ही वे उसे गुप्त सन्देशों के कहने योग्य समझते थे। तोरणदुर्ग का दुर्गाध्यक्ष शिवाजी के गुप्तचर की इसी प्रकार परीक्षा लेकर उसे रहस्य की बात बताने के लिये तैयार होता है—

"नैतेषु विषयेषु कदाऽपि सतन्द्रोऽवतिष्ठते महाराजः, स सदा योग्य मेव जनं पदेषु नियुनक्ति, नूनं बालोऽप्येषोऽबाल हृदयोऽस्ति, तदस्मै कथयिष्याम्यखिलं वृत्तान्तम्, पत्र च केषुचिद् विषयेषु समर्पयिषामि।"

महाराज शिवाजी मुगल शासकों के साथ सन्धि करके जीवित रहने की अपेक्षा स्वयं युद्ध करके मर जाना अधिक अच्छा समझते थे।

उनके समक्ष मुसलमानों के साथ युद्ध के अतिरिक्त और कोई विकल्प नहीं था, अपने इस विचार को उन्होंने आजन्म अपने कार्यों से चरितार्थ भी किया और अपने प्रचण्ड भुजवल से शत्रु के सदैव दाँत खट्टे किये। उन्होंने कभी भी मुगल सम्राट के समक्ष शिर नहीं झुकाया। मुगल शासक इसके लिये प्रयत्न कर कर के हार गये किन्तु शिवाजी ने कभी भी उनकी अधीनता स्वीकार नहीं की, अपने जीवन को खतरे में डालकर भी उन्होंने अपने प्रण को पूर्ण किया। मुसलमानों से प्रतिशोध लेने की भावना उनके हृदय में अत्यन्त प्रवल थी। शिवाजी के शब्दों में उनके हृदय में मुसलमानों के प्रति जलती हुई प्रतिशोध की आग की एक ज्वाला देखिये जिसमें पतिङ्गों की तरह मँडरा-मँडरा कर मुगल शासक नष्ट हो गये थे—

"ये अस्मदिष्टदेव मूर्तीर्भङ्क्त्वा मन्दिराणि समुन्मूल्य, तीर्थस्थानानि पक्वणीं कृत्य, पुराणानि पिष्ट्वा, वेद पुस्तकानि विदयि च आर्यवंशीयान् वलाद्यवनीकुर्वन्ति; तेषामेव चरणयोरञ्जलिं वद्धवा लालाटिकतामङ्गी कुर्याम् ? एवं चेद् धिक् मां कुल-कलङ्कजीवदम्। यः प्राण भयेन सनातन धर्मद्वेषिणां दासेरक्षतां वहेत्। यदि चाहमाहवे म्रियेय, वध्येय, ताड्येय वा तदैव धन्योऽहम्, धन्यौ च मम पितरौ। कथ्यतां भवादृशां विदुषामत्र का सम्मतिः ?"

इस प्रकार व्यास जी ने मुगल कालीन भारत की सामाजिक दशा का उस समय की राजनीतिक उथल-पुथल का शिवराज विजय में सुन्दर चित्रण किया है। वे प्राचीन भारत का चित्र खींचने में पूर्ण सफल हुए हैं।

---

१६ शिवराज विजय में धार्मिक चित्रण

यद्यपि अन्य ग्रन्थों में धर्म का अंकन प्रत्यक्ष रूप से न होकर परोक्ष रूप से हुआ है। कवियों ने प्रसंग वश ही धार्मिक भावनाओं किंवा धार्मिक स्थलों का अंकन किया है। किन्तु शिवराज विजय मे धार्मिक चित्रण परोक्षरूप से न होकर प्रत्यक्ष रूप से हुआ है। यदि यह कहें कि इसका आरम्भ ही धार्मिक भावना के अकन से हुआ है तो शायद अनुचित न होगा। क्योंकि इस ग्रन्थ का आरम्भ ही सूर्य-महिमा के प्रकटन एवं वन्दन से होता है:—

"अरुण एष प्रकाशः पूर्वस्यां मरीचिमालिनः। एष भगवान् मणिराकाश मण्डलस्य, चक्रवर्ती-खेचर चक्रस्य, कुण्डलमाखण्डल दिशः, दीपको ब्रह्माण्ड भाण्डस्य, प्रेयान् पुण्डरीक पटलस्य, शोक-विमोकः कोक-लोकस्य, अवलम्बो रोलम्बकदम्बस्य, सूत्रधारः सर्व व्यवहारस्य, इनश्च दिनस्य। अयमेव अहोरात्रं जनयति, अयमेव वत्सरं द्वादशसु भागेषु विभिनक्ति अयमेव कारणं षण्णामृतूनाम् एषएवाङ्गी करोति उत्तरं दक्षिणं चायनम्, एनेनैव सम्पादिता युगभेदाः, एनेनैव कृताः कल्पभेदाः, एन मेवाश्रित्य भवति परमेष्ठिनः परार्ध संख्या, असावेव चर्कर्ति बर्भर्ति जर्हर्ति च जगत्, वेदा एतस्यैव वन्दिनः, गायत्री अमुमेव गायति ब्रह्म-निष्ठा ब्राह्मणा अमुमेवाहररूपतिष्ठन्ते। धन्य एष कुलमूलं श्रीराम-चन्द्रस्य, प्रणम्य एष विश्वेषामिति उदेष्यन्तं भास्वन्त प्रणमन् निजपर्ण-कुटीरात निश्चक्राम कश्चित् गुरु सेवन पटुर्विप्रवटुः।"

शिवराज विजय में व्यास जी ने योगिराज के मुख जो ज्ञान चर्चा कराई है, वह भारतीय दर्शन का मूल तत्व है। इस संसार में जो कुछ भी होता है, वह उसी परमात्मा के इंगित से होता है। मनुष्य कुछ नहीं कर पाता, उस सर्वशक्तिमान् के समक्ष मनुष्य का बल तुच्छ और नगण्य है। अतः बुद्धिमान पुरुष को समस्त सुख-दुःखों को उसी परमपिता परमेश्वर का कृपा प्रसाद समझ कर सन्तुष्ट रहना चाहिये। अपने धैर्य और संयम से डिगना नहीं चाहिए। योगिराज के शब्दों में ईश्वर की अनन्त महिमा का वर्णन देखिये:—

"विलक्षणोऽयं भगवान् सकल-कला कलाप-कलनः सकल-कालनः करालः कालः। स एव कदाचित् पयः-पूर-पूरितानि अकूपार तलानि मरू करोति। सिंह-व्याघ्र-भल्लूक-गण्डक-फेरु-शश-सहस्र व्याप्तान्यरण्यानि जनपदी करोति, मन्दिर-प्रसाद-हर्म्य-शृङ्गाटक-चत्वरोद्यान-गोष्ठमयानि नगराणि च काननी करोति। निरीक्ष्यतां कदाचिदिहैव भारते वर्षे याय-जकैः राजसूयादि यज्ञा व्ययाजिषत, कदाचिदिहैव वर्ष वातातप हिम सहानि तपांसि अतापिषत। सम्प्रति तु म्लेच्छैर्गावो-हन्मन्ते, वेदा विदीर्यन्ते, स्मृतयः संमृद्यन्ते मन्दिराणि मन्दुरीक्रियन्ते, सत्यः पात्यन्ते, सन्तश्च सन्ताप्यन्ते। सर्वमेतत् माहात्म्यं तस्यैव महाकालस्येति कथं धीर धौरेयोऽपि धैर्य विधुरयसि ?"

शिवराज विजय के अध्ययन से यह भी ज्ञात होता है कि तत्कालीन समाज में अन्य देवी-देवताओं की अपेक्षा हनूमान जी को अधिक प्रतिष्ठा प्राप्त हुई थी। हनूमान ही लोगों के आदर्श थे। प्रत्येक दो कोस के मध्य हनूमान जी के मन्दिर स्थापित थे। उनमें तपस्वियों का बाना पहने शिवाजी के सेवक निवास करते थे। मुसल-मानों के प्रत्येक आचरण पर दृष्टि रखना, अवसर मिलते ही मुसलमान सैनिकों एवं सामन्तों को यमराज का अतिथि बनाना और विपत्ति में

पड़े हुए या मुसलमानों के द्वारा सताये हुए हिन्दुओं की रक्षा कर उन्हें सुरक्षित जगहों पर पहुँचाना ही उनका कार्य था । इतना सब कार्य इतनी तत्परता और निष्ठा से किया जाता था कि मुसलमान शासकों की बुद्धि चक्कर में पड़ी हुई थी । वे रात-दिन शिवाजी को अपने अधीन करने के लिये चिन्तित तो रहते ही थे, प्रयत्न शील भी रहते थे, किन्तु सफलता नहीं मिल पाती थी । सफलता न मिलने का एक मात्र कारण संन्यासियों के वेष में फैले हुए शिवाजी के गुप्तचर एवं हनूमान के मन्दिर थे । इन मन्दिरो मे हनूमान जी की वीरता पूर्ण मूर्ति स्थापित होती थी जिसे देखकर कायर मनुष्य के मन में भी एक बार शौर्य और धैर्य की भावना जग उठती थी । हनुमन्मूर्ति का एक चित्र देखिये:—

"ततोऽवलोक्य तां वज्रेणेव निर्मितां, साकारामिव वीरताम् गदामुद्यम्य दुष्टदल-दलनार्थं मुच्छलन्तीमिव केशरि-किशोर मूर्तिम्, न जाने कथं वा कुतो वा किमिति वा प्रातरन्धकार इव वसन्ते हिम इव, बोधोदयेऽबोध इव, ब्रह्म साक्षात्कारे भ्रम इव भटित्यपससार आवयोः शोकः ।'

इन मन्दिरों में आज कल के पुजारियों की तरह पुजारी न होकर चतुर, बुद्धिमान, कार्य कुशल, ज्योतिष के मर्मज्ञ विद्वान् मन्दिराध्यक्ष के रूप में निवास करते थे । उनकी सेवा करने एवं अन्य लोगों के साथ अपने पवित्र कर्तव्य का पालन करने के लिए उनके नीति-निष्णात और बुद्धिमान लोग रहा करते थे । उनके भोजन-वस्त्र आदि सुविधाओं का प्रबन्ध राज्य की ओर से होता था जिससे वे आवश्य-कतानुरूप दीन-दुःखियों की सहायता भी कर सकते थे । मन्दिराध्यक्ष सर्व साधन सम्पन्न होते थे । हथियारों के ढेर उनके पास रहते थे और

प्रत्येक आश्रम वासी हथियार चलाने में निपुण होता था। हनूमान जी की शक्ति में सब को अखण्ड विश्वास था। 'हनूमान जी सब कुछ ठीक कर देंगे' इस प्रकार का आश्वासन देकर मन्दिराध्यक्ष आगत सज्जनों को ढाढस बंधाकर उनका समयोचित सत्कार करते थे। मन्दिर में हर प्रकार की सामग्री निहित होती थी। वहाँ के सेवक अतिथियों की हर प्रकार से सेवा करते थे। मन्दिराध्यक्ष के आतिथ्य का एक उदाहरण देखिये:—

"हनूमान सर्वं साधयिष्यति, मास्मचिन्ता सन्तान-वितानैरात्मानं दुःखादुरुतम्। यथा सरलेनोपायेन कोङ्कणदेशं प्राप्स्यथस्तथा प्रभाते निर्देक्ष्यामि। साम्प्रतमित आगम्यताम्, पीयतामिदमेला-गोस्तनी-केसर- शर्करा-सम्पर्क-सुधा-विस्पर्द्धि महिषी दुग्धम्। दासा इमे पाद संवाहनैस्तैल सम्मर्द व्यंजन चालनैश्च भवन्तौ विगतक्लमौ विधारयन्ति, न किमपि भय मधुना वां हनूमतश्चरणयोः शरण मागतयोः। सुखेन सुप्यताम्। असंशय मेव प्रातरेव हनूमत्पूजन समये सर्वं कार्यं सेत्स्यति।"

जब मनुष्य भयभीत होकर, प्रताडित होकर लांछित होकर किंकर्तव्य विमूढ हो जाता है, जब उसका पुरुषार्थ, उसका बुद्धि कौशल शिथिल होकर जवाब दे जाते है, जब इस ससार मे कोई उसे अपना सहायक नही दिखता, जब वह अपना जीवन ही भार-भूत सा अनुभव करने लगता है, तब ईश्वर की शरण मे ही उसे आशा की क्षीण भलक दृष्टिगोचर होती है। वह सब की आशा छोड़ कर उसी परम पिता की शरण में जाता है और अपने उद्धार किंवा उत्थान की आशा करने लगता है।

इसी परिप्रेक्ष्य में जब हम शिवराज विजय का अध्ययन करते हैं, उसमें अङ्कित सामाजिक दशा का अवलोकन करते हैं तो यही

स्थिति पाते हैं। मुसलमानों के शताब्दियों से चले आ रहे अत्याचारों से हिन्दू जनता अत्यन्त उत्पीड़ित हो उठी थी। उन्होंने अपने सामने ही मन्दिरों को गिराये जाते हुए, स्त्रियों का सतीत्व लुटते हुए, बच्चों का अपहरण करते हुए, वेदों को फाड़े जाते हुए, सन्तों को सन्तप्त किये जाते हुए, बल पूर्वक हिन्दुओं को मुसलमान बनाये जाते हुए, अपनी आँखों से देखा था। प्रयत्न करने पर भी वे इस सब को बचा न सके। उनका बल, उनका पौरुष, उनकी बुद्धि नीच शासकों के सामने नष्ट हो गई।

फलतः उन्होंने पवन-सुत हनूमान को ही विपत्ति-विदारक के रूप में याद किया, आञ्जनेय का श्री विग्रह ही उन्हें सुख-शान्ति प्रदायक, दुःख नाशक प्रतीत हुआ। राम-सेवक ने जब वैदेही के दुःखों को दूर करने के लिये अपार समुद्र का लंघन कर डाला, विश्व के अप्रतिम वीर राक्षस रावण के देखते-देखते, उसकी सुवर्ण पुरी क्षण भर में नष्ट कर डाली, तब भला वे अपने अति, प्रिय भक्तों की विपत्ति को दूर नहीं करेंगे? यही सब सोच कर तत्कालीन समाज ने हनूमान को अपना लिया, और उन्हीं से साहस, स्फूर्ति, बल, विक्रम को अर्जित करने की प्रेरणा पाते रहे। यही कारण था कि उन दिनों राम, कृष्ण, विष्णु और शंकर के मन्दिरों की अपेक्षा हनूमान जी के अधिक मन्दिर थे। उन्होंने बल, विक्रम और शौर्य के देवता हनूमान जी को अपना आराध्य, अपना इष्ट चुना था। मानव-मन जब शत्रु के अत्याचारों से पीड़ित किंवा आहत होता है, तब उसे न तो भोगेच्छा रहती है और न मोक्षेच्छा ही। उसकी तो एक मात्र इच्छा शत्रु से बदला लेकर अपने अपमान का प्रतीकार करने की रह जाती है। अतः तत्कालीन समाज में जो अन्य देवताओं के मन्दिरों की न्यूनता दृष्टिगत होती है, वह उचित ही है।

राम, कृष्ण, विष्णु एवं शंकर ने स्वयं भी जिस पवन-तनय की सहायता से दुष्टों का दमन एवं शमन किया था और जिसके बल एवं

पुरुषार्थ की मुक्त कण्ठ से सराहना की थी, उसी को तत्कालीन मुगल शासकों से समस्त मानव समुदाय ने यदि अपना लिया तो इसमें आश्चर्य की क्या बात है?

इस प्रकार हम देखते हैं कि शिवराज विजय में यद्यपि सर्वत्र सनातन धर्म की महिमा का वर्णन है और उसी की रक्षा के लिये वीर वर शिवाजी जीवन भर कांटों की सेज पर सोते रहे, किन्तु फिर भी यह कहना अनुचित न होगा कि हनूमान जी ने जितना तत्कालीन जन-मानस को प्रभावित किया, उतना अन्य किसी देवी देवता ने नहीं।

---

१७ शिवराज-विजय में चरित्र-चित्रण

शिवाजी :—

महाराष्ट्र केसरी महाराज शिवाजी स्वधर्म रक्षा व्रती भारतीय संस्कृति एवं आदर्शों के प्रतिनिध है। पवित्र सनातन धर्म की रक्षा करने में अपने अमूल्य जीवन की बाजी लगा देने में भी वे नहीं चूकते। वीरता उनमें कूट-कूट कर भरी हुई है। उनका प्रताप, उन का शौर्य विलक्षण है। शत्रुओं के मन में शिवाजी की वीरता का ऐसा आतंक छाया रहता है कि हवा के चलने पर भी पक्षियों के उड़ने पर भी पत्ते के खड़-खड़ाने पर भी, उन्हें 'शिवाजी आगये यही आशङ्का होती है। उनका शौर्य वास्तव में अद्भुत है जो किले की चहार दीवारी को लांघ कर, पहरे दारों की उपेक्षा कर हजारों लोहे की जन्जीरों से बँधे हाथी के मस्तक के आघात को भी सह सकने वाले दरवाजों में घुसकर, नंगी तलवार, छुरी, बर्छी शक्ति, त्रिशूल, मुगदर और बन्दूक हाथ में लिये हुए पहरे दारों की उपेक्षा करके अपनी प्रियतमाओं के साथ पलंगों पर सोये हुए दुश्मनों की छाती पर चढ़ जाता है, गहन नींद में भी उन्हें नहीं छोड़ते स्वप्नावस्था में भी उन्हें चीर डालते हैं। उनकी चलती हुई तलवार की चकाचौंध में अरिदल की आंखें खुल ही नहीं पातीं।

शिवाजी ने अपने स्वल्प सैनिकों के साथ मुगल शासकों के साथ युद्ध करते हुए हिन्दू जनता की रक्षा की। औरङ्गजेब जैसे क्रूर शासक को उनके सामने हमेशा मुंह की खानी पड़ी। स्वाभिमान, देश प्रेम,

और मातृभूमि प्रेम शिवाजी के रग-रग में भरा हुआ था। आजीवन अपने सारे भोग विलासों को छोड़कर वे मुगल शासकों से युद्ध करते रहे और उन्हें नीचा दिखाते रहे। वे बड़े अध्यवसायी, कर्मठ, निष्ठावान् और सच्चरित्र थे। उनका चरित्र न केवल हिन्दुओं के लिए अपितु मुसलमानों के लिए भी आदर्श था। राजनीतिज्ञ तो वे थे ही साथ ही वे बड़े कूटनीतिज्ञ भी थे। उनकी कूट-नीतिज्ञ के सामने बड़े-बड़े बादशाह मात खा जाते थे।

कठोर परिश्रम

एक सामान्य सामन्त के पुत्र होकर भी शिवाजी ने अपने अध्यवसाय, लगन और कठोर परिश्रम से उन्होंने वह काम कर दिखाये जिसे दूसरे लोग असम्भव नहीं तो कठिन अवश्य मानते हैं। 'कार्यं वा साधयेयम्, देहं वा पातयेयम्' इस प्रकार की उनकी प्रतिज्ञा थी जिसको उन्होंने निभाया। वस्तुतः शिवाजी के चरित्र एवं उनकी महनीयता के बारे में गौरसिंह का यह कथन पर्याप्त है:—

'सामान्य राजभृत्यस्य पुत्रः शिववीरो यदि नाम नाभविष्यत्स्वयमीदृश अर्जन्वलः, तत्कथं स्वर्ण देव-सदृश मञ्चर प्राप्स्यत्? तद्द्वारा समस्तं कल्याण-प्रदेश, कल्याण-दुर्ग च स्वहस्तगतमकरिष्यत् कथं तोरण-दुर्ग-भोग भाजनता मकलयिष्यत्? कथं तोरण दुर्गाद्, दक्षिण-पूर्वस्यां पर्वतस्य शिखरे महेन्द्र मन्दिर खण्डमिव धापितारिवर्ग डमरु-हुडुक्कार-तोषित भर्ग रायगढ़ नामक महादुर्गं व्यरचिष्यत्? कथं वा तपनीय भित्तिका-जटित-महारत्न-किरणावली-चिन्तयमान-महावितान वितति-विरोचित- प्रताप-तापित-परिपन्थि-निवह चन्द्रचुम्बन-चतुर-चारु-शिखर निकर भुशुण्डिकः किणाङ्कित-प्रचण्ड भुजदण्ड रक्षक-कुल-विधीयमान- परस्सहस्र- परिक्रम, घमद्धमद्दोधूयमानानेकध्वज- पटल-निर्मथित-महाकाश प्रताप-दुर्ग निर्मापयिष्यत्? कथं वा आगत एव शिव वीरः इति भ्रमेणापि सम्भाव्य अन्य विरोधिषु केचन मूर्च्छिता निवर्तन्ति,

अन्ये विस्मृत-शस्त्रास्चाः पलायन्ते, इतरे महामासाऽऽकुञ्चितोदरा विशिथिल वाससो नग्ना भवन्ति, अपरे च शुष्कमुखाः दशनेषु तृणं सन्धाय साश्रं डं प्रणिपात-परम्परा रचयन्तो जीवनं याचन्ते।"

वस्तुतः शिवाजी दृढ़ प्रतिज्ञ, सत्यसंकल्प, निष्ठावान्, कर्मठ, चरित्रवान्, साहसी और अद्भुत पराक्रमशाली पुरुष हैं। उन्हीं को इस शिवराज विजय का नायक बनाया गया है।

गौर सिंह तथा श्यामसिंहः—

ये दोनों उदयपुर राज्य के जमीदार खड्गसिंह के जुड़वां पुत्र थे। एक बार शिकार खेलने के लिये गये तो कम्बोज देश के लुटेरों ने उन्हें पकड़ लिया। उनके वस्त्राभूषणों को छीनकर उन्हें भी बन्दी बना लिया। देखने में अत्यन्त सुन्दर होने के कारण इन्हें किसी धनी व्यक्ति के हाथ अच्छे दामों में बेचने के लालच में पड़कर लुटेरों ने इन्हें मारा नहीं। ये दोनों भाई लुटेरों के बन्दी के रूप में कुछ दिनों तक रहते रहे। एक बार मौका पाकर डाकुओं के घोड़ों को छीनकर, उन्हीं की बन्दूकें लेकर वे डाकुओं के चुंगुल से निकल भागे। जल्दी-जल्दी बीहड़ जंगलों को पार करते हुए दैव योग से एक हनूमान जी के आश्रम में जा पहुँचे। मन्दिर के पुजारी ने उनका हार्दिक स्वागत किया और उनको ढाढस बंधाया। तदनन्तर उन्हें महाराज शिवाजी द्वारा रक्षित कोङ्कण प्रदेश में अपने विश्वस्त अनुचरों के साथ भेज दिया। कुछ दिनों बाद इन्होंने शिवाजी के दर्शन किये। अनन्तर ये दोनों भाई एक आश्रम में ब्रह्मचारी के वेष में रहने लगे। बाद में गौर सिंह महाराज शिवाजी का अत्यन्त विश्वासपात्र अनुचर तो हो ही गया साथ ही अत्यन्त चतुर गुप्तचर भी हो गया। यह स्वभाव से ही गम्भीर और वीर था। राजनीति के अतिरिक्त कूटनीति में भी निष्णात था।

इसी ने अफजल खाँ के शिविर में गायक के रूप में प्रवेश करके तथा अपने संगीत से उसे सन्तुष्ट कर, उसके सारे कार्य-कलापों किंवा

सारी योजनाओं को ज्ञात करके महाराज शिवाजी की सहायता की थी। यदि महाराज शिवाजी के पास गौरसिंह जैसा गुप्तचर न होता तो सम्भव था कि वे अफजल खाँ जैसे दुष्ट सेनापति को न मार पाते। गौर सिंह न केवल कूटनीतिज्ञ था प्रत्युत वह बहुदर्शी और बहुश्रुत भी था। संगीत शास्त्र में भी उसका असाधारण अधिकार था। अपनी बहुज्ञता, बहुदर्शिता और संगीतज्ञता का असाधारण परिचय देकर उसने मुगल सेनापति अफजल खाँ को आश्चर्य में डाल दिया था। वह देश काल एवं पात्र के अनुसार अपना वेष परिवर्तन करने एवं अपने अभिप्राय को छिपाने तथा अवसर के अनुरूप बातचीत करने में सिद्धहस्त था। मौका देखकर शिवाजी के अतुलनीय शौर्य का वर्णन करके अफजल खाँ सहित सारे मुसलमान वीरों के अन्तस को कँपा देना गौर सिंह जैसे चतुर गुप्तचर का ही कार्य था। जिसे सुन कर मुसलमान वीरों का शिवाजी को जीतने का आधा उत्साह समाप्त हो गया था और वे मन ही मन निरुत्साहित से हो गये थे। गौर सिंह के अन्तस में स्वामिभक्ति तो थी ही साथ ही देशभक्ति और मातृभूमि भक्ति भी कूट-कूट कर भरी हुई थी। वह निर्भीक, साहसी और वीर था। स्वयं महाराज शिवाजी ने उसकी प्रशंसा करते हुए इस प्रकार कहा था:—

"वीर ! कुशलोऽसि, सर्व करिष्यसि, जाने तव चातुरीम्, तद् यथेच्छं गच्छ, नाहं व्याहन्मि तवोत्साहम्, नीति मार्गान् वेत्मि, किन्तु परिपन्थिनएते अत्यन्त निर्दयाः, अति कदर्याः, अति कूटनीतयश्च सन्ति, एतैः सह परम परम सावधानतया व्यवहरणीयम्। इति कथयित्वा शिव वीरस्तं विससर्ज।"

श्यामसिंह गौरसिंह का अनुचर और अपने से बड़ों का सेवक और आज्ञा पालक था। गौरसिंह जैसी निपुणता, नीति निष्णातता, विपश्चितता, कार्यपटुता उसमें दृष्टिगोचर नहीं होती। उसका चरित

एक अच्छे भाई, अच्छे सेवक और आज्ञापालक शिष्य के रूप में ही अंकित हुआ है।

सौवर्णी—

सौवर्णी गौरसिंह और श्यामसिंह की छोटी वहिन है जो वचपन में ही उनसे विछुड़ गई थी। पुरोहित देव शर्मा ने ही उसका लालन-पालन किया था। एक वार गौरसिंह ने उसे मुसलमान युवक के हाथ से वचाया था। यद्यपि वह उस समय उसे पहचान न पाया था क्योंकि उसे उसके वहाँ होने का ज्ञान भी न था और वचपन से ही विछुड़ जाने से उसे वह पहचान भी नहीं सका था। वाद में पुरोहित देव शर्मा के आ जाने पर उसे ज्ञात हुआ था कि सौवर्णी उसी की वहिन है। सौवर्णी अपने नाम के अनुरूप ही अनुपम सुन्दरी और गुणवती थी। पुरोहित देव शर्मा ने ही इसे माता और पिता का स्नेह दिया था और अपनी पुत्री के समान ही उसका लालन-पालन किया था। इसके असाधारण रूप-राशिको एवं अप्रतिम गुणों की एक झलक पाकर ही रघुवीर सिंह जैसा नवयुवक इस पर मोहित हो गया था। सौवर्णी भी रघुवीर सिंह जैसे श्रेष्ठ नवयुवक को देखकर उसके प्रति आकर्षित हो गई थी। इन दोनो का यह आकर्षण ही वाद में दाम्पत्य-सूत्र में आवद्ध होकर चिरस्थायी हो गया था।

रघुवीर सिंह—

रघुवीर सिंह शिवाजी का अत्यन्त विश्वास पात्र सेवक है। यह शिवराज विजय के आरम्भ में वर्णित ब्रह्मचारी गुरु का पुत्र है। किसी प्रकार वचपन से ही माता-पिता से विछुड़ गया है, महाराज शिवाजी का आश्रय पाकर तन-मन धन से उनकी सेवा में जुट पड़ा है। यह महाराज के कार्य के लिये अपने प्राणों की भी परवाह नहीं करता, भयंकर आपत्तियों से भी नहीं घवराता, वड़ी-वड़ी रुकावटें भी इसे लक्ष्य

से विचलित नहीं कर पातीं। अल्पवयस्क होने पर भी यह बड़ा गम्भीर और बुद्धिमान है। यही कारण है कि महाराज शिवाजी ने इसे अपना विशेष दूत नियुक्त किया है। एक बार जब यह सिंह गढ़ से तोरण दुर्ग में शिवाजी का एक गुप्त सन्देश लेकर गया तो वहाँ का दुर्गाध्यक्ष इसकी अल्पवयस्कता को देखकर आश्चर्य में पड़ गये; किन्तु जब उन्होंने बातों से इसका परिचय प्राप्त किया तब इसकी विलक्षण प्रतिभा, गम्भीरता और निपुणता को देखकर मन ही मन शिवाजी की पारखी प्रवृत्ति की प्रशंसा किये बिना न रह सके। रघुवीर सिंह इसी तोरण दुर्ग में सौवर्णी को देखकर विमुग्ध हो उठा था। किन्तु वह इतना कर्तव्य परायण था कि उसने सौवर्णी के व्यामोह में पड़कर अपने कर्तव्य में शिथिलता नहीं आने दी। अन्त में रघुवीर सिंह और सौवर्णी परिणय सूत्र में आबद्ध हो गये।

शिवराज विजय में प्रमुख पात्र :-

१—शिवाजी,
२—भूषण,
३—माल्यश्रीक,
४—अफजल खाँ,
५—शाइस्त खाँ,
६—कुमार मुअज्जम
७—जय सिंह
८—यशवन्त सिंह
९—रघुवीर सिंह
१०—सौवर्णी
११—देवशर्मा
१२—ब्रह्मचारी गुरु
१३—गौर सिंह,
१४—श्याम सिंह
१५—क्रूर सिंह
१६—बदरुद्दीन,
१७—चाँद खाँ ।

विशेष—इनमें प्रारम्भ से सात तक ऐतिहासिक पात्र हैं, शेष पात्रों की सृष्टि कवि कल्पना द्वारा की गई है ।

व्याख्या भाग

शिवराज-विजयः

"विष्णोर्माया भगवती यया सम्मोहितञ्जगत्"

[भागवतम् १०।१।२५]

व्याख्या—विष्णुर्ब्रह्म, तस्य माया सत्व-प्रधाना शक्ति विशेषः, सा चैषा भगवती समग्र षड्गुण सम्पन्ना सती चराचरात्मकं विश्व प्रपञ्चं सम्मोहितं सम्यग्रूपेण मोहित करोति। न कोऽपि तस्या सम्मोहनान्मुक्तः संसारे।

"हिंस्रः स्वपापेन विहिंसितः खलः साधुः समत्वेन भयाद्विमुच्यते"

[भागवतम् १०।७।३१]

व्याख्या—हिंस्रः=घातुकः, खलः दुष्टः जनः, स्वपापेन=स्वस्यैव पापेन, विहिंसितो-भवति=नष्टो भवति। न तु निमित्तान्तरैरित्यर्थः। साधुः=सज्जनः, परकार्य साधक मिति यावद्। समत्वेन=विवेचकत्वेन, शुभा शुभ निर्णयत्वेन वा। भयाद्विमुच्यते=अपगत भयो भवति। एतेनाम निश्वासे पापिनामशोभनाः साधूनाञ्च शोभना आचाराः प्रदर्शिता भवेयुरित्युपक्षिप्तम्। अत्र विष्णोर्नाम ग्रहणेन मङ्गला चरणमपि शिष्टाचारानुमित श्रुतिबोधितेति कर्तव्य ताकं सूचितम्।

भगवान् विष्णु की सकल ऐश्वर्यशालिनी माया ने सम्पूर्ण चराचरात्मक संसार को अच्छी तरह मोह में डाल रखा है। संसार में उसके सम्मोहन से कोई भी मुक्त नहीं है। संसार के सभी जन भगवान् विष्णु की त्रिगुणात्मिका माया से आवद्ध हैं।

दुष्ट व्यक्ति अपने ही पापों से मारा जाता है उसे मारने में उसके किये हुए पाप ही कारण हुआ करते हैं, अन्य कारणान्तरों से वह नहीं

मारा जाता। सज्जन व्यक्ति अपनी समबुद्धि से सारे भयों से मुक्त रहता है। पर हित साधक मनुष्य को सज्जन कहते है। जो परहित-निरत रहता है वह कभी भी भयभीत नही रहता। इसमें उसकी समत्व बुद्धि ही कारण हुआ करती है।

विशेष :—श्रीमद्भागवत के इन उद्धरणो से लेखक ने यह ध्वनित किया है कि कोई हिन्दू कन्या किसी दुष्ट के द्वारा अपहृत की गई, उसको किसी सज्जन ने छुड़ा लिया और उस दुष्ट को मार डाला। किन्तु उसको उसके गर्हित पापों ने ही मार डाला, क्योंकि पापी लोग अपने ही पापो से मारे जाते है।

अरुण एष प्रकाशः पूर्वस्यां भगवतो मरीचिमालिनः। एष भगवान् मणिराकाशमण्डलस्य, चक्रवर्ती खेचर-चक्रस्य, कुण्डलमाखण्डलदिशः, दीपको ब्रह्माण्डभाण्डस्य, प्रेयान् पुण्डरीकपटलस्य, शोक-विमोकः कोक-लोकस्य, अवलम्बो रोलम्बकदम्बस्य, सूत्रधारः सर्वव्यवहारस्य, इनश्च दिनस्य। अयमेव अहोरात्रं जनयति अयमेव वत्सरं द्वादशसु भागेषु विभनक्ति, अयमेव कारणं षण्णामृतूनाम्, एष एवाङ्गीकरोति उत्तरं दक्षिणं चायनम् एनेनैव सम्पादिता युगभेदाः, एनेनैव कृताः कल्पभेदाः, एनमेवाऽऽश्रित्य भवति परमेष्ठिनः परार्द्धसङ्ख्या, असावेव चर्कर्ति बर्भर्ति जर्हर्ति च जगत्, वेदा एतस्यैव वन्दिनः, गायत्री अमुमेव गायति, ब्रह्मनिष्ठा ब्राह्मणा अमुमेवाहरहरुपतिष्ठन्ते। धन्य एष कुलमूलं श्रीरामचन्द्रस्य, प्रणम्य एष विश्वेषामिति उदेष्यन्तं भास्वन्तं प्रणमन् निजपर्णकुटीरात् निश्चक्राम कश्चित् गुरुसेवन-पटुर्विप्रबटुः।

श्रीधरी—पूर्वस्यां=पूर्व दिशा में, अरूपा एष प्रकाशः=यह लालिमा, भगवतो मरीचि मालिनः=भगवान् सूर्य की है। एष भगवान्=यह भगवान्, मणिराकाशमण्डलस्य=आकाश मण्डल के रत्न, चक्रवर्ती= सम्राट्, खेचरचक्रस्य=नक्षत्र समूह के, कुण्डलमाखलदिशः=पूर्व दिशा रूपी रमणी के कुण्डल, दीपको ब्रह्माण्ड भाण्डस्य=ब्रह्माण्डरूपी घर के

दीपक, प्रेयान् पुण्डरीक पटलस्य=कमलों के प्रियतम, शोक-विमोकः कोक-लोकस्य=चकोरों के शोक को दूर करने वाले, अवलम्बो रोलम्ब-कदम्बस्य=भ्रमरों के आश्रय, सूत्रधारः सर्वव्यवहारस्य=सारे क्रिया-कलापों के सञ्चालक, इनश्च दिनस्य=और दिन के स्वामी हैं। अयमेव=यह सूर्य ही, अहोरात्रं जनयति=दिन और रात के प्रवर्तक हैं, अयमेव वत्सर द्वादशसु भागेषु विभिनक्ति=ये ही वर्ष को बारह भागों में बांटते हैं, अयमेव कारणंषण्णां ऋतूनां=ये ही छः ऋतुओं के जनक हैं, एष एवाङ्गी करोति उत्तरंदक्षिणं च अयनम्=ये ही उत्तरा-यण और दक्षिणायन को करते हैं, एनेनैव सम्पादिताः युग भेदाः=इन्होंने ही युगों का विभाजन किया है, एनेनैवकृतः कल्पभेदाः=इन्होंने ही कल्पों का विभाग किया है, एतमेवाश्रित्य भवति परमेष्ठिनः परार्ध संख्या=इन्ही का आश्रय लेकर ब्रह्मा की परार्ध संख्या होती है, असौ एव=ये ही, चकर्ति=सृष्टि करते हैं, बर्भर्ति=पालन करते हैं, जर्हर्ति च जगत्=संसार का नाश करते हैं, वेदाः एतस्यैव वन्दिनः वेद इन्ही की वन्दना करते हैं, गायत्री अमुमेव गायति=गायत्री इन्हीं का गान करती है, ब्रह्मनिष्ठा ब्राह्मणा अमुमेवाहरहरुपतिपन्ते=ब्रह्मनिष्ठ ब्राह्मण प्रतिदिन इन्हीं की उपासना करते हैं, धन्य एष कुलमूलं श्रीरामचन्द्रस्य=राम के कुल पुरुष ये सूर्य देव धन्य हैं, प्रणम्य एष विश्वेषामिति=ये सब के प्रणम्य हैं, यह सोचकर, उदेष्यन्तं भास्वन्तं=उदय होते हुये सूर्य को, प्रणमन्=प्रणाम करता हुआ, निजपर्ण कुटीरात् कश्चित् गुरु सेवन पटुः निश्चक्राम=गुरु सेवा में निपुण कोई बालक पर्ण कुटी से निकला।

हिन्दी—

पूर्व दिशा में भगवान् भुवन-भास्कर की लालिमा है। यह भगवान् रश्मिमाली आकाशमण्डल के मणि, नक्षत्र समूह के एक छत्र सम्राट्, पूर्व दिशा रूपी रमणी के कुण्डल, ब्राह्माण्ड रूपी घर को

प्रकाशित करने वाले दीपक कमलों के प्रियतम, चकोरों के शोक नाशक, भ्रमरों के आश्रय, समस्त लोक-व्यवहार के सञ्चालक, और दिन के स्वामी हैं। ये सूर्य देव ही दिन और रात के प्रवर्तक हैं, ये ही वर्ष को बारह भागों में बाँटते हैं, ये ही छः ऋतुओं के जनक हैं, ये ही उत्तरायण तथा दक्षिणायन को करते हैं, इन्होंने ही युगों के भेद किये हैं, इन्होंने ही कल्पों का विभाजन किया है, इन्हीं का आश्रय लेकर ब्रह्मा की परार्द्ध संख्या होती है, ये ही संसार की उत्पत्ति, पालन और संहार करते हैं। वेद इन्हीं की वन्दना करते हैं। गायत्री इन्हीं का गान करती है। तथा ब्रह्मनिष्ठ ब्राह्मण लोग प्रतिदिन इन्हीं की उपासना करते हैं, भगवान् श्रीराम के कुलपुरुष ये सूर्य देव धन्य हैं, ये सूर्य देव सबके प्रणम्य और वन्द्य हैं, यह सोचकर उदय होते हुये उर्मिमाली को प्रणाम कर कोई गुरु-सेवा में निपुण ब्राह्मण बालक अपनी पर्ण कुटी से बाहर निकला।

"अहो! चिररात्राय सुप्तोऽहम्, स्वप्नजालपरतन्त्रेणैव महान् पुण्यमयः समयोऽतिवाहितः। सन्ध्योपासन-समयोऽयमस्मद्गुरुचरणानाम्, तत्सपदि अवचिनोमि कुसुमानि" इति चिन्तयन् कदलीदलमेकमाकुञ्च्य, तृणशकलैः सन्धाय, पुटकं विधाय, पुष्पावचयं कर्त्तुमारेभे।

वटुरसौ आकृत्या सुन्दरः, वर्णेन गौरः, जटाभिर्ब्रह्मचारी, वयसा षोडशवर्षदेशीयः, कम्बुकण्ठः, आयतललाटः, सुबाहुर्विशाललोचनश्चाऽऽसीत्।

श्रीधरी—अहो=ओह, चिररात्राय=बहुत देर तक, सुप्तोऽहम्=मैं सोता रहा। स्वप्नजाल-परतन्त्रेणैव=नींद के जाल में ही, महान् पुण्यमयः=अत्यधिक पवित्र, समयोऽतिवाहितः=समय मैंने बिता दिया। अयं=यह, अस्मद्र गुरुचरणानाम्=हमारे पूज्य गुरु जी का, सन्ध्योपासन समयः=सन्ध्या, पूजा करने का समय है, तत्=इस लिये, सपदि=शीघ्र, कुसुमानि=फूलों को, अवचिनोमि=तोड़ लाऊँ, इति=

इस प्रकार, चिन्तयन्=सोचता हुआ, एकम्=एक, कदलीदलं=केले के पत्ते को, आकुञ्च्य=तोडकर, तृणशकलैः=तिनको के टुकड़ो मे, सन्धाय=जोड़कर, पुटकं विधाय=दोना बनाकर, पुष्पावचयं कर्तुं आरेभे =फूल तोडने लगा। असौ वटुः=यह बालक, आकृत्या सुन्दरः= आकृति से सुन्दर, वर्णेन गौरः=रंग में गोरा, जटाभिर्ब्रह्मचारी= जटाओं मे ब्रह्मचारी, वयसा=अवस्था में, षोडषवर्ष देशीय=लगभग सोलह वर्ष का प्रतीत होता था, कम्बुकण्ठः=इसका कण्ठ शङ्ख समान था, आयतललाटः=माथा चौड़ा था, सुबाहुः=इसकी भुजाये लम्बी थी, विशाल लोचनश्चासीत्=और इसकी आखे बड़ी-बड़ी थी।

हिन्दी—

ओह! मै बहुत देर तक सोता रहा। नींद में खोकर मैंने अत्यन्त पुण्यमय समय गँवा दिया। यह हमारे पूज्य गुरु जी का सन्ध्योपासना करने का समय है। इसलिये शीघ्र फूलों को तोड़ लाऊँ, यह सोचता हुआ वह बालक केले के एक पत्ते को मोड कर, तिनको के टुकडो मे जोडकर, दोना बनाकर, फूल तोडने लगा।

इस बालक की आकृति अत्यन्त सुन्दर थी, रंग गोरा था, जटाओं मे ब्रह्मचारी लगता था और अवस्था लगभग सोलह वर्ष की थी। इसका कण्ठ शङ्ख के समान था, माथा चौडा था, भुजाये बड़ी थी और आँखे भी बडी-बडी थी।

कदलीदलकुब्जायितस्य एतत्कुटीरस्य समन्तात् पुष्पवाटिका, पूर्वतः परम-पवित्र-पानीयं परस्सहस्र-पुण्डरीक-पटल-परिलसितं पतत्रि-कुल-कूजित-पूजित पयःपूरित सर आसीत्। दक्षिणतश्चैको निर्झर-झर्झर-ध्वनि-ध्वनित-दिगन्तरः फल-पटलाऽऽस्वाद-चपलित-चञ्चु-पतङ्ग-कुलाऽऽक्रमणाधिक-विनत-शाख-शाखि-समूह-व्याप्तः सुन्दर-कन्दरः पर्वत-खण्ड आसीत्।

श्रीधरी—कदलीदमकुञ्जायितस्य = केले के पेड़ों से घिरी होने के कारण कुञ्ज के समान प्रतीत होने वाली, एतत्कुटीरस्य = इस कुटीर के, समन्तात् = चारों ओर, पुष्पवाटिका = पुष्पोद्यान था। पूर्वतः = पूर्व की ओर, परम-पवित्र-पानीयं = अत्यन्त पवित्र जल वाला, परस्सहस्र-पुण्डरीक-पटल - परिलम्भितं = सहस्रों श्वेत कमलों से युक्त, पतत्रि-कुल-कूजित-पूजितं = पक्षियों के कलरव से शोभित पय-पूरपूरितं = जल से भरा हुआ, सरः आसीत् = तालाब था, दक्षिणतश्च = दक्षिण की ओर, एकः = एक निर्झर-झर्झर-ध्वनि-ध्वनित-दिगन्तरः = झरने की झर-झर ध्वनि से दिशाओं को गुँजाने वाली, फल-पटलाऽऽस्वाद-चपलित-चञ्चु-पतंग-कुलाऽऽक्रमणाधिक - विनत-शाख-शाखि-समूह-व्याप्तः = फलों को खाने से चञ्चल चोंच वाले पक्षियों के बैठने से और अधिक झुक जाने वाली डालियों वाले वृक्षों से व्याप्त सुन्दर कन्दरः = सुन्दर कन्दराओं वाली, पर्वतखण्ड आसीत् = पहाड़ी थी।

हिन्दी—

अभितः केले के पेड़ों से घिरी होने के कारण कुञ्ज के समान लगने वाली इस कुटी के चारों ओर पुष्पोद्यान था। इस कुटीर के पूर्व की ओर अत्यन्त स्वच्छ जल वाला, सहस्रों श्वेत कमलों से शोभित, पक्षियों के कलरवपूर्ण कोलाहल से मुखरित जल से पूर्णतः भरा हुआ एक सरोवर था। कुटी से दक्षिण की ओर झरने की झर-झर-ध्वनि से दिशाओं को गुञ्जति करने वाली, फलों को खाने के कारण चञ्चल चोंच वाले पक्षियों के बैठने से और भी अधिक झुक जाने वाली टहनियों वाले वृक्षों से व्याप्त सुन्दर कन्दराओं वाली एक पहाड़ी थी।

यावदेव ब्रह्मचारी बटुरलिपुञ्जमुद्धूय कुसुमकोरकानवचिनोति; तावत् तस्यैव सतीर्थ्योऽपरस्तत्समानवयाः कस्तूरिका-रेणु-रूषित इव श्यामः, चन्दन-चर्चित-भालः, कर्पूरागुरु-क्षोद-च्छुरित-वक्षोबाहु-

दण्डः, सुगन्ध-पटलैरुन्निद्रयन्निव निद्रा-मन्थराणि कोरक-निकुरम्बकान्त-राल-सुप्तानि मिलिन्द-वृन्दानि झटिति समुपसृत्य निवारयन् गौरबटुमेव-मवादीत्—

श्रीधरी—यावत्=जब तक, एष ब्रह्मचारीवटुः=यह ब्रह्मचारी बालक, अलिपुञ्जमुद्धूय=भौरों को उडाकर, कुसुमकोरकान्=फूलों की कलियाँ, अवचिनोति=तोड़ने लगा, तस्यैव=उसी का, सतीर्थ्यः=सह-पाठी, अपरः=दूसरा, तत्समानवयाः=उसी का समवयस्क बालक, कस्तूरिका-रेणु-रूषित इव श्यामः=जो, कस्तूरी के चूर्ण से सना हुआ सा साँवले रंग का था, चन्दन-चर्चित-भालः=जो माथे पर चन्दन लगाये हुए था, कर्पूरागुरु-क्षोद-च्छुरित-वक्षोबाहु-दण्डः=जो वक्षःस्थल पर, भुजाओं पर कपूर और अगर के पाउडर को रमाये हुए था, सुगन्धपटलैः=सुगन्ध-से, कोरकनिकुरम्बकान्तराल-सुप्तानि=कलियों के अन्दर सोये हुए, निद्रामन्थराणि=नींद से अलसाये हुए, मिलिन्द-वृन्दानि=भौरों के समूह को, उन्निद्रियन् इव=जगाता हुआ सा, झटिति=शीघ्रता के साथ, समुपसृत्य=पास जाकर, गौरवटुं=उस गोरे बालक को, निवारयन्=रोकता हुआ, एवं=इस प्रकार, अवादीत्=बोला,

हिन्दी—

ज्यों ही वह गोरा ब्रह्मचारी भौरों को उड़ाकर, फूलों की कलियाँ तोड़ने लगा, त्यों ही उसीका सहपाठी और उसीके समान अवस्था का दूसरा ब्रह्मचारी जो कस्तूरी के चूर्ण से सने हुए के समान सांवले रंग का था, जिसने मस्तक पर चन्दन लगा रखा था और वक्षःस्थल एवं भुजाओं में कपूर तथा अगर का पाउडर मल रखा था, कलियो के अन्दर सोये हुए नीद में अलसाये हुए भौरो के समूह को अपने शरीर की सुगन्ध से जगाता हुआ सा, शीघ्रता के साथ उस गोरे

वालक के पास जाकर- उसे फूल तोड़ने से रोकता हुआ इस प्रकार बोला—

"अल भो अलम् ! मयैव पूर्वमवचितानि कुसुमानि, त्वतु चिर रात्रावजागरीरिति क्षिप्रं नोत्थापितः, गुरुचरणा अत्र तडागतटे सन्ध्यामुपासते, संस्थापिता मया निखिला सामग्री तेषां समीपे। यां च सप्तवर्षकल्पाम्, यावनत्रासेन निःशब्दं रुदतीम्, परम-सुन्दरीम्, कलित-मानव-देहामिव सरस्वतीं सान्त्वयन्, मरन्द-मधुरा अपः पाययन्, कन्द-खण्डानि भोजयन्, त्वं त्रियामाया- यामत्रयमनैषीः, सेयमधुना स्वपिति, उद्बुद्धय च पुनरतथैव रोदिष्यति, तत्परिमार्गणीयान्येतस्याः पितरौ गृहं च—"

श्रीधरी—अलं भो अलम्=दस करो भई बस, मया एव=मैंने ही, पूर्व=पहले, अवचितानि कुसुमानि=फूल तोड़ लिये है, त्वं तु=तुम तो, चिरंरात्रा वजागरीति=रात में देर तक जागते रहे, इसलिये, क्षिप्रं=शीघ्र, नोत्थापितः=तुम्हे नही जगाया, गुरुचरणा=गुरू जी, अत्र=यहाँ, तडागतटे=तालाव के किनारे, सन्ध्यामुपासते=सन्ध्योपासन कर रहे है, मया=मैने, निखिला सामग्री=पूजा की सारी सामग्री, तेषां समीपे=उनके पास, संस्थापिता=रखदी है, यां च=जिस, सप्तवर्षकल्पाम्=लगभग सात वर्ष की, यावन त्रासेन=मुसलमानों के डर से, निःशब्दं रुदतीम्=सिसकियाँ भर-भर कर रोने वाली, परम सुन्दरीम्=अत्यन्त सुन्दरी, कलित-मानव-देहामिव सरस्वतीम्=मानव शरीर धारण करके आई हुई सरस्वती के समान कन्या को, सान्त्वमन्=धैर्य बंधाते हुए, मरन्द-मधुरा अपः पाययन्=पुष्परस मिश्रित जल पिलाते हुए, कन्दखण्डानि-भोजयन्=कन्दो के टुकड़ों को खिलाते हुए, त्वं=तुमने, त्रियामाया=रात के, यामत्रयं=तीन पहर, अनैषीः=विता दिये, सेयं=वह, अधुना स्वपिति=इस समय सो रही है, उद्बुद्ध्यच=जागने पर, पुनस्तथैव रोदिष्यति=फिर उसी तरह

रोने लगेगी, तत्=इसलिये, एतस्याः=उसके, पितरौ=माता-पिता गृहं च=और घर भी, परिमार्गणीयौ=ढूंढना चाहिए।

हिन्दी—

रहने दो भाई, रहने दो। मैंने पहले ही फूल तोड़ लिये हैं। तुम रात में देर तक जागते रहे थे, इसलिये तुम्हें जल्दी नहीं उठाया। गुरु जी यहाँ तालाव के किनारे सन्ध्योपासना कर रहे हैं। मैंने सारी सामग्री उनके पास रख दी है। जिस, लगभग सात वर्ष की अवस्था वाली, मुसलमानों के भय से सिसक-सिसक कर रोने वाली, अत्यन्त सुन्दरी, मानव शरीर धारण करके आई हुई सरस्वती के समान, कन्या को धैर्य बँधाते हुए, पुष्प-रस मिश्रित जल को पिलाते हुए, कन्दों के टुकड़ों को खिलाते हुए तुम ने रात के तीन पहर व्यतीत कर दिये थे, वह इस समय सो रही है, जागने पर फिर पहले के समान फिर रोने लगेगी. अतः उसके माता-पिता तथा उसके घर का पता लगाना चाहिए।

इति संश्रुत्य उष्णं निःश्वस्य यावत् सोऽपि किञ्चिद्वक्तुमियेष तावदकस्मात् पर्वतशिखरे निपपात उभयोर्दृष्टिः।

तस्मिन् पर्वते आसीदेको महान्कन्दरः। तस्मिन्नेव महामुनिरेकः समाधौ तिष्ठति स्म। कदा स समाधिमङ्गीकृतवानिति कोऽपि न वेत्ति। ग्रामणी-ग्रामीण-ग्राम्याः समागत्य-मध्ये-मध्ये तं पूजयन्ति प्रणमन्ति स्तुवन्ति च। तं केचित् कपिल इति, अपरे लोमश इति, इतरे जैगीषव्य इति, अन्ये च मार्कण्डेय इति विश्वसन्ति स्म। स एवायमधुना शिखरादवतरन् ब्रह्मचारि-वटुभ्यामदर्शि।

श्रीधरी— इति संश्रुत्य=यह सुनकर, उष्ण निःश्वस्य=गरम साँस लेकर, यावत्=ज्यों ही सोऽपि=उसने, किञ्चिद्वक्तुमियेष=कुछ कहना चाहा, तावत्=त्यों ही, अकस्मात्=अचानक, उभयोर्दृष्टिः=उन दोनों की दृष्टि, पर्वत शिखरे=पहाड़ की चोटी पर, निपपात=पड़ी।

तस्मिन् पर्वते=उस पहाड़ में, एकः महान् कन्दरः आसीत्=एक

वहुत वड़ी गुफा थी, तस्मिन्नेव=उसी गुफा में, एक: महर्षि:=एक सिद्ध तपस्वी, समाधौ तिष्ठति स्म=समाधि लगाये हुए थे। स:=उन्होंने, कदा=कब, समाधि मङ्गीकृतवान्=समाधि लगाई थी, इति=इस बात को, कोऽपि=कोई भी, न वेत्ति=नहीं जानता था। ग्रामणी-ग्रामीण ग्रामा:=गाँव के प्रमुख एवं ग्रामीण लोग, मध्ये-मध्ये=बीच-बीच में, समागत्य=जाकर, तं पूजयन्ति=उनकी पूजा करते थे, प्रणमन्ति=प्रणाम करते थे, स्तुवन्ति च=उनकी स्तुति करते थे। त=उनको, केचित्=कुछ लोग, कपिल इति=कपिल अपरे लोमश इति=कोई लोमश, इतरे जैगीषव्य इति=कोई जैगीषव्य अन्ये च मार्कण्डेय इति=कोई मार्कण्डेय, इति विश्वसन्ति स्म=समझते थे। स एवायमधुना=उन्हीं को इस समय, शिखरादवतरन्=पहाड़ की चोटी से उतरते हुए, ब्रह्मचारि वटुभ्यामदर्शि=दोनों ब्रह्मचारी बालकों ने देखा।

हिन्दी—

यह सुनकर, गरम साँस लेकर जब तक उसने कुछ कहना चाहा, तभी अकस्मात् उन दोनों ब्रह्मचारी बालकों की दृष्टि पहाड़ की चोटी पर गई।

उस पर्वत में एक बहुत बड़ी कन्दरा थी। उसमें एक सिद्ध तपस्वी समाधि लगाये हुए थे। उन्होंने कब समाधि लगाई, इस बात को कोई भी नहीं जानता था। यदा-कदा गाँव के गण्यमान्य लोग और ग्राम वासी जाकर उनका पूजन करते थे उन्हें प्रणाम करते थे और उनका वन्दन करते थे। कोई उन्हें कपिल समझता था तो कोई लोमश, कोई उन्हें जैगीषव्य समझता था तो कोई मार्कण्डेय समझता था। उन्हीं महर्षि को इस समय पर्वत-शिखर से उतरते हुए उन दोनों ब्रह्मचारियों ने देखा।

"अहो! प्रबुद्धो मुनि:! प्रबुद्धो मुनि:! इत एवाऽऽगच्छति इत, एवाऽऽगच्छति, सत्कार्योऽयम् सत्कार्योऽयम्" इति तौ सम्भ्रान्तौ बभूवतु:।

अथ समापित-सन्ध्यावन्दनादिक्रिये, समायाते गुरौ, तदाज्ञया नित्यनियम-सम्पादनाय प्रयाते गौरवटौ, छात्रगण-सहकारेण प्रस्तुतासु च स्वागत-सामग्रीषु, "इत आगम्यतां सनाथ्यतामेष आश्रमः" इति सप्रणाममभिगम्य वदत्सु निखिलेषु योगिराज आगत्य तन्निर्दिष्ट-काष्ठ-पीठं भास्वानिवोदयगिरिमारुरोह, उपाविशच्च ।

श्रीधरी—अहो ! प्रबुद्धोमुनिः = अहा मुनि जी जग गये, प्रबुद्धोमुनिः = मुनि जी जग गये, इतएवाऽऽगच्छति = इधर ही आ रहे हैं, इतएवाऽऽगच्छति = इधर ही आ रहे हैं, सत्कार्योऽयम् = इनका स्वागत करना चाहिए, सत्कार्योऽयम् = इनका स्वागत करना चाहिये, इति = इस प्रकार कहते हुए, तौ = वे दोनों ब्रह्मचारी, सम्भ्रान्तौबभूवतुः = शीघ्रता करने लगे।

अथ = इसके बाद, समापित सन्ध्यावन्दनादिक्रिये = सन्ध्योपासन समाप्त करके, गुरौ समायाते = गुरुजी के आ जाने पर, तदाज्ञया = उनकी आज्ञा से, नित्यनियम सम्पादनाय = नित्यकर्मों से निवृत्ति होने के लिये, गौरवटौ प्रयाते = गौर बटु के चले जाने पर, छात्रगण सहका-रेण = छात्रों के सहयोग से, स्वागत सामग्रीषु = स्वागत सामग्री के, प्रस्तुतासु = प्रस्तुत हो जाने पर, इत आगम्यताम् = इधर आइये, सना-थ्यतामेष आश्रमः = इस आश्रम को अनुगृहीत कीजिये, इति = इस प्रकार, सप्रणाममभिगम्य = प्रणाम पूर्वक कहने पर, योगिराज आगत्य = योगिराज आकर, तन्निर्दिष्ट-काष्ठ-पीठ = उनके द्वारा निर्दिष्ट चौकी पर, उदयगिरि = उदयाचल पर, भास्वानिव = सूर्य की तरह, समारुरोह चढ़े, उपाविशच्च = और बैठ गये।

हिन्दी—

अहा ! मुनि जी जग गये ! मुनि जी जग गये। इधर ही आ रहे हैं, इधर ही आ रहे हैं, इनका स्वागत करना चाहिये, इनका स्वागत करना चाहिये, यह कहते हुए वे दोनों शीघ्रता करने लगे।

इसके बाद सन्ध्यावन्दन आदि नित्य कर्मों को समाप्त करके

गुरु जी के आ जाने पर तथा उनकी आज्ञा से गौर बटु के सन्ध्यावन्दन आदि नित्य कर्मों से निवृत्त होने के लिये चले जाने पर, विद्यार्थियों के सहयोग से स्वागत सामग्री के एकत्रित हो जाने पर, इधर आइये, इस आश्रम को अनुगृहीत कीजिये, प्रणाम करते हुए सभी उपस्थित लोगों के ऐसा कहने पर, योगिराज आकर, उनके द्वारा निर्दिष्ट चौकी पर, जिस तरह भगवान् सूर्य उदयाचल पर चढ़ते हैं, उसी प्रकार चौकी पर चढ़ कर बैठ गये।

तस्मिन् पूज्यमाने, "योगिराडुत्थित इति, आयात इति च" आकर्ण्य कर्णपरम्परया बहवो जनाः परितः स्थिताः। सुघटितं शरीरम्, सान्द्रां जटाम्, विशालान्यङ्गानि, अङ्गारप्रतिमे नयने, मधुरां गम्भीराञ्च वाचं वर्णयन्तश्चकिता इव सञ्जाताः।

अथ योगिराजं सम्पूज्य यावदीहितं किमपि आलपितुम्, तावत् कुटीराद् अश्रूयत तस्या एव बालिकायाः सकरुण-रोदनम्।

ततः "किमिति ? कुत इति ? केयमिति ? कथमिति ?" पृच्छा-परवशे योगिराजे ब्रह्मचारिगुरुणा बालिकां सान्त्वयितुं श्यामबटुमादिश्य कथितम्—

श्रीधरी—तस्मिन् पूज्यमाने = उनकी पूजा हो ही रही थी। योगिराडुत्थित इति = योगिराज जग गये हैं, आयात इति च = और यहाँ आये हैं, आकर्ण्य = यह सुनकर, कर्णपरम्परया = एक दूसरे से, परितः = चारों ओर, बहवो जनाः स्थिताः = बहुत से लोगों की भीड लग गई, सुघटितं शरीरम् = उनके सुगठित शरीर, सान्द्रां जटाम् = घनी जटाओं, विशालान्यङ्गानि = विशाल अङ्गों, अंगार प्रतिमे नयने = अंगारे के समान नेत्रों, मधुरां गम्भीरां च वाचं = मधुर और गम्भीर वाणी का, वर्णयन्तः = वर्णन करते हुए, चकिताइव संजाता = चकित से हो गये।

अथ = इसके बाद, योगिराजं सम्पूज्य = योगिराज का स्वागत करके, यावत् = ज्यों ही, किमपि आलपितुं ईहितम् = ब्रह्मचारि गुरु ने

कुछ पूछना चाहा, तावत् = त्यों ही, कुटीरात् = कुटी से, तस्या एव वालिकायाः = उसी वालिका का, सकरुणं रोदनं अश्रूयत = करुण रोदन सुनाई पड़ा।

ततः = तब, किमिति = क्यों रो रही है ? कुत इति = कहाँ से आई है, केयमिति = यह कौन है ? कथमिति = कैसे आई है ? पृच्छा पर-वशे योगिराजे = योगिराज के यह पूछने पर, वालिकां सान्त्वयितुं = वालिका को धैर्य देने के लिये, श्यामवटु मादिश्य = श्यामवटु को भेज कर, ब्रह्मचारिगुरुणा = ब्रह्मचारियों के गुरु ने, कथितम् = कहा।

हिन्दी—

योगिराज की अभ्यर्थना हो रही थी, तभी "योगिराज समाधि से जग गये, यहाँ आये हैं। यह वात एक दूसरे से सुनकर चारों ओर वहुत से लोगों की भीड़ लग गई। उनके सुगठित शरीर, घनी जटाओं विशाल अङ्ग, अङ्गार के समान लाल नेत्र, मधुर और गम्भीर वाणी का वर्णन करते हुए वे चकित से हो गये।

इसके वाद योगिराज का विधिवत् सत्कार करने के उपरान्त ज्यों ही ब्रह्मादि गुरू ने उनसे कुछ पूछना चाहा, त्यों ही कुटी में से उसी वालिका का सकरुण रोदन सुनाई पड़ा।

तव योगिराज के—"यह क्यों रो रही है ? कहाँ से आई है ? यह कौन है ? यहाँ कैसे आई है ?" इस प्रकार पूछने पर वालिका को शान्त कराने के लिये श्याम वटु को भेजकर ब्रह्मचारि गुरु ने कहना आरम्भ किया।

भगवन् ! श्रूयतां यदि कुतूहलम्। ह्यः सम्पादित-सायन्तनकृत्ये अत्रैव कुशाऽऽस्तरणमधिष्ठिते मयि, परितः समासीनेषु छात्र-वर्गेषु, धीर-समीर-स्पर्शेन मन्दमन्दमान्दोल्यमानासु व्रततिषु, समुदिते यामिनी-कामिनी चन्दनबिन्दौ इव इन्दौ, कौमुदी-कपटेन सुधाधारामिव

वर्षति गगने, अस्मन्नीतिवार्ता शुश्रूषुषु इव मौनमाकलयत्सु पतग-कुलेषु, कैरव-विकाश-हर्ष प्रकाश मुखरेषु चञ्चरीकेषु, अस्पष्टाक्षरम्, कम्पमान निःश्वासम्, श्लथत्कण्ठम्, घर्घरितस्वनम, चीत्कारमात्रम्, दीनतामयम्, अत्यवधानश्रव्यत्वादनुमितदविष्ठतं क्रन्दनमश्रौष्म । तदाकर्ण्यैव च "कुत इदम् ? किमिदमिति दृश्यतां ज्ञायताम्" इत्यादिश्य छात्रेषु विसृष्टेषु क्षणा नन्तरं छात्रेणैकेन भयभीता हरिणीव मायुरेण दीर्घं निःश्वसती, मृगीव व्याघ्रेणाघ्राता अश्रुप्रवाहैः स्नाता, सवेपथुः कम्पकम्पा अङ्के निधाय समानीता ।

श्रीध॰ी—भगवन्=श्रीमन्, यदि कुतूहलम्=यदि इस बात को सुनने की उत्सुकता है तो, श्रूयताम्=सुनिये, ह्यः=कल, सम्पादित सामन्तन कृत्ये=सायङ्कालीन नित्यकर्म से निवृत्त होकर, मयि=मेरे, अत्रैव=यहीं, कुशास्तरणमधिष्ठत=कुशासन पर बैठने, परितः समासीनेषु छात्रवर्गेषु=छात्रों के चारों ओर से बैठ जाने पर, धीर-समीर-स्पर्शेन=मन्द-मन्द हवा से, मन्दमन्दमान्दोल्य-मानासु व्रततिषु=धीरे-धीरे लताओं के हिलने पर, यामिनी -कामिनी चन्दन बिन्दौ इव इन्दौ=रात्रिरूपी कामिनी के चन्दन बिन्दु के समान चन्द्रमा के, समुदिते=उदय हो जाने पर, कौमुदी-कपटे नेव=चाँदनी के बहाने, सुधा धारामिव गगने=आकाश से अमृत सा बरसाते हुए, अस्मन्नी तिवार्ता शुश्रूषु इव=हमारी नीति चर्चा सुनने के लिये मानो, मौन माकलयत्सु पतग कुलेषु=पक्षियों के चुप हो जाने पर, कैरव विकाश हर्षप्रकाश=कुमुदों के खिल जाने से हर्षातिरेक के कारण, चञ्चरीकेषु मुखरेषु=भौरों के गुञ्जार करने पर, अस्पष्टाक्षरम्= अस्पष्ट अक्षरों, कम्पमान निःश्वासम्=कम्पित निःश्वासों वाला, श्लथ कण्ठम्=रुंधे गले से निकलने वाला, घर्घरित स्वनम्=घर्घर शब्द वाला, चीत्कारमात्रम्=चिल्लाहट के समान, अत्यवधानश्रव्य त्वात्= ध्यान देकर सुनने से, अनुमितदविष्ठतम्=जिसके दूर होने का अनुमान

होता था ऐसे, दीनतामयं=दीनतामय. क्रन्दनमश्रौषम्=करुण क्रन्दन सुना। तत्क्षण मेव=उसी समय, कुत इदम्=यह रोने की आवाज कहां से आ रही है, किमिदम्=क्या बात है, दृश्यतां=देखिये, ज्ञायताम्=मालूम कीजिये, इत्यादिश्य=ऐसा आदेश देकर, छात्रेषु विसृष्टेषु=छात्रों को भेजने पर, क्षणानन्तरं=थोड़ी देर बाद, एकेन छात्रेण=एक छात्र के द्वारा, भयभीता=अत्यन्त डरी हुई, सवेगमत्युष्णं दीर्घं निःश्वसती=जल्दी लम्बी सांसें लेती हुई, व्याघ्रघ्राता मृगीइव=बाघ से आक्रान्त हरिणी के समान, अश्रुप्रवाहैः स्नाता=आंसुओं से नहाई हुई, सवेपथुः=कांपती हुई, एका कन्या=एक बालिका, अङ्के निधाय=गोद में उठाकर, समानीता=लाई गई।

हिन्दी—

श्रीमान्! यदि आपको यह समाचार जानने की उत्सुकता है तो सुनिये। कल, सायङ्कालीन नित्यकर्मों से निवृत्त होकर मैं यहीं कुशासन पर बैठा हुआ था और मेरे चारों ओर छात्रगण बैठे हुए थे। धीमी-धीमी हवा चल रही थी और उससे लताएं धीरे-धीरे हिल रहीं थीं। रात्रि रूपी रमणी के चन्दन बिन्दु के समान चन्द्रमा उदय हो गया था, आकाश चाँदनी के बहाने अमृत बरसा रहा था, पक्षियों का समूह हमारी नीति चर्चा सुनने की इच्छा से मानो मौन धारण किये हुए था, कुमुदों के खिल जाने से प्रसन्न होकर भौंरे गुन्जार कर रहे थे, तभी मैंने अस्पष्ट अक्षरों, कम्पित निःश्वासों वाला, रुंधे गले से निकलने वाला, घर्घराहट के समान, चीत्कार के समान, दीनतापूर्ण रोदन सुना। ध्यान देकर सुनने से जिसके बहुत दूर होने का अनुमान होता था। तत्क्षण ही मैंने यह रोने की आवाज कहाँ से आरही है? क्या बात है? देखिये, पता लगाइये, ऐसी आज्ञा देकर छात्रों को भेजा, थोड़ी देर बाद ही एक विद्यार्थी, अत्यन्त डरी हुई, जल्दी-जल्दी लम्बी सांसें लेती हुई, बाघ से आक्रान्त हरिणी के समान आंसुओं से नहाई हुई, कांपती हुई बालिका को गोद में उठाकर लाया।

चिरान्वेषणेनापि च तस्याः सहचरी सहचरो वा न प्राप्तः। ताञ्च चन्द्रकलयेव निर्मिताम् नवनीतेनेव रचिताम्, मृणाल-गौरीम्, कुन्दकोरकाग्रदतीम्, सक्षोभं रुदतीमवलोक्याऽस्माभिरपि न पारितं निरोद्धुं नयन- वाष्पाणि ।

अथ "कन्यके! मा भैषीः पुत्रि! त्वां मातुः समीपे प्रापयिष्यामः, दुहितः! खेदं मा वह, भगवति! भुङ्क्ष्व किञ्चित्, पिब पयः, एते तव भ्रातरः, यत् कथयिष्यसि तदेव करिष्यामः, मा स्म रोदनैः प्राणान् संशयपदवीमारोपयः मा स्म कोमलमिदं शरीरं शोकज्वालावलीढ कार्षीः" इति सहस्रधा बोधनेन कथमपि सम्बुद्धा किञ्चिद् दुग्धं पीतवती।

श्रीधरी— चिरान्वेषणेनापि च=बहुत खोज करने पर भी, तस्याः=उस बालिका का, सहचरी=सहेली, सहचरो वा=या साथी, न प्राप्तः=नहीं मिला, ताञ्च=उस, चन्द्रकलमेव=चन्द्रमा की कलाओं से मानो, निर्मिताम्=बनी हुई, नवनीतेनेव रचिताम्=मक्खन से मानो बनाई हुई सी, मृणाल गौरीम्=कमल नाल के समान गोरी, कुन्दकोरकाग्रदतीम्=कुन्द कली के समान दांतों वाली बालिका को, सक्षोभं=दुःख के साथ, रुदतीम्=रोती हुई, अवलोक्य=देखकर, अस्माभिरपि=हम लोग भी, नयन वाष्पाणि=आँखों के आंसुओं को, निरोद्धुं न पारितम्=रोकने में समर्थ न हो सके।

अथ=इसके बाद, कन्यके, मा भैषीः=बेटी, मत डरो, पुत्रि=बेटी, त्वां मातुः समीपे प्रापयिष्यामः=तुमको माता के पास पहुँचा देंगे, दुहितः खेदं मा वह=पुत्री, दुःख मत करो, भगवति=देवी, भुङ्क्ष्व किञ्चित्=कुछ खाओ, पिब पयः=दूध पिओ, एते तव भ्रातरः=ये तुम्हारे भाई हैं, यत् कथयिष्यसि=जो कहोगी, तदेव करिष्यामः=वही करेंगे, मास्म रोदनैः प्राणान् संशय पदवीमारोपम=रोने से प्राणों को

सन्देह में मत डालो, इदं कोमल शरीरं=इस कोमल शरीर को, शोक ज्वालावलीढं वार्पी:=शोकाग्नि की लपटों से मत झुलसाओ, इति= इस प्रकार, सहस्रधा बोधनेन=हजार तरह से समझाने पर. कथमपि= किसी प्रकार. सम्बुद्धा=आश्वस्त होकर, किञ्चिद् दुग्धं पीतवती= उसने कुछ दूध पिया।

हिन्दी—

बहुत ढूँढ़ने पर भी उसकी कोई सहेली या कोई साथी नहीं मिला। उस चन्द्रमा की कला से मानो बनी हुई, मक्खन से मानो बनाई हुई, कमल नाल के समान गोरी, कुन्दकी कली के समान सुन्दर दाँतों वाली बालिका को दुःख के साथ रोती हुई देखकर हम लोग भी अपने आँसुओं को रोक नहीं सके।

तत्पश्चात् 'बेटी मत डरो, पुत्रि, तुम्हें माता के पास पहुँचा देंगे, बेटी, दुःख मत करो, देवी, कुछ खालो, दूध पिओ, ये सब तुम्हारे भाई हैं, जो तुम कहोगी, वही हम करेंगे, रो-रोकर अपने प्राणों को संकट में मत डालो, इस कोमल शरीर को शोक की ज्वालाओं से मत झुलसाओ", इस प्रकार हजारों तरह से समझाने पर उस बालिका ने कुछ आश्वस्त होकर कुछ दूध पिया।

ततश्च मया क्रोडे उपवेश्य, 'बालिके ! कथय क्व ते पितरौ ? कथमेतस्मिन्नाश्रमप्रान्ते समायाता ? किं ते कष्टम् ? कथमरोदीः ? किं वाञ्छसि ? किं कुर्मः ?" इति पृष्टा मुग्धतया अपरिकलित-वाक्पाटवा, भयेन विशिथिलवचनविन्यासा, लज्जया अतिमन्दस्वरा, शोकेन रुद्धकण्ठा, चकितचकितेव कथं कथमपि अबोधयदस्मान् यद्-एषा अस्मिन्नेदीयस्येव ग्रामे वसतः कस्यापि ब्राह्मणस्य तनयाऽस्ति। एनां च सुन्दरीमाकलय्य कोऽपि यवन-तनयो नदीतटान्मातुर्हस्तादाच्छिद्य क्रन्दन्तीं नीत्वाऽपससार।

अोधरी—ततश्च=इसके बाद । मया=मेरे द्वारा, क्रोडे उपवेश्य=गोद में बिठा कर । बालिके=बच्ची । कथय क्व ते पितरौ=कहो, तुम्हारे माता-पिता कहाँ रहते हैं । कथं=कैसे । एतस्मिन्=इस। आश्रमप्रान्ते=आश्रम के पास । समायाता=आ गई । किं ते कष्टम्=तुम्हें क्या कष्ट है । कथमरोदीः=तुम क्यों रोई । कि वाञ्छसि=क्या चाहती हो । किं कुर्मः=हम तुम्हारे लिये क्या करें । इति=इस प्रकार। पृष्टा=पूछने पर । मुग्धतया=बच्ची होने से । अपरिचलित वाक्पाटवा=वाक्चातुरी से अपरिचित । भयेन=भय से । विशिथिल वचन विन्यासा=अस्त व्यस्त शब्दों में बोलने वाली । लज्जया अति मन्दस्वरा=लज्जा से अत्यन्त धीमे स्वर में । शोकेन=शोक से । रुद्धकण्ठा=रुंधे गले वाली । चकित चकितेव=अत्यन्त चकित हुई सी वह बालिका । कथं कथमपि=किसी प्रकार । अवोधयदस्मान्=हमें समझा सकी । यद्=कि । एपा=यह । अस्मिन्नेदीपस्येव ग्रामे=समीप के ही गाँव में । वसतः=रहने वाली । कस्यापि ब्राह्मणस्य=किसी ब्राह्मण की । तनयाऽस्ति=लड़की है । एनां=इसको । सुन्दरीमावलय्य=सुन्दरी देख कर । कोऽपि=कोई । यवन तनयो=मुसलमान लड़का । नदी तटात्=नदी के किनारे से । मातुर्हस्ता-दाच्छिद्य=माता के हाथ से छीनकर । क्रन्दन्ती नीत्वा=रोती हुई ले जाकर । अपससार=भाग गया ।

हिन्दी—

इसके बाद मेरे द्वारा गोद में लेकर 'बेटी, बतलाओ तुम्हारे माता-पिता कहाँ हैं ? तुम इस आश्रम के पास कैसे आ गई ? तुम्हें क्या कष्ट है ? तुम क्यों रोई थीं ? तुम क्या चाहती हो ? हम तुम्हारे लिये क्या क्या करें ?' इस प्रकार पूछने पर बच्ची होने के कारण तथा वाक्चातुर्य से अनभिज्ञ होने के कारण, भय से लड़खड़ाते हुये शब्दों में, लज्जा से अत्यन्त धीमे स्वर में, शोक के कारण रुंधे गले से उसने येन-केन प्रकार से हमें बताया कि वह पास के ही गाँव में रहने वाली किसी ब्राह्मण की

वालिका है। उसे सुन्दरी देखकर कोई मुसलमान युवक नदी के किनारे से माता के हाथ से छीन कर रोती-विलखती हुई उसे लेकर भाग गया।

ततः कञ्चिदध्वानमतिक्रम्य यावदसिधेनुकां सन्दर्श्य विभीषिकयाऽस्याः क्रन्दन-कोलाहलं शमयितुमियेष; तावदकस्मात्कोऽपि काल-कम्बल इव भल्लूको वनान्तादुपाजगाम। दृष्ट्वैव यवन-तनयोऽसौ तत्रैव त्यक्त्वा कन्यकामिमां शाल्मलितरुमेकमारुरोह। विप्रतनया चेयं पलाश-पलाशि-श्रेण्यां प्रविश्य घुणाक्षरन्यायेन इत एव समायाता यावद् भयेन पुना रोदितुमारब्धवती, तावदस्मच्छात्रेणैवाऽऽनीतेति।

तदाकर्ण्य कोपज्वालाज्वलित इव योगी प्रोवाच-"विक्रमराज्येऽपि कथमेव पातकमयो दुराचाराणामुपद्रवः?" ततः स उवाच—

श्रीधरी—ततः=इसके वाद। कञ्चिदध्वानमतिक्रम्य=कुछ रास्ता पार करके। यावदसिधेनुकां सन्दर्श्य=जव तक छुरी दिखाकर। अस्याविभीषिकया=इसके डर से डराकर। क्रन्दन-कोलाहलं शमयितुं इयेप=इसके रुदन को वन्द करना चाहा। तावत्=तभी। अकस्मात्=अचानक। काल-कम्वल इव=काले कम्वल के समान। भल्लूकः=रीछ। वनान्तात्=जंगल के किनारे से। उपाजगाम=निकल पड़ा। दृष्ट्वैव=उसे देखते ही। असौ यवन युवकः=वह मुसलमान युवक। इमां कन्यकां=इस लड़की को। तत्रैवत्यक्त्वा=वहीं छोड़ कर। एकं शाल्मलितरुं आरुरोह=एक सेमर के पेड़ पर चढ़ गया। विप्रतनया चेयं=यह ब्राह्मण वालिका भी। पलाश-पलाशि श्रेण्यां=ढाके के पेड़ों के झुरमुट में। प्रविश्य =प्रवेश करके। घुणाक्षर न्यायेन=संयोगवश। इतएव समायाता=इधर ही चली आई। यावद् भयेन=जव भय से। पुनारोदितुमारब्धवती= फिर रोने लगी। तावत्=तभी। अस्मच्छात्रेण=हमारे छात्र के द्वारा आनीतेति=यहां ले आई गई।

तद्वाकर्ण्य=यह सुनकर। कोपज्वाला ज्वलित इव=क्रोधाग्नि से जलते हुये मानो। योगी प्रोवाच=योगिराज बोले। विक्रमराज्येऽपि=विक्रमादित्य के राज्य में भी। दुराचाराणां=दुराचारियों का। कथमेष पातकमयोपद्रव=यह पापमय उपद्रव कैसा ? ततः=इसके बाद। स उवाच=ब्रह्मचारि गुरू बोले।

हिन्दी—

कुछ दूर जाकर ज्यों ही उस मुसलमान युवक ने छुरा दिखाकर, भयभीत कर उसे, चुप करना चाहा, त्यों ही जंगल के किनारे से कोई काले कम्बल के समान रीछ आ गया। उसे देखते ही वह मुसलमान युवक उस बालिका को वहीं छोड़कर एक सेमल के पेड़ पर चढ़ गया और यह ब्राह्मण कन्या ढाके के वृक्षों के झुरमुट में प्रविष्ट होकर संयोग वश इधर ही चली आई। जब यह डर के कारण फिर से रोने लगी, तभी हमारा विद्यार्थी इसे यहाँ उठा लाया।

यह वृत्तान्त सुनकर क्रोधाग्नि की लपटों से जलते हुये से योगिराज बोले—विक्रमादित्य के राज्य में भी दुराचारी मुसलमानों का यह पापमय दुराचार कैसा ? उनकी बात सुनकर ब्रह्मचारियों के गुरु ने कहा—

महात्मन् क्वाधुना विक्रमराज्यम् ? वीरविक्रमस्य तु भारतभुवं विरहय्य गतस्य वर्षाणां सप्तदश-शतकानि व्यतीतानि। क्वाधुना मन्दिरे मन्दिरे जयजय-ध्वनिः ? क्व सम्प्रति तीर्थे तीर्थे घण्टानादः ? क्वाद्यापि मठे मठे वेदघोषः ? अद्य हि वेदा विच्छिद्य वीथीषु विक्षिप्यन्ते, धर्मशास्त्राण्युद्धृत्य धूमध्वजेषु ध्मायन्ते, पुराणानि पिष्ट्वा पानीयेषु पात्यन्ते, भाष्याणि भ्रंशयित्वा भ्राष्ट्रेषु भर्ज्यन्ते; "क्वचिन्मन्दिराणि भिद्यन्ते, क्वचित्तुलसीवनानि छिद्यन्ते, क्वचिद्दारा अपह्रियन्ते, क्वचिद्धनानि लुण्ठ्यन्ते, क्वचिदार्त्तनादाः, क्वचिद् रुधिरधाराः, क्वचिदग्निदाहः, क्वचिद् गृहनिपातः" इत्येव श्रूयतेऽवलोक्यते च परितः।

श्रीधरी—महात्मन्=हे महाभाग। विक्रम राज्यं अधुना क्व=वीर विक्रमादित्य का राज्य अब कहाँ रहा। वीरविक्रमस्यतु=वीर विक्रमादित्य को तो। भारत भुवंविरहय्य=भारत-भूमि को छोड़कर। गतस्य=गये हुये। सप्तदश शतकानि=सत्रह सौ वर्ष। व्यतीतानि=बीत गये। अधुना=इस समय। मन्दिरे मन्दिरे=प्रत्येक मन्दिर में। जय जय ध्वनिः क्व=जय-जय कार कहाँ। सम्प्रति=इस समय। तीर्थे-तीर्थे=तीर्थों में। घण्टा नादः क्व=घण्टा निनाद कहाँ? अद्य=आज। मठे-मठे=मठों में। वेदघोषः=वेद ध्वनि। क्व=कहाँ। अद्य हि=आज तो। वेदा विच्छिद्य=वेद पुस्तकें फाड-फाड़ कर। वीथिषु=गलियों में। विक्षिप्यन्ते=बिखेरी जाती हैं। धर्मशास्त्राणि उद्धृय=धर्म-शास्त्र अस्त व्यस्त करके। धूमध्वजेषु=आग में। ध्मायन्ते=झोंके जाते हैं। पुराणानि पिष्ट्वा=पुराणों को पीस कर। पानीयेषु=पानी में। पात्यन्ते=गिराया जाता है। भाष्याणि=भाष्यों को, भ्रंशयित्वा=फाड़ कर। भ्राष्टेषु=भाड़ों में। भर्ज्यन्ते=झोंका जाता है। क्वचिद्=कहीं पर। मन्दिराणि भिद्यन्ते=मन्दिर तोड़े जाते हैं। क्वचित्तुलसी-वनानि छिद्यन्ते=कहीं तुलसी के वन काटे जाते हैं। क्वचिद्दारा अप-ह्रियन्ते=कहीं स्त्रियों का अपहरण किया जाता है। क्वचिद्धनानि लुठ-यन्ते=कहीं धन लूटा जाता है। क्वचिदार्तनादाः=कहीं करुण क्रन्दन है तो। क्वचित् रुधिरधाराः=कहीं रक्त की धारा बह रही है। क्वचिद् अग्निदाहः=कहीं अग्निकाण्ड है तो। क्वचिद् गृह निपातः=कहीं घर गिराये जा रहे हैं। इत्येव=यही सब। परितः=चारों ओर। श्रूयते=सुनाई देता है। अवलोक्यते च=और दिखाई देता है।

हिन्दी—

महोदय, आज वीर विक्रमादित्य का राज्य कहाँ रहा? वीर विक्रमादित्य को तो भारत-वसुधा को छोड़ कर गये हुये सत्रह सौ वर्ष व्यतीत हो गये। आज प्रत्येक मन्दिर में जय-जय कार कहाँ? आज तीर्थों में घण्टा निनाद कहाँ? आज मठों में

वेदघोष कहाँ ? आज तो वेदों की पुस्तकें फाड़ कर गलियों में बिखेरी जाती हैं, धर्म शास्त्रों के ग्रन्थों को अस्त व्यस्त करके आग में झोंका जाता है। पुराणों के ग्रन्थों को पीस कर पानी में प्रवाहित किया जाता है, भाष्यों को तोड़ मरोड़ कर भाड़ में झोंका जाता है, कहीं मन्दिर तोड़े जाते हैं तो कहीं तुलसी वनों को काटा जाता है। कहीं स्त्रियों का अपहरण किया जाता है तो कहीं धन लूटा जाता है, कहीं करुण क्रन्दन है तो कहीं खून की धारा प्रवाहित हो रही है, कहीं अग्निकाण्ड है तो कहीं घर गिराये जाते हैं, आज तो यही सब चारों ओर दिखाई और सुनाई देता है।

तदाकर्ण्य दुःखितश्चकितश्च योगिराडुवाच—"कथमेतत् ? ह्य एव पर्वतीयाञ्छकान्विनिर्जित्य महता जयघोषेण स्वराजधानीमायातः श्रीमानादित्य-पदलाञ्छनो वीरविक्रमः। अद्यापि तद्विजयपताका मम चक्षुषोरग्रत इव समुद्धूयन्ते, अधुनापि तेषां पटहगोमुखादीनां निनादः कर्णशष्कुलीं पूरयतीव, तत्कथमद्य वर्षाणां सप्तदश-शतकानि व्यतीतानि" इति ?

ततः सर्वेषु स्तब्धेषु चकितेषु च ब्रह्मचारिगुरुणा प्रणम्य कथितम्—

श्रीधरी—तदाकर्ण्य = यह सुनकर। दुःखितः = दुःखी। चकितश्च = विस्मित होकर। योगिराडुवाच = योगिराज बोले। कथमेतत् = यह कैसे। ह्य एव = कल ही। पर्वतीयान् = पहाड़ी। शकान् = शकों को। विनिर्जित्य = जीतकर। महता जयघोषेण = महान् जय-जय कार के साथ। श्रीमान् आदित्य-पद लाञ्छनो वीर विक्रमः = श्रीमान् आदित्य पद-विभूषित वीर विक्रम। स्वराजधानीमायातः = अपनी राजधानी उज्जयिनी में आये हैं। अद्यापि = आज भी। तद्विजयपताका = उनकी विजय पताकायें। मम चक्षुषोरग्रत इव = मेरे

आँखों के सामने। समुद्धूयतन्ते = फहरा सी रही हैं। अधुनापि = इस समय भी। तेषां = उनके। पटहगोमुखादीनां निनादः = नगाड़े। तुरही आदि बाजों की ध्वनि। कर्ण शष्कुलीं = मेरे कानों में। पूरयतीव = गूँज सी रही है। तत्कथयमद्य = तो कैसे आज। वर्षाणांसप्तदश शतकानि = सत्रह सौ वर्ष। व्यतीतानि = बीत गये।

ततः = तब। सर्वेषु = सभी लोगों के। स्तब्धेषु = स्तब्ध। चकितेषु च = और चकित हो जाने पर। ब्रह्मचारिगुरुणा = ब्रह्मचारी गुरु ने। प्रणम्य = प्रणाम करके। कथितम् = कहा—

हिन्दी—

यह बात सुनकर दुःखित और विस्मित होकर योगिराज ने कहा—यह कैसे? श्रीमान् आदित्य-पद विभूषित वीराग्रणी विक्रम-अभी कल ही पहाड़ी शकों को जीत कर, महान् जय-जयकार के साथ अपनी राजधानी उज्जयिनी में आये। आज भी उनकी विजय पताकायें मेरे आँखों के सामने फहरा सी रही हैं, इस समय भी उनके नगाड़े, तुरही प्रभृति बाजों की ध्वनि मेरे कानों में गूँज सी रही है, तो फिर कैसे आज उन्हें भारत-भू से विदा हुये सत्रह सौ वर्ष व्यतीत हो गये?

योगिराज की उन बातों को सुन कर उपस्थित सभी लोगों के स्तब्ध और आश्चर्य चकित हो जाने पर, ब्रह्मचारि गुरु ने प्रणाम करके कहा—

"भगवन्! बद्ध-सिद्धासनैर्निरुद्ध-निश्वासैः प्रबोधितकुण्डलिनीकैर्विजित-दशेन्द्रियैरनाहत-नाद-तन्तुमवलम्ब्याऽऽज्ञाचक्रं संस्पृश्य, चन्द्रमण्डलं भित्त्वा, तेजःपुञ्जमविगणय्य, सहस्रदलकमलस्यान्तः प्रविश्य, परमात्मानं साक्षात्कृत्य, तत्रैव रममाणैर्मृत्युञ्जयैरानन्दमात्रस्वरूपैर्ध्यानावस्थितैर्भवादृशैर्न ज्ञायते कालवेगः। तस्मिन् समये भवता ये पुरुषा अवलोकिताः तेषां पञ्चाशत्तमोऽपि पुरुषो नावलोक्यते। अद्य न तानि

स्रोतांसि नदीनाम्, न सा संस्था नगराणाम्, न सा आकृतिर्गिरीणाम्, न सा सान्द्रता विपिनानाम्। किमधिकं कथयामो भारतवर्षमधुना अन्यादृशमेव सम्पन्नमस्ति"—

श्रीधरी—भगवन्=श्रीमन्। बद्धसिद्धासनैः=सिद्धासन बाँध कर। निरुद्धनिश्वासैः=सांस रोक कर। प्रबोधितकुण्डलिनीकैः=कुण्डलिनी को जगाकर। विजितदशेन्द्रियैः=दसों इन्द्रियों को जीत कर। अनाहदनांदतन्तुमवलम्ब्य = अनहदनाद की सूक्ष्मावस्था का आश्रय लेकर। आज्ञाचक्रंसंस्पृश्य=आज्ञा चक्र का स्पर्श करके। चन्द्रमण्डलं भित्वा = चन्द्रमण्डल का भेदन कर। तेजः पुञ्जमवि गणय्य=महाप्रकाश का तिरस्कार कर। सहस्रदलकमलस्यान्तः प्रविश्य=सहस्रार चक्र के अन्दर प्रविष्ट होकर। परमात्मानं साक्षात्कृत्य=परमात्मा का साक्षात्कार करके। तत्रैव=उसी में। रममाणैः=रमण करने वाले। मृत्युअयैः=मृत्यु को जीतने वाले। आनन्दमात्रस्वरूपैः=आनन्द स्वरूप। ध्यानावस्थितैः=ध्यान में स्थित। भवादृशैः = आप जैसे महात्माओं को। कालवेगः=समय का प्रवाह। न ज्ञायते=नहीं मालूम होता, तस्मिन् समये=उस समय। भवता=आपने। ये पुरुषा अवलोकिताः=जो मनुष्य देखे थे। तेषां=उनके। पञ्चाशत्तमोऽपि=पचासवीं पीढ़ी का भी। पुरुषः=मनुष्य। नावलोक्यते=आज नहीं दिखाई देता। अद्य=आज। नदीनां=नदियों के। तानि=वे, स्रोतांसि न=वे स्रोत नहीं रहे। नगराणाम्=नगरों की। सा संस्था न=वह स्थिति नहीं रही। गिरीणां=पहाड़ों की। सा आकृतिः न=वह आकृति नहीं रही। विपिनानां=जंगलों की। सा सान्द्रता न=वह गहनता नहीं रही। किमधिकं कथयामः=अधिक क्या कहें। अधुना=इस समय। भारतवर्ष=भारतवर्ष, अन्यादृशमेव सम्पन्नमस्ति=दूसरों सा ही हो गया है।

हिन्दी—

महात्मा जी ! सिद्धास बाँध कर, प्राणवायु को रोक कर, कुण्डलिनी को जगाकर, दसों इन्द्रियों (पाँचों ज्ञानेन्द्रियों तथा पाँच कर्मेन्द्रियों)

को अपने वश में करके, अनहद नाँद * की तन्तु के समान सूक्ष्मावस्था का अवलम्बन लेकर, भौंहों के बीच में स्थित द्विदलात्मक आज्ञा चक्र को अपने ध्यान का लक्ष्य बना कर, षोडषदलात्मक चक्र चन्द्रमण्डल का भेदन कर, चन्द्रचक्र में स्थित महा प्रकाश का तिरस्कार कर, सहस्रार चक्र के अन्दर प्रविष्ट होकर, परब्रह्म का दर्शन करके, उसी में रमण करने वाले, मृत्यु को जीतने वाले, आनन्द स्वरूप तथा ध्यान में स्थित आप सरीखे महात्माओं को समय का प्रवाह प्रतीत नहीं होता। उस समय आपने जिन पुरुषों को देखा होगा, उनकी पचासवीं पीढ़ी का भी मनुष्य आज दिखाई नहीं देता, आज नदियों के वे स्रोत नहीं रहे, नगरों की वह स्थिति नहीं रही, पहाड़ों का वैसा आकार नहीं रहा, न जंगलों की ही वैसी गहनता रही। अधिक क्या कहें, भारत वर्ष इस समय दूसरा सा ही हो गया है।

इदमाकर्ण्य किञ्चित्स्मित्वेव परितोऽवलोक्य च योगी जगाद—

"सत्यं न लक्षितो मया समय-वेगः। यौधिष्ठिरे समये कलित-समाधिरहं वैक्रम-समये उदस्थाम्। पुनश्च वैक्रम-समये समाधिमाकलय्य अस्मिन् दुराचारमये समयेऽहमुत्थितोऽस्मि। अहं पुनर्गत्वा समाधिमेव कलयिष्यामि. किन्तु तावत्सङ्क्षिप्य कथ्यतां का दशा भारतवर्षस्येति"—

तत्संश्रुत्य भारतवर्षीय-दशा-संस्मरण-सजात-शोको हृदयस्थ-प्रसाद-सम्भारोद्गिरण-श्रमेणेवातिमन्थरेण स्वरेण "मा स्म धर्मध्वंसन-घोषणैर्योगिराजस्य धैर्यमवधीरय" इति कण्ठं रुन्धतो वाष्पानविगणय्य, नेत्रे प्रमृज्य, उष्णं निःश्वस्य. कातराभ्यामिव नयनाभ्यां परितोऽवलोक्य, ब्रह्मचारिगुरुः प्रवक्तुमारभत—

---

* योगशास्त्र में चतुर्थ पद्म से उत्पन्न होने वाले अनिर्वचनीय नाँद को अनाहत नाँद कहा गया है। इस नाँद की प्रशंसा योगशास्त्र में भूरिशः की गई है।

योगी—इदमाकर्ण्य = यह सुनकर, किञ्चित्स्मित्वेव = कुछ मुस्कराते हुये, परितोऽवलोक्य च = और चारों ओर देखकर, योगी जगाद = योगिराज बोले—

सत्यं = सचमुच, मया = मैंने, समय वेगः = समय का प्रवाह, न लक्षितः = नहीं जाना, यौधिष्ठिरे समये = युधिष्ठिर के समय में, कलित समाधिः = समाधि लगा कर, अहं = मैं, वैक्रम समये = विक्रमादित्य के समय में, उदस्थाम् = उठा था, पुनश्च = फिर, वैक्रम समये = विक्रमादित्य के समय में, समाधि माकलय्य = समाधि लगाकर, दुराचारमये = दुराचारपूर्ण, अस्मिन् समये = इस समय, अहमुत्थितोऽस्मि = उठा हूँ, अहं = मैं, पुनर्गत्वा = फिर जाकर, समाधिमेव = समाधि ही, कलयिस्यामि = लगाऊँगा, किन्तु = लेकिन, तावत् = तब तक, संक्षिप्य = संक्षेप में, कथ्यतां = कहिये, कादशा = क्या हालत है, भारतवर्षस्य = भारत वर्ष की।

तत्संश्रुत्य = यह सुनकर, भारतवर्षीयदशा संस्मरणसंजातशोकः = भारतवर्ष की दुर्दशा के स्मरण से दुःखी होकर, हृदयस्थ प्रसाद सम्भारोद्गिरण श्रमेणेवातिमन्थरेण स्वरेण = हृदयस्थित प्रसन्नता के प्रकाशन से मानो धीमे पड़े हुये स्वर से, मास्म धर्मध्वंसन-घोषणैः = धर्म ध्वंसन की कथाओं से, योगिराजस्य = योगिराज का, धैर्यमवधरिय = धैर्य मत डिगाओ, इति = यह कहते हुये से, कण्ठरुन्धतो = गले को रुँधने वाले, वाष्पानविगणय्य = आँसुओं की परवाह किये बिना ही, नेत्रे प्रमृज्य = आँखों को पोंछ कर, उष्णं निःश्वस्य = गरम साँस लेकर, कातराभ्यामिव = कातर से, नयनाभ्यां = नेत्रों से, परितोऽवलोक्य = चारों ओर देखकर, ब्रह्मचारिगुरुः = ब्रह्मचारि गुरु ने, प्रवक्तुमारभत = कहना आरम्भ किया—

हिन्दी—

यह सुनकर कुछ मुस्कराते हुये से, चारों ओर देखकर योगिराज ने कहा—सचमुच मुझे समय की प्रतीति नहीं हो पाई। युधिष्ठिर

के समय में समाधि लगाकर मैं विक्रमादित्य के समय में जगा था और फिर विक्रमादित्य के समय में समाधि लगाकर इस दुराचार पूर्ण समय में जगा हूँ। मैं फिर जाकर समाधि ही लगाऊँगा। तब तक संक्षेप में कहिये—भारतवर्ष की क्या हालत है ?

योगिराज की बात सुनकर भारत वर्ष की दुर्दशा के स्मरण से ब्रह्मचारि गुरु का शोक उमड़ आया, हृदय स्थित हर्षातिरेक के प्रकाशन करने के श्रम से धीमे पड़ गये स्वर से मानो, धर्मध्वंस की कथाओं से योगिराज का धैर्य मत डिगाओ, यह कहते हुये से गले को रूँधने वाले आँसुओं की परवाह किये बिना ही, आँखों को पोंछ कर, गरम साँस लेकर कातर से नेत्रों से अपने चारों ओर देखकर ब्रह्मचारियों के गुरु ने कहना आरम्भ किया—

"भगवन् ! दम्भोलिघटितेयं रसना. या दारुण-दानवोदन्तोदीरणैर्न दीर्य्यते, लोहसारमयं हृदयम्, यत् संस्मृत्य यावनान्परस्सहस्रान् दुराचारान् शतधा न भिद्यते, भस्मसाच्च न भवति। धिगस्मान् येऽद्यापि जीवामः, श्वसिमः, विचरामः, आत्मन आर्य्यवंश्यांश्चाभिमन्यामहे—"

उपक्रममुमाकर्ण्य अवलोक्य च मुनेर्विमनायमानं हरिद्राद्रवक्षालितमिव वदनम्, निपतद्वारिबिन्दुनी नयने, अञ्चित-रोमकञ्चुकं शरीरम्, कम्पमानमधरम्, भज्यमानञ्च स्वरम्. अवागच्छत् "सकलानर्थमयः, सकल-वञ्चनामयः, सकलपापमयः, सकलोपद्रवमयश्चायं वृत्तान्तः"—इति, "अत एव तत्स्मरणमात्रेणापि खिद्यत एष हृदये, तन्नाहमेनं निरर्थं जिग्लापयिषामि, न वा चिखेदयिषामि" इति च विचिन्त्य—

श्रीधरी—भगवन्=महात्मन्, इयं रसना=मेरी यह जीभ, दम्भोलिघटिता=वज्र की बनी हुई है, या=जो, दारुण=भीषण, दानवोदन्तोदीरणैः=म्लेच्छों के वृत्तान्त के वर्णन से, न दीर्यते=कट नहीं

जाती, हृदयं=मेरा हृदय, लोहसारमयं=लोहे का बना हुआ है, यत्=जो, परस्सहस्रान्=हजारों, यावनान्=मुसलमानों के, दुराचारान्=दुराचारों को, संस्मृत्य=स्मरण करके, शतधा न भिद्यते=सौ टुकड़ों में नहीं फट जाता, भस्मसात् च न भवति=और जलकर राख भी नहीं हो जाता, अस्मान् धिक=हम लोगों को धिक्कार है, ये=जो, अद्यापि=आज भी, जीवामः=जीवित रह रहे हैं, श्वसिमः=साँस लेते हैं, विचेरामः इतस्ततः=घूमते है, आत्मनः=अपने को, आर्यवंश्यांचाभिमन्यामहे=और अपने को आर्यों का वंशज मानते है ।

अमुं=इस, उपक्रमम्=भूमिका को, आकर्ण्य=सुनकर, मुनेः=ब्रह्मचारि गुरु के, हरिद्राद्रवक्षालित मिव=हल्दी के रस से रंगे हुये से, वदनम्=मुख को, अवलोक्य=देखकर, निपतद्वारि बिन्दुनी नयने=आँसू गिरते हुये नेत्रो, अञ्चित रोम कञ्चुकं शरीरं=रोमाञ्चित शरीर, कम्पमानमधरम्=काँपते ओंठ, भज्यमानञ्च स्वरम्=और लड़खड़ाते हुये स्वर से, अवागच्छत्=योगिराज समझ गये, सकलानर्थमयः=सारा समाचार अनर्थो, सकलवञ्चनामयः=वञ्चनाओं, सकल पापमयः=सब पापों, सकलोपद्रवमयश्चवृत्तान्तः इति सब उपद्रवों से भरा हुआ है, अतएव=इसी लिये, तत्स्मरणमात्रेणापि=उसको याद करने से ही, खिन्न एव हृदये=इनका मन खिन्न हो गया है, तद्=इसलिये, अहं एनं निरर्थं न जिग्लापयिषामि=मै व्यर्थ में म्लान नहीं करुँगा, न वा चिखेदयामि=और न ही खिन्न करूँगा, इति च विचिन्त्य=यह सोचकर—

हिन्दी—

महात्मन्,—मेरी यह जीभ वज्र की बनी हुई है, जो भीषण म्लेच्छों के वर्णन मे कट नहीं जाती, मेरा हृदय लोहे का बना हुआ है, जो मुसलमानों के हजारों दुराचारों का स्मरण करके टुकड़े-टुकड़े नहीं होता और जलकर राख भी नहीं होता, हम लोगो को धिक्कार

है, जो हम आज भी जी रहे हैं, साँस ले रहे हैं, इधर-उधर घूम रहे हैं और अपने को आर्यों का वंशज भी मानते हैं।

इस भूमिका को सुनकर तथा ब्रह्मचारि गुरु के हल्दी के रस से नहाये हुये से पीले एवं उदास मुख से, आँसू बरसाने वाले नेत्रों से, रोमाञ्चित शरीर से, फड़कते हुये ओठों से और लड़खड़ाते हुये स्वर से योगिराज समझ गये कि यह सारा समाचार अनर्थों वञ्चनाओं, पाप और उपद्रवों से भरा हुआ है जिसके स्मरण मात्र से इन्हें दुःख हो रहा है, अतः मैं इनको व्यर्थ में मलिन या ग्लानि युक्त नहीं करूँगा, यह सोचकर—

"मुने ! विलक्षणोऽयं भगवान् सकल-कला-कलाप-कलनः सकल-कालनः करालः कालः। स एव कदाचित् पयः-पूर-पूरितान्यकूपार-तलानि मरूकरोति। सिंह-व्याघ्र-भल्लूक-गण्डक-फेरु-शश-सहस्र-व्याप्तान्यरण्यानि जनपदीकरोति, मन्दिर-प्रासाद-हर्म्य-शृङ्गाटक-चत्वरोद्यान-तडाग-गोष्ठमयानि नगराणि च काननीकरोति। निरीक्ष्यतां कदाचिद-स्मिन्नेव भारते वर्षे यायजूकै राजसूयादिभिः व्ययाजिषत, कदाचिदिहैव वर्ष-वाताऽऽतपहिम-सहानि तपांसि अताप्सत। सम्प्रति तु म्लेच्छैर्गावो हन्यन्ते, वेदा विदीर्यन्ते, स्मृतयः प्रमृद्यन्ते, मन्दिराणि मन्दुरीक्रियन्ते सत्यः पात्यन्ते, सन्तश्च सन्ताप्यन्ते। सर्वमेतन्माहात्म्यं तस्यैव महाकाल-स्येति कथं धीरधौरेयोऽपि धैर्यं विधुरयसि ? शान्तिमाकलय्यातिसंक्षेपेण कथय यवनराज्य-वृत्तान्तम्। न जाने किमित्यनावश्यकमपि शुश्रूषते मे हृदयम्"—इति कथयित्वा तूष्णीमवतस्थे।

श्रीधरी—मुने=हे मुने, अयं भगवान्=यह ईश्वर, सकल कला कलाप-कलनः=समग्र कलाओं के निर्माता, सकल कालनः करालः काल सब का ही संहार करने के लिये कराल काल के समान, विलक्षणः= विलक्षण है, स एव=वह ईश्वर ही, कदाचित्=कभी, पयः पूरपूरितानि =जल से लबालब भरे हुये, अकूपार तलानि=समुद्र तलों को, मरु

करोति = मरुस्थल बना देता है, सिंह-व्याघ्र-भल्लूक-मण्डकपेरु-शश-सहस्र व्याप्तानि = हजारों शेर, बाघ, रीछ, गेंड़ा, सियार और खरगोशों से व्याप्त, अरण्यानि = जंगलों को, जनपदीकरोति = नगरों के रूप परिणत करता है, मन्दिर-प्रसाद-हर्म्य-शृङ्गाटक-चत्वरोद्यान-तडाग-गोष्ठमयानि = मन्दिर- महल, अट्टालिकाओं, चौराहों, उद्यानों, चबूतरों, सरोवरों तथा गोशालाओं से युक्त, नगराणि = नगरों को, काननी करोति = जंगलों में बदल देता है, निरीक्षतां = देखिये, कदाचित् = कभी, अस्मिन् एव भारते वर्षे = इसी भारत वर्ष में, याज्ञिकैः = याज्ञिकों के द्वारा, राजसूयादि यज्ञा = राजसूय आदि यज्ञ, व्ययाजिषत = किये गये थे, कदाचित् = कभी, इहैव = इसी भारत वर्ष में, वर्ष-वाताऽऽतप हिम सहानि = वर्षा, हवा, धूप और बरफ को सहन करके, तपांसि = तपस्यायें, अतापिषत = कीं गई थीं, सम्प्रति तु = किन्तु इस समय तो, मलेच्छैर्गावो हन्यन्ते = मुसलमानों के द्वारा गायें मारी जाती हैं, वेदा विदीर्यन्ते = वेदों की पुस्तकें फाड़ी जाती हैं, स्मृतयः = स्मृतियां, सम्मृद्यन्ते = कुचली जाती है, मन्दिराणि = मन्दिरों को, मन्दुरी क्रियन्ते = घुड़साल बनाया जाता है, सत्यः पात्यन्ते = सतियों का सतीत्व नष्ट किया जाता है, सन्तश्च = सज्जन लोगों को, सन्ताप्यन्ते = दुःख दिया जाता है, एतत् सर्व. महात्म्यं = यह सब महिमा, तस्यैव = उसी, महाकालस्य = महाकाल की है, इति = यह सोचकर, धीरे धौरेयोपि = धैर्य शालियों में अग्रगण्य होते हुये भी, कथं = क्यों, धैर्य विधुन्यसि = धैर्य को खो रहे हो ? शान्तिमाकथ्य = शान्त होकर, अतिसंक्षेपेण = अत्यन्त संक्षेप में, यवनराज वृत्तान्तं = मुसलमानी राज्य के वृत्तान्त को, कथय = कहो, अनावश्यकमपि = मेरे लिये अनावश्यक होते हुये भी, न जाने किमिति = न मालूम किस लिये, मे चेतः = मेरा मन, शुश्रूषते = सुनना चाहता है. इति कथयित्वा = ऐसा कहकर, तूष्णी मवतस्थे = योगिराज चुप हो गये।

हिन्दी—

महात्मा जी, भगवान महाकाल सारी कलाओं के प्रणेता और

सबके संहारक होने के कारण बड़े विलक्षण हैं। वे महाकाल ही कभी अथाह जल प्रवाह से परिपूर्ण समुद्र तलों को मरुस्थल के रूप में परिणत कर देते हैं तो कभी हजारों शेर, बाघ, रीछ, मेंडा, सियार और खरगोशों से भरे हुए जंगलों को सुन्दर नगरों के रूप में बदल देते हैं। मन्दिर, महल, अट्टालिकाओं, चौराहों, चबूतरों और बगीचों तथा गोशालाओं से युक्त नगरों को जंगलों के रूप में परिणत कर देते हैं। देखिये, कभी इसी भारतवर्ष में याज्ञ के द्वारा राजसूय प्रभृति यज्ञ किये जाते थे। कभी इसी भारत वर्ष में वर्षा हवा, घूप और बरफ को सहन करते हुए तपस्याएँ की जाती थीं। किन्तु आज मुसलमानों के द्वारा गायें मारी जाती हैं। वेदों की पुस्तकें फाड़ी जाती हैं। स्मृतियां कुचली जातीं हैं। मन्दिरों को घुड़साल बनाया जाता है, सतियों का सतीत्व नष्ट किया जाता है और सन्तों को दुःख दिया जाता है। यह सब महिमा उसी महाकाल की है, यह सोच कर धैर्यशाली होकर भी तुम क्यों धैर्य धारण नही करते ? शान्त होकर अत्यन्त संक्षेप में मुसलमानी राज्य का समाचार कहो। मेरे लिये अनावश्यक होते हुये भी न मालूम क्यों मेरा मन सुनना चाहता है। ऐसा कहकर योगिराज चुप हो गये।

अथ स मुनिः—"भगवन् ! धैर्येण, प्रसादेन, प्रतापेन, तेजसा, वीर्येण, विक्रमेण, शान्त्या, श्रिया, सौख्येन, धर्मेण, विद्यया च सममेव परलोकं सनाथितवति तत्रभवति वीरविक्रमादित्ये, शनैः शनैः पारस्परिक-विरोध-विशिथिलीकृतस्नेहबन्धनेषु राजसु, भामिनी-भ्रूभङ्ग-भूरिभाव-प्रभाव-पराभूत-वैभवेषु भटेषु, स्वार्थ-चिन्तासन्तान-वितानैकतानेष्वमात्यवर्गेषु, प्रशंसामात्रप्रियेषु प्रभुषु, "इन्द्रस्त्वं वरुणस्त्वं कुबेरस्त्वम्" इति वर्णनामात्रसक्तेषु बुधजनेषु, कश्चन गजिनी-स्थाननिवासी महामदो यवनः ससेनः प्राविशद् भारते वर्षे। स च प्रजा विलुण्ठ्य, मन्दिराणि निपात्य, प्रतिमा विभिद्य, परश्शतान् जनांश्च दासीकृत्य, शतश उष्ट्रेषु

रत्नान्यारोप्य स्वदेशमनैषीत्। 'एवं स ज्ञातास्वादः पौनःपुन्येन द्वादशवारमागत्य भारतमलुलुण्ठत्। तस्मिन्नेव च स्वसंरम्भे एकदा गुर्जरदेशचूडायितं सोमनाथतीर्थमपि धूलीचकार।

श्रीधरी—अथ = इसके वाद, स मुनिः = उस मुनि ने कहा, भगवन् = महात्मन्, धैर्येण = धैर्य के साथ, प्रसादेन = प्रसन्नता के साथ। प्रतापेन = प्रताप के साथ। तेजसा = तेज के साथ। वीर्येण = बल के साथ। विक्रमेण = पराक्रम के साथ। शान्त्या = शान्ति के साथ। श्रिया = शोभा के साथ। सौख्येन = सुख के साथ। धर्मेण = धर्म के साथ विद्यया च सममेव = और विद्या के साथ ही। तत्र भवति = आदरणीय। वीर विक्रमादित्ये = वीर विक्रमादित्य के। परलोकं सनाथितवति = परलोक गमन कर लेने पर। शनैः शनैः = धीरे-धीरे। राजसु = राजाओं के। पारस्परिक-विरोध विशिथिलीकृत स्नेह वन्धनेषु = पारस्परिक स्नेह वन्धन आपसी फूट के कारण ढीले पड़ जाने पर। भामिनी = स्त्रियों के। भ्रूभङ्गप्रभाव-पराभूत वैभवेषु भटेषु = कटाक्षों एवं हाव-भाव के प्रभाव में आकर वीरों के सारी सम्पत्ति नष्ट कर चुकने पर। अमात्यवर्गेषु = मन्त्रियों के। स्वार्थचिन्ता सन्तान-वितानैक तानेषु = स्वार्थ चिन्ता परायण हो जाने पर। प्रभुषु = राजाओं के। प्रशंसामात्र प्रियेषु = प्रशंसामात्र प्रिय हो जाने पर। बुधजनेषु = विद्वानों के। इन्द्रस्त्वं वरुणस्त्वं कुवेरस्त्वम् = आप इन्द्र है, आप वरुण हैं, आप कुवेर हैं, इस प्रकार। वर्णनामात्रसक्तेषु = चाटुकारिता में लग जाने पर। कश्चन = कोई, गजिनी स्थान निवासी = गजिनी नामक स्थान में रहने वाला। महामदो यवनः = महमूद नामक मुसलमान ने। ससेनः = सेनासहित। प्राविशद् भारते वर्षे = भारत वर्ष में प्रवेश किया। स च = वह। प्रजा विलुण्ठय = प्रजा को लूट कर। मन्दिराणि निपात्य = मन्दिरों को गिराकर। परश्शतान् = सैकड़ों। जनाश्च = लोगों को। दासीकृत्य = गुलाम बना कर। शतश उष्ट्रेषु = सैकड़ों ऊँटों में। रत्नानि आरोप्य = रत्नों को लाद कर। स्वदेशम् = अपने देश को। अनैषीत् = ले गया। एवं =

इस प्रकार । नातास्वादः=स्वाद लग जाने से । पौनः पुन्येन=वार-वार ।, द्वादशवार-मागत्य=वारह वार आकर । भारत मलुलुण्ठत्=भारत वर्ष को लूटा । तस्मिन्-एव स्व-संसम्भे=अपने उन्हीं हमलों में । एकदा=एक वार । गुर्जरदेश चूड़ायितं=गुजरात के आभूपण के समान । सोमनाथतीर्थमपि=सोमनाथ तीर्थ को भी । धूलीचकार=धूल में मिला दिया ।

हिन्दी—

इसके वाद ब्रह्मचारि गुरु ने कहना आरम्भ किया—महाराज ! धैर्य के साथ, प्रसन्नता के साथ, प्रताप के साथ, तेज के साथ, वल के साथ, पराक्रम के साथ, शान्ति के साथ, शोभा के साथ, सुख के साथ, धर्म के साथ और विद्या के साथ, वीर विक्रमादित्य के परलोक वासी हो जाने पर, राजाओं के पारम्परिक स्नेह-सम्बन्ध आपसी झगड़ों के कारण शिथिल हो जाने पर, वीर लोगो के कामिनियों कटाक्षों एवं हाव-भावो के प्रभाव में आकर सारी सम्पत्ति नष्ट कर चुकने पर, मन्त्रियों के स्वार्थ-चिन्ता परायण हो जाने पर, राजाओं के प्रशंसा मात्र प्रिय हो जाने पर, विद्वान लोगो के—आप ही इन्द्र है, आप ही वरुण है और आप ही कुवेर है, इस प्रकार की चाटुकारिता में लग जाने पर, किसी गजनी देश मे रहने वाले महमूद नामक मुसलमान ने सेना के साथ भारत वर्ष में प्रवेश किया । वह प्रजा को लूटकर, मन्दिरो को तोड़कर, मूर्तियों को नष्ट करके, सैकड़ो लोगो को गुलाम वनाकर, सैकड़ों ऊँटों पर रत्नों को लादकर अपने देश को ले गया, स्वाद लग जाने पर वार-वार भारत में आकर उसने वारह वार भारत को लूटा । अपने इन्ही आक्रमणों में उसने एक वार गुजरात का शिरमौर सोमनाथ तीर्थ को भी धूल में मिला दिया ।

Imp.92

अद्य तु तत्तीर्थस्य नामापि केनापि न स्मर्यते; परं तत्समये तु लोकोत्तरं तस्य वैभवमासीत् । तत्र हि महार्ह-वैदूर्य-पद्मराग-माणिक्य-मुक्ता-

बहुमूल्य ... हीरा

फलादि-जटितानि कपाटानि, स्तम्भान्, गृहावग्रहणीः भित्तीः, वलभीः, विटङ्कानि च निर्मथ्य, रत्ननिचयमादाय, शतद्वय-मणसुवर्ण-शृङ्खलावलम्बिनीं च चाकचक्य-चकितीकृतावलोकक-लोचन-निचयां महाघण्टां प्रसह्य संगृह्य, महादेवमूर्तावपि गदामुदतूतुलत्।

अथ "वीर! गृहीतमखिलं वित्तम्, पराजिता आर्य्यसेनाः, बन्दीकृता वयम्, सञ्चितममलं यशः, इतोऽपि न शाम्यति ते क्रोधश्चेदस्मांस्ताडय मारय, छिन्धि, भिन्धि पातय मज्जय, खण्डय, कर्तय ज्वलय; किन्तु त्यजेमामकिञ्चित्करीं जडां महादेव-प्रतिमाम्। यद्येव न स्वीकरोषि तद् गृहाणास्मत्तोऽन्यदपि सुवर्णकोटिद्वयम्, आयस्व, मैनां भगवन्मूर्तिं स्प्राक्षीः" इति सास्रेडं कथयत्सु रुदत्सु पतत्सु विलुण्ठत्सु प्रणमत्सु च पूजकवर्गेषु; 'नाहं मूर्तीर्विक्रीणामि; किन्तु भिनद्मि' इति सगर्ज्यं जनताया हाहाकार-कलकलमाकर्णयन् घोरगदया मूर्तिमतुत्रुटत्। गदापातसमकालमेव चानेकार्बुदस्वमुद्रामूल्यानि रत्नानि मूर्तिमध्यादुच्छलितानि परितोऽवाकीर्यन्त। स च दस्युः तानि रत्नानि मूर्तिखण्डानि च क्रमेलकपृष्ठेष्वारोप्य सिन्धुनदमुत्तीर्य स्वकीयां विजयध्वजिनीं गजिनीं नाम राजधानीं प्राविशत्।

श्रीधरी—अद्युत=आज तो। तत्तीर्थस्य=उस तीर्थ का। नामापि=नाम भी। केनापि न स्मर्यते=कोई याद नहीं करता। परं =किन्तु। तत्समये=उस समय। तस्य=उसका। वैभवं=वैभव। लोकोत्तरम् आसीत्=अद्वितीय था। तत्र हि=उसमें। महार्हं=बहुमूल्य। वैदूर्य=मूगा। पद्मराग=पद्मराग। माणिक्य=हीरा। मुक्ताफलादि जटितं=मोती जड़े। कपाटानि=किवाड़ों। स्तम्भान्=खम्भों। गृहावग्रहणी=देहलियो। भित्तीः=दीवारो। वलभीः=छज्जों। विटङ्कानि च=कबूतरों के दरवों को। निर्मथ्य=छान कर। रत्ननिचयमादाय= रत्नराशि को लेकर। शतद्वयमण सुवर्ण शृङ्खलावलम्बिनीं=दो सौ

मन की सोने की जञ्जीर पर लटकने वाली। चञ्चच्चाकचक्य-चकितीकृतावलोचक-लोचननिचयां=चमचमाहट से देखने वालों की आँखों में चकाचोंध पैदा करने वाली। महाघण्टां=बहुत भारी घण्टे को। प्रसदच=बलपूर्वक। संगृहच=छीनकर। महादेव मूर्तावपि=महादेव की मूर्ति पर भी। गदामुदतुलत्=गदा को उठाया।

अथ=इससे बाद। पूजक वर्गेषु=पुजारियों के, वीर=हे वीर। अखिल वित्तं गृहीतं=तुमने सारा धन ले लिया। आर्य सेना पराजिता=हिन्दुओं की सेना को पराजित कर दिया। अमल यशः सञ्चितं=निर्मल यश का संचय कर लिया। इतोऽपि=इतने पर भी। ते क्रोधः न शाम्यति चेत्=तुम्हारा क्रोध शान्त नही होता तो। अस्मान्=हमें। ताडय, मारय, छिन्धि, भिन्दि, पातय, मज्जय, खण्डय, कर्तय, ज्वलय=पीटो, मारो, चीरो, काट डालो, पहाड़ से गिराओ, पानी में डुबाओ, टुकड़े-टुकड़े करो, कतर डालो, जलाओ। किन्तु=पर। अकिञ्चित्करीं=कुछ न विगाड़ने वाली। जड़ां=जड़। महादेव प्रतिमां त्यज=महादेव की मूर्ति को छोड़ दो। यद्येवं न स्वीकरोषि=यदि इस बात को स्वीकार नही करते हो तो, अन्यदपि=और भी। सुवर्ण कोटिद्वयम्=दो करोड़ स्वर्ण मुद्राएँ। गृहाण=स्वीकार करो। त्रायस्व=रक्षा करो। एनां=इस, भगवन्मूर्ति मा स्प्राक्षीः=इस भगवान की मूर्ति को मत छुओ। इति=इस प्रकार। साम्रेडं=बार-बार। कथयत्सु=कहने पर। रुदत्सु=रोने पर। पतत्सु=गिरने पर विलण्ठत्सु=भूमि पर लोटने पर, प्रणामत्सु च=और प्रणाम करने पर। अहं=मैं, मूर्तौ=मूर्ति को। न विक्रीणामि=बेचता नही। किन्तु भिनद्मि=पर तोड़ता हूँ। इति=इस प्रकार। संगर्ज्य=गरजकर। जनतायाः=जनता के। हाहाकार कल कलमाकर्णयन्=हाहाकार के कोलाहल को सुनता हुआ। घोर गदया=अपनी भयंकर गदा से। मूर्तिमतुत्रुटत्=मूर्ति को तोड़ डाला। गदाघात

समकाल मेय=गदा के गिरते ही। अनेकार्बुदपद्ममुद्रा मूल्यानि= अनेक अरब पद्म मूल्य के। रत्नानि=रत्न। मूर्तिमध्यादुच्छलितानि= मूर्ति से उछल कर। परितः=चारो ओर। अवाकीर्यन्त=बिखर गये। स च दग्ध मुखः=वह मुंह जला। तानिरत्नानि=उन रत्नो को, क्रमेलक पृष्ठेषु आरोप्य=ऊटों पर लाद कर। सिन्धुनदं उत्तीर्य= सिन्धु नदी पार करके। स्वकीया=अपनी, विजयध्वजिनी=विजय ध्वज वाली। गजनी नाम राजधानी=गजनी नामक राजधानी मे। प्राविशत्=प्रविष्ट हुआ।

हिन्दी—

आज तो सोमनाथ तीर्थ का भी कोई नाम याद नही करता, किन्तु उस समय उसका वैभव अद्वितीय था। उसमे बहुमूल्य मूंगा, पद्मराग, हीरे और मोती जडे हुए किवाड़ो, खम्भो, देहलियो दीवारो, छज्जों, तथा कबूतरो के दरबो को छानकर रत्नराशि लेकर, दो सौ मन सोने की बनी जंजीर पर लटकने वाले विशाल घण्टे को जो देखने वालों की आँखों मे अपनी चमक चकाचोध पैदा कर देता था। बल-पूर्वक छीनकर उसने महादेव की मूर्ति पर भी गदा को उठाया।

इसके बाद पुजारियो के वीर! तुमने सारा धन ले लिया, हिन्दुओं की सेना को पराजित कर दिया, हम लोगो को बन्दी बना लिया, निर्मल यश का सचय कर लिया। यदि इतने मे तुम्हारा क्रोध शान्त नही होता तो हमें पीटो, मारो, चीरो, काटो, पहाड़ से गिराओ, पानी मे डुबाओ, टुकडे-टुकड़े कर-डालो, कतर दो, जला दो, किन्तु इस महादेव की मूर्ति को मत छुओ। इसे छोड़ दो। यदि तुम्हें यह भी स्वीकार न हो तो हम से दो सौ करोड़ स्वर्ण मुद्राएँ और ले लो, रक्षा करो। इस महादेव की मूर्ति को मत छुओ। यह कहकर बार-बार प्रार्थना करने पर, रोने पर, पैरो मे पड़ने पर, भूमि पर लोट लगाने

पर, प्रणाम करने पर,—मैं मूर्ति को बेचता नही किन्तु तोड़ता हूँ। इस प्रकार गरज कर जनता के हाहाकार के कोलाहल को सुनता हुआ उसने अपनी भयंकर गदा से मूर्ति को तोड़ डाला। गदा के गिरते ही अनेक अरवपद्म मूल्य के रत्न मूर्ति से उछल कर चारों ओर बिखर गये। वह मुँह जला उन रत्नों को और मूर्ति खण्डों को ऊँटों की पीठ पर लादकर सिन्धु नदी को पार करके अपनी विजय ध्वजा वाली गजनी नामक राजधानी से प्रविष्ट हुआ।

अथ कालक्रमेण सप्ताशीत्युत्तरसहस्रतमे (१०८७) वैक्रमाब्दे सशोक सकष्टञ्च प्राणांस्त्यक्तवति महामदे, गोरदेशवासी कश्चित् शहाबुद्दीन-नामा प्रथम गजिनीदेशमाक्रम्य, महामदकुलं धर्मराजलोकाध्वन्यध्वनीनं विधाय, सर्वाः प्रजाश्च पशुमारं मारयित्वा, तद्रुधिरार्द्रमृदा गोरदेशे बहून् गृहान् निर्माय चतुरङ्गिण्याऽनीकिन्या भारतवर्षं प्रविश्य, शीतलशोणितान्प्यसयन् पञ्चाशदुत्तर-द्वादशशतमितेऽब्दे (१२५०) दिल्लीमश्वयाम्बभूव।

ततो दिल्लीश्वरं पृथ्वीराजं कान्यकुब्जेश्वरं जयचन्द्रञ्च पारस्परिकविरोध-ज्वर गरल विस्मृत राजनीति भारतवर्ष-दुर्भाग्यायमाणमाकलय्यानायासेनोभावपि विशस्य, वाराणसीपर्यन्तमखण्डमण्डलमकण्टकमकीटकिट्टं महारत्नमिव महाराज्यमङ्गीचकार। तेन वाराणस्यामपि बहवोऽस्थिगिरयः प्रचिताः, रिङ्गत्तरङ्ग-भङ्गा गङ्गाऽपि शोणितशोणा शोणीकृता, परस्सहस्राणि च देवमन्दिराणि भूमिसात्कृतानि।

स एव प्राधान्येन भारते यावनराज्याङकुराऽऽरोपकोऽभूत्। तस्यैव च कश्चित् क्रीतदासः कुतुबुद्दीननामा प्रथमभारतसम्राट् सजातः।

श्रीधरी—अथ कालक्रमेण=इसके बाद समय के फेर से। सप्ताशीत्युत्तरसहस्रतमे=दस सौ सत्तासी। वैक्रमाब्दे=विक्रमी में,

सशोकं सकष्टञ्च=शोक और कष्ट के साथ, महामदे=महमूद के, प्राणास्त्यक्तवति=मर जाने पर, कश्चित्=किसी, गोरदेश वासी=गोरदेश निवासी, शहाबुद्दीन नामा=शहाबुद्दीन नामक यवन ने प्रथम=पहले, गजिनी देश माक्रम्य= गजनी देश में आक्रमण करके, महामद्कुलं=महमूद के वंशजों को, धर्मराज लोकाध्वन्यध्वनीनम्-विधाय=यमलोक की राह का राहगीर बनाकर, सर्वाः प्रजाश्च= सारी प्रजा को, पशुमारं मारयित्वा=पशुओं की मौत मारकर, तद्रुधिरार्द्र मृदा=प्रजा के रक्त से गीली मिट्टी से, गोरदेशे=गोर देश में, वहून गृहान् निर्माय=वहुत से घरों का निर्माण करके, चतुरङ्गिण्या अनीकिन्या=चतुरंगिनी सेना के साथ, भारतवर्ष प्रविश्य=भारत में प्रवेश करके, शीतलशोणितानप्यसयन्=युद्धेच्छारहित भारतीयों को तलवार के घाट उतारता हुआ, पाञ्चाशत् उत्तर द्वादश शतामितेऽब्दे=बारह सौ पचास विक्रमी में, दिल्लीमश्वयाग्वभूव=दिल्ली को घुड़सवार सेना से घेर लिया।

ततः=इसके बाद मुहम्मद गोरी ने, दिल्लीश्वरं थ्वीराजं=दिल्ली के महाराज पृथ्वीराज, कान्यकुब्जेश्वरं जयजन्द्रञ्च=और कन्नौज के राजा जयचन्द्र को, पारस्परिक विरोध ज्वर ग्रस्तं=आपसी फूट रूपी ज्वर ग्रस्त, विस्मृत राजनीति=राजनीति के ज्ञान से रहित, भारतवर्ष दुर्भाग्यायमाणा=भारत का दुर्भाग्य स्वरूप, आकलय्य=समझकर, अनायासेन=आसानी से, उभावपि उन दोनों को, विशस्य=मारकर, वाराणसी-पर्यन्तं=वनारस तक विस्तृत, अखण्ड मण्डलं=एकछत्र, अकण्टकं अकीटकिट्टं=निष्कण्टक और कीट तथा मल से रहित, महारत्नमिव=महारत्न के समान, महाराज्ययङ्गी चकार=वहुत बड़े राज्य पर अधिकार कर लिया, तेन=उस मुहम्मद गोरी ने, वाराणस्यामपि=वनारस में भी, वहवो=वहुत से, अस्थिगिरयः=हड्डियों के पहाड़, प्रचिताः=चुन दिये, रिङ्गत्तरग-भंगा गंगाऽपि=चञ्चल

लहरों वाली गंगा को भी, शोणित-शोणा-शोणीकृता = भारतीयों के खून से रंगकर शोणित की नदी के समान लाल बना दिया, परस्सहस्राणि = हजारों, देवमन्दिराणि = देवताओं के मन्दिरों को, भूमिसात्कृतानि = धूल में मिला दिया।

स एव = उसी ने, प्राधान्येन = मुख्य रूप से, भारते = भारत में, यावनराज्याङ्कुराऽऽरोपकोऽभूत = मुसलमानी राज्य का बीजारोपण किया, तस्यैव = उसी का, क्रीतदासः = गुलाम, कश्चित् = कोई, कुतुबुद्दीन-नामा = कुतुबुद्दीन नामक, प्रथम भारत सम्राट: संजातः = भारत का पहला बादशाह हुआ।

हिन्दी—

इसके बाद समय के फेर से एक हजार सत्तासी विक्रमी में शोक और कष्ट के साथ महमूद गजनवी की मृत्यु हो जाने पर, गोर देश निवासी किसी शहाबुद्दीन नामक मुसलमान ने पहले गजनी देश पर आक्रमण करके, महमूद के वंशजो को यमलोक की राह का राहगीर बनाकर, सारी प्रजा को पशुओं की मौत मार कर, प्रजा के रक्त से भीगी गीली मिट्टी से गोर देश में बहुत से महलों का निर्माण करके, चतुरंगिणी सेना के साथ भारत में आकर, युद्धेच्छा से रहित भारतीयों को तलवार के घाट उतारते हुए बारह सौ पचास विक्रमी में दिल्ली को घुड़सवार सेना से घेर लिया।

तदनन्तर मुहम्मद गोरी ने दिल्ली के महाराज पृथ्वी राज और कन्नौज के राजा जयचन्द को आपसी फूट रूपी ज्वर से ग्रस्त, राजनीति के ज्ञान से रहित, और भारतवर्ष के दुर्भाग्य के समान समझ कर, आसानी से उन दोनों को मार कर, वाराणसी तक फैले हुए-कीट और मैले से रहित महारत्न के समान निष्कण्टक राज्य पर अधिकार कर लिया, वाराणसी में भी उसने बहुत से हड्डियों के पहाड़ चुन दिये,

चञ्चल लहरों वाली गंगा को भारतीयों के ही रक्त से रंग कर शोण नदी की तरह लाल बना दिया, हजारों देव मन्दिरों को धूल में मिला दिया।

उसी ने मुख्य रूप से भारतवर्ष में मुसलमानी राज्य का सूत्रपात किया। उसी का कोई खरीदा हुआ गुलाम कुतुबुद्दीन नाम का भारत का प्रथम बादशाह हुआ।

तमारभ्याद्यावधि राक्षसा एव राज्यमकार्षुः। दानवा एव च दीनानदीदलन्। अभूत् केवलम् अकबरशाह-नामा यद्यपि गूढशत्रुर्भारत-वर्षस्य, तथापि शान्तिप्रियो विद्वत्प्रियश्च। अस्यैव प्रपौत्रो मूर्तिमदिव कलियुगं, गृहीतविग्रह इव चाधर्मः, आलमगीरोपाधिधारी अवरङ्गजीवः सम्प्रति दिल्लीवल्लभतां कलङ्कयति। अस्यैव पताकाः केकयेषु मत्स्येषु मगधेषु अङ्गेषु वङ्गेषु कलिङ्गेषु च दोधूयन्ते, केवलं दक्षिणदेशेऽधुनाऽप्यस्य परिपूर्णो नाधिकारः संवृत्तः।

दक्षिणदेशो हि पर्वतबहुलोऽस्ति अरण्यानीसङ्कुलश्चास्तीति चिरोद्योगेनापि नाद्यावधि महाराष्ट्रकेसरिणो हरतयितुम्। साम्प्रत-मस्यैवाऽऽत्मीयो दक्षिणदेश-शासकत्वेन शाइस्ताखान" नामा प्रेष्यत इति श्रूयते।

श्रीवरी—तमारभ्य=उससे लेकर, अद्यावधि=आजतक, राक्षसा एव=राक्षसों ने ही, राज्यमकार्षुः=राज्य किया, दानवा एव=दैत्यों ने ही, दीनानदीदलन्=दीनों की हत्यों की, केवल=केवल, अकबरशाह नामा=अकबर नाम का बादशाह, यद्यपि गूढ शत्रु भारत वर्षस्य=जो भारत का गुप्त शत्रु था, फिर भी, शान्तिप्रियो=शान्ति प्रिय, विद्वत्प्रियश्च=और विद्वानों का प्रेमी था। अस्यैव=उसीका, प्रपौत्रः=पड पोता, मूर्तिमदिव कलियुगं=मूर्तिमान कलियुग, गृहीत विग्रह इव चाधर्म=शरीर धारी अधर्म के समान, आलमगीरो-

पाविधारी=आलमगीर की उपाधि से विभूषित, अवरङ्गजोव=औरङ्गजेब, सम्प्रति=इस समय, दिल्ली वल्लभतां=दिल्ली के शासन को, कलङ्कयति=कलङ्कित कर रहा है। अस्यैव पताकाः=इसी की ध्वजाएँ, केक्येषु=पंजाब में, मत्स्येषु=राजस्थान में, मगधेषु=विहार में, अङ्गेषु=पूर्वी विहार में, वङ्गेषु=वङ्गाल में, कलिंगेषु च=और उड़ीसा में भी, दोधूयन्ते=फहरा रही हैं. केवलं=केवल, दक्षिणदेशे=दक्षिण भारत में, अधुनाऽपि=अब भी, अस्य=इसका, परिपूर्णो अधिकारः=पूरा अधिकार, न संवृत्तः=नहीं हुआ।

दक्षिणदेशो हि=दक्षिण देश में, पर्वतबहुलोऽस्ति=पहाड़ों का आधिक्य है, अरण्यानी सङ्कुलश्चास्तीति=और वह घने जंगलों से युक्त है इसलिये। चिरोद्योगेनापि=बहुत समय से प्रयत्न करने पर भी, महाराष्ट्र केसरिणो=महाराष्ट्र केसरी शिवाजी को। हस्तयितु=वश में करने में, न अशकत्=समर्थ नहीं हुआ। साम्प्रतम्=इस समय। अस्यैवाऽऽत्मीयः=इसी का सगा सम्बन्धी। शास्तिखान नामा=शाइस्त खाँ नाम का, दक्षिण देश शासकत्वेन=दक्षिण देश का शासक बनाकर प्रेष्यत=भेजा जा रहा है। इति श्रूयते=ऐसा सुना जाता है।

हिन्दी—

उससे लेकर आज तक राक्षसों ने ही राज्य किया और दैत्यों ने ही दीनों की हत्या की। केवल अकबर नामक बादशाह जो यद्यपि भारत का छिपा हुआ शत्रु था, शान्तिप्रिय और विद्वानों का प्रेमी था। उसी का पड़पोता मूर्तिमान कलियुग और शरीर धारी अधर्म के समान, आलमगीर की उपाधि से विभूषित औरङ्गजेब इस समय दिल्ली के शासन को कलङ्कित कर रहा है। पंजाब, राजस्थान, विहार, पूर्वी विहार, वङ्गाल, उड़ीसा में आज इसी की पताकाएँ फहरा रही हैं। केवल दक्षिण भारत में अभी इसका पूरी तरह अधिकार नहीं हो सका।

दक्षिण भारत में पहाड़ों का आधिक्य है, घने जंगल भी वहाँ बहुत हैं। इसीलिये बहुत दिनों से प्रयत्न करने पर भी यह महाराष्ट्र केसरी वीरवर शिवाजी को अपने वश में नहीं कर सका है। अब उसी का सगा सम्बन्धी शाइस्त खाँ नाम का दक्षिण देश का शासक बनाकर भेजा जा रहा है। ऐसा सुना जाता है।

अहाराष्ट्रदेशरत्नम्, यवन शोणित-पिपासाऽऽकुलकृपाणः, वीरता-सीमन्तिनी-सीमन्त-सुन्दर-सान्द्र-सिन्दूर-दान-देदीप्यमान-दोर्दण्डः, मुकुटमणिर्महाराष्ट्राणाम्, भूषणं भटानाम्, निधिर्नीतीनाम्, कुलभवनं कौशलानाम्, पारावारः,परमोत्साहानाम्, कश्चन प्रातः स्मरणीयः, स्वधर्माऽऽग्रह-ग्रह-ग्रहिल-शिव इव धृतावतारः शिववीरश्चास्मिन् पुण्यनगरान्तेदीयस्येव सिंहदुर्गे ससेनो निवसति। विजयपुराधीश्वरेण साम्प्रतमस्य प्रवृद्धं वैरम्। "कार्यं वा साधयेयं देहं वा पातयेयम्" इत्यस्य सारगर्भा महती प्रतिज्ञा। सतीनाम्, सताम्, त्रैविणकस्य आर्यकुलस्य, धर्मस्य, भारतवर्षस्य च आशा-सन्तान-वितानस्यायमेवाऽऽश्रयः। इयमेव वर्तमाना दशा भारतवर्षस्य। किमधिकं विनिवेदयामो योग-बलावगतसकल-गोप्यतम-वृत्तान्तेषु योगिराजेषु" इति कथयित्वा विरराम।

तदाकर्ण्य विविध-भाव-भङ्ग-भासुर-वदनो योगिराजो मुनिराजं तत्सहचरांश्च निपुणं निरीक्ष्य, तेषामपि शिववीरान्तरङ्गता-मङ्गीकृत्य, मुनिवेषव्याजेन स्वधर्मरक्षाव्रतिनश्चोररीकृत्य "विजयतां शिववीरः, सिद्ध्यन्तु भवतां मनोरथाः" इति मन्दं व्यहार्षीत्।

शब्दार्थ—महाराष्ट्र देश रत्नम्=महाराष्ट्र देश के रत्न, यवन शोणितपिपासाऽऽकुल कृपाणः=यवनों के रुधिर की प्यासी तलवार वाले। वीरता-सीमन्तिनी=वीरता रूपी नायिका की। सीमन्त-सुन्दर-सान्द्र-सिन्दूर-दान-देदीप्यमान-दोर्दण्डः=माँग में सुन्दर चटकीला सिन्दूर लगाने से चमकती हुई भुजाओं वाले। महाराष्ट्राणां मुकुट

मणिः = मराठों में सर्वश्रेष्ठ। भटानां भूषणं = वीरों के आभूषण। नीतीनांनिधिः = नीतियों के निधान। कौशलानां कुल भवनम् = निपुणताओं के कुल गृह। परमोत्साहानां पारावारः = परम उत्साहों के सागर। कश्चन प्रातः स्मरणीयः = प्रातः स्मरणीय। स्वधर्माग्रह-ग्रहित्वः = सनातन धर्म के दृढ़तम बालक। शिव इव धृतावतारः = अवतार धारण किये हुए शंकर के समान। शिववीरश्च = शिवाजी भी, अस्मिन् पुण्य नगरात् = इस पूना नगर से, नेदीयस्येव = नजदीक ही। सिंह दुर्गे = सिंह दुर्ग में, ससेनो निवसति = सेना सहित रह रहे हैं, विजयपुरा धीश्वरेण = वीजापुर नरेश के साथ। साम्प्रतं = इस समय। अस्य = इनका, प्रवृद्धं वैरम् = शत्रुता बढ़ी हुई है, कार्यं साधयेय = या तो कार्य को ही सिद्ध करूंगा, देहं वा पातयेयं = या शरीर को ही नष्ट कर दूंगा, इति = इस प्रकार। अस्य = इनकी। सारगर्भा महती प्रतिज्ञा = सारगर्भित गम्भीर प्रतिज्ञा है। सतीना = सतियों के, सताम् = सज्जनों के, त्रैवर्णिकस्य = तीनों वर्णों के, आर्य कुलस्य = आर्यों के, धर्मस्य = धर्म के। भारतवर्षस्य = भारत के। आशा-सन्तान-वितानस्य = आशा रूपी लता के, अयमेव आश्रयः = यही आधार है। इयमेव = यही। वर्तमानादशा = वर्तमान स्थिति है। भारतवर्षस्य = भारतवर्ष की। अधिक किं विनिवेदयामी = अधिक क्या कहे, योगबलादवगत सकल गोप्यतम वृत्तान्तेषु योगिराजेषु = योग बल से सारे गोप्यतम वृत्तान्तों को जानने वाले योगिराज से। इति कथयित्वा = यह कह कर ब्रह्मचारि गुरु। विरराम = चुप हो गये।

तदाकर्ण्य = यह सुनकर। विविध-भाव-भङ्ग भासुर वदनो = अनेक भाव भङ्गियों से खिले मुख वाले। योगिराजो = योगिराज ने, मुनिराजं तत्सहचरांश्च = मुनिराज और उनके साथियो को। निपुणं निरीक्ष्य = अच्छी तरह से देखकर, तेषामपि = उन्हें भी। शिववीरान्तरङ्गताभङ्गीकृत्य = शिवाजी के अन्तरङ्ग सहायक समझ कर।

मुनिवेष व्याजेन=मुनि के वेश के बहाने। स्वधर्म रक्षा व्रतिनश्च= अपने धर्म की रक्षा करने में बद्धपरिकर। उररीकृत्य=जानकर। मन्दं=धीरे से। विजयतां शिववीरः=शिवाजी की जय हो। सिद्धयन्तु भवतां मनोरथाः=आपकी इच्छाएँ पूरी हों। इति=इस प्रकार, व्याहार्षीत=कहा।

हिन्दी—

महाराष्ट्र देश के रत्न, यवनों के रक्त की प्यासी तलवार वाले, वीरता रूपी तरुणी की माँग पर सुन्दर चटकीला सिन्दूर लगाने से चमकती हुई भुजाओं वाले, मराठों के मुकुट मणि, योद्धाओं के आभूषण, नीतियों के निधान, निपुणताओं के कुलगृह, अत्यन्त उत्साहों के सागर, प्रातः स्मरणीय, सनातन धर्म के दृढ़तम पालक, अवतार धारण कर आये हुए शंकर जी के समान, महाराज शिवाजी पूना नगर के पास ही सिंह गढ़ में सेना सहित निवास कर रहे हैं। इस समय बीज़ापुर नरेश के साथ उनकी शत्रुता बढ़ी हुई है. या तो कार्य सिद्ध करूँगा या शरीर का ही नाश कर डालूँगा, यह इनकी सारगर्भित और गाम्भीर प्रतिज्ञा है. सतियों, सज्जनों, ब्राह्मणों, आर्यों, धर्म तथा भारतवर्ष की आशा रूपी बेल के ये ही एकमात्र अवलम्ब हैं। यही भारत की वर्तमान स्थिति है। आप योगिराज हैं और योगबल से समग्र गोप्यतम वृत्तों को भी जानते हैं। अतः अधिक क्या निवेदन करूं? इतना कहकर ब्रह्मचारि गुरु चुप हो गये।

यह सुनकर योगिराज का मुख मण्डल अनेक प्रकार की भाव भङ्गियों से खिल उठा। उन्होंने मुनि और उनके साथियों को गौर से देख कर, उन्हें भी शिवाजी के अन्तरङ्ग सहायक समझकर, मुनि के वेष के बहाने अपने धर्म की रक्षा करने में उन्हें कटिबद्ध जानकर, धीरे से शिवाजी की जय हो, आप लोगों की इच्छाएँ पूर्ण हों, यह कहा।

अथ किमपि पिपृच्छिषामीति शनैरभिधाय बद्धकरसम्पुटे सोत्कण्ठे जटिलमुनौ "अवगतम्, यवनयुद्धे विजय एव, दैवादापद्ग्रस्तोऽपि च सखिसाहाय्येनाऽऽत्मानमुद्धरिष्यति" इति समभाणीत्। मुनिश्च गृहीतमित्युदीर्य, पुनः किञ्चिद्विचार्य्येव, स्मृत्वेव च, दीर्घमुष्णं निःश्वस्य, रोरुध्यमानैरपि किञ्चिदुद्गतैर्वाष्पबिन्दुभिराकुलनयनो "भगवन्! प्रायो दुर्लभो युष्मादृक्षाणां साक्षात्कार इत्यपराऽपि पृच्छाऽऽच्छादयति माम्" इति न्यवेदीत्। स च "आम्! ऊरीकृतम्, जीवति सः, सुखेनैवाऽऽस्ते" इत्युदतीतरत्। अथ "तं कदा द्रक्ष्यामि" इति पुनः पृष्टवति "तद्विवाहसमये द्रक्ष्यसि" इत्यभिधाय, बहूनि सान्त्वना-वचनानि च गम्भीरस्वरेणोक्त्वा, सपदि उपत्यकाम्, गण्डशैलान्, अधित्यकाञ्चाऽऽरुह्य पुनस्तस्मिन्नेव पर्वतकन्दरे तपस्तप्तुं जगाम।

श्रीधरी—अथ = इसके बाद। किमपि पिपृच्छिषामीति = कुछ पूछना चाहता हूँ। शनैरभिधाय = धीरे से यह कर, जटिलमुनौ = जटाधारी मुनि के। बद्धकरसम्पुटे = हाथ जोड़ने तथा। सोत्कण्ठे = उत्सुक होने पर। अवगतम् = मैंने समझ लिया। यवन युद्धे विजय एव = मुसलमानों के साथ युद्ध में शिवाजी की जीत ही होगी। दैवात = दुर्भाग्य से, आपद्ग्रस्तोऽपि च = आपत्ति ग्रस्त होकर भी। सखि सहाय्येन = मित्रों की सहायता से, आत्मान मुद्धरिष्यति = अपने को उबार लेगे। इति समभाणति = योगिराज ने ऐसा कहा। मुनिश्च = मुनि ने भी। गृहीतम् = समझ गया। इत्युदीर्य = ऐसा कहकर। पुनः किञ्चिद्विचार्येव = फिर कुछ विचार सा करके। स्मृत्वेव च = याद सा करके। दीर्घमुष्टां निःश्वस्य = लम्बी और गरम सांस लेकर, रोरुध्यमानैरपि = रोके जाने पर भी, किञ्चिदुद् गतैर्वाष्पबिन्दुभि = कुछ आंसुओं के निकल आने से। आकुलनयनः = आकुल नेत्र होकर, भगवन् = श्रीमन्। युष्मादृक्षाणां = आप जैसे योगियों का, साक्षात्कारः =

दर्शन । प्रायः दुर्लभः = प्रायः दुर्लभ हैं । इति = इसलिये. अपराऽपिपृच्छा-ऽऽच्छादयति माम् = एक दूसरा प्रश्न मुझे उत्सुक कर रहा है । स च = योगिराज के, आम् उररीकृतम् = हाँ, स्वीकार किया । जीवित सः = वह जीवित है । सुखेनैवाऽऽस्ते = सुख पूर्वक है । इति = इस प्रकार । उदतीतरत् = उत्तर दिया । अथ = इसके बाद । तं कदा द्रक्ष्यामि = उसे कब देखूंगा । इति पुनः पृष्टवति = ऐसा फिर पूछने पर । तद्विवाह समये द्रक्ष्यसि = उसके विवाह के सम देखोगे । इत्यमिधाय = ऐसा कह कर । वहूनि = वहुत से । सान्त्वना वचनानि च गम्भीर स्वरेणोक्त्वा = सान्त्वना वाक्यों को गम्भीर स्वर में कहकर । सपदि = तत्काल । उपत्यकाम् = पहाड़ की घाटी । गण्ड शैलान् = वड़े वड़े पत्थरों । अधिकाञ्चाऽऽरुह्य = पहाड़ की ऊपरी भूमि पर चढ़कर । पुनः = फिर से, तस्मिन्नेव पर्वत कन्दरे = उसी पहाड़ की गुफा में, तपस्तुं = तपस्या करने के लिये । जगाय = योगिराज गये ।

हिन्दी—

इसके वाद में कुछ पूछना चाहता हूँ—धीरे से यह कह कर जटाधारी मुनि के उत्सुकतापूर्ण हाथ जोड़ने पर योगिराज ने कहा—मैं समझ गया । मुसलमानों के साथ युद्ध में शिवाजी की विजय ही होगी, दुर्भाग्य से विपत्ति में पड़ने पर भी मित्रों की सहायता से वे अपने को उबार लेंगे ।

मुनि ने भी भगवन्, समझ गया । यह कहकर फिर कुछ विचार सा करके, कुछ याद सा करके लम्बी और गरम साँस लेकर, रोके जाने पर भी कुछ निकल आये अश्रुकणों से आकुल नेत्र होकर कहा—भगवन्, आपके समान महापुरुषों के दर्शन प्रायः दुर्लभ हैं । इसलिये एक और प्रश्न पूछना चाहता हूँ । योगिराज के—हाँ । स्वीकार

किया· वह जीवित है. सुखपूर्वक है. यह कहने पर, मुनि ने फिर पूछा—उसे कब देखूँगा ? उसके विवाह के समय देखोगे। ऐसा कहकर और गम्भीर वाणी में बहुत से आश्वासन देकर, योगिराज तत्काल ही पहाड़ की घाटी, पहाड़ से गिरी हुई बड़ी-बड़ी शिलाओं एवं पहाड़ के ऊपरी भूमि पर चढ़ कर फिर से उसी पहाड़ की गुफा में तपस्या करने के लिये चले गये।

ततः शनैः शनैर्निर्यातेष्वपरिचितजनेषु, संवृत्ते च निर्मक्षिके, मुनिर्गौरवटुमाहूय, विजयपुराधीशाऽऽज्ञया शिववीरेण सह योद्धुं ससेनं प्रस्थितस्य अपजलखानस्य विषये यावत्किमपि प्रष्टुमियेष, तावत्पादचारध्वनिमिव कस्याप्यश्रौषीत्। तमवधार्यान्यमनस्के इव मुनौ, गौरवटुरपि तेनैव ध्वनिना कर्णयोः कृष्ट इव समुत्थाय, निपुणं परितो निरीक्ष्य, पर्य्यटय, 'कोऽयम्' ?' इति च साम्रेडं व्याहृत्य, कमप्यनवलोक्य पुनर्निवृत्य, 'मन्ये मार्जारः कोऽपि' इति मन्दं गुरवे निवेद्य, पुनस्तत्रैवोपविवेश। मुनिश्च 'मा स्म कश्चिदितरः श्रौषीत्' इति सशङ्कः क्षणं विरम्य पुनरुपन्यस्तुमारेभे-

Ramarao M.A. f.SANS.

श्रीधरी—ततः=उसके बाद, शनैः शनैः=धीरे-धीरे, अपरिचित जनेषु निर्यातेषु=अपरिचित लोगों के चले जाने पर, निर्मक्षिके संवृत्ते=एकान्त हो जाने पर, मुनिः=मुनिराज ने, गौरवटुमाहूय=गौर वटु को बुलाकर, विजयपुराधीशाज्ञया=बीजापुर नरेश की आज्ञा से, शिवेन सह योद्धुं=शिवाजी के साथ युद्ध करने के लिये, ससेनं प्रस्थितस्य=सेना के साथ प्रयाण कर चुके, अफजलखानस्य विषये=अफजल खाँ के बारे में, यावत्=जब तक, किमपि प्रष्टुमियेष=कुछ पूछना चाहा, तावत्=तभी पादचारध्वनिमिव=किसी के पैरों की

आहट सी, अश्रौपीत्=सुनाई दी, तमवधार्य=उसे सुनकर, अन्यमनस्के इव मुनौ=मुनि के अन्यमनस्क से हो जाने पर, गौरवटुरपि=गोरा ब्रह्मचारी भी, तेनैवध्वनिना कर्णयोः कृष्ट इव=उसी ध्वनि से आकृष्ट हुआ सा, समुत्थाय=उठकर, परितः निपुणनिरीक्ष्य=चारों ओर अच्छी तरह देखकर, पर्यटय=टहलकर, कोऽयम्=कौन है ? इति च= इस प्रकार, साम्रेडं व्याहृत्य=वार-वार कहकर, कमप्यनवलोक्य= किसी को न देखकर पुनर्निवृत्य=फिर लौटकर. मन्ये मार्जार कोऽपि= मालूम होता है कोई विल्ली है । इति = इस प्रकार, मन्दं = धीरे से, गुरवे निवेद्य = गुरु से कहकर, पुनः = फिर, तथैव = उसी तरह, उपविवेश = बैठ गया, मुनिश्च = मुनि ने भी, मास्म कश्चिदितरः श्रौषीत् = कोई दूसरा न सुनले, इति = इस कारण, सशङ्कः = आशङ्कित होकर, क्षणं विरम्य = थोड़ी देर रुककर, पुनरुपन्यस्तुमारेभे = फिर कहना आरम्भ किया—

हिन्दी—

तदनन्तर शनैः शनैः अपरिचित लोगों के चले जाने पर, एकान्त हो जाने पर, मुनिराज ने ज्यों ही गौर वटु को बुला कर, वीजापुर नरेश की आज्ञा से वीसरी शिवाजी के साथ युद्ध करने के लिये सेना सहित प्रस्थान कर चुके अफजल खाँ के बारे में कुछ पूछना चाहा, त्यों ही किसी के पैरों की आहट सी सुनाई दी। उसे सुनकर मुनिराज के अन्यमनस्क सा हो जाने पर गौर वटु उसी ध्वनि से आकृष्ट हुआ सा उठकर, चारों ओर अच्छी तरह से देख कर, इधर-उधर घूम कर, वार-वार 'कौन है' यह कह कर. किसी को न पाकर, पुनः लौट कर—मालूम होता है कोई विल्ली है—ऐसा कहकर फिर वैसे ही वैठ गया। मुनिराज ने भी हमारी वात चीत को कोई दूसरा न सुनले, इस आशङ्का से आशङ्कित होकर, कुछ देर तक चुप रहकर, फिर कहना आरम्भ किया—

"वत्स गौरसिंह ! अहमत्यन्तं तुष्यामि त्वयि, यत्त्वमेकाकी अपजलखानस्य त्रीनशवान् तेन दासीकृतान् पञ्च ब्राह्मणतनयांश्च मोचयित्वा आनीतवानसीति। कथं न भवेरीदृशः ? कुलमेवेदृशं राजपुत्रदेशीयक्षत्रियाणाम्" । तावत् पुनरश्रूयत मर्मरः पादक्षेपश्च । ततो विरम्य, मुनिः स्वयमुत्थाय, प्रोच्चं शिलापीठमेकमारुह्य, निपुणतया परितः पश्यन्नपि कारणं किमपि नावलोकयामास चरणाक्षेपशब्दस्य । अतः पुनरेकतानेन निपुणं निरीक्षमाणेन गौरसिंहेन दृष्टं, यत् कुटीर-निकटस्थ-निष्कुटक-कदलीकूटे द्वित्रास्तरवोऽतितरां कम्पन्ते इति ।

श्रीधरी—वत्स गौरसिंह=बेटे गौरसिंह, अहं=मैं, त्वयि=तुमपर, अत्यन्तं तुष्यामि=अत्यन्त प्रसन्न हूँ । यत्वं=क्योंकि तुमने, एकाकी=अकेले ही, अपजलखानस्य=अफजल खाँ के, त्रीनश्वान्=तीन घोड़ों को, तेन=उसके द्वारा, दासीकृतान्=गुलाम बनाये गये, पञ्च ब्राह्मण तनयाञ्च=पाँच ब्राह्मण बालकों को, मोचयित्वा=छुड़ाकर, अनीतवानसीति=ले आये हो, कथं न भवेरी शः=ऐसे क्यों न होओ, राजपूत्रदेशीय क्षत्रियाणां=राजपूताने के क्षत्रियों का, कुलमेव ईदृशम्=कुल ही ऐसा है । तावत्=तभी, मर्मरः पादक्षेपश्च पुनरश्रूयत=मर्मरध्वनि और पैरों की आवाज फिर सुनाई दी, ततः=इसके बाद, विरम्य=रुककर, मुनिः=मुनि ने, स्वयमुत्थाय=स्वयं उठकर, प्रोच्चं=ऊँचे, शिला पीठनेकमारुह्य=चट्टान पर चढ़कर, निपुणतया=अच्छी तरह, परितः पश्यन्नपि=चारों ओर देखकर भी, चरणाक्षेप शब्दस्य=पैरों की आहट का, किमपि कारणं नावलोकया मास=कोई कारण नहीं दिखाई दिया । अतः=इसके बाद, पुनः=फिर से, एकतानेन निपुणं निरीक्ष माणेन=एकाग्र मन से अच्छी तरह देखते हुए, गौरसिंहेन दृष्टं=गौरसिंह ने देखा, यत्=कि, कुटीर विकटस्थ=कुटी के निकट की, निष्कुटक=गृहवाटिका के, कदलीकूटे=केलों के

झुरमुट में, द्वित्रा= दो-तीन, तरवः=केले के पेड़, अतितरा वम्पन्ते-इति=अत्यन्त काँप रहे है।

हिन्दी—

वेटे गोर सिंह ! मैं तुम पर अत्यन्त प्रसन्न हूँ। तुम अकेले ही अफजल खाँ के तीन घोड़ो और उसके द्वारा गुलाम वनाये हुए पाँच ब्राह्मण वालको को छुड़ा लाये हो। तुम भला ऐसे क्यों न होगे, राजपूताने के क्षत्रियो का कुल ही ऐसा है। इसी बीच मर्मर शब्द और पैरो की आवाज सुनाई दी। तव बोलना वन्दकर मुनि ने स्वय उठकर एक ऊंची शिला पर चढकर, चारो ओर अच्छी तरह देखकर भी पैरों की आहट का कोई कारण नही देखा। इसलिये एकाग्र चित्त से अच्छी तरह देखते हुए गौर सिंह ने देखा कि कुटी के निकट ही गृहवाटिका के केले के झुरमुट में दो-तीन केले के पेड़ अत्यन्त काँप रहे है।

तदेव संशयस्थानमित्यङ्गुल्या निर्दिश्य, कुटीर-वलीके गोपयित्वा स्थापितानामसीनामेकमाकृष्य, रिक्तहस्तेनैव मुनिना पृष्ठतोऽनुगम्यमानः कपोल-तल-विलम्बमानान्, चक्षुश्चुम्बिनः कुटिल-कचान् वामकराङ्गुलिभिरपसारयन्, मुनिवेषोऽपि किञ्चित्कोप-कषायित-नयनः, करकम्पित-कृपा-कृपण-कृपाणो महादेवमाराधयिषुस्तपस्विवेषोऽर्जुन इव शान्तवीररसद्वयस्नातः सपदि समागतवान् तन्निकटे, अपश्यच्च लताप्रतान-वितान-वेष्टित-रम्भा-स्तम्भ-त्रितयस्य मध्ये नीलवस्त्र-खण्डवेष्टित-मूर्द्धानं हरित-कञ्चुकं श्याम-वसनानद्ध-कटितट-कर्बुरा-धोवसनम्, काकासनेनोपविष्टम्, रम्भालवाल लग्नाधोमुख-खङ्गत्सरुन्यस्तहस्त विपर्यस्त-युगलम्, लशुनगन्धिभिर्निश्वासैः कदली किसलयानि मलिनयन्तम्, नवाङ्कुरित-श्मश्रु-श्रेणि-च्छलेन कन्यकापहरण-पङ्क-कलङ्कपङ्क-कलङ्किताननम्, विंशतिवर्ष कल्प यवनयुवकम्। ततः परस्परं चाक्षुषे सम्पन्ने

दृष्टोऽहमिति निश्चित्य, उत्प्लुत्य कोशात् कृपाणमाकृष्य, युयुत्सुः सोऽपि सम्मुखमवतस्थे ।

श्रीधरी—तदेव संशय स्थानम्=सन्देह का स्थान वही है। इति अंगुल्या निर्दिश्य=ऐसा अंगुली से संकेत करके, कुटीर वली के=छप्पर की ओरी में, गोपयित्वा=छिपाकर, स्थापितानां=रखखी हुई, असीनां =तलवारों में से, एक माकृष्य=एक तलवार निकाल कर, रिक्त ह नेनैव=खाली हाथ, मुनिना पृष्ठतोऽनुगम्य मानः=मुनिराज के साथ, कपोलतल विलम्ब मानान्=गालों पर लटकते हुए। चक्षुचुम्बिनः= आंखों पर आ जाने वाले, कुटिल कचान्=घुंघराले बालों को वाम-करांगुलिमिऽयसारयन्=बायें हाथ की अंगुलियों से हटाता हुआ, मुनि-वेषोऽपि=मुनि वेष में होते हुए भी, किञ्चित्कोपकषायित नयनः= कुछ क्रोध से लाल नेत्र किये हुए, कर-क म्पित-कृपा-कृपण-कृपाणः= हाथ में निर्दय तलवार लिये हुए, महादेव मारिराधयिषुः=महादेव की आराधना करने के लिये, तपस्विवेषो अर्जुन इव=तपसी का वेष धरे हुए अर्जुन के समान, शान्त वीर रसद्वय स्नातः=शान्त और वीर दोनों रसों से नहाया हुआ, सपदि=शीघ्र, समागतवान् तन्निकटे= उसके समीप आ पहुँचा, अपश्यच्च=और उसने देखा, लता-प्रतान-वितान-वेष्टित=लताओं के जाल से घिरे हुए, रम्भास्तम्भ-त्रितयस्य मध्ये=तीन केले के पेड़ों के बीच, नील वस्त्र-खण्ड-वेष्टित मूर्धानं, नीले कपड़े के टुकड़े को सिर पर लपेटे हुए, हरित कञ्चुकं=हरा अंगरखा पहने हुए, श्यामवसनानद्ध-कटितट-कर्बुराधोवसनम्=कमर में काले कपड़े को बांधे हुए, कर्बुराधोवसनम्=चितकबरे रंग की लुंगी पहने हुए, काकासनेन उपविष्टम्=उकड़ों बैठा हुआ, रम्भालवाल-लग्नाधोमुख-खंगत्सरु न्यस्त-विपर्यस्त हस्त युगलम्=केले के थाँवले पर अधोमुख रखी तलवार की मूठ पर दोनों हाथ उल्टे रखे हुए,

लशुन गन्धिभिर्निश्वसैः=लहसुन के गन्ध से दुर्गन्धित साँसों से, कदली किसलयानि=केले के पत्तों को, मलिनयन्तम्=मैला करते हुए, नवाकुरितश्मश्रु-श्रेणि-च्छद्मेन=जरा-जरा निकलती हुई दाढ़ी और मूँछ के वहाने, कन्यकापहरण पंक-कलंकपंक-कलंकिता ननम्=कन्यापहरण रूप पाप कर्म से उत्पन्न अपयश रूप कीचड़ से कलंकित मुख वाले, विंशति वर्ष कल्पम्=लगभग वीस वर्ष के, यवन युवकम्=मुसलमान युवक को । ततः=इसके वाद, परम्परं=परस्पर, चाक्षुषे सम्पन्ने=सामना हो जाने पर, दृष्टोऽह मितिनिश्चित्य=मैं देख लिया गया यह सोच कर, उत्प्लुत्य=उछल कर, कोशात्=म्यान से, कृपाणमाकृष्य=तलवार खींचकर, युयुत्सुः=लड़ने के लिये, सोऽपि=वह मुसलमान युवक भी, सम्मुखमवतस्थे=सामने खड़ा हो गया ।

हिन्दी—

वही सन्देह का स्थान है, ऐसा उंगली के इशारे से बताकर, छप्पर की ओरी में से छिपाकर रक्खी हुई तलवारों में से एक तलवार निकाल कर गौर सिंह उसी ओर चल दिया । मुनिराज खाली हाथ ही उसके पीछे हो लिये । गालों पर लटकते हुए आँखों पर आ जाने वाले अपने घुँघराले वालों को संभालते हुए मुनिवेष में होते हुए भी कुछ क्रोध से लाल नेत्र किये हुए, हाथ में दया दिखाने में कृपण तलवार लिये हुए, भगवान् भूतभावन की आराधना करने के लिये गये हुए तापस वेषधारी अर्जुन के समान शान्त और वीर रसों में नहाया हुआ गौर सिंह शीघ्र ही उसके पास जा पहुँचा । वहाँ उसने देखा कि विस्तृत लता जाल से वेष्ठित केले के तीन पेड़ों के बीच, नीले कपड़े को सिर पर लपेटे हुए, कमर में काला कपड़ा वाँधे हुए, चितकवरे रंग की लुंगी पहने हुए, घुटनों के बीच सिर डाल कर सिकुड़ कर वैठे हुए, केले के थाँवले पर अधोमुख रखी तलवार की मूठ पर दोनों हाथों को उलटे

रखे हुए, थोड़ी-थोड़ी निकलती हुई दाड़ी-मूँछ के बहाने कन्यापहरण रूप पाप कर्म से उत्पन्न अपयश रूप कीचड़ से कलंकित मुख वाले, लग-भग बीस वर्ष की अवस्था के एक मुसलमान युवक को देखा, तदनन्तर सामना हो जाने पर, 'मैं देख लिया गया हूँ' यह सोचकर, झुरमुट से कूद कर, म्यान से तलवार निकाल कर, वह मुसलमान युवक भी लड़ने के लिये सामने आ गया।

ततस्तयोरेवं संजाताः परस्परमालापाः।

गौरसिंहः—कुतो रे यवन-कुल-कलङ्क !

यवन-युवकः—आः ! वयमपि कुत इति प्रष्टव्याः ? भारतीय-कन्दरिकन्दरेष्वपि वयं विचरामः, शृङ्ग-लाङ्गूल-विहीनानां हिन्दुपद-व्यवहार्याणाञ्च युष्मादृक्षाणां पशूनामाखेटक्रीडया रमामहे।

गौरसिंहः—[सक्रोधं विहस्य] वयमपि तु स्वाङ्कागतसत्त्ववृत्तयः शिवस्य गणा अत्रैव निवसामः, तत्सुप्रभातमद्य, स्वयमेव त्वं दीर्घ-दाव-दहने पतङ्गायितोऽसि।

यवनयुवकः—अरे रे वाचाल ! ह्यो रात्रौ युष्मत्कुटीरे रुदतीं समायातां ब्राह्मण-तनयां सपदि प्रयच्छथ, तत्कदाचिद् दयया जीवतोऽपि त्यजेयम्, अन्यथा मदसिभुजङ्गिन्या दष्टाः क्षणात् कथावशेषाः संवत्स्यथ।

कलकलमेतमाकर्ण्य श्यामवटुरपि कन्यासमीपादुत्थाय दृष्ट्वा च हन्तुमेतं यवनवराकं पर्याप्तोऽयं गौरसिंह इति मा स्म गमदन्योऽपि कश्चित् कन्यकामपजिहीर्षुरिति वलीकादेकं विकटखड्गमाकृष्य त्सरौ गृहीत्वा कन्यकां रक्षन्, तदध्युषित-कुटीर-निकट एव तस्थौ।

श्रीधरी—ततः=इसके बाद, तयोः=गौरसिंह तथा मुसलमान

युवक में, एवं = इस प्रकार, परस्परमालापा.=आपस मे वातचीत, संजाताः=हुई ।

गौरसिंहः=गौरसिह ने कहा, कुतो रे यवन-कुल कलङ्क=क्यो रे नीच, यहाँ कैसे आ गया ? यवन-युवकः=मुसलमान युवक ने कहा—अः=ओह, वयमपि=हमसे भी, कुत इति प्रष्टव्या=कैसे आया, यह पूछता है, भारतीय=भारत वर्ष की, कन्दरि कन्दोष्वपि=पहाड़ी गुफाओं में भी, वयं विचरामः=हम घूमते है, श्रृगलाङ्गूल विहीनां=सींग और पूंछ से रहित, हिन्दू पद व्यवहार्य्याणां च=हिन्दू नाम धारी, युष्मा‹क्षाणां=तुम जैसे, पशूनां=पशुओं का, आखेट क्रीडया=शिकार करके, रमामहे=आनन्द मनाते है। गौरसिहः=गौरसिह ने, सक्रोध विहस्य=क्रोधपूर्वक हँस कर कहा, स्वाङ्कागत सत्ववृत्तय=पास में आये हुए दुष्ट जन्तुओं पर ही जीवित रहने वाले, शिवस्य-गणा=शिव के गण, वयमपितु=हम भी तो, अत्रैव निवसामः=यहीं रहते है, तत्=इसलिये, सुप्रभातमद्य=आज का प्रभात शुभ है, त्व=तुम, स्वयमेव=अपने आप ही, दीर्घ-दाव-दहने=धधकती हुई आग में, पतङ्गायितोऽसि=पतिङ्गे के समान जलने के लिये आ गये हो। यवन युवकः=यवन युवक ने कहा, अरे रे वाचाल=अरे वकवादी, ह्यो रात्रौ=कल रात जो, युष्मत्कुटीरे=तुम्हारी कुटी मे, रुदती समायाता ब्राह्मण तनया=रोती हुई ब्राह्मण कन्या आई थी, सपदि प्रयच्छत=उसे शीघ्र मुझे सौंप दो, तत्कदाचित्=तो शायद, दयया=दया से, जीवितोऽपित्यजेयम्=जीवित भी छोड़ दूँ, अन्यथा=नही तो, मदसि भुजगिन्या=मेरी नागिन सी तलवार से, दष्टाः=डसे गये, क्षणात्=क्षण भर मे, कथावशेषाः सवत्स्यथ=तुम्हारी कहानी केवल शेष रह जायेगी ।

एतत्कलकलमाकर्ण्य=इस कोलाहल को सुनकर, श्यामवटुरपि=श्यामवटु भी, कन्यासमीपादुत्थाय=कन्या के पास से उठकर, दृष्ट्वा

च = देखकर,एतं हन्तुं = इसे मारने के लिये, यवनवराकं = मुसलमान को, पर्य्याप्तोऽयं गौरसिंहः = गौरसिंह पर्याप्त है, इति = यह सोचकर, मास्म गमदन्योऽपि कश्चित् कन्यकामप जिहीर्पुरिति = कोई दूसरा कन्या का अपहरण करने न आ जाय, इति = यह सोचकर, वलीक-दिकं = छप्पर की ओरी से एक, विकट खड्गमाकृष्य = भयंकर तलवार निकाल कर, त्सरौ गृहीत्वा = मूठ पकड़ कर, कन्यकां रक्षन् = कन्या की रक्षा करता हुआ, तद्ध्युषित-कुटीर निकट एव = जिस कुटी में वालिका थी उसके पास ही, तस्थौ = खड़ा हो गया।

हिन्दी—

तदनन्तर उन दोनों (गौर सिंह और यवन युवक) में इस प्रकार बात-चीत होने लगी—

गौर सिंह—क्यों रे नीच मुसलमान! यहाँ कैसे आये?

यवनयुवक—ओह! हम से 'कैसा आया' पूछता है? हम भारत की पर्वत गुफाओं में विचरण करते हैं और तुम जैसे हिन्दू नाम धारी विना सींग और पूँछ के पशुओं का शिकार करके आनन्द मनाया करते हैं।

गौरसिंह—['क्रोध के साथ हँसकर] हम भी शिव के गण पास में आये हुये दुष्ट जीवों पर आधारित रहते हुये यहीं रहा करते हैं। आज का प्रभात मङ्गलमय है। अपने आप ही तुम धधकती हुई आग में पतंग के समान जलने के लिये आ गये हो।

यवन युवक—अरे वकवादी! कल रात जो ब्राह्मण की लड़की रोती हुई तुम्हारी कुटी में आई थी, उसे जल्दी से मुझे सौंप दो, तब शायद दया करके तुम्हें छोड़ भी दूँ, अन्यथा मेरी तलवार रूपिणी सर्पिणी से काटे जाकर क्षण भर में तुम्हारी केवल कहानी शेष रह जायेगी।

यह कोलाहल सुनकर श्यामवटु भी बालिका के पास से उठकर, मुसलमान नवयुवक और गौरसिंह को देखकर तथा उसे मारने के लिये गौरसिंह को ही पर्याप्त समझकर, लड़की का अपहरण करने के लिये कोई दूसरा मुसलमान न आ जाय यह सोचकर, छप्पर की ओरी में से एक भयंकर तलवार खींच कर, उसकी मूठ पकड़कर, बालिका की रक्षा करता हुआ, जिस कुटीर में वह बालिका थी, उसके पास ही खड़ा हो गया।

गौरसिंहस्तु 'कुटीरान्तः कन्यकाऽस्ति, सा च यवन-वध- व्यसनिनि मयि जीवति न शक्या द्रष्टुमपि, किं नाम स्प्रष्टुम्? तद् यावत्तव कवोष्ण-शोणित-तृषित एष चन्द्रहासो न चलति, तावत् कूर्दनं वा, उत्फालं वा यच्चिकीर्षसि तद्विधेहि" इत्युक्त्वा व्यालीढमर्य्यादया सज्जः समतिष्ठत।

ततो गौरसिंहः दक्षिणान् वामांश्च परश्शतान् कृपाणमार्गानङ्गीकृतवतः, दिनकर-कर-स्पर्श-चतुर्गुणीकृत-चाकचक्यैः चञ्चच्चन्द्रहासचमत्कारैश्चक्षूंषि मुष्णतः, यवन-युवक-हतकस्य, केनाप्यनुपलक्षितोद्योगः अकस्मादेव स्वासिना कलित क्लेद-संजात-स्वेदजल-जालं विशिथिल-कच-कुल-म ल भग्न-भ्रू-भयानक-माल शिरश्चिच्छेद।

श्रीधरी—गौरसिंह स्तु = गौरसिंह ने तो। कुटीरान्तः कन्यकास्ति = बालिका कुटी के अन्दर है। सा च = वह। यवनवधव्यसनिनि = मुसलमानों को मारने के व्यसनी। मयि जीवति = मेरे जीते जी। न शक्या द्रष्टुमपि = उसे देख भी नहीं सकते। किं नाम स्प्रष्टुम् = छूने की तो बात ही क्या है। तद् यावत्तव = तो जब तक तुम्हारे। कवोष्ण-शोणित-तृषित = गरम खून की प्यासी। एष चन्द्रहासः = यह तलवार। न चलति = नहीं चलती। तावत् = तब तक। कूर्दनं वा उत्फालं वा =

उछल-कूद । यच्चिकीर्षसि तद्विधेहि = जो चाहो, करलो । इत्युक्त्वा = यह कहकर । व्यालीढमर्यादया = पेतरा बदल-कर । सज्जः समतिष्ठत = तैयार हो गया ।

ततो = तदनन्तर । गौरसिंह = गौर सिंह ने । दक्षिणान् वामांश्च = दायें और वांयें । परश्शतान् = सैकड़ों । कृपाणमार्गान् = तलवार चलाने के ढंग को । अंगीकृत्य = स्वीकार करके । दिनकर-कर-स्पर्श-चतुर्गुणीकृत-चाकचक्यैः चञ्चच्चन्द्रहास चमत्कारैः = सूर्य किरणों के स्पर्श से चौगुनी चमक वाली तलवार से । चक्षूंषिमुष्णतः = आँखों को चौंधियाते हुये । यवन-युवक-हतकस्य = उस दुष्ट मुसलमान के । कलित-क्लेद-संजात-स्वेद-जल-जालं = श्रम करने से निकलते हुये पसीने से तर । विशिथिल-कच-कुल-मालं = अस्त व्यस्त वालों वाले । भग्न-भ्रू-भयानक-भालं = टेढ़ी भौंहों से भयानक ललाट वाले । शिरः = शिर को । केनाप्युन्नपलक्षितोद्योगः = किसी के न देखते हुये । अकस्मादेव = अचानक ही । स्वासिना = अपनी तलवार से । चिच्छेद = कर डाला ।

हिन्दी —

लड़की कुटी के अन्दर है. मुसलमानों को मारने के व्यसनी मेरे जीवित रहते हुये तुम उसे देख भी नहीं सकते. स्पर्श करने को तो बात ही क्या है, जब तक तेरे गरम-गरम खून की प्यासी यह तलवार नहीं चलती तब तक जितनी चाहे उछल कूद मचालो. गौरसिंह यह कहकर पेतरा बदलकर तैयार खड़ा हो गया ।

तब गौरसिंह ने तलवार के दायें और बायें सैकड़ों पेंतरे बदलने वाले सूर्य की चमक से चौगुनी चमकने वाली तलवार की चमचमाहट से आँखों को चौंधियाते हुये, उस दुष्ट मुसलमान के परिश्रम करने से निकलते हुये पसीने से लथपथ, विखरे हुये वालों वाले, टेढ़ी भौंहो के कारण भयानक लगने वाले माथे वाले शिर को इतनी तेजी के साथ काट दिया कि काटते हुये उसे कोई देख ही नहीं पाया ।

अथ मुनिरपि दाडिम-कुसुमास्तरणाच्छन्नायामिव गाढ-रुधिर-दिग्धायां ज्वलदङ्गार-चितायां चितायामिव वसुधायां शयानं वियुज्यमान-भारतभुवमालिगन्तमिव निर्जीवीभवदंगबन्ध-चालनपरं शोणित-सङ्घात-व्याजेनान्तः-स्थित-रजोराशिमिवोद्गिरन्तं कलितसायन्तन-घनाऽऽडम्बर-विभ्रमं सतत-ताम्रचूड-भक्षण-पातकेनेव ताम्रीकृतं छिन्न-कन्धरं यवनहतकमवलोक्य सहर्षं ससाधुवादं सरोमोद्गमञ्च गौरसिंहमाश्लिष्य, भ्रूभंग-मात्राऽऽज्ञप्तेन भृत्येन मृतककञ्चुक-कटिबन्धोष्णीषादिकमन्विष्याऽऽनीतं पत्रमेकमादाय सगणः स्वकुटीरं प्रविवेश ।

इति प्रथमो निश्वासः ।

श्रीधरी—अथ = इसके बाद। मुनिरपि = मुनिराज ने भी। दाडिमकुसुमास्तरणाच्छन्नायामिव = अनार के फूलों के चादर से ढकी हुई सी। गाढ रुधिर दिग्धायां = गाढ़े खून में लथ पथ। ज्वलदङ्गार चितायां = जलते हुये अंगारों से व्याप्त। चितायामिव = चिता के समान। वसुधायां = पृथ्वी में। शयानं = सोये हुये। वियुज्यमान = बिछुड़ते हुये। भारत-भुवमालिङ्गन्तमिव = भारत भूमि का आलिंगन करते हुये से। निर्जीवीभवदंगबन्ध चालनपरं = निर्जीव हो रही अंग संधियों को छट-पटाते हुये। शोणितसंघात व्याजेनान्तः स्थित रजोराशि मिवोद्गिरन्तं = रक्त-राशि को बहाने से हृदय में स्थित रजोगुण को उगलते हुये से। कलित सायन्तनघनाडम्बर विभ्रमम् = सायङ्कालीन बादलों का अनुकरण करता हुआ। सततताम्रचूडभक्षण पातकेनेव = लगातार मुर्गा खाने के पाप से मानों। ताम्रीकृतं छिन्नकन्धरं = लाल पड़े हुये कटे शिर वाले। यवनहतक मवलोक्य = उस नीच मुसलमान को देखकर। सहर्ष = प्रसन्नता के साथ। ससाधुवादं = साधुवाद देते हुये। सरोमोद्गमं च = रोमाञ्चित

होकर। गौरसिंहमाश्लिष्य=गौरसिंह का आलिंगन करके। भ्रूभंगमात्राज्ञप्तेन भृत्येन=आंख के इशारे से आज्ञा पाकर नौकर ने। मृतक कञ्चुक =मृत व्यक्ति के अंगरखे। उष्णीप=पगड़ी आदि। अन्विष्य=ढूँढकर। आनीत=लाये हुये। पत्रमेकमादाय=एक पत्र लेकर। सगणः= =सब लोगों के साथ। स्वकुटीरं=अपनी कुटी में। प्रविवेश=प्रवेश किया।

[इति प्रथमो निश्वासः]

———o———

हिन्दी—

तदनन्तर मुनिराज ने भी अनार के फूलों की चादर से ढकी हुई सी, गाढ़े खून से लथपथ हुई, जलते हुये अंगारों से व्याप्त चिता के समान पृथ्वी पर गिरे हुये, बिछुड़ती हुई भारत भूमि का आलिंगन सा करते हुये, निर्जीव होती हुई सन्धियों को छट-पटाते हुये, रक्त के माध्यम से हृदयस्थ रजोगुण को बाहर उगलते हुये से, सायङ्कालीन बादलों के समान, लगातार मुर्गा खाने से मानो लाल हुये कटे शिर वाले, उस दुष्ट यवन को देखकर, प्रसन्नता के साथ, साधुवाद देते हुये, रोमाञ्चित होकर गौरसिंह को गले लगाकर, आँखों के इशारे से आज्ञा पाये हुये नौकर के द्वारा मृत मुसलमान के अंग रखे, पगड़ी आदि को टटोल कर लाये हुये एक पत्र को लेकर, सब लोगों के साथ कुटी में प्रविष्ट हुये।

[प्रथम निश्वास का हिन्दी अर्थ समाप्त]

————

॥ श्रीः ॥

द्वितीयो निश्वासः

रात्रिर्गमिष्यति भविष्यति सुप्रभातम्
भास्वानुदेष्यति हसिष्यति पङ्कजश्रीः ।
इत्थं विचिन्तयति कोशगते द्विरेफे
हा हन्त ! हन्त !! नलिनीं गज उज्जहार ॥—स्फुटकम् ।

इतस्तु स्वतन्त्र-यवनकुल-भुज्यमान-विजयपुराधीश-प्रेषितः पुण्यनगरस्य समीपे एव प्रक्षालित-गण्डशैल-मण्डलायाः, निर्झरवारि-धारा-पूर-पूरित-प्रबल-प्रवाहायाः, पश्चिम-पारावार-प्रान्तप्रसूत-गिरि-ग्राम-गुहा-गर्भ-निर्गताया अपि प्राच्य-पयोनिधि-चुम्बन-चञ्चु-रायाः रिंगत्-तरंग-भंगोद्भूतावर्त्त-शत-भीमायाः, भीमाया नद्याः, अनवरत-निपतद्वकुल-कुल-कुसुम-कदम्बसुरभीकृतमपि नीरं वगाहमान-मत्त-मतंगज-मद-धाराभिः-कटूकुर्वन्; हय-हेषा-ध्वनि-प्रतिध्वनि-बधिरीकृत-गव्यूति-मध्यगाध्वनीनवर्गः, पट-कुटीर-कूट विहित-शारदा-म्भोधर-विडम्बनः, निरपराध-नारताभिजन-जन-पीडन-पातक-पटलैरिव समुद्धूयमान-नीलध्वजै-रुपलक्षितः, विजयपुरेश्वरस्यान्यतमः सेनानीः अपजलखानः प्रतापदुर्गादविदूर एव शिववीरेण सहाऽऽहवाय तेन चिरोद्दिष्टः ससेनस्तिष्ठति स्म ।

श्रीधरी—रात्रिर्गमिष्यति = रात बीतेगी । सुप्रभातम् = सुहावना सबेरा । भविष्यति = होगा । भास्वानुदेष्यति = सूर्योदय होगा । पङ्कज-श्रीः = कमलों की शोभा । हसिष्यति = खिलेगी । कोशगते द्विरेफे =

कमलकली के अन्दर वन्द भौंरा। इत्थं विचिन्तयति=यह सोच ही रहा था। हा हन्त हन्त=हाय-हाय, नालिनीं=कमलिनी को। गजउज्जहार=हाथी उखाड़ ले गया।

इतस्तु=इधर तो। स्वतन्त्र-यवन कुलभुज्यमान=स्वेच्छाचारी-मुसलमानों द्वारा शासित। विजयपुराधीश-प्रेषितः=बीजापुर नरेश द्वारा प्रेषित। पुण्यनगरस्य समीपे एव=पूना नगर के पास ही। प्रक्षालित गण्ड-शैल-मण्डलायाः=बड़े-बड़े पत्थरों को धोने वाली। निर्झर-वारिधारा-पूर-पूरित-प्रवल-प्रवाहाया=झरनों की जलधाराओं से पूर्ण प्रवल-प्रवाह वाली। पश्चिम पारावार प्रान्त-प्रसूत गिरि-ग्राम-गुहा-गर्भ-निर्गताया अपि=पश्चिमी सागर की तटवती पर्वत श्रेणियों की गुफाओं से निकली हुई भी। प्राच्य पयोनिधि चुम्बन चञ्चुरायाः=पूर्वी समुद्र को चूमने में आतुर। रिंगत्-तरंग-भंगोद्भूतावर्त-शत भीमायाः=चञ्चल लहरों के टूटने से उत्पन्न होने वाले सैकड़ों भँवरों के कारण भयंकर लगने वाली। भीमायाः नद्याः=भीमा नदी के। अनवरत निपतत्बकुल-कुल-कुसुम कदम्ब सुरभीकृतमपि नीरं=निरन्तर गिरते हुये वकुल पुष्पों के समूह से सुगन्धित जल को। वगाहमानमत्त-मतंगज-मद धाराभिः कटू कुर्वन्=जल क्रीड़ा करते हुये मतवाले हाथियों की मदधारा से और भी अधिक तीव्र गन्ध वाला वनाता हुआ। हय-हेषा-ध्वनि-प्रतिध्वनि-वधिरीकृत-गव्यूति-मध्यगाध्वनीन वर्गः=घोड़ों की हिन हिनाहट से दो कोस तक के राहगीरों को वहरा वनाता हुआ। पट-कुटीर कूट-विहित शारदाम्भोधर विडम्वनः=सफेद तम्बुओं के समूह से शरद कालीन बादलों का अनुकरण करता हुआ। निरपराध=अपराध रहित। भारताभिजन पीडन पातक पटलैरिव=भारतीय जनता के उत्पीडन से उत्पन्न पाप राशि के समान, समुद्धूयमान नीलध्वजैः=फहराती हुई नीली ध्वजाओं से। उपलक्षितः=पहचाना जाने वाला। विजयपुरेश्वरस्य-अन्यतमः सेनानी=बीजापुर नरेश का मुख्य सेनापति। अफजलखानः=अफजल खाँ। प्रताप दुर्गादविदूरएव=प्रताप दुर्ग के पास ही। शिववीरेण सह=

शिवाजी के साथ। आहवद्यूतेन चिक्रीडिपुः=युद्ध रूपी-जुआ खेलने के लिये। ससेनास्तिष्ठति स्म=सेना के साथ पड़ाव डाले हुये था।

द्वितीय निश्वास

हिन्दी—

रात बीतेगी, सुन्दर सवेरा होगा, सूर्य उदय होंगे, कमलों की शोभा खिलेगी, तभी मैं बाहर निकल आऊँगा, कमल की कली के अन्दर बन्द भौंरा ऐसा सोच ही रहा था, तभी हाय! हाय! कमलिनी को ही हाथी ने उखाड़ डाला।

इधर तो स्वेच्छाचारी मुसलमानों द्वारा शासित बीजापुर नरेश के द्वारा भेजा हुआ पूना के पास ही पहाड़ों से गिरे हुये बड़े-बड़े पत्थरों को धोने वाली, झरनों को जलराशि परिपूर्ण प्रवाह युक्त, पश्चिमी सागर की तटवर्ती पर्वत श्रेणियों की गुफाओं से निकलती हुई भी पूर्वी समुद्र से मिलने के लिये उत्कण्ठित, चंचल लहरों के टूटने से उत्पन्न होने वाले सैकड़ों भँवरों से भयंकर प्रतीत होने वाली, भीमा नदी के लगातार गिरते हुये वकुल के पुष्पों के समूह से सुरभित जलराशि को जलक्रीडा करते हुये मतवाले हाथियों की मद-धारा से और अधिक तीव्र गन्ध वाला बनाता हुआ, घोड़ों के हिन हिनाने के शब्द से दो कोस तक के राहगीरों को बहरा बना देने वाला, सफेद तम्बुओं को पंक्तियों से शरत्काल के बादलों का अनुकरण करता हुआ, निरपराध भारतीय जनता के उत्पीडन से उत्पन्न पाप-समूह के समान नीली फहराती हुई ध्वजाओं से पहचाना जाने वाला, बीजापुर नरेश का मुख्य सेनापति अफजल खाँ, शिवाजी के साथ युद्ध रूपी जुआ खेलने के लिये, प्रताप दुर्ग के पास ही सेना सहित पड़ाव डाले हुये था।

अथ जगतः प्रभाजालमाकृष्य, कमलानि सम्मुद्रय, कोकान् सशोकीकृत्य, सकल–चराचर–चक्षुःसञ्चार–शक्ति शिथिलीकृत्य, कुण्डलेनेव

गद्य काव्य निकष वेदान्त

निज-मण्डलेन पश्चिमामाशां भूषयन्, वारुणी-सेवनेनेव माञ्जिष्ठ-मञ्जिम-रञ्जितः, अनवरत-भ्रमण-परिश्रम-श्रान्त इव सुषुप्सुः, म्लेच्छ-गण-दुराचार-दुःखाऽऽक्रान्त-वसुमती-वेदनामिव समुद्रशायिनि निविवेदयिषुः, वैदिक-धर्म-ध्वंस-दर्शन-सञ्जात-निर्वेद इव गिरिगहनेषु प्रविश्य तपश्चिकीर्षुः, घर्म-ताप-तप्त इव समुद्रजले सिस्नासुः, सायं समयमवगत्य सन्ध्योपासनमिव विधित्सुः, "नास्ति कोऽपि मत्कुले; यः सकण्ठग्रहं धर्म-ध्वंसिनो यवनहतकान् यज्ञियादस्माद् भारत-गर्भान्निस्सारयेत्" इति चिन्ताऽऽक्रान्त इव कन्दरि-कन्दरेषु प्रविविक्षुर्भगवान् भास्वान्, क्रमशः क्रूरकरानपहाय, दृश्य-परिपूर्ण-मण्डलः संवृत्य, श्वेतीभूय, पीतीभूय, रक्तीभूय च गगन-धरातलाभ्यामुभयत आक्रम्यमाण इवाण्डाकृतिमंगीकृत्य, कलि-कौतुक-कवलीकृत-सदाचार-प्रचारस्य पातकपुञ्ज-पिञ्जरित-धर्मस्य च यवन-गण-ग्रस्तस्य भारतवर्षस्य च स्मारयन्, अन्धतमसे च जगत् पातयन्, चक्षुषामगोचर एव संजातः।

श्रीधरी—अथ=इसके बाद। जगतः=संसार के। प्रभाजालमाकृष्य=प्रकाश समूह को खींच कर। कमलानि सम्मुद्रय=कमलों को संकुचित करके। कोकान् सशोकीकृत्य=चक्रवाकों को शोक युक्त करके। सकल=सारे। चराचर=स्थावर जंगमात्मक संसार की। चक्षुः संचार शक्ति शिथिलीकृत्य=देखने की शक्ति को शिथिल करके कुण्ठलेनेव निज मण्डलेन = कुण्डल के समान अपने मण्डल से। पश्चिमाशां भूषयन्=पश्चिम दिशा रूपी नायिका को सुशोभित करते हुये। वारुणी सेवनेनैव=मदिरा के सेवन के कारण। माञ्जिष्ठ मञ्जिम रञ्जितः=मेंहदी की लालिमा के समान लाल। अनवरत भ्रमण परिश्रम श्रान्त इव=लगातार घूमने के श्रम से थके जैसे। सुषुप्सुः=सोने के इच्छुक। म्लेच्छगण दुराचार-दुःखाक्रान्त-वसुमती वेदनामिव=म्लेच्छों के दुराचार से पीड़ित पृथ्वी की वेदना को। समुद्रशायिनि=विष्णु को। निविवेदयिषुः=निवेदन करने के इच्छुक से।

वैदिक धर्म-ध्वंस-दर्शन संजात निर्वेद इव=वैदिक धर्म के ह्रास को देखकर खिन्न से होकर। गिरिगहनेषु प्रविश्य तपश्चिकीर्षुः=दुर्गम पहाड़ों में जाकर तपस्या करने के इच्छुक से। घर्मताप तप्त इव=धूप की गर्मी से तपकर। समुद्र जले सिस्नापु=समुद्र के जल में स्नान करने के इच्छुक से। सायं समय मवगत्य=सायंकाल का समय जानकर। सन्ध्योपासनमिव विवित्सुः=सन्ध्योपासन के इच्छुक से, नास्ति कोऽपि मत्कुले=मेरे कुल में कोई ऐसा नहीं है। यः सकण्टग्रहं=गर्दन पकड़ कर। धर्म ध्वंसिनोयवन हतकान्=धर्मध्वंसी मुसलमानों को। याज्ञेपाद-स्मात=पवित्र इस। भारत गर्भान्निस्सारयेत् इति=भारत भूमि से निकाल सके। इति चिन्ताऽऽक्रान्त इव=इस प्रकार चिन्तित से होकर। कन्दरि-कन्दरेषु प्रविविक्षुर्भगवान् भास्वान्=पर्वत की कन्दरा में प्रवेश करने के इच्छुक से भगवान् सूर्य। क्रमशः क्रूर करानपहाय=क्रम से तीखी किरणों को छोड़कर। दृश्यपरिपूर्ण मण्डलः संवृत्य=अपने सारे बिम्ब को दर्शन योग्य बनाकर। श्वेतीभूय, पीती भूय रक्ती भूय च= पहले सफेद फिर पीले तथा फिर लाल होकर। गगन धरातलाभ्यामु-भयत आक्रम्यमाण इव=आकाश और पृथ्वी दोनों ओर से दबाये जा रहे। अण्डाकृति मंगीकृत्य=अण्डाकार बन कर। कलि-कौतुक-कवलीकृत सदाचार प्रचारस्य=कलियुग के प्रभाव से विनष्ट सदाचार वाले। पातक-पुञ्ज-पिञ्जरित-धर्मस्य=पाप समूह से पीले पड़े हुये धर्म वाले। यवन गण ग्रस्तस्य=मुसलमानों से ग्रस्त। भारत वर्षस्य च स्मारयन्= भारत वर्ष का स्मरण कराते हुये। अन्धतमसे च जगत पातयन्=संसार को घोर अन्धकार में गिरते हुये। चक्षुषामगोचर एव संजातः=भगवान् सूर्य आंखों से ओझल हो गये।

हिन्दी—

इसके बाद संसार के प्रकाश-समूह को समेट कर, कमलों को संकुचित करके, चक्रवाकों को वियुक्त करके तथा समग्र जड़ चेतनात्मक संसार की देखने की शक्ति को शिथिल करके, अपने कुण्डल के समान

मण्डल से पश्चिम दिशा रूपी नायिका को सुशोभित करते हुए, मदिरा के सेवन से मेंहदी के सदृश लाल, लगातार घूमते रहने के परिश्रम से श्रान्त हुये से सोने के इच्छुक, मुसलमानों के अत्याचारों से पीड़ित पृथ्वी की वेदना को समुद्र में सो रहे भगवान् विष्णु से कहने के इच्छुक से, वैदिक धर्म के ह्रास को देखकर खिन्न से होकर दुर्गम पर्वतों में जाकर तप करने के इच्छुक से, सायंकाल का समय जान कर सन्ध्योपासन करने में इच्छुक से, मेरे कुल में ऐसा कोई नहीं है जो इन धर्म ध्वंसी मुसलमानों की गरदन पकड़ कर इस पवित्र भारत भूमि से बाहर निकाल दे, इस प्रकार चिन्तित से होकर. पर्वत की गुफा में प्रवेश करने के इच्छुक से भगवान् सूर्य क्रम से अपनी तीखी किरणों को छोड़कर, अपने सारे बिम्ब को दर्शन योग्य बना कर, पहले सफेद, फिर पीले तथा फिर लाल होकर, धरती और आकाश दोनों से ही दबाये जाते हुये से, अण्डाकार बनकर, कलियुग के प्रभाव से विनष्ट सदाचार वाले, पापों के समूह से पीले पड़े हुए वर्ण वाले और मुसलमानों से ग्रस्त भारत वर्ष का स्मरण कराते हुए संसार को घोर अन्धकार में गिराते हुए, आंखों से ओझल हो गये।

ततः संवृत्ते किञ्चिदन्धकारे धूप-धूमेनेव व्याप्तासु हरित्सु भुशुण्डीं स्कन्धे निधाय निपुणं निरीक्षमाणः, आगत-प्रत्यागतञ्च विदधानः, प्रताप-दुर्ग दौवारिकः, कस्यापि पादक्षेप-ध्वनिमिवाश्रौषीत्। ततः स्थिरीभूय पुरतः पश्यन् सत्यपि दीप-प्रकाशेऽवतमसवशादागन्तारं कमप्यनवलोकयन्, गम्भीरस्वरेणैवमवादीत्—"कः कोऽत्र भो ? कः कोऽत्र भोः ?" इति।

अथ क्षणानन्तरं पुनः स एव पादध्वनिरश्रावीति भूयः साक्षेपमवोचत्—"क एष मामनुत्तरयन् मुमूर्षुः समायाति बधिरः ?"

ततो "दौवारिक ! शान्तो भव, किमिति व्यर्थं मुमूर्षुरिति बधिर इति च वदसि ?" इति वक्तारमपश्यतैवाऽऽकर्णि मन्द्रस्वरमेदुरा वाणी।

अथ "तत्किं नाज्ञायि अद्यापि भवता प्रभुवर्य्याणामादेशो यद् दौवारिकेण प्रहरिणा वा त्रिः पृष्टोऽपि प्रत्युत्तरमददद् हन्तव्य इति" इत्येवं भाषमाणेन द्वाःस्थेन "क्षम्यसामेष आगच्छामि, आगत्य च निखिलं निवेदयामि" इति कथयन् द्वादशवर्षेण केनापि भिक्षुबटुनाऽनुगम्यमानः कोपि काषायवासाः, धृत-तुम्बी-पात्रः, भस्मच्छुरित-ललाटः, रुद्राक्ष-मालिका-सनाथित-कण्ठः, भव्यमूर्त्तिः संन्यासी दृष्टः। ततस्तयोरेवमभूदालापः।

आधरी—ततः=उसके वाद। किञ्चिदन्धकारे सवृत्ते=कुछ अन्धेरा हो जाने पर। हरित्सु=दिशाओं में। धूप धूमेनेव व्याप्तासु=धूप का सा धुँआ व्याप्त हो जाने पर। स्कन्धे भुशुण्डी निधाय=कन्धे पर वन्दूक रख कर। निपुण निरीक्षमाणः=अच्छी तरह देखते हुये। आगत-प्रत्यागतञ्च विदधानः=आने और जाने वालों पर नजर रखता हुआ। प्रताप दुर्ग दौवारिकः=प्रताप के द्वारपाल ने। कस्यापि=किसी की। पादक्षेप ध्वनिमिवा श्रौषीत्=पैरों की आवाज सी सुनी। ततः=तब। स्थिरीभूय=खड़े होकर। पुरतः पश्यन्=सामने देखकर। सत्यपि दीपप्रकाशे=दीपक का प्रकाश होने पर भी। अवतम-सवशात्=धुँधलेपन के कारण। आगन्तारकमप्यनवलोकयन्=किसी आने वाले को न देखकर। गम्भीर स्वरेण एवं अवादीत्=गम्भीर स्वर में कहा। 'कः-कोऽत्रभोः, कः कोऽत्रभोः इति=अरे यहाँ यह कौन है।

अथ क्षणानन्तरं=थोड़ी देर वाद। पुनः स एव=फिर वही। पादध्वनिरश्रावीति=पैरों की आहट सुनाई दी, इसलिये। पुनः=फिर। साक्षेप मवोचत्=बिगड़ कर बोला। क एव=यह कौन। मामनुत्तरयन्=मुझे जवाब दिये विना ही। मुमूर्षुः=मरने के लिये। वधिरः समायाति=वहरा चला आ रहा है।

ततः=इसके वाद। वक्तारमपश्यदेव=बोलने वाले को न देखते हुये ही। मन्द्रस्वर मेदुरा वाणी आकर्णि=गम्भीर वाणी को द्वारपाल ने सुना। दौवारिक=द्वारपाल। शान्तो भव=शान्त रहो। किमर्थं=

किस लिये। व्यर्थ=व्यर्थ में। मुमूर्षुरिति=मरणासन्न। वधिर इति च वदसि=और वहरा कह रहे हो। अथ=इसके वाद। भवता प्रभुवर्याणां आदेशो तत्किं अद्यापि नाज्ञायि=तो क्या आपको महाराज शिवाजी का यह आदेश अभी भी ज्ञात नहीं है कि। दौवारिकेण प्रहरिणा वा=द्वारपाल या पहरेदार के द्वारा। त्रिः पृष्ठोऽपि=तीन वार पूछे जाने पर भी। प्रत्युत्तर मददत् हन्तव्य इति=उत्तर न देने वाले को मार दिया जाय। क्षम्यताम्=क्षमा करो। एष आगच्छामि=मैं आ रहा हूँ। आगत्य च निखिलं निवेदयामि=आकर सारी वात वताऊँगा। इति कथयन=ऐसा कहता हुआ। द्वादश वर्षेण केनापि भिक्षु वटुनाऽनुगम्यमानः=वारह वर्ष के किसी भिक्षु वालक के आगे-आगे आते हुये। कोऽपि=कोई। काषायवासः=गेरुये वस्त्र पहने हुए। धृत तुम्वी पात्रः तुम्वीपात्र लिये हुये। भस्मच्छुरित ललाटः=माथे पर भस्म रमाये हुये। रुद्राक्षमालिका-सनाथित कण्ठः=गले में रुद्राक्ष की माला पहने हुये। भव्यमूर्तिः=सुन्दर आकृति वाले। सन्यासी दृष्टः=सन्यासी को देखा। ततः=उसके वाद। तयोः=उन दोनों में। एवमभूदालाप=इस प्रकार वातें हुई।

हिन्दी —

उसके वाद कुछ अंधेरा हो जाने पर तथा दिशाओं में धूप का सा धुंआ छा जाने पर, कन्धे पर वन्दूक को रख कर गौर से इधर-उधर देखता हुआ गश्त लगाते हुये प्रताप दुर्ग के द्वार पाल ने किसी के पैरों की आहट सी सुनी। तव खड़े होकर, सामने देखकर, दीपक का प्रकाश होते हुये भी, धुंधले पन के कारण आने वाले को न देखकर उसने गम्भीर स्वर में कहा—अरे यहाँ कौन है? कौन है?

क्षण भर वाद फिर वही पैरों की आहट सुनाई दी, इसलिये वह फिर विगड़ कर वोला—अरे यह कौन विना मुझे उत्तर दिये ही मरने के लिये वहरा चला आ रहा है?

इसके बाद द्वारपाल ने बोलने वाले को न देखते हुये ही गम्भीर स्वर सुना—द्वारपाल-शान्त रहो, क्यों व्यर्थ में मरणासन्न और बहरा कहते हो ? तब द्वार पाल ने कहा—तो क्या आपको महाराज शिवाजी का यह आदेश मालूम नहीं है कि द्वारपाल या पहरे दार के तीन बार पूछने पर भी उत्तर न देने वाले को मार दिया जाय ? क्षमा करो मैं यह आ रहा हूं, आकर सारी बात बताऊंगा यह कहते हुये बारह वर्ष के किसी भिक्षु बालक के आगे आते हुये, किसी गेरुआ वस्त्र पहने हुये, तुम्बी पात्र हाथ में लिये हुये, माथे पर भस्म रमाये हुये, गले में रुद्राक्ष की माला पहने हुये, सुन्दर आकृति वाले सन्यासी को देखा। फिर उन दोनों में इस प्रकार बातें हुई।

संन्यासी—कथमस्मान् सन्यासिनोऽपि कठोरभाषणैस्तिरस्करोषि ?

दौवारिकः—भगवन् ! भवान् संन्यासी तुरीयाश्रमसेवीति प्रणम्यते परन्तु प्रभूणामाज्ञामुल्लङ्घ्य निजपरिचयमददेवाऽऽयातीत्याक्रुश्यते।

सन्यासी—सत्यं क्षान्तोऽयमपराधः, परमद्यावधि, संन्यासिनः, ब्रह्मचारिणः पण्डिताः स्त्रियः बालाश्च न किमपि प्रष्टव्याः, आत्मानमपरिचाययन्तोऽपि प्रवेष्टव्याः।

दौवारिकः—संन्यासिन् ! संन्यासिन् बहूक्तम्, विरम, न वयं दौवारिका ब्रह्मणोऽप्याज्ञां प्रतीक्षामहे। किन्तु यो वैदिकधर्म-रक्षा-व्रती, यश्च संन्यासिनां ब्रह्मचारिणां तपस्विनाञ्च संन्यासस्य ब्रह्मचर्यस्य तपसश्चान्तरायाणां हन्ता येन च वीरप्रसविनीयमुच्यते कोङ्कणदेश-भूमिः; तस्यैव महाराज-शिववीरस्याऽऽज्ञां वयं शिरसा वहामः।

संन्यासी—अथ किमप्यस्तु, पन्थानं निर्दिश, आवां शिववीरनिकटे जिगमिषावः।

श्रीधरी—संन्यासी = सन्यासी ने कहा, अस्मान् संन्यासिनोऽपि = हम संन्यासियों को भी, कठोर भाषणैः कथं निरस्करोषि = कठोर वचनों से क्यों तिरस्कार करते हो? दौवारिकः = द्वारपाल ने कहा, भगवन् भवान् संन्यासी = श्रीमन् आप संन्यासी है, तुरीयाश्रमसेवीति प्रणम्यते = चतुर्थ आश्रम में हैं, इसलिये प्रणाम करता हूँ, परन्तु = किन्तु, प्रभूणामाज्ञामुल्लंघ्य = महाराज शिवाजी की आज्ञा का उल्लंघन कर, निजपरिचयमदददेव = अपना परिचय विना दिये ही, आयातीति आक्रुश्यते = चले आ रहे हैं, इसलिये बिगड़ रहा हूँ। संन्यासी = संन्यासी ने कहा, क्षन्तोऽमपराधः = तुम्हारा यह अपराध क्षमा किया, परं = लेकिन, अद्यावधि = आज से, सन्यासिनः = सन्यासियों, ब्रह्मचारिणः, = ब्रह्मचारियों, पण्डितः = पण्डितों, स्त्रियः = स्त्रियों, बालाश्च = और बच्चों से, न किमपि प्रष्ठव्याः = कुछ मत पूछना, आत्मानमपरिचाययन्तोऽपि = अपना परिचय यदि वे न भी दें, तो भी, प्रवेष्टव्याः = उन्हें अन्दर आने की अनुमति दे देना।

दौवारिक = द्वारपाल ने कहा, सन्यासिन्, सन्यासिन् = सन्यासी, सन्यासी, बहूक्तम् = बहुत कह चुके, विरम = चुप रहो, वयं दौवारिकाः = हम द्वार पाल लोग, ब्रह्मणोत्याज्ञां न प्रतीक्षामहे = ब्रह्मा की आज्ञा की भी परवाह नहीं करते, किन्तु यः = लेकिन जो, वैदिक धर्म रक्षाव्रती = वैदिक धर्म की रक्षा करने वाला है, यश्च = और जो, सन्यासिनां ब्रह्मचारिणां तपस्विनाञ्च = सन्यासियो, ब्रह्मचारियों और तपस्वियों के, सन्यास, सन्यास के, ब्रह्मचर्यस्य = ब्रह्मचर्य के, तपसश्चान्तरायाणां हन्ता = और तपस्या के विघ्नों को दूर करने वाले हैं, येन = जिनके कारण ही, इयं कोङ्कणदेश भूमिः = यह कोङ्कण देश की धरा, वीर प्रसविनी उच्यते = वीरों को उत्पन्न करने वाली कही जाती है, तस्यैव = उन्हीं, महाराज शिववीरस्य = महाराज शिवाजी की, आज्ञां = आज्ञा को, वयं = हम लोग, शिरसा वहामः = शिरोधार्य करते हैं।

हिन्दी—

संन्यासी—हम संन्यासियों को भी कठोर वचनों द्वारा क्यों अपमानित करते हो ?

दैवारिक—श्रीमान् ! आप संन्यासी हैं, चतुर्थ आश्रम में हैं, इसलिये आपको प्रणाम करता हूँ, किन्तु महाराज शिवाजी की आज्ञा का उल्लंघन कर अपना परिचय विना दिये ही चले आ रहे हैं, इसलिये बिगड़ रहा हूँ।

सन्यासी—सच है, तुम्हारा यह अपराध मैंने क्षमा किया किन्तु आज से संन्यासियों, ब्रह्मचारियों, पण्डितों, स्त्रियों और बालकों से कुछ भी मत पूछना, यदि वे अपना परिचय न भी दें तो भी उन्हें अन्दर प्रवेश करने की अनुमति दे देना।

दैवारिक—संन्यासी ! संन्यासी ! बहुत कह चुके, बस करो, हम द्वारपाल लोग ब्रह्मा की आज्ञा की भी परवाह नहीं करते, प्रत्युत जिन्होंने वैदिक धर्म की रक्षा करने का नियम ले रखा है, जो सन्यासियों, ब्रह्मचारियों, तपस्वियों के सन्यास, ब्रह्मचर्य और तपस्या के विघ्नों को नष्ट करने वाले हैं, जिनके कारण ही यह कोङ्कण देश की धरा वीर प्रसविनी कही जाती है, उन्हीं महाराज शिवाजी की आज्ञा को शिरोधार्य करते हैं।

संन्यासी—अच्छा कुछ भी हो, हमें मार्ग दिखलाओ, हम महाराज शिवाजी के पास जाना चाहते हैं।

दौवारिकः—अलमालप्यापि, तत्, प्राह्णे महाराजस्य सन्ध्योपासनसमये भवादृशानां प्रवेश-समयो भवति; न तु रात्रौ।

संन्यासी—तत्किं कोऽपि न प्रविशति रात्रौ ?

दौवारिकः—(साक्षेपम्) कोऽपि कथं न प्रविशति ? परिचिता वा प्राप्त-परिचयपत्रा वा आहूता वा प्रविशन्ति, न तु भवादृशाः; ये तुम्बीं गृहीत्वा द्वाराद् द्वारम्—इति कथयन्नेव तत्तेजसेव धर्षितो मध्य एव विरराम।

संन्यासी—(स्वगतम्) राजनीति-निष्णातः शिववीरः। सर्वथा दौवारिकता-योग्य एवायं द्वारपालः स्थापितोऽस्ति। परीक्षितमप्येनमेकस्मिन् विषये पुनः परीक्षिष्ये तावत्। (प्रकटम्) दौवारिक ! इत आयाहि, किमपि कर्णे कथयिष्यामि।

दौवारिकः—(तथा कृत्वा) कथ्यताम्।

संन्यासी—निरीक्षस्व त्वमधुना दौवारिकोऽसि, प्राणानमरणयन् जीविकां निर्वहसि, त्वं सहस्रं लाभयतु वा मुद्रा राशीकृताः कदापि प्राप्स्यसीति न कथमपि संभाव्यते।

दौवारिकः—आम्, कथ्यताम्।

संन्यासी—वयञ्च संन्यासिनो वनेषु गिरिकन्दरेषु च विचरामः, सर्वं रसायन-तत्त्वं विद्मः।

दौवारिकः—स्यादेवम् अग्रे अग्रे ?

श्रीधरी—दौवारिकः=द्वारपाल, तत् आलप्यापि अलम्=उसका नाम भी मत लीजिये, भवादृशानां=आप जैसे लोगों का, प्रवेश समयः=मिलने का समय, प्राह्णे=प्रातः काल. महाराजस्य=शिवाजी के. सन्ध्योपासन समये भवति=सन्ध्योपासन के समय होता है. न त रात्रौ=रात में नहीं. संन्यासी=सन्यासी ने कहा, तत्किं=तो क्या. कोऽपि=कोई भी, न प्रविशति रात्रौ=रात में प्रवेश नही करता ?

दौवारिकः=द्वारपाल, साक्षेपम्=बिगड़ता हुआ, कोऽपि कथं न प्रविशति=कोई क्यों नहीं प्रवेश करता, परिचिता वा=परिचित लोग, प्राप्त-परिचय पत्रा वा=या जिनके परिचय पत्र प्राप्त हो गये, आहूता

वा = या आमन्त्रित लोग, प्रविशन्ति = प्रवेश करते हैं, न तु भवादृशाः = नकि आप जैसे, ये = जो, तुम्बीं गृहीत्वा = तुम्बी लेकर, द्वारात् द्वारम् = एक दरवाजे, से दूसरे दरवाजे, इति कथयमेव = ऐसा कहते ही, तत्तेजसेव धर्षितो = उसके तेज से घबराकर सा, मध्य एव विराम = बीच ही में चुप होगया।

सन्यासी = संन्यासी, स्वगतम् = अपने मन में, शिववीरः = शिवाजी, राजनीति निष्णातः = राजनीति में पारंगत हैं, अयं = यह, सर्वथा = हर तरह से, दैवारिकता योग्य एव = द्वारपाल के योग्य ही, द्वारपालः = पहरेदार, स्थापितोऽस्ति = नियुक्त किया है। परीक्षित मप्येनं = परीक्षा ले चुकने पर भी, इसकी, एक स्मिन् विषये = एक विषय में, पुनः = फिर से, परीक्षिष्ये तावत् = परीक्षा लूंगा। प्रकटम् = प्रकट में, दैवारिक = द्वारपाल, इन आयाहि = इधर आओ, किमपि = कुछ, कर्णे = कान में, कथयिष्यामि = कहूँगा।

दैवारिकः = द्वारपाल, तथाकृत्वा = वैसा करके, कथ्यताम् = कहिये, संन्यासी = संन्यासी ने कहा. निरीक्षस्व = देखो, त्वमधुना दैवारिकोऽसि = तुम इस समय द्वारपाल हो, प्राणानगणयन् = प्राणों की परवाह किये विना. जीविकां निर्वहसि = जीविका का निर्वाह करते हो, त्वं = तुम. सहस्रं वा = हजार या. अयुतं वा = दस हजार, मुद्रा = रुपये. राशिकृताः = इकट्ठे, कदापि = कभी, प्राप्स्यसीत = पा जाओगे इस बात की, न कथमपि संभाव्यते = किसी प्रकार संभावना नहीं है।

दैवारिकः = द्वारपाल ने कहा, आम् = अच्छा. अग्रे कथ्यताम् = आगे कहिये, संन्यासी = संन्यासी ने कहा, वयं च संन्यासिनो = हम संन्यासी लोग, वनेषु = जंगलों में, गिरिकन्दरेषु = पहाड़ों की गुफाओं में, विचरामः = घूमते हैं। सर्व रसायन तत्वं विद्मः = सारा रसायन जानते हैं। दैवारिकः = द्वारपाल ने कहा, स्यादेवम् = हो सकता है, अग्रे अग्रे = आगे आगे कहिये।

हिन्दी—

दैवारिक—उसका तो नाम भी मत लीजिये, आप जैसे लोगों के मिलने का समय प्रातः काल महाराज के सन्ध्योपासन के समय होता है, न कि रात में।

संन्यासी—तो क्या रात में कोई प्रवेश नहीं करता?

दैवारिक—(बिगड़ कर) कोई प्रवेश क्यों नहीं करता? परिचित लोग, परिचय पत्र प्राप्त लोग, आमन्त्रित लोग प्रवेश करते हैं, न कि आप जैसे जो तुंबी लिये हुए एक दरवाजे से दूसरे दरवाजे— यह कहते ही उसके तेज से मानो घबराकर वह बीच में रुक गया।

संन्यासी—(अपने मन में) शिवाजी राजनीति में चतुर हैं, उन्होंने हर तरह से पहरेदारी के योग्य व्यक्ति को नियुक्त किया है। यद्यपि मैं इसकी परीक्षा ले चुका हूँ, फिर भी एक विषय में और परीक्षा लूंगा, (प्रकट में) द्वारपाल, इधर आओ। कुछ तुम्हारे कान में कहूंगा।

द्वारपाल—(वैसा करके) कहिये।

संन्यासी—देखो, तुम इस समय द्वारपाल हो, प्राणों की परवाह किये बिना ही अपनी आजीविका चला रहे हो। तुम कभी हजार या दस हजार रुपये इकट्ठे पा जाओगे, इसकी सम्भावना नहीं है।

दैवारिक—हाँ, आगे कहिये।

संन्यासी—हम संन्यासी लोग जंगलों एवं पर्वत कन्दराओं में घूमते रहते हैं और सारे रसायन रहस्य को जानते हैं।

दैवारिक—हो सकता है। आगे कहिये, आगे।

संन्यासी—तद् यदि त्वं मां प्रविशन्तं न प्रतिरुन्धेः तदधुनैव परिष्कृतं पारद-भस्म तुभ्यं दद्याम्; यथा त्वं गुञ्जामात्रेणापि द्वापञ्चा-

शत्सङ्ख्याक-तुलापरिमितं ताम्रं जाम्बूनदं विधातुं शक्नुयाः।

दौवारिकः—हंहो ! कपटसंन्यासिन् !! कथं विश्वासघातं स्वामिवञ्चनञ्च शिक्षयसि ? ते केचनान्ये भवन्ति जार-जाताः, ये उत्कोच-लोभेन स्वामिनं वञ्चयित्वा आत्मानमन्धतमसे पातयन्ति, न वयं शिवगणास्तादृशाः। (सन्यासिनो हस्तं धृत्वा) इतस्तु सत्यं कथय कस्त्वम् ? कुतआयातः केन वा प्रेषितः ?

संन्यासी—(स्मित्वेव) अथ त्वं मां कं मन्यसे ?

दौवारिकः—अहं तु त्वामस्यैव ससेनस्याऽऽयानस्य अपजलखानस्य—

संन्यासी—(विनिवार्य मध्य एव) धिग् धिग् !

दौवारिकः—कस्याप्यन्यस्य वा गूढचरं मन्ये। तदादेशं पालयिष्यामि प्रभुवर्यस्य। (हस्तमाकृष्य) आगच्छ दुर्गाध्यक्ष-समीपे, स एवाभिज्ञाय त्वया यथोचितं व्यवहरिष्यति।

ततः संन्यासी तु—"त्यज, नाहं पुनरायास्यामि, नाहं पुनरेवं कथयिष्यामि, महाशयोऽसि, दयस्व दयस्व"-इति सहस्रधा समचकथत, तथापि दौवारिकस्तु तमाकृष्य नयन्नेव प्रचलितः।

श्रीधरी—तद् यदि त्वं=तो यदि तुम, मां=मुझे, प्रविशन्तं न प्रतिरुन्धे=अन्दर जाने से न रोको, तद्=तो, आधुनैव=अभी, परिष्कृतः=शोधित, पारदभस्म=पारे की भस्म, तुभ्यंदधाम्=तुम्हें दे दूं, यथा त्वं=जिससे तुम, गुञ्जामात्रेणापि=रत्ती भर से भी, द्वापञ्चाशत्संख्याक तुलापरिमितं ताम्रं=लग भग पिचहत्तर तोले तांबे को, जाम्बूनदं विधातुं शक्नुयाः=सोना बना सकोगे।

दौवारिकः=द्वारपाल, हंहो कपटसन्यासिन्=अरे कपटी सन्यासी, विश्वासघातं स्वामि वञ्चनञ्च कथं शिक्षयसि=विश्वासघात

और स्वामी को छलने को शिक्षा क्यों दे रहे हो। ते जाल्मजाता:=वे हरामजादे, केचन-अन्ये भवन्ति=कोई दूसरे होते हैं, ये=जो, उत्कोच-लोभेन=घूस के लालच से, स्वामिनं वञ्चयित्वा=स्वामी को छल कर, आत्मनं अन्धतमसे पातयन्ति=अपने को नरक में डालते है, वयं शिवगणाः न तादृशाः=हम शिवाजी के सेवक वैसे नही हैं। संन्यासिनो हस्तं धृत्वा=संन्यासी का हाथ पकड़ कर, इतस्तु सत्यं कथय=अब तो सच सच कहो. कस्त्वम्=तुम कौन हो, कुत आयातः=कहाँ से आये हो, केन वा प्रेषितः=किसने तुम्हें भेजा है, संन्यासी=सन्यासी ने कहा, अथ त्वं मां कं मन्यसे=अच्छा तुम मुझे कौन समझते हो, दौवारिकः= द्वारपाल, अहं तु=मैं तो, त्वां=तुमको, ससेनस्याऽऽयातस्य=सेना सहित आये हुए, अस्यैव अफजलखानस्य=इसी अफजल खाँ का, विनिवार्य मध्य-एव=में ही बीच रोक कर, धिग् धिग्=छिः छिः, दौवारिकः=द्वारपाल ने कहा- कस्याप्यन्यस्य वा=किसी और का, गूढ़चरं मन्ये=गुप्तचर समझता हूँ, तद्=इसलिये, आदेशंपालयामि प्रभुवर्यस्य=महाराज शिवाजी की आज्ञा का पालन करूंगा, हस्त माकृष्य=हाथ पकड़कर, आगच्छ दुर्गाध्यक्ष समीपे=दुर्गाध्यक्ष के पास आओ, स एवाभिज्ञाय=वही सोच समझकर, त्वया=तुम्हारे साथ, यथोचितं व्यवहरिष्यति=यथा योग्य व्यवहार करेंगे, ततः=इसके बाद, संन्यासी तु=संन्यासी ने, त्यज=छोड़ो, नाहं पुनरायास्यामि= मैं फिर नहीं आऊंगा, नाहं पुनरेवं कथयिष्यामि=मैं फिर ऐसा नही कहूँगा, महाशयोऽसि=तुम बड़े उदार हो, दयस्व दयस्व=दया करो-दया करो, इति=इस प्रकार, सहस्रधा-समचकथत्=हजार बार कहा, तथापि=तो भी, दौवारिकस्तु=द्वारपाल, तमाकृष्य=उसे खींचकर, नैषेन्नेव प्रचलितः=ले ही गया।

हिन्दी—

संन्यासी—यदि तुम मुझे अन्दर प्रविष्ट होने से न रोको, तो

मैं तुम्हें शुद्ध पारे की भस्म दे दूँ, जिससे तुम रत्ती भर से लगभग पिचहत्तर तोला ताम्बा को सोना बना सकोगे।

द्वारपाल—अच्छा जी ! अरे कपटी सन्यासी विश्वासघात और स्वामी को छलने की शिक्षा देता है, वे हरामजादे कोई दूसरे ही होते हैं, जो रिश्वत के लालच मे स्वामी को छलकर अपने को नरक मे डालते हैं, हम शिवाजी के सेवक वैसे नहीं हैं। (सन्यासी का हाथ पकड़ कर) अब सच सच कहो तुम कौन हो ? कहा से आये हो और किसने तुम्हे भेजा है ?

सन्यासी—(मुस्करा कर) अच्छा, तुम मुझे कौन समझते हो ?

दौवारिक—मै तुम्हे सेना सहित आये हुए इसी अफ़जल खाँ का,

सन्यासी—(बीच मे ही रोककर) धिक् धिक्,

दौवारिक—(या किसी और का गुप्तचर समझता हूँ, इसलिये महाराज की आज्ञा का पालन करूँगा, (हाथ खींचकर) इधर आओ, दुर्गाध्यक्ष के पास चलो। वही सोच समझ कर तुम्हारे साथ उचित व्यवहार करेंगे।

तब सन्यासी ने—छोड दो, मै फिर नहीं आऊँगा, ऐसी बात फिर नहीं कहूँगा, तुम बडे उदार हो, दया करो, इस प्रकार हजारों बार कहा, किन्तु द्वारपाल फिर भी उसे खींच ही ले गया।

अथ यावद् द्वारस्थ-स्तम्भोपरि संस्थापितायां काच-मञ्जूषायां प्रज्वल्यमानस्य प्रबल-प्रकाशस्य दीपस्य समीपे समायातः, तावत्सन्यासिनोक्तम्-"दौवारिक ! अपि मां पूर्वमपि कदाऽप्यद्राक्षीः ?" ततो दौवारिक पुनस्तं निपुणं निरीक्षमाणो मन्द्रेण स्वरेण, अरुणापाङ्गाभ्यां लोचनाभ्याम्, गौरतरेण वर्णेन चुम्बितयौवनेन वयसा, निभीकेण

हारिणा च मुख-मण्डलेन पर्यचिनोत् । 'भुशुण्डी-समुत्तोलन-क्रिया-कर्कश-करग्रहणसहाय-सलज्ज इव च नम्रीभूय, प्रणमन्नुवाच- 'आः ! कथं श्रीमान् गौरसिंह आर्यः ? क्षम्यतामनुचितव्यवहार एतस्य ग्राम्य-वराकस्य" । तदवधार्य तस्य पृष्ठे हस्तं विन्यस्यन् मन्दस्मितो गौरसिंहः समवोचत्—दौवारिक ! मया बहुशः परीक्षितोऽसि, ज्ञातोऽसि यथा-योग्य एव पदे नियुक्तोऽसि इति । त्वादृशा एव प्रभूणां पुरस्कारभाजनानि भवन्ति, लोकद्वयञ्च विजयन्ते । तव प्रामाणिकतां जानीत एवास्मभवान् प्रभुवर्यः, परमहमपि विशिष्य कीर्तयिष्यामि । निर्दिश तावत् कुत्र श्रीमान् ? किञ्चानुतिष्ठति ?

ततः पुनर्बद्धाञ्जलेर्दौवारिकस्य किमपि कर्णे कथितमाकर्ण्य प्रधानद्वारमुल्लङ्घ्य, नेदीयस्यामेकस्यां निम्बतरु-तले वेदिकायां सहचरं समुपवेश्य, तुम्बीमेकतः संस्थाप्य, स्वाङ्गरक्षिकावरण-काषायवसनं चैकतो निम्बशाखायामवलम्ब्य, पट-खण्डेन पक्ष्मणोः कपोलयोः कर्णयोश्चिबुके नासायां केशप्रान्तेषु च लुण्ठितामिव विभूतिं प्रोञ्छ्य, स्कन्धयोः पृष्ठे च लम्बमानान् मेचकान् कुञ्चितान् कचानाबध्य, सहचर-पोटलिकातः उष्णीषमादाय शिरसि चाऽऽधाय सुन्दरमुत्तरीयं चैकं स्कन्धयोर्निक्षिप्य, दौवारिक-निर्देशानुसारं श्रीशिववीरालङ्कृताट्टालिकां प्रति प्रातिष्ठत ।

शब्दार्थ—अथ चैव द्वारस्थ-स्तम्भोपरि संस्थापितायां=इसके बाद फाटक पर रक्खी हुई, काचमञ्जूषायां=लालटेन में, जाज्वल्यमानस्य=जल रहे, प्रबलप्रकाशस्य दीपस्य=प्रचण्ड प्रकाश वाले दीपक के, समीपं समयात=पास पहुंचा। तावत्सन्यासिनोक्तम्=तब सन्यासी ने कहा, दौवारिक=द्वारपाल, अपि मा पूर्वमपि कदाप्यद्राक्षीः=क्या तुमने मुझे पहले भी कभी देखा है? ततः=तब, दौवारिकः=द्वारपाल ने, पुनस्तं निपुणं निरीक्षमाणो=फिर से उसे अच्छी तरह

देखते हुए, मन्द्रेण स्वरेण=उसके गम्भीर स्वर, अरुणायाङ्गाभ्यां लोचनभ्याम्=आरक्तनेत्रों से, गौरतरेण वर्णन=गोर रंग, चुम्बित यौवनेन वयसा=उमड़ती हुई जवानी, निर्भीकेण हारिणा च=निर्भीक और सुन्दर, मुखमण्डलेन=मुखलण्डल से, पर्यचिनोति=पहचाना, भुशुण्डीसमुत्तोलन-किण कर्कश-करग्रह मपहाय=बन्दूक पकड़ने से कठोर पड़े हुए अपने हाथ की पकड़ को ढीली करके, सलज्ज इव च नम्रीभूय=लज्जित हुआ सा नम्र होकर, प्रणामन्नुवाच=प्रणाम करता हुआ बोला, आः कथं श्रीमान् गौरसिंह आर्यः=अरे गौरसिंह जी आप है ? सम्यतामनुचितव्यवहार एतस्य ग्राम्य वराकस्य=इस गंवार के अनुचित व्यवसार को क्षमा कीजिये। तद वधार्य=यह सुनकर, यस्त पृष्ठे हस्तं विन्यस्यन्=यह सुनकर, उसके पीठपर हाथ रखता हुआ. सन्यासिरूपो गौरसिंहः सम वोचत्=सन्यासी वेपधारी गौरसिंह बोला. दौवारिक=द्वारपाल, वहुशः परीक्षितोऽसि मया=मैने कई वार तुम्हारी परीक्षा ली हैं, ज्ञातोऽसि=मैं तुम्हें समझ गया । यथायोग्य एव पदे नियुक्तोऽसि=योग्य पद पर ही नियुक्त किये गये हो, त्वादृक्षा एव=तुम जैसे ही, प्रभूणां पुरस्कार भाजनानि भवन्ति=स्वामियों से पुरस्कृत होते हैं । लोक द्वयञ्च विजयन्ते=इस लोक और परलोक दोनों ही में सम्मान पाते हैं । तव प्रामाणिकतां=तुम्हारी प्रामाणिकता को, जानीत एवास भवान् प्रभुवर्य.=पूज्य शिवाजी जानते ही है परमहमपि विशिष्य कीर्तयिष्यामि=मैं भी विशेष रुप से उनसे कहूँगा, निर्दिश तावत् कुत्र श्रीमान्=बताओ महाराज कहां है, किञ्चानुतिष्ठति=और क्या कर रहे हैं ।

ततः पुनर्बद्धाञ्जले दौवारिकस्य=इसके बाद द्वारपाल ने हाथ जोड़कर, किमपि कर्णे कथित माकर्ण्य=कुछ कान में कही हुई बात को सुनकर, प्रधान तोर मुल्लंघ्य=मुख्य द्वार को पार करके, नेदीयस्यां=नजदीक में स्थित, एकस्यां निम्बतरुतल वेदिकायां=नीम के पेड़ के

चबूतरे पर, सहचरं समुपवेश्य=साथ के वालक को विठा कर, तुम्वीमेकतः संस्थाप्य=तूंवी को एक तरफ रखकर, स्वाङ्गरक्षिकावरण-कापायवसनं=अपने अंगरखे को ढकने के लिये पहने गये गेरुए वस्त्र को, चैकतो निम्बशाखाया मवलम्ब्य=एक ओर नीम की टहनी में लटका कर, परखण्डेन=रूमाल से, पक्ष्मणोः=पलकों, कपोलयोः=गालों, कर्णयोः=कानों, भ्रुवों=भौंहों, चिव्रके=ठोड़ी, नासायां=नाक, केशप्रान्तेषु च=और वालों में लगी हुई विभूति, प्रोञ्छय=भस्म को पोंछ कर, स्कन्धयोः पृष्ठे च=कन्धों और पीठ पर, लुम्वमान्यन्=लटकते हुए, मेचकान् कुञ्चितान् कचान्=काले घुंघराले वालों को, आवध्य=वाँधकर, सहचर पोरलिकात्=साथी की पोटली से, उष्णीष मादाय=पगड़ी निकाल कर, शिरांसि चाऽऽधाय=सिर पर रख कर, मुत्तरीपंचैकं=एक सुन्दर शाल को, स्कन्ध योर्निक्षिप्य=कन्धों पर डालकर, दौवारिक निर्देशानुसारं=द्वारपाल के भिर्देश के अनुसार, श्री शिववीरालंकृताभट्टालिकां प्रति प्रठिर्णति—शिवाजी द्वारा विभूषित महल की ओर चल दिया।

हिन्दी—

इसके वाद द्वारपाल के फाटक पर रखी हुई लालटेन के प्रवल प्रकाश के पास पहुँचने पर संन्यासी ने कहा—द्वारपाल, क्या तुमने पहले भी कभी मुझे देखा है ? तव द्वारपाल ने उसे ध्यान से देख कर, उसके गम्भीर स्वर, आरक्त नेत्र, गोरे रंग, उमड़ती हुई जवानी और निर्भीक तथा सुन्दर मुख मण्डल से उसे पहचान लिया। पहचानते ही वन्दूक पकड़ने से कठोर पड़े हुए हाथ की पकड़ को ढीली करके लज्जित सा होकर प्रणाम करता हुआ वोला—अरे गौरसिंह जी आप ? इस वेचारे गँवार के अनुचित व्यावहार को क्षमा कीजिये। यह सुनकर उसकी पीठ पर हाथ रखते हुए सन्यासी वेषधारी गौर सिंह मे कहा—

बाहुदण्डां शोणापाङ्गीं कम्बुग्रीवां सुनद्धस्नायुं वर्तुल-श्याम-श्मश्रुं धारिताकृतिमिव वीरतां विग्रहणीमिव धीरतां समासादित-समर-स्फूर्तिं मूर्ति दर्श दर्श परं प्रसादमासादयन्तस्तस्य वयस्याः कटानर्थ्यवलन् ॥ तेषु च अपजलखान-दमन-विषयक-वार्तासारिष्णुष्वेव कश्चिद् वेत्रहस्तः प्रतीहारः प्रविश्य, वेत्रं कक्षे संस्थाप्य, शिरो नमयित्वा, अञ्जलिं बद्ध्वा व्यजीविज्ञपत्-'प्रभो ! श्रीमान् गौरसिंहो दिदृक्षतेऽत्र भवन्तम्"—तदाकर्ण्य "आम् ! प्रवेशय प्रवेशय" इति सानन्दं मोरसाह च कथितवति महाराष्ट्रमण्डलाऽऽखण्डले, प्रतीहारो निवृत्य, सपद्येव तं प्रावीविशत् ।

श्रीधरी—शिववीरस्तु=शिवाजी, कस्याञ्चिच्चन्द्रचुम्बिन्या=किसी गगन चुम्बी, सान्द्र=गाढे, सुधासार-सलितभित्तिकाया=चूने से पुती हुई दीवारों वाले, धूपधूपिताया=धूप से सुगन्धित. (महल में) गजदन्ति कावलम्बित=खूटियों पर लटक रही है। विविध-क्षुरिका खड्ग-रिष्टिकाया=अनेक छुरियां, तलवारें और कटारें जिसमें, सुवर्ण-पिञ्जर-पटिलम्बमान=सोने के पिंजडों में लटक रहे हैं। शुक-पिक-चकोर-सारिका-कल-कूजित-पूजितायाम्=तोतों, कोयलों, चकोरों और मैनाओं के कलरव से मुखर, अट्टालिकायां=महल में। सन्ध्यामुपास्य=सन्ध्योपासना से निवृत्त होकर। उपविष्ट आसीत्=बैठे हुए थे। तस्यैव परितः=उनके चारों ओर उन्हीं की, खर्वामप्यखर्व पराक्रमा=ठिगनी होने पर भी महापराक्रम शालिनी, श्यामामपियशः समूह-श्वेतीकृत त्रिभुवनाम्=साँवली होने हुए भी तीनों लोकों को अपने यश से शुभ्र करने वाली, कुशासनाश्रयामपि सुशासनाश्रया=कुश के आसन पर आसीन होने पर भी सुन्दर शासन करने वाली, पठन-पाठनादि परिश्रमानभिज्ञामपि=पठन पाठन के परिश्रम से अपरिचित होने पर भी, नीतिनिष्णाता=राजनीति में निष्णात, स्थूल दर्शनामपि सूक्ष्म दर्शनाम्=देखने में स्थूल होने पर भी सूक्ष्म दृष्टि वाली, खमकाण्ड-

व्यसनिनीमपि धर्म धौरेयीं=विधर्मियों की हिंसा की व्यसनी होने पर भी धर्म का भार धारण करने वाली। कठिनामपि कोमलाम्=कठिन होती हुई भी कोमल, उग्रामपि शान्तम्=उग्र होने पर भी शान्त, शोभित विग्रहामपि दृढ़सान्धिवन्धां=सुन्दर शरीर वाली होतीहु ई भी सु दृढ़ सन्धिवन्धों वाली, कलित गौरवामपि कलित लाघवाम्=गौरवशाली होते हुए भी चातुर्य सम्पन्न, विशाल ललाटां प्रचण्ड वाहुदण्डां=विशाल ललाट और प्रवल भुजाओं वाली, शोणापाङ्गां=आरक्त नेत्रों वाली, कंबुग्रीवां=शंख स दृश कंठ वाली, सुनद्धस्नायु=सुगठित नसों वाली, वर्तुल श्याम श्मश्रु=गोल और काली दाढ़ी-मूछों वाली। धारिताकृतिमिव वीरतां=साक्षात् वीरता के समान, विग्रहीणीमिव धीरताम्=शरीर धारिणी धीरता के समान, समासादित-समर-स्फूर्ति=युद्ध में असाधारण स्फूर्ति दिखाने वाली, मूर्ति=शिवाजी के शरीर को, दर्श दर्श=देख देखकर, परम प्रसाद मासादयन्त:=अत्यन्त प्रसन्न होते हुए, तस्य वयस्या:=शिवाजी के साथी, कटानध्यवसन्=चटाइयों पर बैठे थे। तेपु च=उनमें, अपजल खान दमन विषयक वार्तामारिप्सुर्वेधं=अफजल खाँ को दमन करने के सम्बन्ध मे वात शुरू हो ही रही थी। तभी, कश्चित् वेत्रहस्त: प्रतीहार:=वेंत हाथ में लिये किसी प्रतीहारी ने, प्रविश्य=प्रवेश करके, वेत्रं कक्षे संस्थाप्य=वेत को बगल में दवाकर, शिरोनमयित्वा=शिर झुकाकर, अंजलि वद्ध्वा=हाथ जोड़कर, न्यवीविदत्=निवेदन किया, प्रभो=स्वामी, श्रीमान् गौरसिंहो दिद्दक्षतेऽत्रभवन्तम्=श्रीमान् गौरसिंह आपका दर्शन करना चाहते हैं। तदाकर्ण्य=यह सुनकर, आम=अच्छा, प्रवेशय प्रवेशय=ले आओ, ले आओ, इति सानन्दं सोत्साहं च=इस प्रकार आनन्द और उत्साह के साथ, महाराष्ट्रमण्डला खण्डले कथितवति= शिवाजी के कहने पर, प्रतीहारो निवृत्य=प्रतीहारी लोटकर, तं=गौरसिंह को, प्रावीविशत्=ले आया।

हिन्दी—

महाराज शिवाजी एक गगन चुम्बी, गाढ़े चूने से पुती हुई दीवारों वाले, धूप की सुगन्ध से सुगन्धित महल में—जिसमें खूंटियों पर अनेक प्रकार की छुरियां, कृपाण, तलवार आदि लटक रहे थे, और जिसमें सोने के पिंजड़ों में लटक रहे तोतों, कोयलों, चकोरों और मैनाओं की की चहचहाहट से मुखरित हो रहा था, सन्ध्योपासन से निवृत्त होकर बैठे हुये थे। उनके चारों ओर उन्हीं की, देखने में ठिगनी होने पर भी अत्यधिक पराक्रम शालिनी, साँवली होते हुये भी अपने यश से तीनों लोकों को शुभ्र करने वाली, कुश के आसन पर बैठने पर भी सुन्दर शासन करने वाली पठन-पाठन के परिश्रम से अपरिचित होने पर भी राजनीति में निष्णात् देखने में स्थूल दिखाई पड़ने पर भी सूक्ष्म दृष्टि वाली, म्लेच्छों की हिंसा की व्यसिनी होने पर भी धर्म की मर्यादा को धारण करने वाली, उग्र होती हुई भी शान्त, सुन्दर शरीर वाला होती हुई भी सु दृढ़ सन्धिबन्धों वाली, गौरव शालिनी होते हुए भी चतुरता से युक्त, विशाल ललाट और प्रबल भुजाओं वाली, आरक्त नेत्रों वाली, शख सदृश कण्ठ वाली, सुगठित नसों वाली, गोल और काली दाढ़ी-मूछों वाली, मूर्तिमान वीरता के समान शरीर धारिणी धीरता के समान तथा युद्ध भूमि में असाधारण स्फूर्ति दिखलाने वाली शिवाजी की मूर्ति को देख देखकर अत्यन्त प्रसन्न होते हुये, उनके साथी चटाइयों पर बैठे हुये थे। वे अफजलखाँ को दमन करने के सम्बन्ध में बात चीत करने वाले ही थे कि बेत हाथ में लिए हुए प्रतीहारी ने प्रवेश कर, बेंत को बगल में दबाकर, सिर झुकाकर, हाथ जोड़कर सूचित किया कि—प्रभो, श्रीमान् गौरसिंह जी आपका दर्शन करना चाहते है। यह सुनकर महाराज शिवाजी से प्रसन्नता और उत्साह के साथ—अच्छा, लेआओ-लेआओ, यह कहने पर, प्रतीहारी लौट कर शीघ्र गौरसिंह को वहाँ ले आया।

तमवलोक्यैव "इत इतो गौरसिंह ! उपविश, उपविश। चिराय दृष्टोऽसि, अपि कुशलं कलयसि ? अपि कुशलिनस्तव सहवासिनः ? अप्यङ्गीकृत-महाव्रतं निर्वहथ यूयम् ? अपि कश्चिन्नूतनो वृत्तान्तः ?" इति कुसुमानीव वर्षता पीयूष-प्रवाहेणेव सिञ्चता मृदुना वचनजातेन तत्रभवता शिववीरेणाऽऽद्रियमाणः, आपृच्छ्यमानश्च, त्रिः प्रणम्य, अन्तरङ्ग-मण्डली-जुष्ट-कटे समुपविश्य, करौ सम्पुटीकृत्य "भगवन् ! अखिलं कुशलं प्रभूणामनुग्रहेणास्माकमखिलानाम्, अङ्गीकृत-महाव्रते अस्मिन् पदे धात् कञ्चनान्तराय इत्येव सदा प्रार्थ्यते भगवान् भूतनाथः। नूतनः प्रश्नश्च को नामाद्यतनसमये वक्तव्यः श्रोतव्यश्च वृत्तान्तः—ऋते दुराचारात् स्वच्छन्दानामुच्छृङ्खलानामुच्छिन्नसच्छीलानां म्लेच्छ-हतकानाम्" इति कथयामास। ततश्च तेषामेवमभूदालापः।

शिववीरः—अथ कथ्यतां को वृत्तान्तः ? का च व्यवस्था अस्मन्महाव्रताश्रय-परम्परायाः ?

गौरसिंहः—भगवन् सर्वं सुसिद्धम्, प्रगतिगव्यूत्यन्तरालमङ्गीकृत-सनातनधर्म-रक्षा-महाव्रतानां धारित-मुनि-वेषाणां वीरवराणामाश्रमाः सन्ति। प्रत्याश्रमञ्च वल्मीकेषु गोपयित्वा स्थापिताः परश्शताः खड्गाः, पटलेषु तिरोभाविताः शक्तयः कुशपुञ्जान्तः स्थापिता भुशुण्ड्यश्च समुल्लसन्ति। उञ्छस्य, शिलस्य, समिदाहरणस्य, इङ्गुदी-पर्यन्वेषणस्य, भूर्जपत्र-परिमार्गणस्य, कुसुमावचयनस्य, तीर्थाटनस्य, सरसगस्य च व्याजेन, केचन जटिलाः, परे मुण्डिनः, इतरे काषायिणः, अन्ये मौनिनः, अपरे ब्रह्मचारिणश्च बहवः पटवो बटवश्चराः सञ्चरन्ति। विजयपुराद्वीयात्राऽऽगच्छन्त्या मक्षिकाया अप्यन्तः भिश्रत वय विद्म, किं नाम एषां यवनहतकानाम् ?

श्रीमती—तमवलोक्यैव = उन्हें देखते ही, इत इतो गौरसिंह = इधर-उधर गौरसिंह, उपविश उपविश = बैठो बैठो, चिरायदृष्टोऽसि =

बहुत समय बाद दिखाई दिये, अपि कुशलं कलयसि = कुशली तो हो, अपि कुशलिनस्तव सहवासिनः = तुम्हारे साथी कुशली हैं, अप्यङ्गीकृत महाव्रतं निर्वहथ यूयम् = तुम लोग स्वीकृत महाव्रत को निभाते तो हो, अपि कश्चिन्नूतनो वृत्तान्तः = क्या कोई नया समाचार है, इति = इस प्रकार, कुसुमानीव वर्षता = फूल से बरसाते हुए, पीयूष प्रवाहेणेव सिञ्चता = अमृत रस से सींचते हुएँ से, मृदुना वचनजातेन = कोमल वचनों से, तत्रभवताऽशिववीरेणाऽऽद्रियमाणः = महाराज शिवाजी से आदर पाते हुये, आपृच्छ्यमानश्च = और पूछे जाते हुए, गौरसिंह ने, त्रिः-प्रणम्य = तीन बार प्रणाम करके, अन्तरंग मण्डलीजुष्ट कटे समुप विश्य = अन्तरंग मित्रों युक्त चटाई पर बैठकर, करौ सम्पुटीकृत्य = हाथों को जोड़कर कहा, भगवन् = श्रीमन्, प्रभूणामनुग्रहेण = स्वामी के आग्रह से, अस्माक-मखिलानां = हम सब लोगों की, अखिलं कुशलं = पूर्णतया कुशल है, भगवान् भूतनाथः = भगवान् विश्वनाथ से, इदमेव प्रार्थ्यते = यही प्रार्थना करते है कि, अङ्गीकृत महाव्रते = स्वीकृत महाव्रत में, मा स्म पतेत् कश्चनान्तरायः = कोई विघ्न न आये, नूतनः प्रत्नश्च को नाम्नाद्यतन समये = आज के समय में नया समाचार क्या है, वक्तव्यः श्रोतव्यश्च = कहने और सुनने लायक, स्वच्छन्दानां = निरंकुश, उच्छृङ्खलानां = उद्दण्ड, उच्छिन्न सच्छीलानां म्लेच्छ हतकानां = सदाचार विहीन मुसलमानों के, ऋते दुराचारात् = दुराचार के सिवा और क्या है, इति कथमायास = ऐसा गौरसिंह ने कहा, ततश्च तेषामेवभूदालापः = इसके बाद उनमें इस प्रकार बातें हुई, शिववीरः = शिववीर ने कहा, अथ कथ्यतां को वृत्तान्तः = अच्छा बताइये क्या समाचार है, का न व्यवस्था अस्मन्महाव्रताश्रम परम्परायाः = क्या हाल चाल हैं हमारे महाव्रताश्रमो के, गौरसिंहः = गौरसिंह ने कहा, भगवन् सर्वं सुसिद्धम् = स्वामी सब कुछ ठीक है, प्रतिगव्यूत्य-न्तरालमङ्गीकृतसनातनधर्म रक्षा महाव्रतानां = प्रत्येक दो कोस के बीच

में सनातन धर्म की रक्षा का व्रत लिये हुए, धारित मुनि वेषाण = मुनि वेषधारी, वीरवराणां आश्रमाः सन्ति = वीरों के आश्रम है. प्रत्याश्रमञ्च = प्रत्येक आश्रम में, वलीकेषु = छप्परों की ओलियों में, गोपयित्वा स्थापिताः = छिपाकर रक्खी हुई, परश्शताः खड्गाः = सैकड़ों तलवारें, पटलेषु तिरोभाविताः शक्तयः = सक्तियां, कुश पुञ्जान्तः स्थापिताः भुशुण्डचश्च समुल्लसन्ति = कुशों के ढेर में बन्दूकें छिपाकर रखी हैं, उञ्छस्य. शिलस्य = खेतों में गिरे हुये दानों और बालियों को बीनने, समिदा हरणाम = समिधा लाने, इंगुदी पर्यन्वेषण म = हिंगोट के बीज ढूँढने, भूर्जपत्र परिमार्गणाय = भोजपत्र खोजने, कुसुमावचय-नस्य = फूल चुनने, तीर्थाटनस्य = तीर्थाटन करने, सत्संगस्य च व्याजेन = सत्संग करने के बहाने से, केचन = कोई. जटिलाः = जटा रखाये, परे मुण्डिनः = कुछ सिर मुड़ाये, इतरे काषायिणः = कुछ लोग गेरुआ रंगाये हुए, अन्ये मौनिनः = कुछ मौन धारण किये हुए, अपरे ब्रह्मचारिणः = अन्य लोग ब्रह्मचारी का वेप धारण किये हुए, बहवः पटवो वटवश्च = अनेक चतुर गुप्तचर बालक, सञ्चरन्ति = घूम रहे हैं. विजयपुरादुड्डी-मागच्छन्त्या = बीजापुर से उड़कर यहाँ आने वाली, मक्षिकायाअप्यन्तः स्थितं = मक्खी तक के आन्तरिक बातों को, वयं विद्मः = हम लोग जानते है, कि नाम एषां यवन हतकानाम् = इन दुष्ट मुसलमानों की तो बात ही क्या है।

हिन्दी—

गौरसिंह को देखते ही-'इधर-इधर गौरसिंह, बैठो-बैठो। बहुत दिनों बाद दिखाई दिये, कुशली तो हो ? तुम्हारे साथी कुशल से तो हैं ? तुम लोग स्वीकृत महाव्रत का पालन तो ठीक से कर रहे हो ? क्या कोई नया समाचार है ? इस प्रकार फूल से वर्षाते हुये, अमृत प्रवाह से सींचते हुये से, मधुर वचनों से शिवाजी के द्वारा आदर पाते हुये और पूछे

जाते हुये गौरसिंह ने तीन वार प्रणाम करके, अन्तरंग मित्रों से युक्त चटाई पर बैठ कर, हाथ जोड़कर कहा—भगवन् ! आपके अनुग्रह से हम सब लोग कुशल पूर्वक हैं और भगवन् विश्वनाथ से यही कामना करते हैं कि स्वीकृत महाव्रत में कोई विघ्न न आये। आजकल नया कहने किंवा सुनने लायक निरंकुश, उद्दण्ड, स्वेच्छाचारी म्लेच्छों के दुराचार के सिवा और क्या है ? इसके बाद शिवाजी गौरसिंह में इस प्रकार बातें हुई—

शिवाजी—अच्छा, बताइये हमारे महाव्रताश्रमों के क्या समाचार हैं ? उनकी व्यवस्था कैसी चल रही है ?

गौरसिंह—श्रीमन् ! सब ठीक हो गया है। प्रत्येक दो कोस के बीच में सनातन धर्म की रक्षा का व्रत लिये हुए मुनि वेषधारी वीरों के आश्रम हैं। प्रत्येक आश्रम में छप्परों की ओरियों में सैकड़ों तलवारें, छप्परों में शक्तियाँ कुशों के ढेर में बन्दूकें छिपाकर रखी हैं। खेतों में गिरे हुए अनाज और बालियों को बीनने, समिधा लाने, हिंगोट के बीज ढूँढने, भोजपत्र खोजने, फूल चुनने, तीर्थ यात्रा करने और सत्संग करने के बहाने कोई जटा रखाये हुए, कुछ मौन सिर मुड़ाये हुये कुछ गेरुआ वस्त्र पहने हुये कुछ मौन धारण किये हुए, अन्य लोग ब्रह्मचारी का वेष धारण किये हुए अनेक चतुर गुप्तचर बालक घूम रहे हैं। हम बीजापुर से उड़कर यहाँ आने वाली मक्खी तक के अन्तः-करण की बातों को जानते हैं, इन दुष्ट मुसलमानों की तो बात ही क्या है ?

शिववीरः—साधु साधु, कथं न स्यादेवम् ? भारतवर्षीया यूयम्, तत्रापि महोच्चकुलजाताः, अस्ति चेद भारतं वर्षम्, भवति च स्वाभाविक एवानुरागः सर्वस्यापि स्वदेशे, पवित्रतमश्च यौष्माकीणः सनातनो धर्मः, तमेते जाल्माः समूलमुच्छिन्दन्ति, अस्तिच "प्राणा, यान्तु, न च धर्मः" इत्यार्याणां दृढः सिद्धान्तः। महान्तो हि धर्मस्य कृते लुण्ठ्यन्ते, पात्यन्ते

हन्यन्ते, न धर्मं त्यजन्ति, किन्तु धर्मस्य रक्षायै सर्वसुखान्यपि त्यक्त्वा, निशीथेष्वपि, वर्षास्वपि, ग्रीष्म-घर्मेष्वपि, महारण्येष्वपि, कन्दरिकन्दरेष्वपि, व्यालवृन्देष्वपि, सिंह-सङ्घेष्वपि, वारण-वारेष्वपि, चन्द्रहास-चमत्कारेष्वपि च निर्भया विचरन्ति। तद् धन्या स्थ यूयं वस्तुत आर्यवंशीया, वस्तुतश्च भारतवर्षीयाः।

अथ पाथ्यर्था कोऽपि विशेषोऽवगतो वा अपजलखानस्य विषये ?

गौरसिंहः—"अवगतः, तत्पत्रमेव दर्शयामि"—इति व्याहृत्य, उष्णीष-सन्धौ स्थापितं कन्यापहारक-यवन-युवक-मृत-शरीर-वस्त्रान्तः प्राप्तं पत्रं बहिश्चकार।

अन्वयार्थ—शिवीवरः=शिवाजी ने कहा, साधु साधु=शावाश शावाश, कथं न स्यादेवम्=ऐसा क्यों न हो, यूयम् भारतवर्षीया=तुम लोग भारतीय हो, तत्रापि=उसमे भी, महोच्चकुल जाता=उच्चकुल में उत्पन्न हुए हो, अस्ति चेदं भारतवर्षम्=यह भारत वर्ष है, सर्वस्यापि=सभी का, स्वदेशे=अपने देश पर, स्वाभाविक एवानुराग भवति=स्वाभाविक प्रेम होता है, यौष्माकीण=आपका सनातनो धर्म. =सनातन धर्म, पवित्र तम.=अत्यन्त पवित्र है त=उस सनातन धर्म, को, एते जाल्माः=ये जालिम समूलमुच्छिन्दन्ति=जड से उखाड़ रहे है. आर्याणा=आर्यों का, प्राणाः यान्तु न च धर्म.=प्राण चले जाये, पर धर्म न जाय, इति दृढ. सिद्धान्तः अस्ति=यह दृढ सिद्धान्त है, हि=क्योंकि, महान्तः=महापुरुष लोग. धर्मस्य कृते लुठ्यन्ते=धर्म के लिये लुट जाते है, पात्यन्ते=गिराये जाते है, हन्यन्ते=मारे जाते है, न च धर्म त्यजन्ति=किन्तु वे फिर भी धर्म को नही छोड़ते, किन्तु धर्मस्य रक्षायै=धर्म की रक्षा के लिये, सर्व सुखान्यपित्यक्त्वा=सारे सुखों को भी छोडकर, निशीथेस्वपि=आधी रात में भी, वर्षास्वपि=वर्षा में भी, ग्रीष्म घर्मेष्वपि=जेठ की धूप में भी, महारण्येष्वपि=भयंकर जगलो

में भी, कन्दरि कन्दरेष्वपि=पहाड़ों की गुफाओं में भी, व्यालवृन्दे-ष्वपि=सर्पों के समूह में भी, सिंह सङ्घेष्वपि=शेरों के झुण्डों में भी, वारण-वारेष्वपि=हाथियों के यूथ में भी, चन्द्रहास चमत्कारे-ष्वपि=चमकती हुई तलवारों में भी, निर्भया विचरन्ति=निर्भय होकर विचरण करते हैं, तद् धन्याः स्थ यूयं=तुम लोग धन्य हो, वस्तुत आर्य वंशीया=वास्तव में आर्य वंशीय हो, वस्तुतश्च भारतवर्षीयाः=वास्तव में भारत वर्षीय हो।

अथ कथ्यतां=अच्छा कहिये, अपजलखानस्य विषये=अफजल खाँ के बारे में, कोऽपि विशेषोऽवगतो वा=कोई नई बात मालूम हुई?

गौरसिंहः=गौरसिंह ने कहा, अवगतः=मालूम हुई है, तत्पत्र मेव दर्शयामि=उसका पत्र ही दिखाता हूँ, इति व्याहृत्य=ऐसा कहकर, उष्णीष सन्धौ स्थापितं=पगड़ी के अन्दर रखे हुए, कन्यापहारक-यवन-युवक-मृत-शरीर वस्त्रान्तः प्राप्तं=कन्या का अपहरण करने वाले मुसलमान युवक के मृत शरीर के वस्त्रों से प्राप्त, पत्रं=पत्र को, बहि-श्चकार=बाहर निकाला।

हिन्दी—

शिवाजी ने कहा—शाबाश, शाबाश, ऐसा क्यों न हो? तुम लोग भारतवर्षीय हो, उसमें भी उच्च कुल में उत्पन्न हुये हो, यह भारत वर्ष है, अपने देश पर सभी लोगों का स्वाभाविक प्रेम होता है, आपका सनातन धर्म अत्यन्त पवित्र है, उसे ये जालिम मुसलमान लोग जड़ से उखाड़ना चाहते हैं। प्राण भले ही चले जाँय, पर धर्म न जाय, यह आर्यों का दृढ़ सिद्धान्त है। महान् लोग धर्म के लिये लुट जाते हैं, गिराये जाते हैं, मारे जाते हैं, पर वे धर्म को नहीं छोड़ते, धर्म की रक्षा करने के लिए आधी रात में भी, वर्षा में भी, जेठ की तपती हुई धूप में भी, घने जंगलों में भी, पहाड़ों की गुफाओं में भी, सर्पों के समूह में भी, शेरों के झुण्ड में भी हाथियों के यूथों में भी और चमचमाती हुई

तलवारों में भी निर्भयता के साथ विचरण करते है। तुम लोग धन्य हो, तुम लोग वास्तव में आर्य वंशी हो।

अच्छा, बताओ क्या अफजल के बारे में कोई नयी बात मालूम हुई है ?

गौरसिंह ने कहा—हाँ मालूम हुई है। उसी का पत्र दिखाता हूँ। यह कहकर पगड़ी भीतर रखे हुये कन्या का अपहरण करने वाले मुसलमान युवक के मृत वस्त्रों के अन्दर से मिले हुए पत्र को बाहर निकाला।

सर्वे च विजयपुराधीशमुद्रामवलोक्य "किमेतत् ? कुत एतत् ? कथमेतत् ? कस्मादेतत् ?" इति जिज्ञासमानाः सोत्कण्ठा वितस्थिरे। गौरसिंहस्तु शिववीरस्यापि तत्प्राप्ति-चरित-शुश्रूषामवगत्य संक्षिप्य सर्वं वृत्तान्तमवोचत्। ततस्तु "दर्श्यताम्। प्रसार्यताम्, पठ्यताम्. कथ्यताम्, किमिदम् ?" इति पृच्छति शिववीरे गौरसिंहो व्याजहार—

भगवन् ! सर्पाकारैरक्षरैः पारस्य-भाषायां लिखितं पत्त्रमेतदस्ति। एतस्य सारांशोऽयमस्ति—विजयपुराधीशः स्वप्रेषितमफजलखानं सेनापतिं सम्बोध्य लिखति यत्—"वीरवर ! महाराष्ट्र—राजेन सह योद्धुं प्रस्थितोऽसीति मा स्म भूत्कश्चनान्तरायस्तव विजये। शिवं युद्धे जेष्यसि चेत्, पद्भ्यां सिंहं जितवानसीति मन्ये, किन्तु सिंहहननापेक्षया जीवतः सिंहस्य वशीकार एवाधिकं प्रशस्यः। तद् यदि छलेन जीवन्तं शिवमानयेः तद् वीरपुङ्गवोपाधि—दान सहकारेण तव महतीं पदवृद्धिं करिष्यामि। गोपीनाथपण्डितोऽपि मया तव निकटे प्रस्थापितोऽस्ति, स मम तात्पर्यं विशदीकृत्य तव निकटे कथयिष्यति। प्रयोजनवशेन शिवमपि साक्षात्करिष्यति" इति।

श्रीधरी—सर्वे च = सब लोग। विजयपुराधीशमुद्रामवलोक्य =

बीजापुर के सुल्तान की मुहर देखकर, किमेतत् = यह क्या है, कुत एतत् = कहाँ से मिला, कस्म.देतत् = किससे मिला, कथमेतत = कैसे मिला, इति जिज्ञासमाना: = यह जानने के लिए, सोत्कण्ठा वितस्थिरे = उत्कण्ठित हो गये, गौरसिंहस्तु = गौरसिंह ने, शिववीरस्यापि = शिवाजी को भी, तत्प्राप्ति चरित शुश्रूषामवगत्य = उसकी प्राप्ति का वृत्तान्त जानने को उत्सुक जानकर, संक्षिप्य = संक्षेप में, सर्व वृत्तान्तमवोचत् = सारा समाचार सुनाया, ततस्तु = इसके बाद, शिववीरे = शिवाजी के, दर्श्यताम् = दिखाइये, प्रसार्यताम् = खोलिये, पठ्यताम् = पढ़िये, कथ्यताम् = कहिये, किमिदम् = यह क्या है इति पृच्छति = यह पूछने पर, गौरसिंहो व्याजहार = गौरसिंह बोला, भगवन् = श्रीमन्, सपर्किारेक्ष्करैः = अरबी लिपि में, पारस्यभाषायां = फारसी भाषा में, लिखितं = लिखा हुआ, एतत् पत्र अस्ति = यह पत्र है. एतस्य = इसका, सारांशोऽयमास्तियत् = इसका साराश यह है कि, विजयपुराधीश: = बीजापुर नरेश, स्वप्रेषितमपजेल खानं सेनापति सम्बोध्य लिखति यत् = अपने भेजे हुए अफजल खां नामक सेनापति को सम्बोधित करके लिखता है कि वीरवर, महाराष्ट्रराजेन सह योद्‌ प्रस्थितोऽसि = तुमने महाराष्ट्र के स्वामी शिवाजी के साथ युद्ध करने के लिये प्रस्थान किया है, इति = इसलिए, तव विजये = तुम्हारी विजय में, कश्चनान्तराय: माभूत् = किसी तरह का विघ्न न आये, शिव = शिवाजी को, युद्धे जेष्यसि चेत् = युद्ध में जीत लोगे तो, पद्भ्यां सिंह जितवानसीति मंस्ये = पैरों से शेर को जीता है, ऐसा समझूंगा, किन्तु = लेकिन, सिंह हननापेक्षया = शेर को मारने की अपेक्षा, सिंहस्य वशीकार एव = शेर को वश में करना ही, अधिक प्रशस्य = अधिक प्रशंसनीय होता है, तद् = इसलिए, यदि छलेन = छल से, जीवन्तं शिवमानयेत् = जीवित ही शिवाजी को पकड़ लाओ, तो, वीरपुंगवो-पाधिदान सहकारेण = वीरपुंगव की उपाधि देने के साथ ही, तव = तुम्हारी, महती पदवृद्धि कुर्याम् = बड़ी पदोन्नति करूँगा, मया = मैंने

गोपीनाथ पण्डितोऽपि = गोपीनाथ पण्डित भी, तव निकटे = तुम्हारे पास, प्रस्थापितोऽस्ति = भेजा है, सः = वह, मम तात्पर्यं = मेरे अभिप्राय को, विशदीकृत्य = विस्तार के साथ, तव निकटे कथयिष्यति = तुम्हारे समक्ष कहेंगे, प्रयोजन वशेन = किसी मतलब से, शिवमपि = शिवाजी के साथ भी, साक्षात्करिष्यति = भेंट करेंगे।

हिन्दी—

सभी लोग बीजापुर नरेश की मुहर देखकर, यह क्या है? कहाँ से मिला? कैसे मिला? किससे मिला? यह जानने को अत्यधिक उत्सुक हो उठे। गौरसिंह ने शिवाजी को भी उसकी प्राप्ति का समाचार जानने को समुत्सुक जानकर संक्षेप में सारा समाचार कह सुनाया। इसके बाद वीर शिवाजी के—दिखाइये, खोलिये, पढ़िये, कहिये यह क्या है? इस प्रकार पूछने पर गौरसिंह ने कहा—

श्रीमन्! यह अरबी लिपि में फारसी भाषा में लिखा हुआ पत्र है। इसका सारांश यह है कि—बीजापुर नरेश अपने द्वारा भेजे हुये सेनापति अफजल खाँ को सम्बोधित करके लिखता है कि—वीरवर! तुमने महाराष्ट्र देश के स्वामी शिवाजी के साथ युद्ध करने के लिये—प्रस्थान किया है, अतः तुम्हारी विजय में किसी प्रकार का विघ्न न आये। यदि युद्ध में तुमने शिवाजी को जीत लिया तो मैं पैदल ही शेर को जीता हुआ समझूंगा, किन्तु शेर को मारने की अपेक्षा उसे जीवित ही वश में करना अधिक प्रशंसनीय होता है, अतः यदि तुम छल से जीवित शिवाजी को पकड़ लोगे तो वीरपुङ्गव की उपाधि देने के साथ-साथ तुम्हारी पदवृद्धि भी कर दूंगा। मैंने गोपीनाथ पण्डित को भी तुम्हारे पास भेज दिया है। वह मेरे अभिप्राय को विस्तार से तुम्हें बतायेंगे और प्रयोजन वश शिवाजी के साथ भी भेंट करेंगे।

इत्याकर्णयत एव शिववीरस्य अरुणकौशेय-जाल-निबद्धौ मीनाविव नयने संजाते, मुखञ्च बाल-भास्कर-बिम्ब-विडम्बना-मालम्बे, अधरश्च धीरताधुरामधरीकृतवान्।

अथ स दक्षिण-कर-पल्लवेन श्मश्रु परामृशन्नाकाशे दृष्टिं बद्ध्वा "अरे रे विजयपुर-कलङ्क! स्वयमेव जीवन् शिवः तव राजधानीमाक्रम्य, दोःपुञ्जोपाधिसहकारेण तव महतीं पदवृद्धिमङ्गीकरिष्यति, तत्किं प्रेषयसि मृत्योः क्रीडनकानेतान् कदर्य-हतकान्?"—इति साक्षेपमवोचत्। अपृच्छच्च "ज्ञायते वा कश्चिद् वृत्तान्तो गोपीनाथपण्डितस्य?"

यावद् गौरसिंहः किमपि विवक्षति तावत्प्रतीहारः प्रविश्य 'विजयतां महाराजः' इति त्रिर्व्याहृत्य, करौ सपुटीकृत्य, शिरो नमयित्वा कथितवान् "भगवन्! दुर्गद्वारि कश्चन गोपीनाथनामा पण्डितः श्रीमन्त दिदृक्षुरुपतिष्ठते। नायं समयः प्रभूणां दर्शनस्य, पुनरागम्यताम्" इति बहुशः कथ्यमानोऽपि "किञ्चनात्यावश्यककार्यम्" इति प्रतिजानाति। तदत्र प्रभुचरणा एव प्रमाणम्—इति।

तदवगत्य "सोऽयं गोपीनाथः, सोऽयं गोपीनाथः" इति साश्चर्यं सतर्कं सोत्साहञ्च व्याहृतवत्सु निखिलेषु, शिववीरेण निजबाल्यप्रियो माल्यश्रीकनामा सम्बोध्य कथितो यद् "गम्यतां दुर्गान्तर एव महावीर-मन्दिरे तस्मै वासस्थानं दीयताम्, भोज्य-पर्यङ्कादि-सुखद-सामग्री-जातेन च सत्क्रियताम्, ततोऽहमपि साक्षात्करिष्यामि"—इति।

श्रीधरी—इत्याकर्ण्यत एव=यह सुनते ही, शिववीरस्य नयने=शिवाजी के नेत्र, अरुण कौशेय जालनिबद्धौ=लाल रेशमी जाल में फँसी हुई, मीनाविव संजाते=मछली की तरह हो गये। मुखञ्च=मुख भी, बालभास्कर-बिम्ब-विडम्बनामालम्बे=प्रातः कालीन सूर्य मण्डल के समान लाल हो गया, अधरश्च=ओठ भी, धीरता धुरा-मधुरी

कृतवान्=धैर्य को छोड़कर फड़कने लगे।

अथ स=इसके बाद शिवाजी ने, दक्षिण-कर-पल्लवेन=दाहिने हाथ से, श्मश्रु परामृशन्=मूँछों पर ताव देते हुए, आकाशे दृष्टिं बद्ध्वा=आकाश की ओर दृष्टि लगाकर, अरे रे विजयपुर कलङ्क=अरे बीजापुर के कलङ्क, स्वयमेव जीवन् शिवः=शिवाजी स्वयं जीवित रहते हुये, तव राजधानीमाक्रम्य=तुम्हारी राजधानी में आक्रमण करके, वीर-पुंगवोपाधि सहकारेण=वीर पुंगव की उपाधि के साथ, तव महतीं पद-वृद्धिं अंगी करिष्यति=तुम्हारी दी हुई पदोन्नति को स्वीकार करेगा, मृत्योः क्रीडनकानेतान् कदर्य हतकान्=मौत के खिलौने इन दुष्ट कायरों को, तत्किं प्रेषयसि=क्यों भेजते हो। इति=इस बात को, सास्रं उस-वोचत्=कई बार कहा, अपृच्छच्च=और पूछा, गोपीनाथ पण्डितस्य=गोपीनाथ पण्डित का, कश्चिद् वृत्तान्तः=कोई समाचार, ज्ञायते वा=मिला है क्या।

यावद् गौरसिंहः किमपि विवक्षति=जब तक गौरसिंह कुछ कहना ही चाहते थे, तावत् प्रतीहारः प्रविश्य=तब तक प्रतीहारी ने आकर, विजयतां महाराजः=महाराज की जय हो, इति त्रि काहृत्य=ऐसा तीन बार कहकर, करौ सम्पुटीकृत्य=हाथों को जोड़कर, शिरो नमयित्वा कथितवान्=शिर झुका कर कहा, भगवन्, दुर्गद्वारि=किले के फाटक पर, कश्चन गोपीनाथ पण्डितः=कोई गोपीनाथ पण्डित, श्रीमन्तं दिदृक्षुरुपतिष्ठते=आपके दर्शनों की इच्छा से खड़े हैं, नायं समयः प्रभूणां दर्शनस्य=यह समय महाराज से मिलने का नहीं है, पुनरागम्य-ताम्=फिर आईये, इति बहुशः कथ्यमानोऽपि=ऐसा बार-बार कहने पर भी, किञ्चनात्यावश्यकं कार्यम् इति प्रति जानाति=कुछ बहुत आवश्यक काम है, ऐसा कहते हैं, तदत्र=अतः इस सम्बन्ध में, प्रभुचरणा एव प्रमाणम्=आपकी जैसी आज्ञा हो, वैसा किया जाये।

तदवगत्य=यह जानकर, सोऽयं गोपीनाथः, सोऽयं गोपीनाथः=यह वही गोपीनाथ है, यह वही गोपीनाथ है, इति=इस प्रकार, विखिलेषु=सब के, साम्रेडं=बार-बार, सतर्क सोत्साहञ्च व्याहृतवत्सु=अनुमानपूर्वक और उत्साह के साथ कहने पर, शिववीरेण=शिवाजी ने, निज चाल्यप्रियो=माल्यश्रीक को सम्बोधित करके कहा कि, गम्यतां=जाइये, दुर्गान्तर एव=किले के अन्दर ही, महावीर मन्दिरे=हनूमान जी के मन्दिर में, तस्मै वासस्थानं दीयताम्=उन्हें ठहराइये, भोज्य-पर्यङ्कादि सुखद सामग्री जातेन च सात्क्रियताम्=भोजन, पलंग आदि सुखद सामग्रियों से उनका सत्कार कीजिये, ततः=इसके बाद, अहमपि साक्षात्करिष्यामि=मैं भी उनसे मिलूँगा।

हिन्दी—

यह सुनते ही शिवाजी की आँखें रेशमी जाल में फँसी हुई मछली की तरह हो गईं, मुख भी प्रातःकालीन सूर्य मण्डल के समान लाल हो गया और ओठ धैर्य को छोड़कर फड़कने लगे।

तदनन्तर शिवाजी ने दाहिने हाथ से मूँछों पर ताव देते हुये आकाश की ओर देखकर, अरे बीजापुर के कलङ्क! स्वयं शिवाजी ही जीवित रहकर, तुम्हारी राजधानी पर आक्रमण करके वीर पगव की उपाधि के साथ तुम्हारी दी हुई पदोन्नति को स्वीकार करेगा। मौत के खिलौने इन दुष्ट कायरों को क्यों भेजते हो? इस प्रकार कई बार कहा, तथा गौरसिंह से पूछा—कि क्या गोपीनाथ पण्डित का कोई समाचार मिला?

जब तक गौरसिंह कुछ कहना ही चाहते थे तभी प्रतीहारी ने आकर, महाराज की जय हो, ऐसा तीन बार कहकर, हाथ जोड़कर, शिर झुकाकर कहा—महाराज! किले के दरवाजे पर कोई गोपीनाथ पण्डित आपके दर्शनों की इच्छा से खड़े हैं। यह महाराज से मिलने का

समय नहीं है, फिर आइयेगा, ऐसा बार-बार कहने पर, कुछ अत्यावश्यक कार्य है, ऐसा कहते हैं। अतः उनके सम्बन्ध में आपकी जैसी आज्ञा हो, वैसा किया जाय।

यह जानकर, यह वही गोपीनाथ है, यह वही गोपीनाथ है, इस प्रकार सभी लोगों के अनुमान और उत्साहपूर्वक कहने पर, शिवाजी ने अपने बाल्यसखा माल्यश्रीक को सम्बोधित करके कहा—जाओ, किले के अन्दर ही हनुमान जी के मन्दिर में उन्हें ठहराओ और भोजन, पलंग आदि सुखद सामग्रियों से उनका सत्कार करो। इसके बाद मैं भी उनसे मिलूँगा।

ततो बाढमित्युक्त्वा प्रयाते माल्यश्रीके; "महाराज ! आज्ञा चेदहमद्यैव अपजलखानं कथमपि साक्षात्कृत्य, तस्याखिलं व्यवसितं विज्ञाय प्रभुचरणेषु विनिवेदयामि; नाधुना मम क्षान्तिः शान्तिश्च, यतः सन्यासिवेषोऽहं समागच्छन् द्वयोर्यवनभटयोर्वार्तयाऽवागमम्, यत् श्व एवैते युयुत्सन्ते" इति गौरसिंहो मन्दं कर्णान्तिकं व्याहार्षीत्।

ततो "वीर ! कुशलोऽसि, सर्वं करिष्यसि, जाने तव चातुरीम्, तद् यथेच्छं गच्छ, नाहं व्याहन्मि तवोत्साहम्, नीतिमार्गान् वेत्सि, किन्तु परिपन्थिन एते अत्यन्तनिर्दयाः, अतिकदर्याः, अतिकूटनीतयश्च सन्ति। एतैः सह परम-सावधानतया व्यवहरणीयम्"—इति कथयित्वा शिववीरस्तं विससर्ज।

श्रीधरी— ततः=इसके बाद। बाढमित्युक्त्वा=बहुत अच्छा ऐसा कह कर, माल्यश्रीके प्रयाते=माल्यश्रीक के चले जाने पर, महाराज आज्ञाचेद= महाराज आज्ञा हो तो, अहमद्यैव=मैं आज ही, अपजलखानं कदमपि साक्षात्कृत्य=किसी तरह अफजल खाँ से मिलकर। तस्य=उसके। अखिलं= व्यवसितं विज्ञाय=सारे इरादों को जानकर। प्रभु चरणेषु विनिवेदयामि =आप से निवेदन करूँ। अधुना=इस समय। मम शान्तिः सान्तिश्च न

=मुझ में शान्ति और सहिष्णुता नहीं हैं। यतः=क्योंकि। सन्यासिवेषोऽहं समागच्छन्=सन्यासी के वेष में आते हुए मुझे। द्वयोर्यवन नटयोर्वार्तयाऽवागमम्=दो मुसलमान सिपाहियों की बात चीत से ज्ञात हुआ कि। एते=ये लोग। श्व एव=कल ही। युयुत्सन्ते=युद्ध करना चाहते है। इति=इस प्रकार। गौरसिंहः=गौरसिंह ने। मन्द=धीरे से। कर्णान्तिकं व्याहार्षीत्=शिवाजी के कान में कहा।

ततः=तब। वीर, कुशलोऽसि=हे वीर तुम निपुण हो। सर्वं करिष्यसि=तुम सब कुछ कर लोगे। जाने तव चातुरीम्=मैं तुम्हारी चतुरता को जानता हूँ। यथेच्छं गच्छ=इच्छानुसार जाओ। तवोत्साहं नाहं व्याहन्मि=मैं तुम्हारे उत्साह को मारना नही चाहता। नीतिमार्गान् वेत्सि=तुम नीति मार्गों को जानते हो। किन्तु=लेकिन। एते परिपन्थिनः=ये शत्रु। अत्यन्त निर्दयाः=अत्यन्त क्रूर। अति कदर्याः=अत्यन्त नीच। अति कूट नीतयश्च सन्ति=अत्यन्त कूटनीतिज्ञ हैं। एतैः सह=इनके साथ। परम सावधानतया=अत्यन्त सावधानी के साथ। व्यवहरणीयम्=व्यवहार करना चाहिये। इति कथयित्वा=ऐसा कहकर। शिववीरस्तं विससर्ज=शिवाजी ने गौरसिंह को विदा किया।

हिन्दी—

इसके बाद माल्यश्रीक के 'बहुत अच्छा' कहकर चले जाने पर, गौरसिंह ने शिवाजी के कान में धीरे से कहा—महाराज! यदि आज्ञा हो तो मैं आज ही किसी प्रकार अफजलखाँ से मिलकर उसके सारे इरादों को जानकर आपको बताऊँ क्योंकि मुझ में अब न तो शान्ति है और न सहिष्णुता है। सन्यासी के वेष में आते हुये मुझे रास्ते में दो मुसलमान सिपाहियों की बातों से ज्ञात हुआ कि ये कल ही लड़ाई करना चाहते हैं।

इसके बाद शिवाजी ने वीरवर! तुम बहुत निपुण हो। मैं

तुम्हारी निपुणता को सम्यक् तया जानता हूँ। तुम सब कुछ कर लोगे। मैं तुम्हारा उत्साह नहीं मारना चाहता, अतः इच्छानुसार जाओ, तुम नीतिमार्गों को जानते हो, किन्तु ये दुश्मन बड़े क्रूर, बड़े नीच और बड़े कूटनीतिज्ञ हैं, अतः इनके साथ बड़ी सावधानी के साथ व्यवहार करना चाहिये। ऐसा कहकर शिवाजी ने गौरसिंह को विदा किया।

गौरसिंहस्तु त्रिः प्रणम्य, उत्थाय, निवृत्य, निर्गत्य, अवतीर्य, सपदि तस्या एव निम्ब-तरु-तल-वेदिकायाः समीप आगत्य, स्वसहचरं कुमारमिङ्गितेनाऽऽहूय कस्मिंश्चित् स्वसंकेतित-भवने प्रविश्य, आत्मनः कुमारस्यापि च केशान् प्रसाधनिकया प्रसाध्य, मुखमार्द्रपटेन प्रोञ्छ्य, ललाटे सिन्दूर-बिन्दु-तिलकं विरचय्य उष्णीषमपहाय शिरसि सूचिस्यूतां सौवर्ण-कुसुम-लतादि-चित्र-विचित्रिता-मुष्णीषिकां संधार्य, शरीरे हरितकौशेय-कञ्चुकिकामायोज्य, पादयोः शोण-पट्ट-निर्मितमधो-वसनमाकलय्य, दिल्लीनिर्मिते महार्हे उपानहौ धारयित्वा, लघीयसीं तानपूरिकामेकां सह नेतुं सहचर-हस्ते समर्प्य, गुप्तच्छुरिकां दन्तावलदन्त-मुष्टिका यष्टिकां मुष्टौ गृहीत्वा, पटवासैर्दिगन्तं दन्तुरयन्, करस्थपट-खण्डेन च मुहुर्मुहुराननं प्रोञ्छन् गायकवेषेण अपजलखान-शिबिराभिमुखं प्रतस्थे।

श्रीधरी—गौरसिंहस्तु = गौरसिंह ने। त्रिःप्रणम्य = तीन बार प्रणाम करके। उत्थाय = उठकर। निवृत्य = घूमकर। निर्गत्य = बाहर निकालकर। अवतीर्य = उतर कर। तस्या एव = उसी। निम्बतरुतल-वेदिकायाः समीप आगत्य = नीम के पेड़ के नीचे चबूतरे पर आकर। स्वसहचर कुमारं = अपने साथी बच्चे को। इंगितेनाऽऽहूय = इशारे से बुलाकर। कस्मिंश्चित् स्व संकेतित भवने = किसी पूर्व निश्चित भवन में। प्रविश्य = जाकर। आत्मनः कुमारस्यापि च = अपने और उस लड़के के। केशान् = बालों को। प्रसाधनिकया प्रसाध्य = कंघी

से काढ़ कर। मुखं = मुख को। आर्द्रपटेन = गीले कपड़े से। प्रोञ्छ्य = पोंछ कर। ललाटे = माथे पर। सिन्दूर विन्दु तिलक विरच्य = सिन्दूर का तिलक लगा कर। उष्णीष मपहाय = पगड़ी को उतार कर। शिरसि = शिर में। सूचिस्यूतां = सुई से सिली। सौवर्ण-कुसुमलतादि-चित्रा-विचित्रितां = सोने के तारों से कढ़ी हुई रंग-विरंगी। उष्णीषिकां = टोपी को। संधार्य = पहन कर। शरीरे = शरीर में। हरित कौशेय = हरा रेशमी। कञ्चुकिकामायोज्य = अंगरखा पहन कर। पादयोः = पैरों में। शोणपट्टनिर्मित = लाल रेशम का बना हुआ। अधोवसनं = पैजामा। आकलय्य = पहिन कर। दिल्ली निर्मिते = दिल्ली के बने हुए। महार्हे उपानहौ धारयित्वा = वहुमूल्य जूतों को पहन कर। लघीयसी = छोटी सी। एकां तानपूरिकां = एक तानपूरे को। सहनेतु = साथ ले जाने के लिये। सहचर हस्ते समर्प्य = साथी बच्चे के हाथ में देकर। गुप्तच्छुरिकां दन्तावल दन्त मुष्टिकां = जिसमें छुरी गुप्त थी और ऐसी हाथी दाँत की मूठ वाली। यष्टिकां = गुप्ती छड़ी को। मुष्टौ गृहीत्वा = हाथ में लेकर। पटवासैर्दिगन्तं दन्तुरयन् = इत्र की सुगन्ध से दिशाओं को सुगन्धित करते हुये। करस्थ पट खण्डेन = हाथ के रूमाल से। मुहुर्मुहुराननं प्रोञ्छन् = बार बार मुख पोंछते हुये। गायक वेषेण = गायक के वेष में। अफजलखान शिविराभिमुख प्रतस्थे = अफजल खाँ के शिविर की ओर चल पड़ा।

हिन्दी—

गौरसिंह ने तीन बार प्रणाम करके, घूम कर, बाहर निकल कर, नीचे उतर कर, शीघ्र उसी नीम के पेड़ के नीचे चबूतरे पर आकर, अपने साथी लड़के को इशारे से बुला कर, किसी पूर्व निश्चित मकान में जाकर, अपने तथा उस लड़के के बालों को कंघी से काढ़ कर, मुँह को गीले कपड़े से पोंछ कर, माथे पर सिन्दूर का तिलक लगा कर, पहनी हुई पगड़ी

को उतार कर, सुई से सिली हुई, सोने के तारों से कढ़ी हुई रंग विरंगी टोपी को शिर में पहन कर, हरा रेशमी अंगरखा, लाल रेशम के पैजामे तथा दिल्ली के बने हुये वहुमूल्य जूतों को पहन कर, छोटे से एक तान पूरे को साथ ले चलने के लिये साथी बच्चे के हाथ में देकर, हाथी दाँत की मूठ वाली गुप्ती को हाथ में पकड़ कर, इत्र की सुगन्ध से दिशाओं को सुगन्धित करते हुये, हाथ में लिये हुए रूमाल से बार-बार मुँह पोछते हुये, गायक के वेष में, गौरसिंह ने अफजल खां के शिविर की ओर प्रस्थान किया।

अथ तौ त्वरित गच्छन्तौ, सपद्येव परःशत-श्वेतपट-कुटीरैः शारद-मेघ-मण्डलायित दीपमाला-विहित-बहुल-चाकचक्यम् अपजलखान-शिबिरं दूरत एव पश्यन्तौ, यावत्समीपमागच्छतन्तावत् कश्चन कोकनद-च्छवि-वस्त्र-खण्ड-वेष्टित-मूर्द्धा, कटिपर्यन्त-सुनद्ध-काकश्यामाङ्ग-रक्षिकः कर्बुराधोवसनः, शोण-श्मश्रुः, विजय-पुराधीश-नामाङ्कित-वर्तुल-पित्तल-पट्टिका-परिकलित-वाम-वक्षस्थलः स्कन्धे भुशुण्डीं निधाय, इतस्ततो गतागतं कुर्वन् सावष्टम्भमुर्दूभाषया उवाच—'कोऽयं कोऽयम् ?' इति; ततो गौरसिंहेनापि 'गायकोऽहं श्रीमन्तं दिदृक्षे' इति समादवं व्याख्यायि। ततो 'गम्यतामन्येऽपि गायका वादकाश्च सम्प्रत्येव गताः सन्ति' इति कथयति प्रहरिणि-'धृतेन स्नातु भवद्रसना' इति व्याहरन् शिबिर-मण्डलं प्रविवेश।

श्रीधरी—अथ = इसके बाद। तौ = वे दोनो। त्वरितं गच्छन्तौ = जल्दी जल्दी जाते हुये। सपद्येव = शीघ्र ही। परश्शत-श्वेतपट-कुटीरैः = सैकड़ों सफेद तम्बुओं से। शारदमेघमण्डलायितं = शरत्कालीन बादलों के समान प्रतीत होने वाले। दीपमाला-विहित-बहुल-चाकचक्यम् = दीपमालाओं से जगमगाते हुये। अपजलखान शिबिरं = अफजल खाँ के शिविर को। दूरत एव पश्यन्तौ = दूर से ही देखते हुए। 'यावत्समपि-

मागच्छत: = जब तक पास में पहुँचे। तावत् कश्चन = तब तक कोई। लोकनद-च्छवि वस्त्र खण्डवेष्ठित-मूर्धानम् = लाल कमल की सी कान्ति-वाले कपड़े के टुकड़े को सिर पर लपेटे। कटिपर्यन्त मुनद्धकाकश्यामाङ्ग रक्षिक: = कमर तक लम्बे कौवे के समान काले अंगरखे को पहने हुये। कर्बुराधोवसन: = चितकबरी लुङ्गी पहने। शोणश्मश्रु: = लाल दाड़ी मूँछ वाले। विजयपुराधीश-समाङ्कित-वर्तुल पित्तल पट्टिका = बीजापुर के सुल्तान के नाम से अंकित गोल पीतल की चपरास को। परिकलित वाम वक्षस्थल: = छाती की बांई ओर डाले हुये। स्कन्धे भुशुण्डी निधाय = कन्धे पर बन्दूक रख कर। इतस्ततो गतागत कुर्वन् = इधर-उधर गश्त लगाता हुआ। सावष्टम्भ मुर्दूभापया उवाच = रोकता हुआ उर्दू-भाषा में बोला, कोऽयं कोऽयम् इति = यह कौन है। यह कौन है। तत: = तब। गौरसिंहेनापि = गौरसिंह ने भी। गायकोऽहं = मैं गायक हूँ। श्रीमन्तं दिदृक्षे = श्रीमान् से मिलना चाहता हूँ। इति समार्दवं व्याख्यामि = इस प्रकार नम्रता से कहा, ततोगम्यतां = तब जाइये। अन्येऽपि गायका वादकाश्च = और भी गाने और बजाने वाले। सम्प्रत्येव गता: सन्ति = अभी ही गये है। इति कथयाति प्रहरिणि = ऐसा पहरेदार के कहने पर। घृतेन स्नातु भावद्रसना = आपके मुँह में घी शकर। इति व्याहृत्य = ऐसा कहकर। शिविर मण्डलं प्रविवेश = शिविर में प्रविष्ट हो गया।

हिन्दी—

इसके बाद जल्दी-जल्दी कदम बढ़ाते हुये वे दोनों, सैकड़ों सफेद तम्बुओं से शरत्कालीन बादलों के समान प्रतीत होने वाले दीप मालि-काओं से जगमगाते हुये, अफजल खाँ के शिविर को दूर से देखते हुए, ज्यों ही शिविर के समीप पहुँचे त्यों ही लाल कमल की सी कान्ति वाले कपड़े के टुकड़े को सिर पर लपेटे हुये, कमर तक लम्बे कौवे के रंग के

सम्मान-काले अंगरखे को पहने हुए, चितकबरी लुङ्गी को पहने हुए, लाल दाढ़ी-मूँछ वाले, बीजापुर नरेश के नाम से अङ्कित गोल पीतल की चपरास को छाती के बाईं ओर डाले हुए, कन्धे पर बन्दूक रखकर इधर-उधर गश्त लगाते हुए किसी आदमी ने उन्हें रोककर उर्दू भाषा में कहा—यह कौन है यह कौन ? तब गौरसिंह ने नम्रता से कहा—मैं गायक हूँ श्रीमान् के दर्शन करना चाहता हूँ। तब पहरेदार के यह कहने पर कि—जाओ, और भी गाने और बजाने वाले अभी-अभी गये हैं, आपके मुँह में घी शक्कर कहता हुआ गौरसिंह शिविर में प्रविष्ट हो गया।

तत्र च क्वचित् खट्वासु पर्यङ्केषु चोपविष्टान्, सगडगडाशब्दं ताम्रक-धूममाकृष्य, मुखात् कालसर्पानिव श्यामल-निश्वासानुद्गिरतः; स्वहृदय-कालिमानमिव प्रकटयतः, स्वपूर्वपुरुषोपार्जित-पुण्यलोकानिव फूत्कारैरग्निसात् कुर्वतः, मरणोत्तरमतिदुर्लभं मुखाग्निसंयोगं जीवन-दशायामेवाऽऽकलयतः, प्राप्ताधिकारकलिताखर्वगर्वान्; क्वचिद् "हरिद्रा हरिद्रा, लशुनं लशुनम्, मरिचं मरिचम्, चुक्रं चुक्रम्, वितुन्नकं वितुन्नकम् शृङ्गवेरं शृङ्गवेरम्, रामठं रामठम्, मत्स्यण्डी मत्स्यण्डी, मत्स्या मत्स्याः, कुक्कुटाण्डं कुक्कुटाण्डम्, पललं पललम्" इति कलकलैर्बालानां निद्रां विद्रा-वयतः, समीप-संस्थापित-कुतू-कुतुप-कर्करी-कण्डोल-कट-कटाह—कम्बि-कडम्बान्, उग्रगन्धीनि मांसानि शूलाकुर्वतः, नखम्पचा यवागूः स्थालिकासु प्रसारयतः, हिङ्गुगन्धीनि तेमनानि तिन्तिडीरसैर्मिश्रयतः, परिपिष्टेषु कलम्बेषु जम्बीर-नीरं निश्च्योतयतः, मध्ये मध्ये समागच्छ-तस्ताम्रचूडान् व्यजन-ताडनैः पराकुर्वतः त्रपु-लिप्तेषु ताम्र-भाजनेषु आरनालं परिवेषयतः सूदान्; क्वचिद्दृढ-प्रसाधितकाकपक्षान्, मद-व्याघूर्णित-शोण-नयनान्, सपारस्परिक-कण्ठग्रहं पर्यटतः, यौवन-चुम्बित-शरीरान्, स्वसौन्दर्य-गर्व-भारेणेव मन्दगतीन्, अनवरताक्षिप्त-कुसुमेषु-

•बाणैरिव कुसुमैर्भू बितान्, वसन्ताति रोहिताङ्गच्छटान्, विविध-पटवास-वासितानपि चिरास्नान-महा-मलिन-महोत्कट-स्वेद-पूतिगन्ध-प्रकटीकृता-स्पृश्यतान् यवनयुवकान् ;

ओधरी — तत्र च क्वचित् = वहाँ कहीं। खट्वासु पर्यङ्केषु चोपविष्टान् = चारपाइयों और पलंगों पर बैठे हुये। सगडगडाशब्दं = गड़गड़ शब्द के साथ। ताम्रक् धूम्रमाकृष्य = तम्बाकू का धुंआं खींच कर। मुखात् = मुख से। कालसर्पानिव श्यामल निश्वानुद्गिरतः = काले सर्पो के समान धुंआं निकालते हुए। स्वहृदय कालिमानमिव प्रकटयतः = मानो अपने हृदय की कालिमा को प्रकट कर रहे। स्वपूर्व पुरुषोपार्जित पुण्यलोकानिव फूत्कारैरग्निसात्-कुर्वतः = मानो अपने पूर्वजों द्वारा उपार्जित पुण्य लोकों को फूँक मार कर जला रहे है। मरणोत्तरमतिदुर्लभं = मरने के बाद अत्यन्त दुर्लभ। मुखाग्नि संयोगं = अग्नि संयोग को। जीवन दशायामेवाऽऽकलयतः = जीवित अवस्था में ही प्राप्त कर रहे। प्राप्ताधिकार कलिताखर्वगर्वान् = अधिकार मुक्त होने के कारण घमण्ड में चूर हो रहे। यवन युवकान् = मुसलमान नव युवकों को। क्वचित् = कहीं। हरिद्रा हरिद्रा = हल्दी-हल्दी। लशुनं लशुनं = लहसुन-लहसुन। मरिचं मरिचं = मिर्च-मिर्च। चुक्रं चुक्रं = खटाई खटाई। वितुन्नकं-वितुन्नकं = सौंफ सौंफ। शृङ्गवेरं शृङ्गवेरं = अदरख-अदरख। रामठम् रामठम् = हींग-हींग। मत्स्यण्डी मत्स्यण्डी = राब-राब। मत्स्या-मत्स्या = मछली मछली। कुक्कुटाण्ड कुक्कुटाण्ड = मुर्गी का अण्डा-मुर्गी का अण्डा। पललं पललं = मांस मांस। इति = इस प्रकार के। कल कलं बालानां निद्रां विद्रावयतः = बच्चों की नींद उचाटते हुए। समीप स्थापित = पास में। कुतू = कुप्पा। कुतुप = कुप्पी। कर्करी = गडुवा। कण्डोल = टोकरी। कट = चटाई। कटाह = कड़ाई। कम्बि = करछुल। कंडम्वान् साग के डण्ठल रखे हुए। उग्र गन्धीनि = दुर्गन्ध देने वाले। मांसानि =

मांसों को। पूरलं कुर्वतः=लोहे की सलाखों से पकाते हुए। नखचम्पा यवागू=गरम भात को। स्थालिकासु प्रसारयतः=थालियों में फैलाते हुए। हिंगु गन्धीनि तेमनानि=हींग से वघारी हुई कड़ी में। तिन्तिडीरसैर्मिश्रयतः=इमली का रस मिलाते हुये। परिपिष्टेषु-कलम्वेषु=पिसी हुई चटनी में। जम्वीर-नीरं निश्चोतयतः=नींबू रस निचोड़ते हुए। मध्ये मध्ये=बीच-बीच में। समागच्छ-तास्ताम्रचूडान्=आने वाले मुर्गों को। व्यजन ताडनैः पराकुर्वतः=पंखों से मार मार कर भगाते हुए। अपुलिप्तेषु ताम्रभाजनेषु=कलई किये हुए तांवे के वर्तनों में। आरनालं परिवेष-यतः सुदान्=कांजी डालते हुये रसोइयों को। क्वचिद =कहीं, परवक्रप्रसाधित काक पक्षान्=टेड़ी मांग काढ़े हुये। मद व्याघूर्णितशोण नयनान्=नशे से झूमते हुए लाल आंखों वाले। सपास्परिक कण्ठग्रहं पर्य्यटतः=गलवांही डाल कर घूमते हुए। यौवन चुम्बितशरीरान्=नई जवानी वाले। स्वसौन्दर्य गर्व भारेणेव मन्द गतीन्=अपने सौन्दर्य मद से धीरे धीरे चलते हुए। अनवरताऽऽक्षिप्त-कुसुमेषु वाणैरिव कुसुमैर्भूषितान्=लगातार चलाये जा रहे मानो काम वाण रूपी पुष्पों से अलंकृत। वसनातिरोहिताङ्गच्छटान्=वस्त्रों से अंग छवि को न छिपा सकने वाले। विविधपटवास वासितानापि=अनेक प्रकार के इत्रों से सुगन्धित होने पर भी। चिरास्तान महामलिन =बहुत दिनों से स्नान न करने के कारण मैले। महोत्कट स्वेद पूतिगन्ध=तीक्ष्ण पसीने की वदबू से। प्रकटीकृता स्पृश्यतान्=अपनी अस्पृश्यता को प्रकट कर रहे। यवन युवकान्=मुसलमान नव युवकों को।

हिन्दी—

वहां, कहीं चारपाइयों और पलंगों पर बैठे हुए गड़ गड़ शब्दों के साथ तम्बाकू का धुआं खींचते हुये, मुख से काले सर्पों के समान धुआं निकालते हुये, अपने हृदय की कालिमा को मानो प्रकट कर रहे, मानो अपने पूर्वजों के द्वारा उपार्जित पुण्य लोकों को फूंक मारकर

जला रहे, मरने के बाद मुख में अग्नि संयोग दुर्लभ जानकर जीवित दशा में ही मुख में आग रखते हुए, अधिकार सम्पन्न होने के कारण घमण्ड में चूर हो रहे मुसलमान युवकों को; तथा कहीं हल्दी-हल्दी, लहसुन-लहसुन, मिर्च-मिर्च, खटाई-खटाई, सौंफ-सौंफ, अदरख-अदरख, हींग-हींग, राव-राव, मछलियां-मछलियां, अण्डे-अण्डे, मांस-मांस के कोलाहल से बच्चों की नींद तोड़ते हुए, पास में ही कुप्पा, कुप्पी, गडुवा, टोकरी, चटाई, कढ़ाई, करछुल, तथा साग के डण्ठल रखे हुए, दुर्गन्ध देने वाले मांस के टुकड़ों को लोहे की सलाखों में पिरोकर पकाते हुए, गरम-गरम गीले भात को थालियों में परोसते हुए, हींग से बघारी हुई कढ़ी में इमली का रस मिलाते हुए, पिसी हुई चटनी में नींबू रस निचोड़ते हुए, बीच-बीच में आने वाले मुर्गों को पंखों से मार-मार कर भगाते हुए, कलई किये हुए ताँबे के बर्तनों में कांजी को डालते हुए रसोइयों को, कहीं पर तिरछी मांग काढ़े हुए, नशे से घूमते हुए लाल आँखों वाले, एक दूसरे के गले में हाथ डाले घूमते हुए, नई जवानी वाले, अपने सौन्दर्य के मद-भार से मानो धीरे-धीरे चलते हुए, लगातार चलाये जा रहे कामबाण रूपी फूलों से अलंकृत, कपड़ों से अङ्गच्छवि को तिरोहित न कर सकने वाले, अनेक प्रकार के इत्रों से सुवासित होते हुए भी बहुत दिनों से स्नान न करने के कारण अत्यन्त मैले, और तेज दुर्गन्ध वाले पसीने की बदबू से अपनी अस्पृश्यता को प्रकट कर रहे यवन युवकों को।

---

१ क्वचिद् "अहो! दुर्गमता महाराष्ट्रदेशस्य, अहो! दुराधर्षता महाराष्ट्राणाम्, अहो! वीरता शिववीरस्य, अहो! निर्भयता एतत्सेनानीनाम्, अहो त्वरितगतिरेतद्घोटकानाम्, आः! किं कथयामः? दृष्ट्वैव चमत्कारं शिववीर-चन्द्रहासस्य न वयं पारयामो धैर्यं धर्तुम्, न च शक्नुमो युद्धस्थाने स्थातुम्, को नाम द्विशिरा यः शिवेन योद्धुं गच्छेत्?

कश्च नाम द्विपृष्ठो यस्तद्भटैरपि छलालापं विदध्यात् ? वयं बलिनः, अस्माकीना महती सेना, तथाऽपि न जानीमः किमिति कम्पत इव क्षुभ्यतीव च हृदयम् ! 'यवनानां पराजयो भविष्यति, अपजलखानो विनङ्क्ष्यति' इति न विद्मः को जपतीव कर्णे, लिखतीव सम्मुखे, क्षिपतीव चान्तः करणे। मा स्म भोः ! मैवं स्यात्, रक्ष भो ! रक्ष जगदीश्वर ! अथवा सम्बोभवीतितमामेवमपि. योऽयमपजलखानः सेनापति-पद-विडम्बनोऽपि 'शिवेन योत्स्ये हनिष्यामि ग्रहीष्यामि वा' इति सप्रौढ़ि विजयपुराधीश-महासभायां प्रतिज्ञाय समायातोऽपि, शिवप्रतापश्च विदन्नपि "अद्य नृत्यम्, अद्य गानम्, अद्य लास्यम्, अद्य मद्यम्, अद्य वाराङ्गना, अद्य भ्रूकुंसकः, अद्य वीणावादनम्" इति स्वच्छन्दैरुच्छृङ्खलाऽऽचरणैर्दिनानि गमयति। न च यः कदापि विचारयति यत् कदाचित् परिपन्थिभिः प्रेषिता काचन वारवधूरेव मामासवेन सह विषं पाययेत्, कोऽपि नट एव ताम्बूलेन सह गरलं ग्रासयेत्, कोऽपि गायक एव वा वीणया सह खड्गमानीय खण्डयेदित्यादि; ध्रुव एव तस्य विनाशः, ध्रुवमेव पतनम्, ध्रुवमेव च पशुमारं मरणम्। तत्र वयं तेन सह जीवन-रत्नं हारयिष्यामः"—इति व्याहरतः; इतरांश्च—

श्रीधरी—क्वचिद्=कहीं। अहो दुर्गमता महाराष्ट्र देशस्य=महाराष्ट्र देश बड़ा दुर्गम है। अहो दुराधर्षता महाराष्ट्राणाम्=मराठे बड़े दुर्धर्ष हैं। अहो वीरता शिववीरस्य=ओह शिवाजी की वीरता अद्भुत है। अहो निर्भयता एतत्सेनानीनाम्=ओह इनकी सेना बड़ी निर्भय है। अहो त्वरितगति रेतद् घोटकानाम्=इनके घोड़े बड़े तेज है। आः किं कथयामः=ओह क्या कहें। शिववीर चन्द्रहासस्य=शिवाजी के तलवार का। चमत्कारं दृष्ट्वैव=चमत्कार देखकर ही। न वयं पारयामो धैर्यं धर्तुम्=हम धैर्य नहीं रख पाते। न च शक्नुमो युद्धस्थाने स्थातुं=युद्ध स्थल में टिक नहीं पाते। को नामहि गिरा यः शिवेन योद्धुं

गच्छेत्=कौन दो सिर वाला होगा जो शिवाजी से लड़ने जायेगा। कश्च नाम द्विपृष्ठो=और कौन दो पीठ वाला होगा। यस्तद्भटैरपि छलालापं विदध्यात्=जो उनके सैनिकों से भी छल पूर्ण बात करेगा। वयं वलिनः=हम लोग बलशाली हैं। अस्माकीना महती सेना=हमारी सेना भी बड़ी है। तथापि=तो भी। न जानीमः=नहीं जानते। किमिति=किस लिये। कम्पत इव क्षुभ्यतीव च हृदयम्=हमारा हृदय कांपता सा और क्षुब्ध सा होता है। यवनानां पराजयो भविष्यति=मुसलमानों की पराजय होगी। अपजलखानो विनङ्क्ष्यति इति=अपजल खाँ मारा जायेगा, इस प्रकार। न विद्मः को जपतीव कर्णे=नहीं जानते कौन कान में कह सा रहा है। लिखतीव सम्मुखे=सामने लिख सा रहा है। क्षिपतीव चान्तः करणे=हृदय में बिठा सा रहा है। मास्मभोः मैवं स्यात्=नहीं-नहीं ऐसा न हो। रक्ष भो रक्ष जगदीश्वर=अल्लामियां बचाना। अथवा सम्वोभवीति तमामेवमपि=अथवा यह भी सम्भव हो सकता है। योऽय मपजलखानः=यह अफजल खाँ। सेनापति पद विडम्बनोऽपि=सेनापति पद को विडम्बित करता हुआ भी। शिवेन योत्स्ये=शिवाजी से युद्ध करूँगा। हनिष्यामि ग्रहीष्यामि वा=उन्हें या तो मार डालूंगा या कैद कर लाऊँगा। इति=इस प्रकार, विजयपुराधीश महासभायां=बीजापुर नरेश की राजसभा में। सप्रौढ़ि प्रतिज्ञाय समायतोऽपि=गर्व के साथ प्रतिज्ञा करके आने पर भी। शिवप्रतापञ्च विदन्नपि=शिवाजी के पराक्रम से परिचित होने पर भी। अद्य नृत्यम्=आज नाँच है। अद्य गानम्=आज गाना है। अद्य लास्यम्=आज शृङ्गार प्रधान स्त्री नृत्य है तो। अद्य मद्यम्=आज मदिरा है। अद्य वाराङ्गना=आज वेश्या है तो। अद्य भ्रूकुंसकः=आज स्त्री वेष धारी नर्तक है। अद्य वीणावादनम्=आज सितार वादन है। इति=इस प्रकार। स्वच्छन्दैरुच्छृङ्खला चरणैर्दिनानि

गमयति=स्वच्छन्द ,मनमाने आचरण से दिनों को बिता रहा है। न च यः कदापि विचारयति=कभी भी नहीं सोचता। यत्=कि। कदाचित् परिपन्थिभिः=कभी शत्रुओं के द्वारा। प्रेषिता काचन वारवधरेव=भेजी हुई कोई वेश्या ही। मां आसवेन सह विषं पाययेत्= मुझे मदिरा के साथ विष न पिला दे। कोऽपि नट एव=कोई गायक ही। ताम्बूलेन सह गरल ग्रासयेत्=पान के साथ जहर खिलादे। कोऽपि गायक एव=कोई गायक ही। वीणया सह=सितार के साथ। खड्गमानीय खण्डयेत्=तलवार लाकर काट दे। ध्रुव एव तस्य विनाशः =उसका विनाश निश्चित है। ध्रुव एवं पतनम=उसका पतन निश्चित हैं। ध्रुवमेव च पशुमारं मरणम्=उसका पशुवत मारा जाना निश्चित है। तन्नवयं तेन सह जीवन रत्नं हारयिष्यामः=हम उसके साथ नही मरेंगे। इति व्याहरतः इतरांश्च=ऐसा कहते हुए दूसरों को।

हिन्दी—

कहीं, ओह महाराष्ट्र देश बड़ा दुर्गम है, और मराठे लोग बड़े वीर हैं। ओह, शिवाजी की वीरता अद्भुत है, उनके सैनिक बड़े निर्भय है, उनके घोड़े बड़े तेज हैं, ओह, क्या कहें—शिवाजी की तलवार की चमक देख कर ही हमारा धैर्य छूट जाता है, और युद्ध में टिक सकना हमारे लिये कठिन हो जाता है। कौन दो सिर वाला होगा जो शिवाजी से लड़ने जायेगा, कौन दो पीठ वाला होगा जो उसके सैनिकों से भी छल करेगा, हम लोग बलशाली हैं, हमारी सेना भी विशाल है तो भी न मालूम क्यों हृदय कांपता सा है, क्षुब्ध सा होता हैं। मुसलमानों की हार होगी और अफजल खाँ मारा जायेगा, इस प्रकार न मालूम कौन कान में धीरे से कह रहा है, सामने लिख सा रहा है, इस बात को हृदय में बिठा सा रहा है। नहीं-नही ऐसा न हो, या अल्लाह बचाना या ऐसा हो भी सकता है, क्योंकि सेनापति पद को विडम्बित करने वाला

यह अफजलखाँ, मैं शिवाजी से लड़ूंगा, उसे या तो मार डालूंगा या कैद कर लाऊंगा, इस प्रकार बीजापुर नरेश की सभा में यद्यपि प्रतिज्ञा करके आया है और शिवाजी के पराक्रम को अच्छी तरह जानता भी है, किन्तु फिर भी आज नाच है तो आज गाना है. आज शृङ्गार प्रधान स्त्री नृत्य है तो आज मदिरा है, आज वेश्या है तो आज स्त्री वेषधारी नर्तक है, आज सितार वादन है इस प्रकार स्वच्छन्द आचरण करता हुआ दिन व्यतीत कर रहा है। यह कभी ऐसा नहीं सोचता कि दुश्मनों के द्वारा भेजी हुई कोई वेश्या ही मुझे मदिरा के साथ विष न पिलादे, कोई नट ही पान के साथ विष न खिला दे, कोई गायक ही वीणा के साथ तलवार लाकर मेरे टुकड़े न करदे, अतः उसका विनाश निश्चित है उसका पतन अवश्यम्भावी है, पशुवत् उसकी मौत निश्चित है। अतः हम उसके साथ अपना अमूल्य जीवन नहीं गंवायेंगे, इस प्रकार कहते हुए कुछ सिपाहियों तथा दूसरे लोगों को।

"मैव भोः! श्व एव आहव-क्रीडाऽस्माकं भविष्यति, तत् श्रूयते सन्धि-वार्त्ता-व्याजेन शिव एकत आकारयिष्यते, यावच्च स स्वसेनामपहाय एकाकी अस्मत्स्वामिना सहाऽऽलपितुमेकान्तस्थाने यास्यति; तावद्वयं श्येना इव शकुनिमण्डले महाराष्ट्र-सेनायां, छिन्धि भिन्धि-इति कृत्वा युगपदेव पतिष्यामः, वसन्त-वाताहत-नीरसच्छदानिव च क्षणेन विद्रावयिष्यामः। इतस्तु छलेनास्मत्स्वामिसहचराः शिवं पाशैर्बद्ध्वा पिञ्जरे स्थापयित्वा त जीवन्तमेव वशंवद करिष्यन्ति। परन्तु गोप्यतमोऽयं विषयो मा स्म भूत् कस्यापि कर्णगतः"—इति कर्णान्तिकं मुखमानीयोत्तरयतः सांग्रामिक-भटानवलोकयन्; "धन्या भवन्तो येषां गोप्यतमा अपि क्रिया एवं वीथिषु विकीर्यन्ते। महाराष्ट्रा धूर्ताचार्याः, नैतेषु भवतां धूर्तता सफला भवति" इत्यात्मन्येवाऽऽत्मना कथयन्, स्वप्रभा-धर्षित-सकल रक्षकगणः स्वसौन्दर्येणाऽऽकर्षयन्निव विश्वेषां मनांसि, सपद्येव प्रधान-पट कुटीर-द्वारमाससाद। तत्र च प्रहरिणमालोक्यचुक्र-

वांश्चयत् पुण्यनगर-निवासी गायकोऽहमत्रभवन्तं गान-रस-रसायनै-रमन्दमानन्दयितुमिच्छामीति। तदवगत्य स भ्रूसंचारेण कञ्चित् निवेदकं सूचितवान्। स चान्तः प्रविश्य, क्षणानन्तर पुनर्बहिर्निर्गत्य गायकमपृच्छत्—'किं नाम भवतः ? पूर्वञ्च कदाऽपि समायातो न वा ?' अथ स आह—'तानरंगनामाऽहं कदाचन युष्मत्कर्णमस्पृशम्। न पूर्वं कदाऽपि समात्रोपस्थातुं संयोगोऽभूत्, अद्य भाग्यान्यनुकूलानि चेत् श्रीमन्तमवलोकयिष्यामि' इति। स च 'आम्' इत्युदीर्य पुनः प्रविश्य क्षणानन्तरं निर्गत्य च विचित्र-गायकममुं सह निनाय।

श्रीधरी—मैवं भोः=ऐसा मत कहो। श्व एव=कल ही। अस्माकं-आहव क्रीडा भविष्यति=हमारी युद्ध क्रीडा होगी। तत् श्रूयेन=सुनते है कि। सन्धिवार्ता व्याजेन=सन्धि की बात चीत के बहाने। शिवः=शिवाजी को। एकतः आकारयिष्यते=बुलाया जायेगा। यावच्च सः=ज्यों ही वह। स्वसेनापहाय=अपनी सेना को छोड़कर। एकाकी=अकेले ही। अस्मत्स्वामिना सहाऽऽलयितुमेकान्त स्थाने यास्यति=हमारे स्वामी के साथ बात चीत करने के लिये, एकान्त स्थान में जायेगे। तावद्वय=त्यों ही हम। श्येना इव शकुनिमण्डले=पक्षियों पर बाज के समान, महाराष्ट्र-सेनाया=मराठों की सेना पर। छिन्धिः भिन्धि इति कृत्वा=मार काट मचाकर। युगपदेव पतिष्याम.=एक साथ ही टूट पड़ेंगे। क्षणेन=क्षण भर में। वसन्त वाताहत नीरसच्छदानिव=पतझड़ की हवा से गिरे हुए सूखे पत्तों की तरह। विद्रावयिष्यामः=मार भगायेंगे। इतस्तु=इधर। छलेन=छल से। अस्मत्स्वामि सहचराः=हमारे स्वामी के सहचर। शिवं=शिवाजी को। पाशैर्बद्ध्वा=रस्सियों से बांधकर। पिञ्जरे स्थापयित्वा=पिंजड़े में बन्द करके। तं=उसको। जीवन्नमेव=जीवित ही। वशवदं करिष्यन्ति=वश में कर लेंगे। परन्तु गोप्यतमोऽयं विषयः=किन्तु यह बात

वहुत गोपनीय है। मास्मभूत कस्यापि कर्णगतः=किसी के कानों में न पड़े। इति=इस प्रकार। कर्णान्तिकमुखमानीय उत्तरवतः=कान के पास मुँह लेजाकर उत्तर देते हुए। सांग्रामिक भटानवलोकयन्=युद्ध के सिपाहियों को देखकर, धन्या भवन्तो=आप लोग धन्य हैं। येषां=जिनके। गोप्यतमा अपि विषया=गोपनीय विषय भी। एवं=इस प्रकार। वीथिपु विकीर्यन्ते=गलियों में विखरे रखते हैं। महाराष्ट्राः=मराठे लोग। धूर्णाचार्याः=परले सिरे के धूर्त हैं। एतेषु=इनके साथ। भवतां धूर्तता सफला न भवति=आप लोगों की धूर्तता सफल नही हो सकती। इति=इस प्रकार। आत्मन्येवाऽऽत्मना कथयन्=अपने से ही अपने आप कहता हुआ। स्वप्रभा धर्षित सकल रक्षक गणः=अपने तेज से सभी पहरे दारों को निष्प्रभ करके। स्वसौन्दर्येणाऽऽकर्षयन्निव विश्वेषां मनांसि=अपने सौन्दर्य से सब के मन को आकर्षित करता हुआ सा। सपदेव=शीघ्र ही। प्रधान पट कुटीर द्वार माससाद=मुख्य तम्बू के दरवाजे पर पहुँच गया। तत्र च प्रहरिणमालोकयदुक्तवांश्च=वहाँ पहरेदार को देखकर कहा, पुण्यनगर निवासी। गायकोहमत्रभवन्तं=मैं पूना निवासी गायक हूँ और श्रीमान् को। गानरस रसायनैः=गान रस के रसायन से। अमन्द आनन्दयितुमिच्छामि=अत्यधिक आनन्दित करना चाहता हूँ। तदवगत्य=यह जानकर। भ्रूसंचारेण=भौंहों के इशारे से। कश्चित् निवेदकं सूचितवान्=उसने एक सन्देश वाहक को सूचित किया। स चान्तः प्रविश्य=उसने अन्दर जाकर। क्षणानन्तरं=थोड़ी देर वाद। पुनर्वहिर्निगत्य=फिर बाहर आकर। गायकमपृच्छत्=गायक से पूछा। किं नाम भवतः=आप का नाम क्या है। पूर्वञ्च कदापि समायतो न वा=पहले कभी आये हैं या नही। अथ स अह=तब गायक ने कहा। तानरङ्ग नामाहं=मेरा नाम तानरङ्ग है। कदाचन युष्मत्कर्णमस्पृशम्=शायद कभी आपने सुना हो। पूर्व कदापि=पहले कभी। ममात्रोपस्थातुं संयोगो न अभूत्=मुझे यहाँ

आने का। अवसर नही मिला। अद्य भाग्यानि अनुकूलानि चेत्=आज भाग्य ने साथ दिया तो। श्रीमन्तं अवलोकयिष्यामि=श्रीमान् के दर्शन करूँगा। स च=वह भी। आम् इत्युदीर्य=अच्छा, ऐसा कहकर। पुनः प्रविश्य=फिर अन्दर जाकर। क्षणानन्तर निर्गत्य च=थोड़ी देर में निकल कर। अमु=इस। विचित्र गायक=अनोखे गायक को। सह निनाय=साथ ले गया।

हिन्दी—

ऐसा मत कहो, कल ही हमारी युद्ध क्रीड़ा होगी। सुनाते है कि सन्धि की वात चीत करने के वहाने शिवाजी को एक ओर बुलाया जायेगा, ज्यों ही वह अपनी सेना को छोड़कर हमारे स्वामी के साथ वात चीत करने के लिये एकान्त स्थान में जायेंगे त्योंही हम लोग पक्षियों के समूह में वाज की तरह मराठो की सेना मे मार काट मचाते हुए एक साथ टूट पड़ेंगे। क्षण भर मे ही उसे पतझड की हवा से गिरे हुए सूखे पत्तों की तरह मार भगायेंगे। इधर हमारे सेनापति के सैनिक शिवाजी को छल से रस्सियों से बाँध कर, पिंजड़े मे वन्द करके जीवित अवस्था में ही शिवाजी को वश मे कर लेंगे। परन्तु यह विषय वडा ही गोपनीय है, किसी के कान मे न पड़ने पायें। कान मे मुँह लगाकर इस प्रकार उत्तर देते हुए सिपाहियो को देखकर, मन ही मन आप लोग धन्य हैं जिनके गुप्त समाचार इस तरह गलियों में विखरे रहते है। पर, मराठे लोग धूर्तो के सरदार है। इनके साथ आपकी धूर्तता सफल नही हो सकती, ऐसा कहते हुए, अपने तेज से सभी पहरे दारो को निष्प्रभ करके तथा अपने सौन्दर्य से सब के मन को अपनी ओर आकर्षित करते हुये गौरसिंह मुख्य तम्बू के द्वार पर पहुँच गया। वहाँ स्थित पहरे दार से कहा कि मै पूना नगर निवासी गायक हूँ श्रीमान् को गान रस रूपी रसायन से आनन्दित करना चाहता हूँ। उसकी वात सुन कर पहरेदार ने किसी सन्देश वाहक को इशारे से सूचित किया। उसने

जाकर थोड़ी देर बाद बाहर आकर गायक से पूछा आपका नाम क्या है ? पहले कभी यहाँ आये हैं या नहीं ? तब गायक ने कहा—मेरा नाम तानरंग है, शायद आपने कभी सुना हो। इससे पहले मुझे यहाँ आने का अवसर नहीं मिला। आज भाग्य ने साथ दिया तो श्रीमान् के दर्शन करूँगा। वह अच्छा कहकर, फिर भीतर जाकर थोड़ी देर बाद फिर बाहर आकर इस अनोखे गायक को अपने साथ अन्दर ले गाया।

तानरङ्गस्तु तेनैव तानपूरिका—हस्तेन बालकेनानुगम्यमानः, शनैः शनैः प्रविश्य, प्रथमं द्वितीयं तृतीयञ्च द्वारमतिक्रम्य, कांश्चित् मृदङ्ग-स्वरान् सन्दधतः, कांश्चिद्वीणावरणमुन्मुच्य, प्रवालं प्रोञ्छ्य, कोणं कलयतः, कांश्चिदविचलोऽयमेतेनैव सह योज्यन्तामपरवाद्यानीति वंशीरवं साक्षीकुर्वतः, कांश्चित् कलित-नेपथ्यान्, पादयोर्नूपुरं बध्नतः; कांश्चित् स्कन्धावलम्बिगुटिकातः करतालिकामुत्तोलयतः; कांश्चिच्च कर्णे दक्षकरं निधाय, चक्षुषी सम्मील्य, नासामाकुञ्च्य, पातितोभयजानु उपविश्य, वामहस्तं प्रसार्य, तन्त्रीस्वरेण स्व-काकलीं मेलयतः; सम्मुखे च पृष्ठतः पार्श्वतश्चोपविष्टैः कैश्चित् ताम्बूल—वाहकैः, अपरैर्निष्ठ्यूता-दान-भाजन-हस्तैः अन्यैरनवरत—चालित-चामरैः, इतरैर्बद्धाञ्जलिभि-र्ललाटकैः परिवृतम्, रत्नजटितोष्णीषिकामस्तकम्, सुवर्ण—सूत्र-रचित-विविध—कुसुम—कुड्मल—लताप्रतानाङ्कित—कञ्चुकं महोपबर्हमेकं क्रोडे संस्थाप्य, तदुपरि सन्धारितभुजद्वयम्, रजत—पर्यङ्के विविध-फेन-फेनिल-क्षीरधि-जल-तलच्छविमङ्गीकुर्वत्यां तूलिकायामुपविष्टमपजलखानं च ददर्श।

ततस्तु तानरंग—प्रभा-वशीभूतेषु सर्वेषु 'आगम्यतामागम्यतामा-स्यतामास्यताम्' इति कथयत्सु, तानरंगोऽपि सादरं दक्षिण-हस्तेनाऽऽदर-सूचक-संकेत-सहकारेण यथानिर्दिष्टस्थानमलञ्चकार।

ततस्तु इतरगायकेषु 'सगर्वं सासूयं सक्षोभं साक्षेपं सचकित—

स्फारणं सशिरःपरिवर्तन च तमालोकयत्सु अपजलखानेन सह तस्यैवम-भूदालापः ।

श्रीधरी—तानरंगस्तु = तानरंग, तेनैव तानपूरिका हस्तेन-बालकेनानुगम्यमानः—उसी तानपूरा हाथ में लिए हुए बालक के साथ, शनैः-शनैः—धीरे-धीरे, प्रविश्य = जाकर, प्रथमं द्वितीयं तृतीयञ्च-द्वारमतिक्रम्य = पहला, दूसरा, और तीसरा द्वार पार करके, कांश्चित्—किसी को। मृदंगस्वरान् सन्दधतः—साधते हुएं, कांश्चित्—किसी को, वीणावरणमुन्मुच्य—वीणा के खोल को उतार कर, प्रवालं प्रोञ्छ्य—वीणा के दण्ड को पोंछ कर, कोणं कलयतः—मिजराफ पहनते हुये, कांश्चित्—किसी को· अविचलोऽयं वंशीरवं—यह बाँसुरी का स्वर अविचल है, अपर वाद्यानि = अन्य बाजों को, एतेनैव सह योज्यन्ताम् = इसी के साथ मिलाइये, यह कहते हुये। कांश्चित्—किसी को, कलित नेपथ्यान्—वेष रचना कर, पादयोर्नूपुरं बध्नतः—पैरों में घुंघरू बांधते हुये, कांश्चित्—किसी को, स्कन्धावलम्बि गुटिकातः—कन्धे पर लटकती हुई झोली से, करतालिकामुत्तोलयतः—करताल निकालते हुए, कांश्चिच्च—किसी को, कर्णे दत्त करं निधाय—कान पर दाहिना हाथ रखकर, चक्षुषी सम्मील्य = आंखें मूंद कर, नासामाकुञ्च्य—नाक को सिकोड़ कर, पातितोभय जानु उपविश्य—घुटनों के बल बैठ कर, वामहस्तं प्रसार्य—बांया हाथ फैला कर, तन्त्री·स्वरेण = वीणा के स्वर के साथ, स्व काकली मेलयतः—अपनी आवाज मिलाते हुए, संमुखे च पृष्ठतः—सामने और पीछे, पार्श्वतश्चोपविष्टैः—अगल-बगल बैठे हुए, कैश्चित्—किन्ही को, ताम्बूल वाहकैः—पान लिये हुए, अपरै निष्ठ-यूतादान भाजन हस्तैः—हाथ में·पीकदान लिये हुए लोगों, अन्यैरनवरत चालित चामरैः—लगातार चंवर डुला·रहे लोगों, इतरै र्बद्धाञ्जलिभि-लीलाटिकैः—हाथ जोड़े हुए चापलूस नौकरों·से, परिवृत्तम्—घिरे हुए,

रत्नजटितोष्णीषिका मस्तकम् = सिर पर रत्न जड़ी हुई टोपी लगाये हुए, सुवर्ण सूत्र-रचित विविध-कुसुम-कुड्मल लता प्रतानाङ्कित कञ्चुकं = सोने के तारों से कढ़े अनेक फूलों, कलियों एवं बेल बूटों वाली अचकन पहने हुए, महोपबर्हं मेकं क्रोडे संस्थाप्य = गोद में एक बड़ी सी मसनद रखे, तदुपरि सन्धारित भुजद्वयम् = दोनों हाथ रखे हुए, रजत पर्यङ्के = चांदी के पलंग पर, विविध फेन-फेनिल क्षीरधि जल तलच्छवि-मङ्गी कुर्वत्यां = अत्यधिक फेन से फेनिल क्षीर सागर की शोभा को मात कर रहे, तूलिकायां उपविष्टं = गद्दे पर बैठे हुए, अफजल खानं च ददर्श = अफजल खां को देखा।

ततस्तु = इसके बाद, तावरङ्ग प्रभा वशीभूतेषु सर्वेषु = तानरंग की चमक-दमक से मुग्ध होकर सब ने, आगम्यतां आगम्यतां = आइये-आइये, आस्यताम् आस्यताम् = बैठिये बैठिये, इति कथयत्सु = यह कहने पर, तानरंगोऽपि = तानरंग ने भी, दक्षिण हस्तेन = दाहिने हाथ से, आदर सूचक संकेत सहकारेण = सलाम करते हुए यथा निर्दिष्टस्थान मलंच-कार = बताये हुए स्थान को अलकृत किया, ततस्तु = इसके बाद, इतरगायकेषु = अन्य गायकों के, सगर्व = गर्व के साथ, सासूयं = ईर्ष्या के साथ, सक्षोभं = क्षोभ के साथ, सचक्षुर्विस्फारणं = आँखें फाड़-फाड़ कर, सशिरः परिवर्तनं च = सिर हिला हिला कर, तमालोकयत्सु = तानरंग को देखने पर, अफजल खानेन सह = अफजल खाँ के साथ, तस्त एवमभूदालापः = तानरंग की इस प्रकार बातचीत हुई।

हिन्दी—

तानरंग तानपूरा हाथ में लिये हुए उसी बालक के साथ धीरे-धीरे प्रवेश करके पहले, दूसरे और तीसरे दरवाजे को पार करके, किसी को मृदङ्ग के स्वरों को साधते हुए, किसी को सितार का खोल निकाल कर उसके डण्डे को पोंछ कर मिजराफ पहनते हुए, किसी को बाँसुरी

का स्वर अविचल है, इसके साथ अन्य बाजों को मिलाओ यह कहते हुए, किसी को साज-सँवर कर पैरों में नूपुर पहनते हुए, किसी को कन्धे पर लटकी हुई झोली से करताल निकालते हुए, किसी को कान पर दाहिना हाथ रखकर, आँखें मूंद कर, नाक सिकोड़ कर, घुटनों के बल बैठकर, बांया हाथ फैलाकर वीणा के स्वर के साथ अपने स्वर को मिलाते हुए, सामने, पीछे तथा अगल-बगल में बैठे हुए कुछ ताम्बूल वाहकों, हाथ में पीकदान लिये हुए लोगों, लगातार चँवर डुलाते हुए आदमियों और हाथ जोड़े हुए खड़े चापलूस नौकरों से घिरे हुए, सिर पर रत्न जटित टोपी लगाये हुए, सोने के तारो से कढ़े अनेक फूलों, कलियों एव बेल बूटो वाली अचकन पहने हुए, गोद में बहुत बड़ी सी मसनद रखे तथा उस पर अपने दोनो हाथ रखे हुए, चादी के पलंग पर अत्यधिक फेन से फेनिल क्षीरसागर की शोभा को तिरस्कृत कर रहे गद्दे पर बैठे हुए अफजल खा को देखा।

इसके बाद तानरंग की चमक दमक से चमत्कृत होकर सबके आइये, आइये, बैठिये-बैठिये, यह कहने पर तानरंग ने भी दाहिने हाथ से सलाम करके, उनके द्वारा बताये हुए आसन को सुशोभित किया।

अन्य गायकों के गर्व ईर्ष्या, क्षोभ और निन्दा के साथ आँखे फाड़-फाड़ कर, सिर हिला हिलाकर तानरग को देखने पर, अफजल खां के साथ तानरंग की इस प्रकार बात चीत हुई।

अपजलखानः—किन्देशवास्तव्यो भवान् ?

तानरङ्गः—श्रीमन् ! राजपुत्रदेशीयोऽहमस्मि।

अपजल०—ओः ! राजपुत्रदेशीयः ?

तान०—आम् ! श्रीमन् !

अप०—तत् कथमत्र महाराष्ट्रदेशे ?

तान०—सेनापते ! मम देशाटन-व्यसनं मां देशाद्देश पर्यटयति ।

अप०—आ ! एवम् ! तत्किं प्रायः पर्य्यटति भवान् ?

तान०—एवं चमूपते ! नव्यान् देशानवलोकयितुम्, नवा नवा भाषा अवगन्तुम्, नूतना नूतना गान-परिपाटीश्च कलयितुम् एधमान-महाभिलाष एव जनः ।

अप०—अहो ! ततस्तु वहुदर्शी वहुज्ञश्च भवान् । अथ वङ्गदेशे गतो भवान् ? श्रूयतेऽतिवैलक्षण्य तद्देशस्य ।

तान०—सेनापते ! वर्षत्रयात्पूर्वमहं काश्यां गङ्गायां संस्नाय, उज्जयिनी-देशीय-क्षत्रिय-कुलालङ्कृतं भोजपुरदेशमालोक्य, गङ्गागण्डक-तटोपविष्टं हरिहरनाथं प्रणम्य, विलासि-कुल-विलसितं पाटलिपुत्र-पुरमुल्लङ्घ्य, सीताकुण्ड-विक्रमचण्डिकादि-पीठ-पटल-पूजितं विक्रम-यशःसूचक-दुर्गविशेष-शोभितं देवधुनी-तरंग-क्षालित-प्रान्तं मुद्गलपुरं निरीक्ष्य, कर्ण-दुर्ग-स्थानेन तद्यशोमहामुद्रयेवाङ्कितमंगदेशं दिनत्रयमध्युष्य, अतिवर्द्धमानवैभवं वर्द्धमान-नगरं च सम्यक् समालोक्य, यथोचित-सम्भारैस्तारकेश्वरमुपस्थाय, ततोऽपि पूर्वं वङ्गदेशे, पूर्ववङ्गेऽपि च चिर-महमटाट्यामकार्षम् ।

श्रीधरी—अपजलखानः=अफजल खां ने कहा, किन्देश वास्तव्योभवान्=आप किस देश के निवासी हैं । तानरंगः=तानरंग ने कहा, श्रीमन् राजपुत्र देशीयोऽहमस्मि=मैं राजपूताने का रहने वाला हूँ, अपजलखानः=अफजल खां ने कहा,—ओः, राजपुत्र देशीयः=ओह, राजपूताने के, तानरंगः=तानरंग ने कहा, आम् श्रीमन्=हाँ श्रीमन्, अपजलखानः=अफजल खां ने कहा, तत् कथमत्र महाराष्ट्र देशे=यहाँ महाराष्ट्र देश में कैसे आगमन हुआ । तानरंगः=तानरंग ने

कहा, सेनापते=सेनापति जी, मम देशाटन व्यसनं=मेरा घूमने का शौक, मां=मुझको, देशाद्देशं पर्याटयति=एक देश से दूसरे देश में घूमाता रहता है। अफजलखान:=अफजल खां ने कहा, आ, एवम्=ओह, ऐसा, तत्किं=तो क्या, प्रायः पर्यटति भवान्=आप प्रायः घूमते रहते हैं। तानरंगः=तान रंग ने कहा, एवं चमूपते=हां सेना पति जी, नव्यान् नव्यान् देशानवलोकयितुम्=नये नये देशों को देखने की। नवा नवा भाषा अवगन्तुम्=नयी नयीं भाषाओं को जानने, नूतना नूतना गानपरिपाटीश्च=नयी नयी गाने की शैलियों को, कलयितुं=सीखने की। एषमान महाभिलाष एष जनः= मुझे बड़ी शौक है। अफजलखानः=अफजल खां ने कहा, अहो, ततस्तु वहुदर्शी वहुज्ञश्च भवान्=आपने बहुत कुछ देखा सुना है। अथ वङ्गदेशे गतो भवान्=क्या आप वङ्गाल देश में भी गये हैं। श्रूयते अतिवैलक्षण्यं तद्देशस्य=सुना है वह देश बड़ा अद्भुत है। तानरंगः=तानरंग ने कहा। सेनापते=सेनापति जी, वर्षत्रयात्पूर्वमहं=तीन वर्ष पहले मैंने, काश्यां गङ्गायां संस्नाय=काशी में गंगा में नहा कर, उज्जयिनीदेशीय=उज्जेन देश के। क्षत्रिय कुलालंकृत=क्षत्रिय वंशों से अलकृत, भोजपुर देशमालोक्य=भोजपुर देश को देखकर गङ्गा गण्डक तटोपविष्टं=गङ्गा और गण्डक नदियो के तट पर स्थित, हरिहरनाथं प्रणम्य=भगवान् हरिहर नाथ को प्रणाम करके, विलासि कुल विलसितं=विलासी लोगो से शोभित, पाटलिपुत्रपुर मुल्लघ्य=पटना नगर को पार करके, सीताकुण्ड विक्रम चाण्डिकादि-पीठ पटल पूजित=सीताकुण्ड, विक्रम चण्डिका प्रभृति पीठों से पूजित, विक्रम यशः सूचक-दुर्गविशेष-शोभितं=विक्रमादित्य की कीर्ति के परिचायक किलों से शोभित, देवधुनी- तरङ्ग क्षालित प्रान्तं=गंगा की लहरों से धुले प्रान्त वाले, मुद्गलपुर निरीक्ष्य=मुंगेर नगर को देखकर, कर्णदुर्ग स्थानेनतद्यशोमहामुद्रयेवाङ्कितमंगदेशं दिनत्रयमध्युष्य=कर्ण दुर्ग से कर्ण

की मुद्रा से अंकित अंग देश में तीन दिन तक रहकर, अतिवर्धमान वैभवं वर्धमान नगरं च=महा समृद्धिशाली वर्धमान नगर को भी, सम्यक् समालोक्य=अच्छी तरह देखकर, यथोचित सम्भोरैः=समुचित सामग्री से, तारकेश्वर मुपस्थाय=भगवान् तारकेश्वर की पूजा करके, ततोऽपि पूर्वं=उससे भी पूर्व में स्थित, वंग देशे=बंगाल में पूर्व वंगेऽपि च=पूर्वी बंगाल में भी, अहं=मैंने चिर=बहुत समय तक, अटाय्यां अकार्षम्=भ्रमण किया है।

हिन्दी—

अफजल खाँ—आप किस देश के निवासी हैं?

तानरंग—श्रीमन्! मैं राजपूताने का निवासी हूँ।

अफजल खाँ—ओह! राजपूताने के?

तानरंग—हाँ, श्रीमन्।

अफजल खाँ—यहाँ महाराष्ट्र देश में कैसे आगमन हुआ?

तानरंग—श्रीमन्! अपने घूमने के शौक के कारण मैं एक देश से दूसरे देश में घूमता रहता हूँ।

अफजल खाँ—ओह, ऐसा? तो क्या आप घूमते ही रहते हैं।

तानरंग—हाँ श्रीमन्! नये नये देशों को देखने, नयीं नयी भाषाओं को जानने तथा नयी नयी गाने की शैलियों को सीखने का मुझे बड़ा चाव है।

अफजल खाँ—तब तो आपने बहुत कुछ देखा सुना है। क्या आप बंगाल भी गये हैं? सुना है वह देश बड़ा अनोखा है।

तानरंग—श्रीमन्! तीन वर्ष पूर्व मैंने काशी में गंगा में स्नान करके, उज्जैन के क्षत्रियों से युक्त भोजपुर देश को देख कर, गंगा और गण्डक नदियों के तट पर स्थित भगवान् हरिहार नाथ को प्रणाम

करके, विलासी लोगों से सुशोभित पटना नगर को पार करके, सीता कुण्ड, विक्रम चण्डिका आदि पवित्र पीठों से पूजित, वीर विक्रमादित्य की कीर्ति कौमुदी के परिचायक दुर्गों से सुशोभित, गंगा की पावन लहरों से धुले हुए मुंगेर नगर को देखकर, वर्ण दुर्गस्था रूपी महारथी कर्ण की मोहर से अंकित अंगदेश में तीन दिनों तक रहकर, महा समृद्धिशाली वर्धमान नगर को भी अच्छी तरह से देख कर, पूजोचित सामग्री से भगवान तारकेश्वर की पूजा करके, उससे भी पूर्व में स्थित बंगाल में तथा पूर्वी बंगाल में बहुत दिनों तक भ्रमण किया है।

अप०—किं किं किं पूर्ववंगेऽपि ?

ताल०—आम् श्रीमन् ! पूर्व वंगमपि सम्यगवालुलोकदेष जनः, यत्र प्रान्त-प्ररूढां पद्मावलीं परिमर्दयन्ती पद्मेव द्रवीभूता पयः-पूर-प्रवाह-परम्पराभिः पद्मा प्रवहति, यत्र ब्रह्मपुत्र इव शत्रुसेना-नाशन-कुशलः ब्रह्म-देशं विभजन् ब्रह्मपुत्रो नाम नदो भूभागं क्षालयति, यत्र साम्ल-सुमधुर-रस-पूरितानि फूत्कारोद्धतभूति-ज्वलदंगार-विजित्वर-चरणानि जगत्प्रसिद्धानि नारंगाण्युद्भवन्ति, यद्देशीयनां जम्बीराणां रसालानां तालानां नारिकेलानां खर्जूराणां च महिमा सर्वदेश-रसज्ञानां साम्रेडं कर्णं स्पृशति, यत्र च भयंकराऽऽवर्त-सहस्राऽऽकुलासु स्रोतस्वतीषु सहोहोकारं क्षेपणीः क्षिपन्तः, अरित्रं चालयन्तः, बडिशं योजयन्तः, कुवेणीस्थ-म्रियमाणमत्स्य-परीवर्त्तनालोकमानन्दन्तः, अदृष्टतटेष्वपि महाप्रवाहेषु स्वल्पया कूष्माण्ड-फलिकाकारया नौकया भिन्नाञ्जन-लिप्तइव मसी-स्नाता इव साकाराः अन्धकारा इव काला धीवर-बाला निर्भयाः क्रीडन्ति। महत धातु इमानिच प्रत्यय

श्रीधरी—अफजल खानः=अफजल खाँ ने कहा, किं किं पूर्व-वंगेऽपि=क्या-क्या पूर्वी बंगाल में भी, तानरंगः=तानरंग ने कहा,

आम् श्रीमन्=हां श्रीमान्, पूर्वबंगमपिसम्यगवालुलोकदेष जनः=पूर्वी बंगाल को भी मैंने अच्छी तरह देखा है, यत्र=जहाँ, प्रान्तप्ररूढां=किनारे पर उगी हुई, पद्मावलीं पन्मिर्दयन्ती=कमलों की पंक्ति को मसलती हुई। पद्मे व द्रवीभूता=जल रूप में परिणत हुई लक्ष्मी के समान पयः पूर प्रवाह परम्पराभिः=जल के प्रवाह से लबालब भरी हुई, पद्मा=पद्मा नाम की नदी, प्रवहति=वहती है। यत्र=जहाँ, ब्रह्मपुत्र इव=ब्रह्मपुत्र नामक विष के समान, शत्रुसेना नाशव-कुशलः=शत्रु सेना का नाश करने में निपुण, ब्रह्मदेशं विभजन्=वर्मा देश को भारत से अलग करता हुआ, ब्रह्मपुत्रोनाम नदो=ब्रह्मपुत्र नाम का नद, भू-भाग क्षालयति=पृथ्वी को सींचता हैं, यत्र=जहाँ, साम्ल-सुमधुर रसपूरितानि=खट्टे और मीठे रस से भरे हुए, फूत्कारोद्धूत भूति-ज्वलदङ्गार-विजित्वर वर्णानि=राख उड़ाये हुए धधकते अंगारों के समान वर्ण वाले, जगत्प्रसिद्धानि=संसार प्रसिद्ध, नारङ्गाण्युद्भवन्ति=नारंगियां उत्पन्न होती हैं। यद्देक्षीयानां=जिस देश के, जम्बीराणां=नींबू, रसालानां=आम, तालानां=ताड़, नारिकेलानां=नारियल खर्जूराणां च महिमा=खजूरों की महिमा, सर्वदेश रसज्ञानां=सब देश के रसिकों के, कर्णं=कान को, साम्रेडं स्पृशति=बार-बार स्पर्श करती है। यत्र च=जहाँ, भयंकरावर्त सहस्राकुलासु=हजारों भंवरों से भरी हुई, स्रोतस्वतीषु=नदियों में, सहोहोकारं=हों हो की आवाज करते हुए, क्षेपणी क्षिपन्तः=डाँड़ डालते हुए, अरित्रं चालयन्तः=पतवार चलाते हुए। वडिशंयोजयन्तः=वंशी डालते हुए, कुवेणीस्थ=जाल में, म्रियमाण=मरती हुई, मत्स्य परीवर्तान् आलोकमालोकमानन्दतः=तड़फड़ाती हुई मछलियों को देख-देखकर आनन्दित होते हुए, अदृष्ट तटेष्वपि=जिनके किनारे नहीं दिखाई देते, महाप्रवाहेषु=महाप्रवाहों में, स्वल्पया=छोटी सी, कूष्माण्डफक्किका-कारया=कुमड़े की फांक के आकार की, नौकया=नाव से, भिन्ना-

ञ्जनलिप्ता इव = पिसे हुए अञ्जन से पुते हुए से, मसीस्नाता इव = स्याही से नहाये हुए से, साकारा अन्धकारा इव = मूर्तिमान अन्धकार के समान, काला धीवर वालाः = काले धीवरों के बच्चे, निर्भयाः सञ्चरन्ति = निर्भयता के साथ विचरण करते हैं।

हिन्दी—

अफजलखाँ—क्या, क्या पूर्वी बंगाल में भी ?

तानरंग—हाँ हुजूर ! मैंने पूर्वी बंगाल को भी अच्छी तरह से देखा है। जहां किनारे पर उगी हुई कमलों की पंक्ति को अपने प्रवल प्रवाह से मसलती हुई, जल रूप में परिणत हुई लक्ष्मी के समान, पद्मा नामक नदी बहती है, जहाँ ब्रह्मपुत्र नामक विष के समान शत्रु सेना का विनाश करने में निपुण ब्रह्मपुत्र नाम का नद बर्मा देश को भारत से पृथक् करता हुआ भूमि को सींचता है, जहाँ खट्टे, मीठे रस भरे, राख उड़ाये हुए धधकते अंगारों की शोभा को भी जीतने वाले सन्तरे उत्पन्न होते हैं, जहाँ के नींबू, आम, ताड़, नारियल और खजूरों का नाम सभी देशों के रसिकों के कान में बार-बार पड़ता है, जहाँ हजारों भयंकर भंवरों से भरी नदियों में हो-हो की आवाज करते हुए, डाँड़ डालते हुए, पतवार चलाते हुए, वंसी डालते हुए, तथा जाल में फँसी हुई तड़फड़ाती हुई मछलियों को देख-देख कर असीम आनन्द का अनुभव करते हुए, जिनके तट भी दृष्टिगोचर नहीं होते ऐसे महा प्रवाहों में भी छोटी सी कुंभड़े की फाँक के आकार की नाव से, पिसे हुए अञ्जन से पुते से, स्याही से, नहाये हुए से, मूर्तिमान अन्धकार के समान काले धीवरों के बच्चे निर्भय होकर विचरण करते हैं।

अफ०—[स्वयं हसन्, सर्वांश्च हसतः पश्यन्] सत्यं सत्यम् !! धन्यो भवान्, योऽल्पेनैव वयसैवं विदेश-भ्रमणैः चातुरीं कलयति।

तान०—धन्य एव यदि युष्मादृशैरभिनन्द्ये !

अप०—(क्षणानन्तरम्) अथ भवान् मूर्छना-प्रधानं गायति, तान-प्रधानं वा ?

तान०—ईदृक्षं तादृक्षञ्च।

अप०—(क्षणानन्तरम्) अस्तु, आलप्यतां कश्चन रागः।

तान०—(किञ्चिद् विचार्य) आज्ञा चेदेकां राग-माला-गीतिं गायामि, यत्र प्रत्याभोगं नवीन एव रागो भवेदेकेनैव च ध्रुवेण संगच्छेत, तत्तद्राग-नामानि च तत्रैव प्राप्येरन्।

अप०—आः! किमेवम्? ईदृशं तु गानं न प्रायः श्रूयते, तद् गीयताम्।

ततस्तानपूरिकायाः स्वरान् संमेल्य पातित-वाम-जानुः तान-पूरिका-तुम्बं क्रोडे निधाय दक्षपादस्योत्थितजानुनि च दक्ष-हस्त-कूर्पर-स्थापन-पुरःसरं तेनैव हस्तेन तर्जन्यङ्गुल्या तानपूरिकां रणयन् स्वकण्ठेनापि त्रीन् ग्रामान् सप्त स्वरांश्च समवात्। तन्मात्रश्रवणेनैव मुग्धेष्विवाखिलेषु इमां राग–माला-गीतिमगायत्—

श्रीधरी—अपजलखानः=अपजल खाँ ने। स्वयं हसन्=अपने आप हँसता हुआ। सर्वांश्च हसतः पश्यन्=सब को हँसता हुआ देखकर कहा। सत्यं-सत्यम्=सच है, सच है। धन्योभवान्=आप धन्य हैं। यो अल्पेनैव वयसा=जिसने इतनी कम अवस्था में ही। विदेश भ्रमणैः=विदेशों में घूमने से। चातुरीं कलयति=चतुरता सीख ली। तानरङ्गः=तानरंग ने कहा। धन्यएव यदि युष्माभिरभिनन्द्ये=यदि आप जैसे लोग मेरी प्रशंसा करते हैं, तो निश्चय ही मैं धन्य हूँ। अफजलखानः=अफजल खाँ ने। क्षणानन्तरं=थोड़ी देर बाद कहा। अथ भवान् मूर्छना प्रधानं गायति तान प्रधानं वा=अच्छा, आप मूर्छना प्रधान गाते हैं या तान प्रधान। तानरंगः=तानरंग ने कहा। ईदृक्षं तादृक्षं

च=मूर्छना प्रधान भी और तान प्रधान भी। अपखलखान:=अफखल खां ने। क्षणानन्तरं=थोड़ी देर बाद कहा। अस्तु आलप्यतां कश्चन रागः = अच्छा, कोई राग अलापिये। तानरंग:=नानरंग ने। किञ्चित विचार्य =कुछ सोच कर कहा। आज्ञाचेद्=आज्ञा हो तो। एकांरागमाला गीतिं =एक राग माला गीत। गायामि=गाऊँ। यत्र=जिसमें। प्रत्याभोगं =प्रत्येक गेम खण्ड में। नवीन एव रागो भवेत्=नया ही राग होगा। एकेनैव च ध्रुवेण संगच्छेत=एक ही ध्रुव पद से मिलेंगे। तत्तद्राग-नामानि च=उन सभी रागों के नाम भी। तत्रैव-प्राप्येरन्=उन्ही में आ जायेंगे। अपजलखान:=अफजलखाँ ने कहा। आः किमेवम्=ओह, क्या ऐसा। ईदृशंतु गानं=ऐसा गाना तो। प्रायः न श्रूयते=प्रायः सुनने में नही आता। तद् गीयताम्=अच्छा, गाइये।

। ततः=इसके बाद। तानपूरिकायाः स्वरान् समेल्य=तानपूरे के स्वरों को मिला कर। पातितो वाम जानुः=बांयां घुटना टेक कर। तानपूरिका तुम्बं क्रोडे संस्थाप्य=तानपूरे की तूंबी को गोद में रखकर। दक्षपादस्योत्थित जानुनि च=दाहिने पैर के उठे हुए घुटने पर। दक्ष-हस्तकूर्पर स्थापन पुरः सर=दाहिने हाथ की कुहनी रख कर। तेनैव-हस्तेन=उसी हाथ से। तर्जन्यङ्गुल्या=तर्जनी अँगुली से। तानपूरिकां रणयन्=तानपूरे को बजाता हुआ। स्वकण्ठेनापि=अपने कण्ठ से भी। त्रीन ग्रामान् सप्तस्वराश्च समवात्=तीन ग्रामों और सप्त स्वरों को साधा। तन्मात्र श्रवणेनैव=इतना सुनते ही। मुग्धेष्विवाखिलेषु=सब के मुग्ध हो जाने पर। इमां रागमाला गीतिं अगायत्=इस राग माला गीत को गाया।

हिन्दी—

अफजलखाँ—(अपने आप हँसता हुआ तथा अन्य लोगों को हँसता देखकर) सच है, सच है। आप धन्य हो जिसने इतनी कम अवस्था में ही, इस तरह विदेशों में भ्रमण करके इतनी चतुरता सीख ली।

तानरंग—जब आप जैसे लोग मेरी प्रशंसा करते है तो निश्चय ही मैं धन्य हूँ।

अफजल खाँ—(थोड़ी देर बाद) अच्छा, आप मूर्च्छना प्रधान गाते है या तान प्रधान?

तानरंग—मूर्च्छना प्रधान भी और तान प्रधान भी।

अफजल खाँ—(क्षण भर रुक कर) अच्छा, कोई राग अलापिये।

तानरंग—(कुछ सोच कर) यदि आज्ञा हो तो एक रागमाला गीत सुनाऊँ, जिसमें गीत के प्रत्येक चरण में एक नया ही राग होगा और वे सब एक ही ध्रुव पद से मिलेंगे। उसी में उन सभी रागों के नाम भी आ जायेंगे।

अफजल खाँ—ओह, ऐसा! इस प्रकार का गाना तो प्रायः सुनने में नही आता। अच्छा, गाइये।

इसके बाद तानपूरे के स्वरों को मिला कर, बांयां घुटना टेक कर, तानपूरे की तूंबी को गोद में रखकर, दाहिने पैर के उठे हुए घुटने पर दाहिने हाथ की कोहनी रखकर उसी हाथ की तर्जनी अंगुली से तानपूरे को बजाते हुये तानरंग ने अपने कण्ठ से भी तीन ग्रामों और सप्त स्वरों को अलापा। इतना सुनते ही सब के मुग्ध हो जाने पर उसने इस रागमाला नायक गीत को गाया।

सखि हे नन्द-तनय आगच्छति। सखि० ॥
मन्दं मन्दं मुरली-रणनैः समधिक-सुखं प्रयच्छति ॥
भैरव-रूपः पापिजनानां सतां सुख-करो देवः।
कलित-ललित-मालती-मालिकः सुरवर-वाञ्छित-सेवः ॥
सारंगैः सारंग-सुन्दरो दृग्भिर्निपीयमानः।
चपला-चपल-चमत्कृति-वसनो विहित-मनोहर-गानः ॥

श्रीव लाञ्छितो हृदये श्रीलः श्रीदः श्रीशः ।
सर्वश्रीभिर्युतः श्रीपतिः श्री-मोहनो गवीशः ॥
गौरी—पतिना सदा भावितो बर्हिण-वर्ह-किरीटः ।
कनककशिपु-कदनो बलि-मथनो विहत-दशानन-कीटः ॥

श्रीधरी—हे सखि नन्दतनय=नन्दकुमार श्रीकृष्ण । आगच्छति =आ रहे है । मन्दं मन्दं मुरलीरणनैः=मुरली की मन्द-मन्द ध्वनि से । समधिक=अत्यधिक । सुख प्रयच्छति=आनन्द प्रदान कर रहे है । पापिजनानां=पापी लोगो के लिये । ये भगवान्, भैरवरूप=भयङ्कर है । सतां=सज्जनो को । सुखकरो देवः=भगवान् कृष्ण सुख प्रदान करने वाले है । कलित-ललित-मालती-मालिकः=उन्होने सुन्दर मालती के फूलो की माला पहन रखी है । सुरवर वाञ्छित सेवः=श्रेष्ठ देवता लोग भी इनकी सेवा करने को लालायित रहते है । सारंग-सुन्दरः= कामदेव के समान सुन्दर श्रीकृष्ण को । सारङ्गैः=हरिणो के द्वारा । दृग्भिर्निपीयमानः=एकटक दृष्टि मे देखा जा रहा है । चपला-चपल-चमत्कृति वसनो=उनके वस्त्र बिजली के समान चमक रहे है । विहित मनोहर गान=वे मन को हरण करने वाला गाना गा रहे है । श्रीवत्सेन लाञ्छितो हृदये=उनका वक्षः स्थल श्रीवत्स नामक चिह्न मे सुशोभित है । श्रीलः=वे श्रीमान् है । श्रीद=धन सम्पत्ति को देने वाले है । श्रीशः=लक्ष्मी के स्वामी है । सर्वश्रीभिर्युत==सारी शोभाओ से युक्त है । श्रीपतिः=लक्ष्मी के पति है । श्रीमोहन=लक्ष्मी को मोहित करने वाले है । गवीशः=वेद वाणी के आविष्कारक या गायो के पालक है । गौरी पतिना सदा भावितः=भगवान् शङ्कर सदा उनका ध्यान करते है । वर्हिण-वर्ह-किरीट.=वे मोर पख का मुकुट धारण करते है । कनककशिपु-कदनः=वे हिरण्य कश्यपु का नाश करने वाले । बलि-मथनः=बालि का विध्वस करने वाले तथा । विहतदशानन कीटः= रावण रूपी कीडे को मारने वाले है ।

हिन्दी—

हे सखि ! नन्दकुमार श्रीकृष्ण आ रहे हैं। वंशी की मन्द-मन्द ध्वनि से वे अत्यधिक आनन्द प्रदान कर रहे हैं। ये भगवान् श्रीकृष्ण पापी मनुष्यों के लिये भयङ्कर और सज्जनों को सुख प्रदान करने वाले हैं। इन्होंने सुन्दर मालती के फूलों की माला पहन रखी है। श्रेष्ठ देवता लोग भी इनकी सेवा करने के लिये उत्कण्ठित रहते हैं। कामदेव के समान सुन्दर श्रीकृष्ण को हरिण एक दृष्टि से देख रहे हैं। उनके वस्त्र बिजली की कान्ति के समान चमकीले हैं, वे मन को हरण करने वाला गाना गा रहे हैं, उनके हृदय पर श्रीवत्स नामक चिह्न अंकित है, वे श्रीमान् हैं, वन-सम्पत्ति को प्रदान करने वाले हैं, लक्ष्मी के स्वामी हैं, समग्र शोभाओं से युक्त हैं, लक्ष्मी के पति हैं, लक्ष्मी को मोहित करने वाले हैं तथा वेद वाणी के आविष्कारक व गायों का पालन करने वाले हैं। भगवान् शङ्कर सदा उनका ध्यान किया करते हैं। वे मोर पंखों का मुकुट धारण करते हैं। वे हिरण्यकश्यपु को मारने वाले, बलि का विध्वंस करने वाले तथा रावण रूपी कीड़े को मारने वाले हैं।

अथ एतावदेव श्रुत्वा अतितरां प्रसन्नेषु पारिषदेषु, ससाधुवादं वितीर्णकङ्कणे च अपजलखाने, तानरंगोऽपि सप्रसादं तानपूरिकां भूमौ संस्थाप्य अपजलखानस्य गुणग्राहितां प्रशशंस।

अथ अपजलखानः क्रमशो मैरेय-मद-परवशतां वहन् उवाच—यत् कथ्यतामस्मिन् प्रान्ते भवादृशानां गुण-ग्राहकाः के सन्ति ? के वा कवितायाः संगीतस्य च मर्मावगच्छन्ति ?

ततस्तानरंगोऽचकथत्—को नामापरः शिववीरात् ? स एव राजनीतौ निष्णातः स एव सैन्धवाऽऽरोह-विद्या-सिन्धुः, स एव चन्द्र-हास-चालने चतुरः, स एव मल्ल-विद्या-मर्मज्ञः, स एव बाण-विद्या-वारिधिः, स एव पण्डित-मण्डल-मण्डनः, स एव धैर्य-धारि-धौरेयः, स

एव वीर-वार-वरः, स एव पुरुष-पौरुष-परीक्षकः, स एव दीन-दुःख-दाव-दहनः, स एव स्वधर्मरक्षण-सक्षणः, स एव विलक्षण-विचक्षणः, स एव च मादृश-गुणि-गण-गुण-ग्रहणाऽऽग्रही वर्तते ।

अथ अपजलखाने—"तत् किं शिव एव एवं गुण-गण-विशिष्टोऽस्ति ? एवं वा वीर-वरोऽस्ति ?" इति सचकितं सनयं सतर्क-सरोमोद्गमं च कथयति, किञ्चिद् विचार्यैव नीति-कौशल-पुरःसरं गौरः पुनरवादीत् ।

श्रीधरी—अथ एतावदेव श्रुत्वा=इतना ही सुनकर, पारिषदेषु=सभासदों के । अतितरां प्रसन्नेषु=अत्यन्त प्रसन्न हो जाने पर । ससाधुवादं=शाबाशी के साथ । वितीर्णे कङ्कणे च अपजलखाने=अफजल खाँ के द्वारा कङ्कन पुरस्कार में देने पर । तानरंगोऽपि=तानरंग ने भी । सप्रसादं=प्रसन्न होकर । तानपूरिकां भूमौसंस्थाप्य=तानपूरे को भूमि पर रख कर । अपजलखानस्य गुणग्राहितां प्रशशंस=अफजल खाँ की गुणग्राहकता की प्रशंसा की ।

अथ=इसके बाद । क्रमशः मैरेय-मद-परवशतां वहन्=शराब के नशे में चूर होता हुआ । अपजलखानः उवाच=अफजल खाँ बोला । यत्=कि । कथ्यतां=कहिये । अस्मिन् प्रान्ते=इस प्रान्त में । भवादृशानां=आप जैसे लोगों के । के गुण ग्राहकाः सन्ति=गुण ग्राहक कौन हैं । के वा=और कौन । कवितायाः संगीतस्य च=कविता और संगीत के । मर्मविगच्छन्ति=मर्म को जानते हैं । ततः=तब । तानरंगोऽब्रकथत्=तब तानरंग ने कहा । कोनामापर शिववीरात्=शिवाजी को छोड़कर और कौन ऐसा है । स एव=वे ही । राजनीतौ निष्णातः=राजनीति में निपुण हैं । स एव सैन्धवाऽऽरोह विद्या-सिन्धुः=वे ही घुड़सवारी की विद्या के सागर हैं । स एव चन्द्रहास चालने चतुरः=वे ही तलवार चलाने में कुशल हैं । स एव मल्लविद्या मर्मज्ञः=वे ही मल्ल

विद्या के मर्मज्ञ हैं। स एव वाण विद्या मर्मज्ञः = वे ही वाण विद्या के जानकार हैं। स एव पण्डित मण्डल-मण्डनः = वे ही पण्डित मण्डली की शोभा हैं। स एव धैर्य धारि धौरेयः = वे ही धैर्य शालियों में अग्र-गण्य हैं। स एव पुरुष पौरुष परीक्षकः = वे ही पुरुषों के पुरुषार्थ के पारखी हैं। स एव दीन दुःख-दाव-दहनः = वे ही दीनों के दुःख रूपी जंगल की अग्नि हैं। स एव स्वधर्म रक्षण सक्षणः = वे ही अपने धर्म की रक्षा करने में सक्षम हैं। स एव विलक्षण विचक्षण = वे ही अनोखे विद्वान् हैं। स एव मादृश गुणि-गण-गुण-ग्रहणाग्रही वर्तते = वे ही मुझ जैसे गुणियों के गुण ग्राहक हैं। अथ = इसके बाद। अफजलखाने = अफ-जल खाँ के। तत्किं = तो क्या। शिवएष = यह शिवाजी। एवं गुण-गण विशिष्टोऽस्ति = इस प्रकार के गुणों से युक्त हैं। एवं वा वीरवरो-ऽस्ति = इतना वीर है। इति = इस प्रकार। सचकितं = आश्चर्य। सभयं = भय। सतर्क = अनुमान। स रोमोद्गमं च कथयति = रोमाञ्च के साथ कहने पर। किञ्चित् विचार्यैव = कुछ सोचकर। नीतिकौशल पुरःसरं = नीति कौशल के साथ। गौरः = गौरसिंह। पुनः अवादीत् = फिर बोला।

हिन्दी—

इतना सुन कर सभी सभासदों के अत्यधिक प्रसन्न हो जाने एवं अफजल खाँ के द्वारा प्रशंसा के साथ कंगन पुरस्कार में देने पर, तानरंग ने भी प्रसन्न होकर, तानपूरे को जमीन में रखकर अफजल खाँ की गुणग्राहकता की प्रशंसा की।

तदनन्तर क्रमशः शराब के नशे में मस्त होता हुआ अफजलखाँ बोला—कहिये इस प्रान्त में आप सरीखे कलाविदों के गुण ग्राहक कौन है? अथवा कविता या संगीत का मर्म जानने वाले कौन हैं?

उत्तर में तानरंग ने कहा—शिवाजी महाराज को छोड़ कर ऐसा कौन है? वे ही राजनीति में चतुर है। वे ही घुड़ सवारी की

विद्या के सागर हैं। वे ही मल्ल विद्या के मर्मज्ञ हैं। वे ही वाण विद्या के समुद्र हैं। वे ही पण्डित मण्डली की शोभा हैं। वे ही धैर्य धारियों में अग्रगण्य हैं। वे ही पुरुषों के पुरुषार्थ के परीक्षक हैं। वे ही दीनों के दुःखों को दूर करने वाले हैं। वे ही अपने धर्म की रक्षा करने में सक्षम हैं। वे ही अद्भुत विद्वान् हैं। वे ही हम जैसे कला विदों के गुण ग्राहक है।

इसके बाद अफजल खाँ ने कहा—तो क्या शिवाजी इस प्रकार के गुणों से युक्त और इतना वीर है? आश्चर्य, भय, अनुमान और रोमाञ्च के साथ ऐसा कहने पर, कुछ विचार सा करके नीति कौशल के साथ गौरसिंह ने फिर कहा—

भगवन्! सामान्य–राजभृत्यस्य पुत्रः शिववीरो यदि नाम नाभविष्यत्स्वयमीदृश ऊर्जस्वलः, तत्कथं स्वर्णदेव-सदृशं सहचरं प्राप्स्यत्? तद्द्वारा समस्तं कल्याण–प्रदेशं कल्याण–दुर्गं च स्वहस्तगत-मकरिष्यत्? कथं तोरण-दुर्ग–भोग–भाजनतामकलयिष्यत्? कथं तोरण-दुर्गाद् दक्षिण-पूर्वस्यां पर्वतस्य शिखरे महेन्द्र–मन्दिर-खण्डमिव धर्षितारि-वर्गं डमरु-हुड्डुक्कार-तोषित-भर्ग रायगढ़नामकं महादुर्गं व्यरचयिष्यत्? कथं वा तपनीयभित्तिका—जटित–महारत्न—किरणा-वली—वितन्यमान—महावितान–वितति-विरोचित-प्रताप-तापित-परि–पन्थि-निवहं चन्द्रचुम्बन-चतुर-चारु-शिखर-निकरं भुशुण्डिका-किणाङ्कित-प्रचण्ड-भुजदण्ड-रक्षक-कुल-विधीयमान-परस्सहस्र-परिक्रमं, धमद्धमद्दोधू-यमानानेक-ध्वज-पटल-निर्मथित-महाकाशं प्रताप-दुर्गं निरमापयिष्यत्? कथं वा 'आगत एष शिववीरः'–इति भ्रमेणापि सम्भाव्य अस्य विरो-धिषु केचन मूर्च्छिता निपतन्ति, अन्ये विस्मृत-शस्त्रास्त्राः पलायन्ते, इतरे महात्रासाऽऽकुञ्चितोदरा विशिथिल-वाससो नग्ना भवन्ति, अपरे च

शुष्कमुखा दशनेषु तृणं सन्धाय साश्रेडं प्रणिपात-परम्परा रचयन्तो जीवनं याचन्ते ।

श्रीधरी—भगवन् = श्रीमन्, सामान्यराजभृत्यस्य पुत्रः = राजकर्मचारी के पुत्र, शिव वीरः = शिवाजी, स्वयं ईदृशः ऊर्ज्वस्वलः नाभविष्यत् = स्वयं इतने तेजस्वी नहीं होते । तत्कथं = तो कैसे, स्वर्णदेव सदृशं सहचरं प्राप्स्यत् = स्वर्णदेव जैसे साथी को पाते, तद्द्वारा = उसके द्वारा, समस्तं कल्याण प्रदेशं = सारे कल्याण प्रदेश, कल्याण दुर्ग च = और कल्याण दुर्ग को, स्वहस्तगतमकरिष्यत् = अपने हस्तगत कर लेते । कथं = कैसे, तोरण दुर्ग-भोग भाजनतामकलयिष्यत् = तोरणदुर्ग को अपना भोग्य बना लेते । कथं = कैसे, तोरणदुर्गाद् = तोरण दुर्ग से, दक्षिण पूर्वस्यां पर्वत शिखरे = दक्षिण और पूर्व की ओर पहाड़ की चोटी पर, महेन्द्र मन्दिर खण्डमिव = इन्द्र भवन के एक भाग के समान, घर्षितारिवर्ग = शत्रुओं को डराने वाले, डमरू हुडुक्कार तोषित भर्ग = डमरू की ध्वनि से शङ्कर को प्रसन्न करने वाले, रायगढ़ नामकं = रायगढ़ नामक, महादुर्ग व्यरचयिष्यत् = महादुर्ग का निर्माण कर लेते । कथं वा = और कैसे, तपनीय-भित्तिका-जटित महारत्न-किरणावली-वितन्यमान-महावितान वितति विरोचित प्रताप तापित परिपन्थि निवहं = सोने की दीवारों पर जड़े हुए रत्नों की प्रभा से ताने हुए मण्डप के समान तेज से दुश्मनों को जलाने वाले, चन्द्र चुम्बन चतुर चारु-शिखर निकरं = अनेक चन्द्रचुम्बी शिखरों वाले, भुशुण्डिका किणाङ्कित प्रचण्ड-भुजदण्ड-रक्षक-कुल विधीयमान परस्सहस्र परिक्रम = बन्दूक पकड़ने से घट्टों वाले प्रबल हाथों वाले पहरे दारों से रक्षा किये जाने वाले, धमद्धमद्धोधूयकानानेक ध्वजपटल निर्मथित महाकाशं = फहराती हुई ध्वजाओं से महाकाश को मथने वाले, प्रतापदुर्ग निर्मापयिष्यत् = प्रताप दुर्ग का निर्माण कर पाते, कथं वा = कैसे, आगतंएव

शिववीरः = यह शिवाजी आ गये. इति भ्रमेणापिसम्भाव्य = यह भ्रम से भी समझ कर. अस्य विरोधिषु: = इनके विरोधियों में, केचन मूर्च्छिता निपतन्ति = कुछ लोग मूर्च्छित होकर गिर पड़ते हैं। अन्ये = कुछ, विस्मृत शास्त्रास्त्राः = अस्त्र शस्त्रों को भूल कर, पलायन्ते = भाग जाते हैं। इहरे = कुछ लोग, महात्रासाऽऽकुञ्चितोदरा = डर के कारण पेट के दुबले हो जाने से, विशिथिल वाससी = कपड़ों के ढीले हो जाने से. नग्ना भवन्ति = नंगे हो जाते हैं। अपरे च = और लोग, शुष्क-मुखा = सूखे मुख से, दशनेषु तृण सन्धाय = दांतों में तिनका दबाकर, साम्रेडं = बार-बार, प्रणिपात-परम्परा स्वयन्तों = प्रणाम करते हुए, जीवन याचन्ते = जीवन की भीख मांगते हैं।

हिन्दी —

श्रीमन् ! एक साधारण राजकर्मचारी के पुत्र होकर यदि शिवाजी स्वयं इतने तेजस्वी न होते तो स्वर्णदेव के समान साथी को कैसे प्राप्त कर पाते ? और उसके द्वारा सारे कल्याण प्रदेश और कल्याण दुर्ग को अपने अधिकार में कैसे कर पाते ? तोरण दुर्ग को अपना भोग्य कैसे बनाते ? तोरण दुर्ग से दक्षिण-पूर्व की ओर पहाड़ की चोटी पर स्थित इन्द्र भवन के एक भाग के समान दुश्मनों को भयभीत करने वाले, डमरू की ध्वनि से शंकर को प्रसन्न करने वाले रायगढ़ नामक महा दुर्ग का कैसे निर्माण करापाते ? सोने की दीवारों पर जड़े हुए महा रत्नों की प्रभा से उद्भसित दुश्मनों को जलाने वाले तथा-चन्द्रचुम्बी शिखरों वाले, बन्दूक पकड़नेमे घट्टे पड़े हुए बलशाली भुजाओं वाले पहरेदारों से रक्षित, फह-राती हुई ध्वजाओं से महाकाश मथने वाले प्रताप दुर्ग को कैसे बना पाते ? शिवाजी ये आगये, इस बात को भ्रमवश समझ कर भी इनके शत्रुओं में कुछ लोग मूर्च्छित होकर गिर पड़ते हैं। कुछ लोग अस्त्र-शस्त्रों को भूल कर भाग जाते है। कुछ डर से पेट सिकुड़ जाने से वस्त्रों के ढीले

हो जाने से नंगे हो जाते हैं। और कुछ लोग सूखे हुए मुख से दांतों में तिनका दबाकर, बार-बार प्रणाम करते हुए अपने जीवन की भीख मांगते हैं।

ततस्तस्य महाप्रतापमवगत्य किञ्चिद्भीते इव तच्छत्रूणां चावहेलामाकलय्य किञ्चिदरुण-नयने इव, दक्षिण-हस्ताङ्गुष्ठ-तर्जनीभ्यां श्मश्रुवग्रं परिमृजति यवन-सेनापतौ; तानरंगः पुनर्न्यवेदयत्—

परन्त्वद्य सिंहेन सह शिवस्य साम्मुख्यमस्ति, तन्मन्ये इयमस्तमनवेला तत्प्रतापसूर्यस्य।

तत् कर्णे कृत्वा संतुष्ट इव स्कन्धराकम्पं सेनापतिरुवाचअथात्र संग्रामे कस्य विजयः सम्भाव्यते ?

स उवाच—श्रीमन् ! यदि शिवस्य साहाय्यं साक्षाच्छिव एव न कुर्यात्; तद् विजयपुरस्यैव विजयः।

अथ सहासं सोऽब्रवीत्–को नाम खपुष्पायितः शशशृंगायितः कमठी-स्तन्यायितः सरीसृप–श्रवणायितःभेक–रसनायितः वन्ध्यापुत्रायितश्च शिवोऽस्ति ? य एनं रक्षिष्यति दृश्यतां च एवैषोऽस्माभिः पाशैर्बद्ध्वा चपेटैस्ताडयमानो विजयपुरं नीयते।

श्रीधरी—ततः=इसके बाद, तस्य=शिवाजी के, महाप्रतापमवगत्य=महाप्रताप को जानकर, किञ्चिद्भीते इव तच्छत्रूणां= उसके शत्रुओं कुछ डर सा जाने पर, अवहेलना माकलय्य च=शिवाजी के शत्रुओं की अवहेलना सुनकर, किञ्चिदरुणनयने इव=कुछ क्रुद्ध सा हो जाने पर, यवन सेनापतौ=अफजल खाँ के, श्मश्रवग्रं परिमजति= मूछों पर ताव देने पर, तानरंगः पुनर्न्यवेदयत्=तानरंग ने फिर कहा, परन्तु अद्य=लेकिन आज, सिंहेन सह=शेर के साथ, शिवस्य=शिवाजी

का, सामुख्य मस्ति=सामना है। तन्मन्ये=इस लिये सोचता हूँ। इयमस्तयनवेला तत्प्रताप सूर्यस्य:=उनके प्रताप रूपी सूर्य का अस्त होने का समय आ गया है।

तत् कर्णे कृत्वा=इस बात को सुनकर, सन्तुष्ट इव=सन्तुष्ट सा होकर, सकन्धराकम्पं=अपने कन्धों को कंपाकर, यवनसेनापति रुवाच=अफजल खाँ बोला, अथात्र संग्रामे=अच्छा इस युद्ध में, कस्य विजय: सम्भाव्यते=किसके विजय की सम्भावना है। स उवाच=तानरंग ने कहा—श्रीमन्, यदि शिवस्य साहाय्यं=यदि शिवाजी की सहायता, साक्षाच्छिव एव न कुर्यात्=स्वयं शंङ्कर जी ही न करें, तद् विजयपुर स्यैव विजय:=तो बीजापुर की ही विजय होगी, अथ=इसके बाद, सहास=हँसता हुआ, सोऽब्रवीत्=वह बोला, को नाम खपुष्पायित:=आकाश कुसुम के समान, शशशृगायित:=खरगोश के सींग के समान, कमठी स्तन्यायित:=कछुई के दूध सा, सरीसृप श्रवणायित:=साँप के कान के समान, मेक रसनायित:=मेढक की जीभ सा, वन्ध्यापुत्रायितश्च=बाँझ स्त्री के पुत्र सा, शिवोऽस्ति=शिव क्या है, य एनं रक्षिष्यति=जो इसकी रक्षा करेगा। दृश्यताँ=देखना, श्व एव=कल ही, एषोऽस्माभि:=यह शिवाजी हमारे द्वारा, पाशैर्बद्ध्वा=रस्सियों से बांध कर, चपेटैस्ताड्यमानो=थप्पड़ों से मारा जाता हुआ, विजयपुरं नीयते=बीजापुर ले जाया जायेगा।

हिन्दी—

तब शिवाजी के महाप्रताप को सुनकर, युगल सेनापति अफजल खाँ के कुछ डर सा जाने पर और शिवाजी के शत्रुओं की अवहेलना सुनकर कुछ क्रुद्ध से हो जाने पर और दाहिने हाथ के अंगूठे और तर्जनी अंगुली से मूछों पर ताव देने पर, तानरंग ने फिर से कहा—

किन्तु आज शेर के साथ शिवाजी का पाला पड़ा है, इस लिये सोचता हूँ कि यह उनके प्रताप सूर्य के अस्त होने का समय आ गया है। यह सुनकर सन्तुष्ट सा होकर अफजल खाँ ने कहा—अच्छा इस युद्ध में किसके विजय की सम्भावना है?

तानरंग ने कहा—श्रीमन्! यदि साक्षात् शङ्कर ही शिवाजी की सहायता न करें तो बीजापुर की विजय होगी।

तब हँसते हुए अफजल खाँ ने कहा—भला आकाश कुसुम सा, खरगोश के सींग सा, कछुई के दूध सा साँप के कान सा, मेंढक की जीभ सा और बाँझ स्त्री के पुत्र सा शङ्कर भी कोई वस्तु है जो शिवाजी की रक्षा करेगा। देखना, कल ही रस्सियों से बाँध कर थप्पडों से मारा जाता हुआ वह हमारे द्वारा बीजापुर को लेजाया जायेगा।

—इति सकष्टमाकर्ण्य, "स्यादेवं भगवान्!" इति कथयति तानरङ्गे, अभिमान-परवशः स स्वसहचरान् सम्बोध्य पुनरादिशत्-भो-भो योद्धारः! सूर्योदयात् प्रागेव भवन्तः पञ्चापि सहस्राणि सादिनां दशापि च सहस्राणि पत्तीनां सज्जीकृत्य युद्धाय तिष्ठत। गोपीनाथ-पण्डित-द्वाराऽऽहूतोऽस्ति मया शिव-नराकः। तद् यदि विश्वस्य स समागच्छेत्, ततस्तु बद्ध्वा जीवन्त नेष्यामः, अन्यथा तु सदुर्गमेनं धूलीकरिष्यामः। यद्यप्येवं स्पष्टमुदीरणं राजनीति-विरुद्धम्, तथाऽपि मदावेशस्तु न प्रतीक्षते विवेकम्।

तदत्रथार्य समस्तक-कूर्चान्दोलनम्—"यदाज्ञाप्यते यदाज्ञाप्यते" इति वाचां धारासंपातैरिव स्नापयत्सु पारिशदेषु, "गोपनीयोऽयं वृत्तान्तः कथं स्पष्ट कथ्यते?" इति दुर्मनायमानेष्विव च अकस्मा-देव प्रविश्य सूदेनोक्तम् "श्रीमन्! व्यत्येति भोजनसमयः"—तत् श्रुत्वा "आ! एवं किलैतत" इति सोत्प्रासं सविस्मयं सकूर्चोद्नधूननं सोपबर्हताडनमुच्चार्य

सपद्युत्थाय, "पुनरागम्यताम्" इति तानरंगं विसृज्य सेनापतिरन्तः प्रविवेश। तानरंगश्च यथागतं निववृते।

इतस्तु प्रतापदुर्गे विहिताहार-व्यापारे रजत-पर्य्यङ्किकामेकाम-धिष्ठिते किञ्चित् तन्द्रा-परवशे इव गोपीनाथे, शिववीरः शनैरुपसृत्य प्रणम्य, उपाविशदवोचच्च-अहो ! भाग्यमस्माकं यदालय युष्मादृशा भूदेवाः स्वचरणरजोभिः पावयन्ति-इति।

श्रीधरी—इति सकष्टमाकर्ण्य=इस बात को बडे कष्ट के साथ सुनकर, स्यादेवं भगवन्'''हो सकता है, ऐसा ही हो, इति कथयति तानरगे=तानरंग के ऐसा कहने पर, अभिमान परवशः=अभिमान के कारण. सः=अफजल खाँ ने, स्व सहचरान् सम्बोध्य=अपने साथियों को सम्बोधित करके, पुनरादिशत्=फिर आज्ञा दी, भो-भो योद्धारः= अरे योद्धाओ, सूर्योदयात् प्रागेव=सूर्योदय से पहले ही, पञ्चापि सहस्राणि सादिनां=पाँच हजार घुड़सवारों, दशापि च सहस्राणि पत्तीनां =दस हजार पैदल सैनिकों को, सज्जीकृत्य=सुसज्जित करके, युद्धाय तिष्ठत=युद्ध के लिये तैयार रहना, मया=मैंने, गोपीनाथ पण्डित द्वारा =गोपीनाथ पण्डित के द्वारा, आहूतोऽस्ति शिव वराकः=बेचारे शिवाजी को बुलाया है, तद् यदि विश्वस्य स समागच्छेत्=तो यदि वह विश्वास करके आ गया ततस्तु=तब तो, बद्ध्वाब=बाँध कर, जीवन्त नेष्यामः =जीवित ही ले चलेगे, अन्यथातु=नही तो, सुदुर्गमेनं=किले सहित उसे, धूली करिष्यामः=धूल में मिला देगे, यद्यपि एव=यद्यपि इस प्रकार, स्पष्टमुदीरणं=स्पष्ट कहना, राजनीति विरुद्ध=राजनीति के विरुद्ध है. तथापि=तो भी, मंदावेशस्तु=मेरा आवेश, न प्रतीक्षते विवेकम्=विवेक की परवाह नही करता. तदवधार्य=वह सुनकर, समस्त-ककूचीन्दोलनम्=सिर और दाढ़ी को हिला-हिलाकर, यदाज्ञाप्यते यदाज्ञा-प्यते=जैसी आज्ञा, जैसी आज्ञा, इति=इस प्रकार, वाचां धारासंपातैरिव

वर्णियों की मूसलाधार वृष्टि से मानो, स्नापयत्सु पारिषदेषु=सभासदों के नहलाने पर, गोपनीयोऽयं वृत्तान्तः कथं स्पष्टं कथ्यते=गोपनीय बात क्यों स्पष्ट कही जा रही है, इति दुर्मनाय मानेष्विव=यह सोच कर, नाराज सा होकर, अकस्मात्प्रविश्य=अचानक प्रविष्ट होकर, सूदेनोक्तम्=रसोइये ने कहा, श्रीमन् व्यत्येति भोजन समयः=श्रीमान् जी, भोजन का समय बीत रहा है, तत् श्रुत्वा=यह सुनकर, आः एवं किलैतत्=क्या ऐसा है, इति सोत्प्रासं=थोड़ा मुस्करा कर, सविस्मयं=विस्मयपूर्वक. सकूर्चोद्धूननं=दाढ़ी हिलाकर, सोपवर्हताडन मुच्चार्य=ममनद पर हाथ पटककर, कहकर, सपदि उत्थाय=जल्दी उठकर, पुनरागम्यताम्=फिर आइयेगा, इति=ऐसा कहकर, तानरंग विसृज्य =तानरंग को विदा करके, सेनापतिः=अफजल खाँ, अन्तः प्रविवेश= अन्दर चला गया. तानरंगश्च=तानरंग भी, यथागतः=जिस रास्ते से गया था, निववृते=उसी रास्ते से लौट गया।

इतस्तु=इधर तो, प्रताप दुर्गे=प्रताप दुर्ग में, विहिताहार-व्यापरे=भोजन करके, रजत पर्यङ्किका मेकामधिष्ठिते=एक चाँदी की पलंग पर बैठे, किञ्चित् निद्राप्रवेश इव गोपी नाथे=गोपीनाथ पण्डित के कुछ ऊँघने पर, शिववीरः=शिवाजी ने, शनैःप्रविश्य=धीरे से जाकर, प्रणम्य=प्रणाम करके, उपाविशत्=बैठे, अवोचच्च=और बोले, अहो भाग्य अस्माकं=हमारा सौभाग्य है, यत्=कि, युष्मादृशाः भूदेवाः आप जैसे ब्राह्मण ने, स्वचरण रजोभिः=अपनी चरण रज से, आलयं पावयन्ति=हमारे घर को पवित्र किया है।

हिन्दी—

तानरंग ने अफजल खाँ की इस बात को बड़े कष्ट के साथ सुनकर कहा—श्रीमन्, हो सकता है कि ऐसा ही हो। तब अभिमान के कारण आत्म संयम खोकर अफजल खाँ ने अपने साथियों को सम्बो-करते हुये कहा—योद्धाओ! आप लोग कल सूर्योदय से पूर्व ही पाँच

हजार घुड़सवारों एवं दस हजार पैदल सैनिकों को सुसज्जित करके युद्ध करने के लिये तैयार रहना। गोपीनाथ पण्डित के माध्यम से मैंने बेचारे शिवाजी को बुलाया है, यदि वह विश्वास करके आ जाय तो बाँध कर जीवित ही ले चलेंगे, नहीं तो किले सहित उन्हें धूल में मिला देंगे। यद्यपि इस प्रकार की बातों को स्पष्ट कहना राजनीति के विरुद्ध है, फिर भी मेरा आवेश विवेक की परवाह नहीं करता।

यह सुनकर सारे सभासदों के सिर और दाढी हिला-हिला कर—जो आज्ञा, जो आज्ञा, इस प्रकार बातों से मूसलाधार वर्षा में स्नान सा कराने पर, यह गोपनीय बात क्यों स्पष्ट रूप में कही जा रही है, यह सोचकर मानो नाराज सा होकर, अचानक रसोइये ने आकर कहा—श्रीमान् जी भोजन का समय बीत रहा है, यह सुनकर थोड़ा मुस्करा कर विस्मय के साथ, दाढ़ीको हिला कर, मसनद पर हाथ पटककर, ओह, ऐसा ? यह कहकर जल्दी उठकर, तानरंग से फिर, आइयेगा—ऐसा कहकर अफजल खाँ अन्दर चला गया। तानरंग भी जिस रास्ते से आया था उसी रास्ते से लौट गया।

इधर तो प्रताप दुर्ग में गोपीनाथ पण्डित भोजन कर के चाँदी के पलंग पर बैठ कर जब कुछ ऊँघ से रहे थे, तभी शिवाजी ने धीरे से जाकर उन्हें प्रणाम किया और बैठकर कहा—हमारा अहो भाग्य है कि आप जैसे ब्राह्मण ने अपनी चरण रज से हमारे घर को पवित्र किया है।

अथ तयोरेवमभूवन्नालापाः।

गोपीनाथः—राजन् ! कोऽत्र सन्देहः ? सर्वथा भाग्यवानसि, परं साम्प्रतं नाहं पण्डितत्वेन कवित्वेन वा समायातोऽस्मि, किन्तु यवन-राज-दूतत्वेन। तत् श्रूयतां यदहं निवेदयामि।

शिववीरः—शिव ! शिव ! खलु खलु खल्विदमुक्त्वा, येषां श्रीमतां चरणेनाङ्कितं विष्णोरपि वक्षःस्थलमैश्वर्य-मुद्रयेव मुद्रितं विभाति; न तेषां ब्राह्मण-कुल-कमल-दिवाकराणां यवन-कैङ्कर्य-कलङ्क-पङ्को

युज्यते, यं शृण्वतोऽपि मम स्फुटत इव कर्णौ । तथाऽपि कुलीना निर-भिमाना भवन्ति–इति ग्रानीतश्चेत् कश्चित् सन्देशः, तदेष ग्राज्ञाप्यतां श्रीमच्चरण-कमल-चञ्चरीकः ।

गोपीनाथः—वीर ! कलिरेष कालः, यवनाऽऽक्रान्तोऽयं भारत-भूभागः, तन्नास्माकं तथा तानि तेजांसि, यथा वर्णयसि । साम्प्रतं तु विजयपुराधीश-वितीर्णां भृतिं भुञ्जे इति तदाज्ञामेव परिपालयामि । तत् श्रूयतां तदादेशः ।

शिववीरः—ग्रार्य ! ग्रवदधामि ।

गोपीनाथः—कथयति विजयपुरेश्वरो यद्—"वीर ! परित्यज नवामिमां चञ्चलतामस्माभिः सह युद्धस्य, त्वदपेक्षयाऽत्यन्तमधिकं वलिनो वयम्, प्रवृद्धोऽत्र कोषः, महती सेना, वहूनि दुर्गाणि, वहवश्च वीराः सन्ति । तच्छुभमात्मन इच्छसि चेत् त्यक्त्वा निखिलां चञ्चलताम्, शस्त्रं दूरतः परित्यज्य, करप्रदतामङ्गीकृत्य, समागच्छ मत्सभायाम् । मत्तः प्राप्तपदश्चिर जीविष्यसि, ग्रन्यथा तु सदुर्दशं निहतः कथावशेषः संवत्स्यंसि । तत् केवलं त्वयि दययैव सन्देशं प्रेषयामि, ग्रङ्गीकुरु । मा स्म वृद्धायाः प्रसविन्या रजतश्वेतां पक्ष्मपङ्क्तिमश्रु-प्रवाह-दुर्दिने पातय"—इति ।

श्रीधरी—ग्रथ=इसके वाद, तयोः=शिवाजी ग्रौर गोपीनाथ में, एवमभूवन्नालापाः=इस प्रकार वातें हुई, गोपीनाथः=गोपीनाथ ने कहा, राजन् कोऽत्रसन्देहः=महाराज इसमें क्या सन्देह है, सर्वथा भाग्य-वानसि=ग्राप वास्तव में भाग्यवान् हैं, परं=लेकिन, ग्रहं=मैं, साम्प्रतं =इस समय, पण्डितत्वेन कवित्वेन वा=पण्डित या कवि के रूप में, न समायातोऽस्मि=नहीं ग्राया हूँ, किन्तु यवनराज दूतत्वेन=ग्रपितु यवनराज के दूत के रूप में ग्राया हूँ, तत्=इसलिये, श्रूयतां=सुनिये, यदहं निवेदयामि=जो कुछ मैं कहूँ, उसे सुनिये, शिववीरः=शिवाजी ने कहा, शिव शिव खलु खलु खल्विदमुक्त्वा=शिव शिव, ऐसा मत कहिये,

येषां श्रीमतां=जिन आप लोगों, चरणेनाङ्कितं=चरण से अङ्कित होने से, विष्णोरपि वक्षःस्थल=विष्णु का भी वक्षस्थल, ऐश्वर्य मुद्रयेव मुद्रितं-विभाति=ऐश्वर्य की मुद्रा से मुद्रित सा सुशोभित होता है, तेषां=उन, ब्राह्मण-कुल-कमल-दिवाकराणां=ब्राह्मण कुल कमल दिवाकरों को, यवन-कैङ्कर्य-कलङ्क पङ्को न भुज्यते=यवनों की नौकरी रूप कलङ्क कीचड़ शोभा नहीं देता, यं श्रण्वतोऽपि=जिसे सुनकर के भी, मम स्फुटत इव कर्णौ=मेरे कान फूट से रहे हैं, तथापि=तो भी, कुलीना निरभिमाना भवन्ति=कुलीन लोग अभिमान रहित होते हैं, इति=इसलिये, आनीतश्चत्कश्चित्सन्देशः=यदि आप कोई सन्देश लाये हैं, तद्=तब, एषं=इस, श्रीमतां-चरण-कमल-चञ्चरीकः आज्ञाप्यताम् =अपने चरण कमलों के भ्रमर को आज्ञा दीजिये।

गोपीनाथः=गोपीनाथ ने कहा, वीर कलिरेष कालः=वीरवर, यह कलियुग है, यवनाऽऽक्रान्तोऽयं भारत-भूभागः=भारत भूमि मुसलमानों से आक्रान्त है, तद्=इसलिये, अस्माकं तानि तेजांसि न=हम लोगों में वह तेज नहीं रहा, यथा वर्णयसि=जैसा आप कह रहे है, साम्प्रतंतु=इस समय तो, विजयपुराधीश वितीर्णां वृत्तिं भुञ्जे=बीजापुर नरेश से दिये जाने वाले वेतन से अपना निर्वाह कर रहा हूँ, इति=इस लिये, तदाज्ञामेव परिपालयामि=उन्ही की आज्ञा का पालन करता हूं। तत् श्रूयतां तदादेशः=इसलिये उनका आदेश सुनिये। शिववीरः=शिवाजी ने कहा, आर्य, अवदधामि=आर्य मैं सावधान हूँ। गोपीनाथः =गोपीनाथ ने कहा, विजयपुराधीश्वरो कथयति यद्=बीजापुर नरेश कहते हैं कि, वीर=हे वीर, अस्माभिः सह=हमारे साथ, युद्धस्य=युद्ध करने की, नवामिमां चञ्चलतां=इस नयी चञ्चलता को, परित्यज =छोड़ दो, त्वदपेक्षया=तुम्हारी अपेक्षा, अत्यन्तमधिकं बलिनो वयम् =हम बहुत अधिक शक्तिशाली हैं, प्रवृद्धोऽस्मकोषः=हमारा खजाना बहुत समृद्ध है, महती सेना=बहुत बड़ी सेना है, बहूनि दुर्गाणि=बहुत

से किले हैं, वहवश्च वीराः सन्ति = और बहुत से वीर हैं, तद् = इसलिये, आत्मनः शुभं इच्छसि चेत् = अपना भला चाहते हो तो, निखिलां चञ्चलतां त्यक्त्वा = सारी चञ्चलता को छोड़कर, अस्त्रं दूरतः परित्यज्य = अस्त्र को छोड़कर, करप्रदतां अङ्गीकृत्य = मुझे कर देना स्वीकार करके, मत्सभायां समागच्छ = मेरी सभा में आओ, मत्तः = मुझसे, प्राप्तपदः = पद पाकर, चिरं जीविष्यसि = बहुत दिनों तक जीवित रहोगे, अन्यथा तु = नहीं तो, सदुर्दशं = दुर्दशा के साथ, निहतः = मार दिये जाओगे, कथावशेषः संवत्स्यसि = तुम्हारी मात्र कहानी शेष रहेगी, तत् = अतः, त्वयि केवलं दययैव = तुम्हारे ऊपर दया करके ही, सन्देशं प्रेषयामि = सन्देश भेज रहा हूँ, अङ्गीकुरु = इसे स्वीकार करो, वृद्धायाः प्रसविन्याः = बूढ़ी माँ के, रजत श्वेतां पक्ष्मपंक्ति = चाँदी के समान सफेद वरौनियों को, अश्रुप्रवाह दुर्दिने मा पातय = आँसुओं की झड़ी में मत डुबाओ।

हिन्दी—

इसके बाद उन दोनों में इस प्रकार बातें हुईं। गोपीनाथ ने कहा—इसमें क्या सन्देह है ? आप वास्तव में भाग्यवान् है। किन्तु मैं उस समय पण्डित के रूप में या कवि के रूप में आपके पास नहीं आया हूँ अपितु यवनराज के दूत के रूप में आया हूँ। इसलिये मैं जो कहता हूँ, उसे सुनिये।

शिवाजी ने कहा—शिव, शिव, ऐसा मत कहिये। जब आप लोगों के चरण से अङ्कित होने के कारण भगवान् विष्णु का वक्षस्थल भी ऐश्वर्य की मुद्रा से शोभित होता है। उन ब्राह्मण-कुल-कमल दिवाकरों को यवनों की नौकरी रूपी कीचड़ का कुलङ्क शोभा नहीं देता, जिसे सुनकर मेरे कान फूट से रहे हैं। हाँ, कुलीन लोग अभिमान रहित होते है। इसलिये आप कोई सन्देश लाये है तो इस सेवक को आज्ञा दीजिये।

गोपीनाथ ने कहा—वीरवर ! यह कलियुग है। सारे भारत पर मुसलमानों का शासन है, इसलिये हम में वह तेज नहीं रहा, जिन्हें आप बता रहे हैं । इस समय तो मैं बीजापुर नरेश के दिये हुए वेतन से अपना निर्वाह करता हूँ। इसलिये उन्ही की आज्ञा का पालन करता हूँ। आप उनका आदेश सुनिये।

शिवाजी ने कहा—आर्य, मैं सावधान हूँ।

गोपीनाथ ने कहा—बीजापुर नरेश कहते हैं कि—वीर ! हमारे साथ युद्ध करने की अपनी इस नयी चञ्चलता को छोड़ दो, हम तुम्हारी अपेक्षा अत्यधिक शक्तिशाली हैं, हमारा खजाना समृद्ध है। हमारे पास कई किले हैं और हमारी सेना बहुत विशाल है तथा हमारे पास बहुत से वीर हैं। अतः यदि तुम अपना कल्याण चाहते हो तो अपनी सारी चञ्चलता को छोड़ कर, शस्त्र का परित्याग करके मुझे कर देना स्वीकार करके, मेरी सभा में आओ। मुझसे कोई बड़ा सा पद प्राप्त करके बहुत दिनों तक जीवित रहोगे। अन्यथा दुर्दशा के साथ मारे जाओगे और तुम्हारी केवल कहानी ही शेष रह जायेगी। केवल तुम्हारे ऊपर दया करके यह सन्देश भेज रहा हूं। इसे स्वीकार करो। अपनी वृद्धा मां की चाँदी सी सफेद बरौनियों को आँसुओ की झड़ी मे मत डुबाओ।

शिववीरः—भगवान् ! कथयेदेवं कश्चिद् यवनराजः, परं किं भवानपि मामनुमन्यते—यद् ये अस्मदिष्टदेवमूर्तीर्भङ्क्त्वा, मन्दिराणि समुन्मूल्य, तीर्थस्थानानि पङ्कणीकृत्य, पुराणानि पिष्ट्वा वेदपुस्तकानि विदार्य च, आर्यवंशीयान् बलाद् यवनीकुर्वन्ति; तेषामेव चरणयोरञ्जलिं बद्ध्वा लालाटिकतामङ्गीकुर्याम् ? एवं चेद्धिङ् मां कुल-कलंकं क्लीबम्; यः प्राणभयेन सनातनधर्म-द्वेषिणां दासेरकतां वहेत्। यदि चाहमाहवे म्रियेय, बध्येय ताड्येय वा तदैव धन्योऽहम्, धन्यौ च मम पितरौ। कथ्यकर्ता

भवादृशां विदुषामत्र का सम्मतिः ?

गोपीनाथः—(विचार्य) राजन् ! धर्मस्य तत्त्वं जानासि, तन्नाहं स्वसम्मतिं कामपि दिदर्शयिषामि। महती ते प्रतिज्ञा, महत्तवोद्देश्यमिति प्रसीदामितमाम्। नारायणस्तत्र साहाय्यं विदधातु।

शिववीरः—करुणानिधान ! नारायणः स्वयं प्रकटीभूय न प्रायेण साहाय्यं विदधाति, किन्तु भवादृश-महाशय-द्वारैव। तत् प्रतिज्ञायतां काऽपि सहायता।

गोपीनाथः—राजन् ! कथ्यतां किमहं कुर्याम्, परं यथा न मामधर्मः स्पृशेत्; तथैव विधास्यामि।

शिववीरः—शान्तं पापम् ! कोऽत्राधर्मः ? केवलं श्वोऽस्मिन्नुद्यान प्रान्तस्थ-पट्ट-कुटीरे यवन-सेनापतिरफजलखान आनेयः; यथा तेनैकाकिनाऽहमेकाकी मिलित्वा किमप्यालपामि।

श्रीधरी—शिववीरः = शिवाजी ने कहा. भगवन् = महाराज, एवं कश्चिद् यवनराजः कथमेत = कोई यवन राज भले ही ऐसा कहे, परं = लेकिन, भवानपि मामनुमन्यसे = क्या आप भी मुझे अनुमति देते हैं, यद् = कि, ये अस्मदिष्टदेव मूर्तीर्भङ्क्त्वा = जो हमारे इष्टदेव की मूर्ति को तोड़कर, मन्दिराणि समुन्मूल्य = मन्दिरों को नष्ट करके, तीर्थस्थानानि पक्वणी कृत्य = तीर्थस्थानों को भीलों की वस्ती वनाकर, पुराणानि पिष्ट्वा = पुराणों को पीस कर, वेदपुस्तकानि विदार्य = वेदों की पुस्तकों को फाड़ कर, आर्यवंशीयान् = आर्य वंशियों को, वलाद् यवनी कुर्वन्ति = वलपूर्वक मुसलमान वनाते हैं। तेषामेव चरणयोरञ्जालिं वद्ध्वा = उन्हीं के चरणों में अञ्जलि वांधकर, लालाटिकतामङ्गीकुर्याम् = चाकरी स्वीकार करूँ. एवं चेद् = यदि मैं ऐसा करूँ, धिङ् मां कुल-कलङ्कं क्लीवम् = मुझ कुल-कलङ्क को धिक्कार है, यः = जो,

प्राणभयेन = प्राणों के भय से, सनातन धर्म द्वेषिणां दासेरकतां वहेत् = सनातन धर्म के दुश्मनों की जी हुजूरी करु, यदि चाहमाहवे म्रियेय = यदि मैं युद्ध में मारा जाऊं, वध्येय = बांधा जाऊं, ताडयेय वा = पीटा जाऊं, तदैव धन्योऽहम = यही मेरा सौभाग्य है, धन्यौ च मम पितरौ = और मेरे माता-पिता धन्य हों, कथ्यतां = कहिये, भवादृशां विदुषां = आप जैसे विद्वानों की, अत्र का सम्मतिः = इस सम्बन्ध में क्या राय है, गोपीनाथः विचार्य = गोपीनाथ ने सोचकर कहा, राजन् = महाराज, धर्मस्य तत्वं जानासि = आप धर्म के तत्व को जानते है, तद् = इसलिये अहं = मैं, कामपि स्वसम्मतिं दिदर्शयिषामि = अपनी कोई भी राय नहीं देना चाहता, महती ते प्रतिज्ञा = आपकी प्रतिज्ञा बहुत बड़ी है, महत्तवोद्देश्यमिति प्रसीदामितमाम् = आप का उद्देश्य महान् है, इससे मुझे अत्यन्त प्रसन्नता है। नारायणः तत्र साहाय्यं विदधातु = ईश्वर आपकी सहायता करें।

शिववीरः = शिवाजी ने कहा, करुणानिधान = दयानिधान नारायणः स्वयं प्रकटीभूय = भगवान् स्वयं प्रकट होकर, प्रायेण साहाय्यं न विदधाति = प्रायः सहायता नही किया करते, किन्तु भवादृश महाशय द्वारैव = अपितु आप सरीखे महाशयों द्वारा ही सहायता करते हैं। तत् = इसलिये, प्रतिज्ञायतां कापि सहायता = कोई सहायता करने की प्रतिज्ञा कीजिए, गोपीनाथः = गोपीनाथ ने कहा, राजन् = महाराज, कथ्यतां = कहियें, किमहं कुर्याम् = मैं क्या करूं, परं = लेकिन्, यथा न मामधर्मःस्पृशेत् = जिससे मुझे पाप न लगे, तदैव विधास्यामि = वही कार्य मैं करूंगा।

शिववीरः—शिवाजी ने कहा—शान्तं पापम् = पाप शान्त हों, कोऽत्राधर्मः = इसमें क्या अधर्म है, केवल श्वोऽस्मिन्नुद्यान प्रान्तस्थ पट-कुटीरे = केवल कल इस उद्यान के किनारे पर लगे तम्बू में, यवन सेना-

पति अपजल खानः आनेयः = यवन सेनापति अफजल खां को ले आइये, यथा एकाकिना तेन सह = अकेले उसके साथ, अहमेकाकी मिलित्वा = मैं अकेला मिलकर, किमप्यालपानि = कुछ बात चीत कर सकूं।

हिन्दी—

शिवाजी ने कहा—महाराज कोई मुसलमान ऐसा भले ही कहे, किन्तु क्या आप भी मुझे ऐसा करने को कहते हैं? जो हमारे इष्टदेव की मूर्ति को तोड़कर, मन्दिरों को नष्ट करके, तीर्थस्थानों को भीलों की वस्ती बनाकर, पुराणों को पीसकर वेदों को फाड़ कर हिन्दुओं को बलपूर्वक मुसलमान बनाते हैं। मैं उन्हीं के चरणों मे अञ्जलि बाँधकर सेवा करूँ! यदि मैं ऐसा करूँ तो मुझ कुल-कलक को धिक्कार है जो अपने प्राणों के मोह में सनातन धर्म के द्वेषियों की चाकरी करूँ। मैं यदि युद्ध में मारा जाऊं, बाधा जाऊं या घायल किया जाऊं, तभी मेरा सौभाग्य है, मेरे माता पिता भी तभी धन्य हैं, कहिये—आप सरीखे विद्वान् की इस सम्बन्ध में क्या राय है?

गोपीनाथ ने कहा—महाराज आप! स्वयं धर्म के तत्व को जानते हैं अतः मैं अपनी कोई राय नही देना चाहता। आपकी प्रतिज्ञा और आपका उद्देश्य भी महान् है। यह जानकर में अत्यन्त प्रसन्न हूँ। भगवान् आपकी सहायता करें।

शिवाजी ने कहा—भगवान् प्रायः प्रकट होकर सहायता नहीं करते, अपितु आप जैसे महान् व्यक्तियों के द्वारा ही सहायता करवाते है। इसलिये कोई सहायता करने का वचन दीजिये।

गोपीनाथ—महाराज, कहिये मैं क्या करूं? किन्तु जिससे मुझे अधर्म न लगे, वही कार्य करूंगा।

शिवाजी ने कहा—पाप शान्त हों, अधर्म की इसमे क्या बात है। केवल कल उसी बगीचे के कोने में लगे तम्बू में अफजल खां को ले आइये जिससे अकेले उससे अकेला मैं कुछ बात चीत कर सकूं।

गोपीनाथः—तत् सम्भवति ।

ततः परं गोपीनाथेन सह शिववीरस्य बहुविधा आलापा अभूवन्; यैः शिववीरस्य उदारहृदयतां धार्मिकतां शूरताञ्चावगत्य गोपीनाथोऽतितरां पर्य्यतुष्यत् ।

अथ स तमाशीर्भिरनुयोज्य यावत्प्रतिष्ठते, तावदुपातिष्ठन् ससहचरस्तानरङ्गः । गोपीनाथस्तु तमनवलोकयन्निव तस्मिन्नेव निशीथे दुर्गा दवातरत् । कपट-गायको गौरसिंहस्तु शिववीरेण सह बहुश आलप्य, सेनाऽभिनिवेश-विषये च सम्मन्त्र्य, तदाज्ञातः स्ववासस्थानं जगाम ।

शिववीरोऽप्यन्य-सेनापतीन् यथोचितमादिश्य, स्वशयनागारं प्रविश्य होरात्रयं यावत्किञ्चन निद्रा-सुखमनुभूय, अल्पशेषायामेव रजन्यामुदतिष्ठत् ।

शिववीर-सेनास्तु यथासङ्केतं प्रथममेव इतस्ततो दुर्ग-प्राचीरान्तरालेषु गहन-लता-जालेषु उच्चावच भूभाग-व्यवधानेषु सज्जाः पर्यवातिष्ठन्त । बहवोऽश्वारोहा यवन-पट-कुटीर-कदम्बकं परिक्रम्य ततः पश्चादागत्य, अवसरं प्रतिपालयन्ति स्म ।

इतश्च सूर्यप्रभाभिरणीक्रियमाणे भूभागे अरुण-श्मश्रवोऽपि सेनाः सज्जीकृतवन्तः ।

श्रीधरी—गोपीनाथः—गोपीनाथ पण्डित ने कहा, तत् सम्भवति =यह हो सकता है । ततः परं=इसके बाद । गोपीनाथेन सह= गोपीनाथ पण्डित के साथ, शिववीरस्य=शिवाजी की । बहुविधा आलापा अभूवन्=अनेक प्रकार की बातें हुई । यैः=जिनसे । शिववीरस्य=शिवाजी की, उदारहृदयतां=उदार हृदयता को, धार्मिकतां= धार्मिकता को । शूरताञ्चावगत्य=वीरता को जानकर, गोपीनाथो=

गोपीनाथ पण्डित । अतितरांपर्यतुष्यत्=अत्यन्त सन्तुष्ट हुआ । अथ= इसके बाद । स=उसने । तम्=शिवाजी को । आशीर्भिसुयोज्य= आशीर्वाद देकर । यावत्प्रतिष्ठते=जब तक प्रस्थान किया । तावत्= तब तक । सहचरः तानरंग=उपातिष्ठत=साथी के साथ तानरंग आ पहुँचा । गोपीनाथस्तु=गोपीनाथ पण्डित । ममनवलोकयन्निव= उसे अनदेखा करके, तस्मिन्नेव निशीथे=उसी अर्द्ध रात्रि में दुर्गादवात-रत्=किले से उतर गये । कपट गायको गौरसिंहस्तु=गायक वेषधारी गौरसिंह । शिववीरेण सह=शिवाजी के साथ । वहुशआलप्य= वहुत सी वातचीत करके. सेनाऽभिनिदेशे-विषये संमन्त्रय=सेना की व्यूह रचना के सम्वन्ध में भी मन्त्रणा करके, तदाज्ञातः=शिवाजी की आज्ञा लेकर । स्ववासस्थानं जगाम=अपने निवास स्थान को गया ।

शिववीरोऽप्यन्य सेनापतीन्=शिवाजी की अन्य सेनापतियों को, यथोचित मादिश्य=यथायोग्य आदेश देकर । स्वशयनागारं प्रविश्य= अपने शयन कक्ष में जाकर । होरात्रयंयावत् किञ्चन निद्रासुखमनुभूय= तीन घण्टे तक सोकर, अल्प शेषायामेव राजन्यामुदतिष्ठत्=थोड़ी रात रहते ही जग गये ।

शिववीर सेनास्तु=शिवाजी की सेना तो, यथा सकेत=सकेत के अनुसार। प्रथममेव=पहले से ही । इतस्ततो=इधर-उधर, दुर्ग प्राचीरान्तरालेषु=किले की चहार दीवारी के अन्दर। गहन लता-जालेषु=घनी झाड़ियों में, उच्चावच-भूभाग-व्यवधालेषु=ऊंची-नीची भूमि के बीच में । सज्जा पर्यपातिष्ठन्त=सुसज्जित खड़ी थी। वहवो अश्वारोह=वहुत से घुड़सवार । यवन पट कुटीर कदम्बकं=मुसलमानों के खेमों का । परिक्रम्य=चक्कर लगाकर । ततः पश्चादागत्य=वहाँ से फिर पीछे आकर. अवसरं प्रतिपालयन्ति स्म=मौके की प्रतीक्षा कर रहे थे ।

इतश्च=इधर भी। सूर्य प्रभाभिररुणी क्रियमाणे भूभागे=सूय की कान्ति से पृथ्वी के लाल हो जाने पर। अरुण श्मश्रवोऽपि=लाल दाढ़ी मूंछ वाले मुसलमान भी, सेना सज्जी कृतवन्त:=सेना तैयार करने लगे।

हिन्दी—

गोपीनाथ पण्डित ने कहा—यह हो सकता है।

इसके वाद गोपीनाथ पण्डित के साथ शिवाजी की अनेक प्रकार की वातें हुई, जिनसे गोपीनाथ पण्डित शिवाजी की उदार हृदयता, धार्मिकता एवं वीरता को जानकर अत्यन्त प्रसन्न हुये।

तदनन्तर शिवाजी को आशीर्वाद देकर गोपीनाथ पण्डित ने उस अर्द्धरात्रि में ही प्रस्थान किया। उसी समय अपने साथी वच्चे के साथ तानरंग भी आ गया। गोपीनाथ उन्हें अनदेखा सा करके किले से उतर गये। गायक वेषधारी गौरसिंह ने शिवाजी के साथ वहुत सी बात चीत की, सेना की व्यूह रचना के सम्वन्ध में उनसे मन्त्रणा कर तथा उनकी आज्ञा लेकर वह अपने निवास स्थान को चला गया।

शिवाजी ने भी अन्य सेनापतियों को यथायोग्य आदेश देकर, अपने शयन कक्ष में जाकर तीन घण्टे तक सोकर, थोड़ी रात रहते ही शैय्या त्याग दी।

महाराज शिवाजी की सेना संकेत के अनुसार पहिले से ही इधर-उधर चहार दीवारी के अन्दर, घनी झाड़ियों में, ऊंची-नीची भूमि के वीच सुसज्जित होकर खड़ी थी। वहुत से घुड़सवार मुसलमानी खेमों का चक्कर लगाकर पुनः अपने स्थान पर आकर मौके की प्रतीक्षा कर रहे थे।

इधर भूमि पर सूर्य का प्रकाश अच्छी तरह फैला चुकने पर लाल दाढ़ी मूंछों वाले मुसलमानों ने भी अपनी सेना को सुसज्जित किया।

बहवो—"अयमद्य शिवमवश्यमेव विजेष्यामहे; पर तथाऽपि न जानीमहे किमिति कम्पत इव हृदयम्, अहो ! विलक्षणः प्रताप एतस्य, पवनेऽपि प्रवहति, पतत्रेऽपि पतति, पत्रेऽपि मर्मरीभवति, स एवाऽऽगत इत्यभिशंक्यतेऽस्माभिः । अहह !! विचित्रोऽयं वीरो यो दुर्ग-प्राचीर-मुल्लंघ्य, प्रहरि-परीवारमविगणय्य, लोहार्गल-शृङ्खलासहस्र-नद्धानि करि-कुम्भाघात-सहानि द्वाराणि प्रविश्य, विकोशचन्द्रहासासिधेनुका-रिष्टि-तोमर-शक्ति-त्रिशूल—मुद्गर-भुशुण्डी—कराणां रक्षकाणां मण्डलमवहेल्य, प्रियाभिः सह पर्य्यङ्केषु सुप्तानामपि प्रत्यर्थिनां वक्षःस्थलमारोहति, निद्रास्वपि तान् न जहाति, स्वप्नेष्वपि च विदारयति । कथमेतस्य चञ्चच्चन्द्रहास-चमत्कार-चाकचक्य-चिल्लीभूत-चक्षुष्काः समराङ्गणे स्थास्यामः ?" इति चिन्ताचक्रमारूढा अपि कथं कथमपि कैश्चित् वीर-वरैर्वर्धितोत्साहाः समर—भूमिमवातरन् ।

अथ कथंचित् प्रकाश-बहुले संवृत्ते नभःस्थले, परस्परं परिची-यमानासु आकृतिषु, कमलेष्विव विकचतामासादयत्सु वीरवदनेषु, भ्रमरालिष्विव परितः प्रस्फुरन्तीषु असि-पङ्क्तिषु, चाटकैर-चकचकायितेषु कवच-चकत्कारेषु, गोपीनाथ-पण्डितो वारमेकं शिववीर दिशि परतश्च यवन-सेनापति-दिशि गतागतं विधाय, सेनाद्वयस्य मध्य एव कस्मिंश्चित् पट-कुटीरे अपजलखानमानेतुं प्रबबन्ध ।

श्रीधरी—बहवो=बहुत से सैनिक लोग, अद्य शिवमवश्यमेव विजेष्यामहे=आज हम शिवाजी को अवश्य जीतेंगे । पर=लेकिन, तथापि=तो भी, न जानीमहे=नहीं जानते, किमिति कम्पत इव हृदयम्=हृदय क्यों काँपता सा है । अहो विलक्षणः प्रताप एतस्य=ओह इसका प्रताप अनोखा है, पवनेऽपि प्रवहति=हवा के चलने पर भी, पतत्रेऽपि पतति=पक्षी के उड़ने पर भी, पत्रेऽपि मर्मरी भवति=पत्तों के खड़खड़ाने पर भी, स एवागत इत्याभिशंक्यतेऽस्माभिः=हम

लोगों को शिवाजी आये, यही आशंका होती है, अहह ! विचित्रोऽयं वीरो =आह यह अनोखा वीर है, यः=जो, दुर्ग प्राचीर मुलंघ्य=किले की चहार दीवारी को लांघ कर, प्रहरि परीवार मविगणय्य=पहरेदारों की परवाह न कर, लोहार्गल शृङ्खला सहस्रनद्धानि=हजारों लोहे की जंजीरों से बंधे, करि कुम्भाघात सहानि=हाथी के मस्तक के आघात को भी सह सकने वाले, द्वाराणि प्रविश्य=दरवाजों में घुसकर, विकोशच्चन्द्र हासासि धेनुका=नंगी तलवार, छुरी, रिष्टि-तोम -शक्ति त्रिशूल-मुद्गर-भुशुण्डी कराणां=वर्छा- शक्ति, त्रिशूल, मुद्गर, बन्दूक हाथ में लिये हुए, रक्षकाणां मण्डल मवहेल्य=पहरेदारों की उपेक्षा करके, प्रियाभिः सह=प्रियतमाओं के साथ,पर्यङ्केषु सुप्ता नामपि= पलंगों पर सोये हुए, प्रत्यर्थिनां=दुश्मनों के, वक्षःस्थलमारोहति= छाती पर चढ़ बैठता है, निद्रास्वपि=नींद में भी, तान् न जहाति= उनको नहीं छोड़ता, स्वप्नेऽपि च विदारयति=स्वप्न में भी फाड़ता है, कथमेतस्य=कैसे इसके, चञ्चच्चन्द्रहास चमत्कार चाकचक्य चिल्लीभूत चक्षुष्काः समराङ्गणे स्थास्यामः=चमकती हुई तलवार की चकाचौंध में हम युद्धभूमि में खड़े रह सकेंगे, इति चिन्ता चक्र मारुढा अपि=इस प्रकार की चिन्ताओं मे आक्रान्त होते हुए भी, कथं कथमपि=किसी प्रकार कैश्चित् वीर वरैर्वर्धितोत्साहाः=किन्ही वीरों के द्वारा प्रोत्साहित होकर, समर भूमि मवातरन्=युद्धभूमि में उतरे ।

अथ=इसके बाद, कथंचित् प्रकाश बहुले नमः स्थले=आकाश में पर्याप्त प्रकाश फैल जाने पर, परस्परं परिचाय मानासु आकृतिषु= आकृतियों के परस्पर पहचान में आने पर, विकचतामासादयत्सु वीर वदनेषु=वीरों के मुख कमलों की तरह खिल जाने पर, भ्रमरालिष्विव परितः प्रस्फुरन्तीषु असिपंक्तिषु=भौंरों की पंक्तियों की तरह चारों ओर तलवारों के दृष्टिगोचर होने पर, चाटकैर चकचकायितेषु कवच चकत्कारेषु=कवचों के गोरैया की चहचहाने की सी आवाज करने पर,

गोपीनाथ पण्डितः=गोपीनाथ पंडित, वारमेकं शिववीर दिशि=एक बार शिवाजी की ओर, परतश्च यवन-सेनापति दिशि=दूसरी बार अफजल खां की ओर, गतागतं विधाय=चक्कर लगाकर, सेनाद्वयस्य मध्य एव=दोनो सेनाओं के बीच में कस्मिंश्चित् पट कुटीरे=किसी तम्बू में अफजल खान मानेतुं=अफजलखां को लाने का, प्रबबन्ध=प्रबन्ध किया।

हिन्दी—

बहुत से सैनिक लोग—हम आज शिवाजी को अवश्य जीतेंगे, किन्तु पता नहीं क्यों हृदय कांपता सा है। ओह शिवाजी का प्रताप बड़ा अद्भुत है। हवा के चलने पर भी, पक्षी के उड़ने पर भी, पत्ते के खड़-खड़ाने पर भी, शिवाजी आगये, यही हम लोगो को आशङ्का होती है। ओह, यह अनोखा वीर है जो किले की चहार दीवारी लांघ कर पहरेदारों की परवाह बिना किये, हजारो लोहे की जजीरों मे बंधे, हाथी के मस्तक के आघात को भी सहन कर सकने वाले, दरवाजों में घुसकर नंगी तलवार, छुरी बर्छी, शक्ति, त्रिशूल मुद्गर और बन्दूक हाथ में लिये हुए पहरे दारों की उपेक्षा करके अपनी प्रियतमाओ के साथ पलग पर सोये हुए दुश्मनो की छाती पर चढ बैठना है, नींद में भी उन्हे नहीं छोड़ता, स्वप्न मे भी चीर डालता है। इसकी चमकती हुई तलवार की चम-चमाहट मे चौंधियाकर हम कैसे युद्धभूमि में टिक सकेगे ? इस प्रकार की चिन्ताओं मे चिन्तित होते हुए भी यवन सैनिक किसी प्रकार वीरों से प्रोत्साहित होकर युद्ध भूमि में उतरे।

इसके बाद आकाश में पर्याप्त प्रकाश फैल जाने पर, परस्पर आकृतियो के पहचान में आने पर, वीरो के मुख कमलों की तरह खिल जाने पर, भौंरों की पंक्ति के समान तलवारों के चारों ओर दृष्टि गोचर होने पर, कवचो के भी गोरैया पक्षी के समान आवाज करने पर, गोपी-

नाथ पण्डित ने एक बार शिवाजी की ओर और दूसरी बार अफजल खाँ की ओर जाकर दोनों सेनाओं के बीच में ही किसी एक तम्बू में अफजल खाँ को लाने का प्रबन्ध किया।

शिववीरोऽपि कौशेय-कंचुकस्यान्तर्लोह-वर्म्म परिधाय, सुवर्ण-सूत्र-ग्रथितोष्णीषस्याप्यधस्तादायसं शिरस्त्राणं सम्थाप्य, सिंहनख-नामकं शस्त्रविशेषं करयोरारोप्य, दृढबद्ध-कटिरपजलखान-साक्षात्काराराय सज्जस्तिष्ठति स्म।

अपजलखानोऽपि च—"यदाऽहमेनं साक्षात्कृत्य, करताडनमेकं कुर्य्याम्; तदैव तालिकाध्वनि-समकालमेव अमुकामुकैः इवेनैरिवाभिपत्य पाशैरेष बन्धनीयः, सेनया च क्षणात् तत्सेना भङ्क्त्वा घनघटेऽापनेया"—इति संकेत्य, सूक्ष्म-वसन-परिधानः, वज्रक-जटितोष्णीषिकः, गल विलुलित–पद्मराग–जालः, मुक्ता-गुच्छ-चोचुम्ब्यमान-भालः, निश्वास-प्रश्वास-परिमथित–मद्य–गन्ध–परि-पूरित पार्श्व-देशान्तरालः, शोण-श्मश्रु–कूर्च-विजित-नूतन-प्रवालः, कञ्चुक-स्यूत-काञ्चन-कुसुम-जालः, विविध-वर्ण वर्णनीय-शिविका–मारुह्य निर्दिष्ट-पटकुटीराभिमुखं प्रतस्थे।

श्रीवरी—शिववीरोऽपि=शिवाजी भी। कौशेयकञ्चुकस्यान्तः=रेशमी कुर्ते के अन्दर। लौहवर्म परिधाय=लोहे का कवच पहन कर। सुवर्ण सूत्रग्रथितोष्णीषस्याप्यध स्तादमसं=सोने के तारों से कढ़ी हुई पगड़ी के नीचे लोहे का। शिरस्त्राणं=टोप। संस्थाय=रखकर सिंह नख नामक। शस्त्रविशेषं=विशेष प्रकार के शस्त्र को। करयोरारोप्य=हाथों में पहनकर। दृढ़वद्धकटिः=कमर कसकर। अपजलखान साक्षात्काराय=अफजल खां से मिलने के लिये। सज्जस्तिष्ठति स्म=तैयार बैठे थे।

अपजलखानोऽपि च=अफजल खां भी। यदाहमेनंसाक्षात्कृत्य—ज्यों ही मैं उनसे मिलकर। करताडनमेकं कुर्याम्=एक बार ताली

बजाऊं । तदैव=तभी । तालिका ध्वनि समकालमेव=ताली की आवाज के साथ ही । अमुकामुखे=अमुक अमुख लोग । श्येनैरिवा भिपत्य=बाज की तरह उस पर टूट कर । पाशैरेष बन्धनीयः= रस्सियों से इसे वांध लें । सेनया च=हमारी सेना के द्वारा । क्षणात्= क्षण भर में । तत्सेना=उसकी सेना को । झञ्झया घन पटलेवायपनेया =आँधी से वादलों के समान उड़ा देना चाहिये । इति संकेत्य=ऐसा निर्देश देकर । सूक्ष्म वसन परिधानः=महीन कपड़े पहने पहने हुए । वज्रक जटितोष्णीपिकः=हीरे जड़े टोपी पहने हुए । गल-विलुत पद्मराग मालः=गले में पद्मराग-माला पहने हुए । मुक्तागुच्छचोचुम्ब्य- मानभालः=माथे पर मोती का गुच्छा लगाये हुए । निश्वास-प्रश्वास परिमथित मद्यगन्ध-परिपूरित-पार्श्व-देशान्तरालः=आस पास के वाता- वरण को श्वासोच्छ्रास से निकली शराब की गन्ध से दूपित करता हुआ । शोण-श्मश्रु-कूर्च-विजित नूतन-प्रवालः=लाल दाढ़ी-मूछों से नये पत्तों की शोभा को तिरस्कृत करता हुआ । कञ्चुक स्यूत काञ्चन- कुसुम-जालः=सोने के तारों से कढ़ी हुई शेरवानी पहने हुए । विविध- वर्ण-वर्णनीय=अनेक रंगों की सुन्दर । शिविका मारुह्य=पालकी में बैठकर । निर्दिष्ट=पूर्व निश्चित । पट कुटीराभि मुखं=खेमे की ओर, प्रतस्थे=चल पड़ा ।

हिन्दी—

महाराज शिवाजी रेशमी कुर्ते के अन्दर लोहे का कवच पहन कर, सोने के तारों से कढ़ी हुई पगड़ी के नीचे लोहे का शिरस्त्रारण रख कर, हाथों में वघनखा नामक शस्त्र विशेष को पहन कर और मजबूती के साथ कमर को कस कर, अफजल खां से मिलने के लिये तैयार बैठे थे ।

अफजल खाँ भी-ज्यों ही मैं शिवाजी से मिलकर एक ताली बजाऊँ, त्यों ही ताली की आवाज के साथ ही, ये-ये लोग बाज की तरह उस पर टूट कर रस्सियों से उसे बांध लें और हमारी सेना क्षण भर में उसकी सेना को आंधी से बादलों की तरह भगा दे। इस प्रकार संकेत देकर, महीन कपड़े पहने, हीरे जडी टोपी को सिर पर लगाये, गले में पद्मराग मणियों की माला पहने हुए, मस्तक पर मोतियों का गुच्छा लगाये आस-पास के वातावरण को मद्य की गन्ध से दूषित करता हुआ, लाल दाढ़ी-मूछों से नये पत्तों की शोभा को तिरस्कृत करता हुआ, सोने के तारों से कढ़ी हुई शेरवानी को पहने हुए अनेक रंगों की सुन्दर पालकी में बैठ कर, पूर्व निश्चित तम्बू की ओर चल पडा।

इतस्तु कुरङ्गमिव तुरङ्गं नर्त्तयन् रश्मिग्राह–वेषेण गौरसिंहेनानुगम्यमानः माल्यश्रीक-प्रभृतिभिर्वीर-वरैर्युद्ध-सज्जैः सतर्कं निरीक्ष्यमाणः शिववीरोऽपि तस्यैव संकेतितस्य समागमस्थानस्य निकटे एव सव्यकरेण बल्गामाकृष्याश्वमवारुवत्।

ततस्तु, इतोऽश्वात् शिववीरः ततस्तु शिबिकातोऽपजलखानः अपि युगपदेवावातरताम्, परस्पर साक्षात्कृत्य च, उभावप्युत्सुकाभ्यां नयनाभ्याम्, सत्वराभ्यां पादाभ्याम्, स्वागताऽऽम्रेडनतत्परेण वदनेन, आश्लेषाय प्रसारिताभ्यां च हस्ताभ्यां कौशेयास्तरण-विरोचितायां बहिर्वेदिकायां धावमानौ परस्परमालिलिङ्गतुः।

शिववीरस्तु आलिङ्गन-च्छलेनैव स्वहस्ताभ्यां तस्य स्कन्धौ दृढ गृहीत्वा सिंहनखैर्जत्रुणी कन्धरां च व्यपाटयत्। रुधिरदिग्ध च तच्छरीर कटि-प्रदेशे समुत्तोल्य भूपृष्ठेऽपोथयत्।

तत्क्षणादेव च शिववीर–ध्वजिन्यां महाध्वज एकः समुच्छ्रितः। तत्समकालमेव यवन-शिविरस्य पृष्ठस्थिता शिववीर-सेना शिबिरम-

ग्निसात्कृतवती, पुरःस्थित-सेनासु च अकस्मादेव महाराष्ट्र-केसरिणः समपतन। तेषां 'हरहर-महादेव' गर्जनपुरस्सरं छिन्धि-भिन्धि-मारय-विपोथय-इति कोलाहलः, प्रत्यर्थिनां च 'खुदा-तोबा-अल्लादि' पारस्य-पदमयः कलकलो रोदसी समपूरयत्।

श्रीधरी—इतस्तु=इधर। कुरंग मिव तुरंगं नर्तयन्=हरिण के समान घोड़े को नचाते हुए। शिववीरोऽपि=शिवाजी भी। रश्मिग्राह-वेषेण=सईस के वेष में। गौरसिंहेनानुगम्यमानः=जिनसे साथ गौर-सिंह चल रहा था। युद्ध सज्जैः=युद्ध के लिये तैयार, माल्यश्रीक प्रभृतिभिर्वीरवरैः=माल्यश्रीक आदि वीरों से। सतर्क निरीक्षमाणः= सतर्कता पूर्वक देखे जाते हुए। तस्यैव=उसी। संकेतितस्य=पूर्व निश्चित। समागमस्थानस्य निकटे=मिलने के स्थान के पास। सव्य-करेण=वांये हाथ से। वल्गामाकृष्य=लगाम रोककर। अश्वमवारुधत्= घोड़े को रोका।

ततस्तु=इसके वाद। इतोऽश्वात् शिववीर=इधर घोड़े से शिवाजी। ततस्तु=उधर। शिविकातो अपजलखानः=पालकी से अफजल खाँ भी। युगपदेवावातरताम्=उतर पड़े। परस्परं-साक्षात्कृत्य =एक दूसरे को देख कर। उभावपि=दोनों ही। उत्सुकाभ्यां नयनाभ्यां =उत्सुक नेत्रों। सत्वराभ्यां पादाभ्यां=तेज कदमों से। स्वागताम्रेडन-तत्परेण वदनेन=स्वागत-स्वागत कहने में तत्पर मुँह से। आश्लेषिताय =आलिंगन करने के लिये। प्रसारिताभ्यां हस्ताभ्यां=फैलाये हुए हाथों से। कौशेयास्तरण-विरोचितायां=रेशमी चादर विछे हुए। वहिर्वेदि-कायां=वाहर के चवूतरे पर। धावमानौ=दौड़ते हुए। परस्परं आलि-ङ्गितुः=एक दूसरे को आलिंगन किया।

शिववीरस्तु=शिवाजी ने तो। आलिङ्गनच्छलेनैव=आलिङ्गन के ही वहाने। स्व हस्ताभ्यां=अपने हाथों से। तस्य स्कन्धौ=उसके कन्धों को। दृढ़ गृहीत्वा=मजवूती के साथ पकड़ कर। सिंहनखै-

चौरा इव लुण्ठका इव दस्यव इव च यवन-सेनापतीनाक्राम्यथ ? समागच्छत सम्मुखम्, यथा शाम्येदस्मच्चन्द्रहासानां चिरप्रवृद्धा महाराष्ट्र-रुधिराऽऽस्वाद-तृषा"

श्रीधरी—ततः=तब। यवन सेनासु शतशः सादिनः=मुसलमानी सेना के सैकड़ों घुड़ सवार। गगनं चोचुम्ब्यमानाः=आकाश को छूने वाली। कृतदिगन्तप्रकाशाः=दिशाओं को प्रकाशित करने वाली। कड़कड़ा ध्वनिधर्षित प्रान्तप्रजाः=कड़ कड़ की आवाज से पास के लोगों को भयभीत कर देने वाली। उड्डीयमान=उड़ते हुये। दन्दह्यमान=अवजले। पटखण्ड=कपड़े के टुकड़ों से। विहित हैम-विहङ्गम-विभ्रमः=स्वर्ण पक्षियों का भ्रम उत्पन्न कर देने वाली। ज्योतिरिंगगायित=उड़ते हुये जुगनुओं के समान। परस्कोटि=करोड़ों। स्फुलिङ्ग-रिंगित-पिंगीकृत प्रान्ताः=चिनगारियों के उड़ने से आसपास के स्थान को पीला बना देने वाली। दो धूयमान=लगातार बढ़ती हुई। धूमघटा-पटल=धुयें के बादलों के समूह से। परिपात्यमान-भसित=गिरती हुई राख से। सितीकृतानोकहाः=पेड़ों को सफेद बना देने वाली। सकलकलध्वनिपलायमानैः पतत्रि-पटलैरिव सोसूच्यमानाः=कल कल की ध्वनि के साथ उड़ते हुये पक्षियों के समूह से सूचित। शिविरघस्मरा ज्वालमाला अवलोक्य=शिविर को जलाने वाली अग्नि की ज्वालाओं को देखकर। सहाहाकारं=हाहाकार करते हुए। तदभिमुखं प्रयाताः=उसकी ओर दौड़े। अपरे च=अन्य लोग। महाराष्ट्रासि-भुजङ्गिनीभिर्दन्दश्यमाना=मराठों की तलवार रूपी नागिन से डँसे जाते हुए। त्रायस्व त्रायस्व=बचाओ, बचाओ। इति=इस प्रकार। आम्रेडं=बार-बार। व्याहरमाणाः=कहते हुये। पलायमानाः=भाग खड़े हुए। अन्ये धीरा वीराश्च=अन्य वीर-वीर लोग—

तिष्ठतरे तिष्ठत=खड़े रहो, खड़े रहो। धूर्त धुरीणाः=अरे धूर्त राजो। महाराष्ट्र हतकाः=अरे दुष्ट मराठो। चौरा इव=चोरों की तरह। लुण्ठका इव=लुटेरों की तरह। दस्यव इव=डाकुओं की तरह। किमित=किस लिये। यवन सेनापतीनाक्राम्पथ=यवन सेनापति पर आक्रमण कर रहे हो। समागच्छत सम्मुखम्=सामने आओ। यथा=जिससे। अस्मच्चन्द्रहासानां=हमारे तलवारों की। चिरप्रवृद्धा=बहुत दिनों से बढ़ी हुई। महाराष्ट्र रुधिरास्वादतृपा शाम्येत्=मराठों की खून पीने की प्यास शान्त हो जाय।

हिन्दी—

तब मुसलमान सेना के सैकड़ों घुड़सवार, आकाश को छूने वाली, दिशाओं को प्रकाशित कर देने वाली, कड़—कड़ाहट की आवाज से आस पास के लोगों को भयभीत कर देने वाली, हजारों अधजले कपड़ों के टुकड़ों से स्वर्ण पक्षियों का भ्रम उत्पन्न कर देने वाली, जुगनुओं के समान करोड़ों चिनगारियों के उड़ने से आस-पास के भू भाग को पीला बना देने वाली, लगातार, बढ़ती हुई धूम घटा से गिरती हुई राख से वृक्षों को सफेद बना देने वाली, शिविर को भस्मसात कर देने वाली अग्नि की ज्वालाओं को देखकर, जिसकी सूचना कल-कल ध्वनि के साथ उड़ते हुये पक्षी दे रहे थे, हा हा कार करते हुए उसी ओर दौड़ पड़े। अन्य मुसलमान सैनिक मराठों की तलवार रूपी नागिन से डँसे गये, कुछ लोग बचाओ, बचाओ कहते हुए भाग गये। कुछ वीर लोग—अरे धूर्तो ! अरे दुष्ट मराठो ! खड़े रहो, खड़े रहो, चोरों की तरह लुटेरों की तरह, डाकुओं की तरह यवन् सेनापति पर क्यों आक्रमण करते हो ? सामने आओ, जिससे हमारी तलवारों की बहुत दिनों से मराठों के खून को पीने की प्यास शान्त हो सके।

—इति सक्ष्वेडं संगर्ज्य युद्धाय सज्जाः समतिष्ठन्त।

तेषां चाश्वानां सव्यापसव्य-मार्गैः खुरक्षुण्णा व्यदीर्यत वसुधा खड्ग-खटखटाशब्दैः सह च प्रादुरभूवन् स्फुलिङ्गाः। रुधिरधाराभि जपा-सुमनस्समाच्छन्नमिवाभूद्रणाङ्गणम् ।

तदवलोक्य गौरसिंहो मृतस्यापजलखानस्य शोणित-शोणं-शोण शरीरं प्रलम्ब-वेणु-दण्डाग्रेषु बद्ध्वा समुत्तोल्य सर्वान् सन्दर्श्य सभेरीना घोषितवान् यद्-"दृश्यतां दृश्यतामितो हतोऽयं यवन-सेनापतिः, ततश्चा ग्निसात् कृतानि ससकल-सामग्री-जातानि-शिविराणि, परितश्च बहूनि विनाशितानि यवन-वीर-कदम्बकानि, तत्किमिति अवशिष्टा यूयं मुध बक-गृध्र-शृगालानां भोज्याः संवर्तध्वे ? शस्त्राणि त्यक्त्वा पलायध्व पलायध्वम्, यथा नेयं भूः कदुष्णैर्भवतां सद्यश्छिन्न-कन्धरा-गलद्रुधिर प्रवाहैर्भवद्रमणीनां च कज्जल-मलिनैर्वाष्प-पूरैरार्द्रा भवेद्"-इति। तदव धार्य, दृष्ट्वा च रुधिर-दिग्धं क्रीडापुत्तलायितं स्वस्वामिशरीरम्, सर्वे ते हतोत्साहा विसृज्य शस्त्राणि, कान्दिशीका दिशो भेजुः ।

ससेनः शिववीरश्च विजय-शङ्खनादैः रोदसी सम्पूर्य, रणाङ्-गणशोधनाधिकारं माल्यश्रीकाय समर्प्य, प्रताप-दुर्गं प्रविश्य मातुश्चरणौ प्रणनाम ।

इति द्वितीयो निश्वासः ।

श्रीधरी—इति=इस प्रकार । सक्ष्वेडंसंगर्ज्य=बार-बार सिंहनाद करके । युद्धाय सज्जा समतिष्ठन्त=युद्ध के लिये तैयार होकर खड़े हो गये । तेषां चाश्वनां=उनके घोड़ों के । सव्यापसव्य मार्गैः=दायें-बांये पैंतरा बदलने से । खुरक्षुण्णा=खुरों से खुदकर । वसुधा व्यदीर्यत= पृथ्वी फट सी गई । खड्ग-खटखटाशब्दैः सह=तलवार के खट खट शब्दों के साथ । स्फुलिङ्गाः प्रादुरभूवन्=चिनगारियां निकलने लगी । रुधिर धाराभिः=रक्त की धाराओं से । रणाङ्गणम्=युद्धभूमि । जपासुमन समाच्छन्नमिव अभूत्=जपापुष्पों से ढक सी गई ।

तदवलोक्य=यह देखकर। गौरसिंह=गौरसिंह ने। मृतस्य अपजलखानस्य=मरे हुए अफजल खां के। शोणित शोण=खून से लाल शरीरं=शरीर को। प्रलम्ब वेणु दण्डाग्रेषु बद्ध्वा=लम्बे बांस के डण्डे पर बांधकर। समुत्तोल्य=उसे ऊंचा उठाकर। सर्वान् सन्दर्श्य=सब को दिखाकर। सभेरीनादं=नगाड़ाबजवाकर। घोषितवान्=घोषित किया। यत्=कि। इतः श्यतां दृश्यतां=इधर देखिये, इधर देखिये। अयं यवन सेनापतिः हतः=यह मुगल सेनापति मार दिया गया है। ततः=उधर। सकल सामग्री जातानि= सारी सामग्री सहित। शिविराणि अग्निसात्कृतानि=शिविरों को जला दिया गया है। परितश्च= और चारों ओर। बहूनि यवन-वीर-कदम्बकानि विनाशितानि= बहुत से मुसलमान वीरों के समूह को नष्ट कर दिया गया है। तत्= इसलिये। अवशिष्टा यूयं=बचे हुए तुम लोग। मुधा=व्यर्थ में। बक-गृध्र-शृगालानां भोज्या संवर्तध्वे=बगुलों, गिद्धों, सियारों का भोजन बनते हो। शस्त्राणि त्यक्त्वा=हथियारों को छोड़कर। पलाय्यवं-पलायध्वं=भाग जाओ, भाग जाओ। यथा=जिसमें। इयं भू=यह पृथ्वी। कदुष्णैः=गरम-गरम। भवतां=आपके। सद्यश्छिन्न=तत्काल कटे हुए। कन्धरागलद्रुधिर प्रवाहैः=गर्दन से बहती हुई खून की धाराओं से। भवद्रमणीनां=आपकी स्त्रियों की। कज्जल मलिनैर्वाष्प पूरैः=काजल से मैले आंसुओं के प्रवाह से। आर्द्रा न भवेत=गीली न हो। तदवधार्य=यह सुनकर। रुधिर दिग्ध=खून से लथपथ। क्रीडा-पुत्तलायितं=खिलौने के समान। स्वस्वामि शरीर दृष्ट्वा च=अपने सेना-पति के शरीर को देखकर भी। तेसर्वे=वे सब। हतोत्साहिन=हतोत्सा-हित होकर। विसृज्य शस्त्राणि=शस्त्रों को छोड़ कर। कान्दिशीका दिशो भेजे=चारों ओर भाग गये। ससैनः शिववीरः=सेना सहित शिवाजी ने। विजय शङ्खनादैः=विजय शंख के घोष से। रोदसी सम्पूर्य=

पृथ्वी और अन्तरिक्ष को गुंजाकर। रणाङ्गण शोधना धिकारं=युद्ध भूमि की सफाई करवाने के अधिकार को। माल्यश्रीकाय समर्प्य= माल्यश्रीक को देकर। प्रताप दुर्ग प्रविश्य=प्रताप दुर्ग में प्रवेश करके। मातुश्चरणौ=माता के चरणों में। प्रणनाम=प्रणाम किया।

हिन्दी—

बार-बार ऐसा कहकर सिंहनाद करते हुए। युद्ध के लिये तैयार होकर वे खड़े हो गये।

उनके घोड़ों के दाहिने-बाँये पैतरा बदलने के कारण खुरों से खुदकर पृथ्वी विदीर्ण सी हो गई। तलवारों के खट-खट शब्दों के साथ ही चिनगारियां निकलने लगी। खून की धाराओं से रण भूमि जपा पुष्पों से ढकी हुई के समान हो गई।

यह देखकर गौरसिंह ने मरे हुए अफजल खाँ के खून से लथपथ शरीर को लम्बे बाँसों की नोक पर बाँध कर ऊपर उठाया, सब को दिखाकर नगाड़े की आवाज के साथ घोषित किया कि—इधर देखो, यह मुसलमान सेनापति मार डाला गया है और इधर सारी सामग्री के साथ सारे मुसलमान शिविर में आग लगा दी गई है, चारों ओर बहुत से मुसलमान वीरों को मार दिया गया है। अतः बचे हुए तुम लोग व्यर्थ में बगुलों, गिद्धों तथा सियारों का भोजन क्यों बनते हो? हथियारों को छोड़ कर भाग जाओ, भाग जाओ जिससे यह भूमि तुम्हारी तुरन्त कटी गरदन से बहती हुई खून की धाराओ तथा तुम्हारी स्त्रियों के काजल से मैले आंसुओं के प्रवाह से गीली न हो। यह सुनकर तथा खून से लथपथ खिलौना बनाये हुए अपने सेनापति के शरीर को देखकर वे सभी लोग शस्त्रों को छोड़कर, डरके कारण चारों ओर भाग गये।

वीरवर शिवाजी ने सेना सहित विजय शंख उद्घोष से पृथ्वी और अन्तरिक्ष को गुंजाते हुए, रण भूमि की सफाई कराने का काम माल्यश्रीक को सौंपकर प्रताप दुर्ग में जाकर, माता के चरणों में प्रणाम किया ।

[द्वितीय निश्वास का हिन्दी अर्थ समाप्त]

॥ श्रीः ॥

अथ तृतीयो निश्वासः

"जीवन् नरो भद्रशतानि पश्येत्"

—स्फुटकम्

"संसारेऽपि सतीन्द्रजालमपरं यद्यस्ति तेनापि किम्"

—भर्तृहरिः ।

तत्र पर्ण-कुटीरे तु कं कथमपि दाडिमाद्यास्वादन-तत्परां कुसुम-गुच्छैर्मनो विनोदयन्तीं बालिकां गुरोः समीपे परित्यज्य, तदाज्ञया तत्पितरौ समन्वेष्टुम्, अन्तर्गोपित-क्षुरप्र-च्छुरिकां यष्टिकामेकां हस्तेन धृत्वा, तैरेव श्याम-श्यामैः गुच्छ-गुच्छैः लोल-लोलैः कुञ्चित-कुञ्चितैः कचैः ब्रह्मचारि-वटु-वेष एव श्यामवटु-रासन्न-ग्रामटिका-दिशि-समगात् ।

ततो "हन्त ! कथमद्यापि शूली त्रिशूलेन नैतान् शूलाकरोति ? कथं खड्गिनी खड्गेन न खण्डयति ? कथं चक्री चक्रेण न चूर्णयति ? कथं पाशी पाशैर्न पाशयति ? कथं हली हलेन नावहेलयति ? कथं वा जम्भारातिर्दम्भोलिघातैर्दम्भिन एतानम्भोधि-जल-स्तम्भा-रम्भेषु न पातयति ? अहह !, क इतोऽप्यधिकोऽनर्थो भविता यद् भगवानवतरिष्यति । शिव ! शिव !! न शक्यते द्रष्टुमपि यदेतैर्निर्दय-हृदयैः परमपूजनीयानां ब्राह्मणानामपि अत्यल्पवयस्का अपि बालिका अपह्रियन्ते । धिगेतान् ! धर्मादपि निर्भीकान् अभीकान्"—इति चिन्ता-सन्तान-वितानैकताने एव ब्रह्मचारि गुरौ, सपद्येवन्यविशत श्यामवटुः सह देवशर्म्मणा वर्षीयसा

ब्राह्मणेन। स तु वाष्पक्षालितोपनयनः शोकाधिक-कम्पित-गात्रयष्टिः प्रविश्यैव, दृष्टैव तां बालिकां "कुतः कुतः कोशले !" इत्युदीर्य तामङ्को जग्राह।

श्रीधरी—'जीवन् नरः=जीवित रहते पर मनुष्य, भद्रशतानि =सैकड़ों सुखों को, पश्येत्=देख सकता है।'

'संसारेऽपि सति=संसार के होते हुए भी, यदि अपरं इन्द्र जालं अस्ति=यदि कोई दूसरा इन्द्रजाल किंवा जादू है। तेनापि किम्= उससे क्या प्रयोजन, अर्थात् सृष्टि का सबसे बड़ा इन्द्रजाल संसार ही है।'

तत्र पर्ण कुटीरे तु=उस पर्ण कुटी में, कथं कथमपि==किसी प्रकार, दाडिमाद्यास्वादनतत्परा=अनार आदि खाने में लगी हुई, कुसुम गुच्छैर्मनो विनोदयन्ती=फूलो के गुच्छों से मन को बहलाती हुई। बालिकां=लड़की को। गुरोः समीपे परित्यज्य=गुरूजी के पास छोड़कर। तदाज्ञया=गुरू जी की आज्ञा से। तत्पितरौ=उस लड़की के माता पिता को। समन्वेष्टुम्=ढूँढने के लिये। एकां-एक। अन्तर्गोपित-क्षुरप्रच्छुरिकां= तेज छुपी छिपी है जिस मे ऐसी छड़ी,यष्टिका=(गुप्ती) को। हस्तेन धृत्वा=हाथ से पकड़ कर। तैरेव श्याम श्यामैः=काले काले। गुच्छ-गुच्छैः=घने। लोल लोलैः=चञ्चल। कुञ्चितैः कचैः= घुँघराले बालों वाला। ब्रह्मचारी वटु वेषएव=ब्रह्मचारी के वेष में ही। आसन्न=समीपवर्ती ग्रामटिका दिशि=ग्राम की ओर। समगात्= चल दिया।

ततः—इसके बाद। हन्त कथमद्यापि शूली=हाय क्यों अब भी शंकर। त्रिशूलेन नैतान् शूला करोति=त्रिशूल से इन विधर्मियो को क्यों नहीं वेध देते। खड्गनी खड्गेन कथ न खण्डयति=खड्ग धारिणी दुर्गा इनके टुकड़े क्यों नहीं करती। चक्री चक्रेण कथं न चूर्णयति= विष्णु अपने इन्हें क्यो नहीं पीसते। पाशी पाशैन पाशयति=वरुण अपने

पाश से इनको क्यों नहीं बांधते । हली कथं न अवहेलयति = बलराम इनकी क्यों अवहेलना नही करते । जम्भारातिर्दम्भोलिधातैर्दम्भिन एतानम्भोधि-जलस्तम्भारम्भेषु न पातयति = इन्द्र क्यों इन अभिमानियों को वज्र मारकर समुद्र में क्यों नही फेंक देते । अहह ! कस्तोऽप्याधिको-ऽनर्थो भविता = ओह, क्या इससे भी बड़कर अनर्थ हो सकता है । यद् भगवान् अवतरिष्यति = जब भगवान् अवतार लेंगे । शिव शिव न शक्यते द्रष्टुमपि = शिव शिव देखा भी नहीं जाता । एतैर्निदय हृदयैः = ये निर्दय यवन, परम पूजनीयानां ब्राह्मणानामपि = पूज्य ब्राह्मणों की भी । अस्यत्पवयस्त्वां=अत्यन्त कम उम्र की भी । बालिका अपसियन्ते = लडकियों का अपहरण करते हैं । धर्मादपि निर्भीकान् अभीकान् एतान् धिक् = धर्म से भी न डरने वाले इन लोगों को धिक्कार है । इति = इस प्रकार । ब्रह्मचारि गुरौ = ब्रह्मचारि गुरु के । चिन्ता सन्तानविता-नैक ताने एव = चिन्तित होने पर । श्यामवटुः सह = श्यामवटु के साथ । देवशर्मणा वर्षीयसा ब्राह्मणेन सपदेव न्यविशत = देवशर्मा नामक बूढे ब्राह्मण ने प्रवेश किया । सतु = उनका । वाष्प क्षालितो पनयनः = चश्मा आंसुओं से भीगा हुआ था । शोकाधिक कम्पितगात्र यष्टि = शोक से शरीर कांप रहा था । प्रविश्यैव = आते ही । दृष्टैव तां बालिकां = उस लड़की को देखकर । कुतः कुतः काशले = कोशले तुम कहां । इत्युदीर्य = ऐसा कहकर । तां अङ्के जग्राह = उसको गोद में पकड़ा ।

हिन्दी—

"जीवित रहने पर मनुष्य सैकड़ो सुखों को देख सकता है ।'

'संसार के होते हुए भी यदि कोई दूसरा इन्द्रजाल या जादू है, तो उससे क्या प्रयोजन ? क्यों कि संसार ' ही स्रष्टा की सृष्टि का सबसे बड़ा जादू है ।'

उस पर्ण कुटी में किसी प्रकार अनार आदि को खाने में लगी हुई, पुष्प स्तवकों मन को बहलाती हुई, उस बालिका को गुरू जी

के पास छोडकर, उनकी आज्ञा से, उस बालिका के माता-पिता का पता लगाने के लिये एक तेज छुरी वाली गुप्ती को हाथ में लिये हुए काले, सुन्दर, घने और घुंघराले बालों वाला श्यामवटु ब्रह्मचारी के वेप मे ही पास के गाँव की ओर चल दिया ।

हाय ! इतना अत्याचार होने पर भी शङ्कर इन विधर्मियों को अपने त्रिशूल से क्यों नही बेंधते ? खड्ग धारिणी दुर्गा अपने खड्ग से इनके टुकडे क्यो नही करती ? भगवान् विष्णु अपने सुदर्शन चक्र से इनका चूर्ण क्यों नही करते ? हलधर बलराम इनकी अवहेलना क्यों नहीं करते ? इन्द्र अपने वज्र से इन अभिमानियो को नष्ट कर के इन्हें जलस्तम्भ के रूप में परिणत क्यो नही कर देता, ओह ! क्या इससे अधिक और अनर्थ होगा ? जब भगवान् अवतार लेंगे, शिव, शिव ! देखा भी नही जाता । ये निर्दय मुसलमान परम पूजनीय ब्राह्मणों की अत्यन्त कम अवस्था की भी लडकियों का अपहरण करते है । ब्रह्मचारी गुरु इसी प्रकार की चिन्ताओं से चिन्तित हो रहे थे कि श्यामवटु के साथ वृद्ध ब्राह्मण देव शर्मा ने प्रवेश किया । उनका चश्मा आंसुओं से गीला हो रहा था । बालिका को देखते ही उन्होंने कोशले ? कोशले ! तुम यहां कैसे ? यह कह कर उसे गोद में उठा लिया ।

साऽपि प्रक्षिप्य दाडिम-खण्डम्, निरस्य च कोरक-स्तवक-क्रीडनकम्, त कराभ्यां कण्ठे गृहीत्वा मुक्तकण्ठ रुरोद ।

वृद्धोऽपि च एक कर तत्पृष्ठे विन्यस्य, अन्येन च तस्याः शिरः परिमृशन् "कोशले ! कानि पातकानि पूर्वजन्मयनि कृतवत्यसि ? यद् बाल्य एव त्वत्पिता सङ्ग्रामे म्लेच्छ- हतकर्धर्मराज-नगरादध्व-न्यद्ध्वन्यः कृतः । माता च तव ततोऽपि पूर्वमेव कथावशेषा सवृत्ता, यमलौ भ्रातरौ च तव द्वादशवर्षदेश्यावेव आखेट-व्यसनिनौ महार्ह-भूषण-भूषितौ तुरगा-रूढौ वनं गतौ दस्युभिरपहृताविति न श्रूयते तयोर्वार्ताऽपि, त्व तु मम यजमानस्य पुत्रीति स्वपुत्री मवर्यैव सह नीता, वर्द्धसे च । अहह !

कथं वारं वारं बालैव सुन्दरकन्या-विक्रय-व्यसनिभिर्यवन-वराकैरपह्रियसे ? भगवदनुग्रहेण च कथं कथमपि मत्कर-मुक्ता पुनः प्राप्यसे। परमात्मन् ! त्वमेव रक्षैनामनाथां दीनां क्षत्रिय-कुमारीम्"–इति सकरुणं विललाप।

तदाकर्ण्य सर्वेऽपि चकिताः स्तब्धाः अश्रुमुखाश्च संवृत्ताः। कुटीराध्यक्षो ब्रह्मचारी च निजमपि किञ्चिद् बन्धु-वियोग-दुखं स्मारित इव बाष्प-व्रजोद्गम-दुर्दिन-ग्लपित-मुखः कथं कथमपि धैर्यमाधाय वदनं पटेन परिमृज्य पुनरवदधे।

तावत्कुटीराद् बहिः कस्मिंश्चित् कार्ये व्यासक्तो गौरवटुर्विलापेनैतेन कर्णयोराकृष्यमाण इव त्वरितमन्तः प्रविवेश। पौनः पुन्येन दृष्ट्वा च तां कन्यां देवशर्माणं वृद्धं ब्राह्मणञ्च, परिपक्व-ताली-दलीभूत-कपोलपालीकः, उदञ्चित-रोममाली, त्वरित-कोष्ण-श्वासप्रश्वास-शाली, शारदशर्वरी-शर्वरी-सार्वभौम–किरण–किरणोद्भूतोद्भूत–कीलालाली–व्यालीढ-चन्द्रकान्त-जालीभूत-लोचनः, बाष्पावरुद्ध-कण्ठः, कमपि तान्तं स्मारित इव, कमपि चिरविनष्टं प्रेयांसं प्रापित इव, किमपि चिरानुभूतं दुःखं पुनरनुभावित इव च स्मारं स्मारमिव किमपि स्वसमानदशं श्यामवटुं सम्बोध्य कातरेण भज्य-मानेन कम्पमानेन च स्वरेणाचकथत्—

'श्याम ! श्याम ! शृणोषि शृणोषि ?" इति।

अथ श्यामवटुरपि अश्रुभिः स्नातो गौरस्य करं गृहीत्वा "तात ! शृणोमि, सेयं सौवर्णी अस्मद्भगिनी, स चायं पूज्यपादः पुरोहितः" इति कथयन् गौरमपि प्रकटं रोदयन् रुरोद।

श्रीधरी—साऽपि = उस लड़की ने भी। प्रक्षिप्य दाड़िम खण्डम् = अनार के टुकड़े को फेंककर। कोरक स्तबक क्रीडनकं निरस्य च = कलियों के गुच्छे को फेंक कर। तं = उस देवशर्मा के। कराभ्यां कण्ठे

गृहीत्वा = गले में बाहें डालकर । मुक्तकण्ठं सरोदं = जोर से रोने लगी ।

वृद्धोऽपि = देवशर्मा ने भी । एकं करं तत्पृष्ठे विन्यस्य = एक हाथ उसकी पीठ पर रखकर, अन्येन च = दूसरे हाथ से । तस्याः शिरः परिमृशन् = उसके शिर को सहलाते हुए कहा, । कोशले कानि पातकानि पूर्वजन्मनि कृतवत्यसि = तुमने पूर्व जन्म में कौन से पाप किये हैं । यद् = कि । बाल्यएव = बचपन में ही । त्वत्पिता = तुम्हारे पिता संग्रामे = युद्ध में । म्लेच्छहतकैधर्मराज नगरादध्वन्यध्वंन्यः कृतः = म्लेच्छों ने मार डाले । माता च = माता भी । तव = तुम्हारी । ततोऽपि पूर्वमेव = उससे भी पहले ही । कथावशेषा संवृत्ता = इस लोक से विदा हो गई । यमलौ भ्रातरौ च = जुड़वां भाई भी । द्वादशवर्षे देश्यावेव = बारह वर्ष की अवस्था में ही । आखेट व्यसनिनौ = शिकार खेलने के शौकीन । महार्ह भूषण भूषितौ = बहुमूल्य आभूषणों को पहनकर । तुरंगवारूढ़ा = घोड़ों पर चढ़कर । वनंगतौ = वन में गये । दस्युभिरपहृतौ = डाकुओं ने उनका अपहरण कर लिया । तयोर्वार्ताऽपि न श्रूयते = उनकी खबर भी नहीं सुनाई दी । त्वं तु = तुम । मम यजमानस्य पुत्रीति = मेरे यजमान की पुत्री हो इसलिये । स्वपुत्रीव = अपनी पुत्री के समान । मयैव मह नीता = मैंने अपने पास रखा । वर्द्धयसे च = तुम्हारा पालन पोषण किया । अहह = ओह ! कथं = कैसे, वारंवारं = बार-बार, बाल्यैव = बचपन मे ही । सुन्दर कन्या विक्रय-व्यसनिभिर्यवन वराकैः अपहृियसे = सुन्दर कन्याओं को बेचने के शौकीन नीच मुसलमानों के द्वारा तेरा अपहरण किया गया । भगवदनुग्रहेण = भगवान् की कृपा से । कथं कथमपि = किसी न किसी प्रकार । मत्करमुक्ता पुनः प्राप्यसे = मेरे हाथों से छूटकर पुनः मुझे मिलती रही हो । परमात्मन् = हे ईश्वर । त्वमेवरक्ष = तुम्ही रक्षा करो । एनां अनाथां दीनां क्षत्रिय कुमारीम् = इस अनाथ और दीन क्षत्रिय कुमारी की ।

इति = इस प्रकार। सकरुणं विललाप = करुणा पूर्ण विलाप करने लगा तदाकर्ण्य = यह सुनकर। सर्वेऽपि = सभी लोग। चकिताः स्तब्धाः अश्रूमुखाश्च संवृत्ताः = स्तब्ध एवं चकित हो गये और उनके आँसू बहने लगे। कुटीराध्यक्षो ब्रह्मचारी च = कुटी के स्वामी ब्रह्मचारी को भी। निजमपि = अपने। किञ्चिद् बन्धु वियोग दुःखं = बन्धु के वियोग के दुःख का। स्मारित इव = स्मरण होने से। वाष्प-व्रजोद्गम दुर्दिन ग्लपित मुखः = आंसुओं के बहने से मुख मलिन हो गया। कथं कथमपि = किसी प्रकार धैर्यमाधाय = धैर्य रखकर। वदनं पटेन प्ररिमृज्य = मुख को कपड़े से पोंछ कर। पुनः अवदधे = फिर सावधान हुए।

तावत् = तभी। कुटीराद् बहिः = कुटी के बाहर। कस्मिंश्चित् कार्ये व्यासक्तो = किसी काम में लगा हुआ। गौरबटुः विलापेनैतेन = गौर बटु इस विलाप से। कर्णयोराकृष्यमान इव = आकृष्ट सा होकर। त्वरितमन्तः प्रविवेश = शीघ्र अन्दर चला गया। तां कन्या = उस लड़की को। पौनः पुन्येव दृष्ट्वा = बार-बार देखकर। देवशर्माणं वृद्ध ब्राह्मणं च = देवशर्मा नामक बूढ़े ब्राह्मण को भी देखकर। परिपक्व तालीदली भूतकपोल पालीकः = उसके गाल पके हुए ताड़ पत्र के समान पीले पड़ गये। उदञ्चित रोममाली = शरीर मे रोमाञ्च हो गया। त्वरित कोष्ण श्वास-प्रश्वास शाली = वह जल्दी-जल्दी साँस लेने लगा। शारद-शर्वरी-सार्वभौमकिरण किरणोद्भूत कीलालाली = उसकी आँखें शरत्काल की चन्द्रकिरणों के स्पर्श से उत्पन्न जल कणों से व्याप्त। चन्द्रकान्त जालीभूत लोचनः = चन्द्रकान्त मणि जैसी होगई। वाष्पावरुद्धकण्ठः = उसका गला आंसुओं से रुंध गया। किमपि वृत्तान्त स्मारित इव = जैसे उसे कोई बात याद आगया हो। कमपि चिर विनष्ट प्रेयांसं प्रापिय इव = कोई बिछुड़ा हुआ प्रेमी मिल गया हो। किमपि चिरानुभूतं दुःखं पुनरनुभावित इव = किसी अनुभूत दुःख की पुनः अनुभूति हुई हो। स्मारं स्मारं किमपि = इस तरह कुछ याद करता हुआ

मा । श्यामवटुं सम्बोध्य=श्यामवटु को सम्बोधित करके । कातरेण भज्यमानेन कम्पमानेन च स्वरेणाचकथत्=कातर, लड़-खड़ाते हुए एवं कांपते हुए स्वर से बोला ।

श्याम-श्याम शृणोषि शृणोषि=श्याम-श्याम, सुनते हो, सुनते हो । अथ=तब । श्यामवटुरपि=श्यामवटु भी । अश्रुभिः=स्नातः=आंसुओं से नहाया हुआ । गौरस्य करं गृहीत्वा=गौरसिंह का हाथ पकड़ कर । तात=भाई । शृणोमि=सुन रहा हूँ । सेयं सौवर्णी अस्मद्भगिनी=यही हमारी बहिन सौवर्णी है । स चायं पूज्यपादः पुरोहितः=यही पूज्य पुरोहित हैं । इति कथयन्=ऐसा कहता हुआ । गौरमपि प्रकटं रोदयन्=गौरसिंह को प्रकट में रुलाता हुआ । सरोद=रोने लगा ।

हिन्दी—

वह भी अनार के टुकड़े को और फूलों के गुच्छे को फेंक कर, उस वृद्ध के गले में अपनी बांहों को डालकर जोर-जोर से रोने लगी । वृद्ध भी एक हाथ उसकी पीठ पर रखकर और दूसरे हाथ से उसके सिर को सहलाते हुए इस प्रकार करुण विलाप करने लगा—

कौशले ! तुमने पूर्वजन्म में कौन से पाप किये थे कि तुम्हारे पिता तुम्हारे बचपन में ही युद्ध में म्लेच्छों के द्वारा मार दिये गये । तुम्हारी माता उससे भी पहले इस लोक को छोड़ गई । तुम्हारे जुड़वां भाई जो शिकार खेलने के बड़े शौकीन थे, बारह वर्ष की अवस्था में बहुमूल्य आभूषणों को पहनकर घोड़ों पर सवार होकर वन गये और डाकुओं के द्वारा हर लिये गये, उनका अब तक कोई समाचार भी नहीं मिला । तुम मेरे यजमान की पुत्री हो, इसलिये अपनी पुत्री के समान मैंने तुम्हें अपने पास रखा और पालन-पोषण किया । ओह ! सुन्दर कन्याओं को बेचने वाले नीच मुसलमानों के द्वारा तुम्हारा कई बार अपहरण किया गया, किन्तु ईश्वर की कृपा से किसी न किसी प्रकार तुम मुझे मिलती ही

रहीं । हे ईश्वर ! तुम्हीं इस अनाथ और दीन क्षत्रिय कुमारी की रक्षा करो ।

यह सुनकर सब लोग चकित से, स्तब्ध से रह गये और उनकी आँखों में आंसू आ गये । कुटी का अध्यक्ष ब्रह्मचारी भी मानो अपने किसी बिछुड़े हुए बन्धु का स्मरण हो आने से रोने लगा, आँसुओं से उस का मुंह मलीन हो गया । किसी प्रकार धैर्य धारण करके दुपट्टे से मुंह को पोंछ कर वे पुनः सावधान हुए । उस कुटी के बाहर किसी काम में लगा हुआ गौरबटु भी इस करुण विलाप के कान में पड़ते ही कुटी के अन्दर आगया ।

बार-बार उस लड़की और देवशर्मा ब्राह्मण को देखकर उसके गाल पके हुए ताड़ के पत्ते के समान पीले पड़ गये, उसका शरीर रोमाञ्चित हो गया, वह जल्दी-जल्दी सांसें लेने लगा, उसकी आंखें शरत्कालीन चन्द्र किरणों के स्पर्श से उत्पन्न जल कणों से व्याप्त चन्द्र कान्त मणि के समान अश्रुपूर्ण हो गईं । उसका गला रुंध गया, जैसे उसे कोई बात याद हो आई हो, जैसे उसे चिर अनुभूत दुःख की फिर अनुभूति होने लगी हो, कुछस्मरण सा करता हुआ वह श्यामसिंह को सम्बोधित करके कातर, लड़-खड़ाते हुए एवं कांपते हुए स्वर में बोला–

श्याम ! श्याम !! सुनते हो, सुनते हो ! उसके बाद श्यामबटु ने आंसुओं से नहाते हुए, गौरबटु का हाथ पकड़ कर कहा—भाई, सुनता हूँ । यही हमारी बहन सौवर्णी है और यही हमारे पूज्य पुरोहित है । इस प्रकार गौरबटु को भी रुलाता हुआ वह रोने लगा ।

तदाकर्ण्य क्षणं सर्वेऽपि कुटीरस्थाः काष्ठविग्रहा इव चित्रलिखिता इव च संवृत्ताः ।

देवशर्माऽपि च स्तब्धीभूतामिव कन्यकां तस्मिन्नेव कुशविष्टरे उपवेश्य चक्षुषी स्थिरीकृत्य "वत्सौ ! किं वीरस्य खड्गसिंहस्य तनयौ युवाम् ? इति कथयन् वली-पलितौ वार्द्धक्य-वेपमानौ बाहू प्रससार ।

तौ चाऽऽत्मनः पित्रोरपि पूजनीयं पुरोहितं साष्टाङ्गं प्रणेमतुः । स च कथमप्युत्थाय, उत्थाप्य च तौ, समाश्लिष्य स्वनयननारिधाराभिस्ताव-भ्यषिञ्चत् ।

ततो मुहूर्तं यावत्, परितः प्रसर्पिभिः करुणोद्गार-प्रवाहैरेव पर्य-पूर्यत सा कुटी ।

अथ कथमपि रिङ्गत्तुङ्ग-तिमिङ्गिलं-गिल-परिवर्त-प्रसङ्ग-सङ्ग-समङ्ग-तरङ्ग-रङ्गप्राङ्गण-सोदरीभूतं हृदयं वशीकृत्य, अनुजां सुवर्ण-वर्णां सौवर्णीनाम्ना बाल्य एव प्रसिद्धां कोशलामङ्कं संस्थाप्य, समुप-विष्टे गौरे; श्यामेऽपि च तस्या एव समीपे समुपविश्य तस्या एव पृष्ठं परिमृजति; पूज्यपादे पुरोहिते च क्रियासमभिहारेणोद्गच्छतो बाष्पान् पटान्तेन परिहरति; कुटीराध्यक्षः कुतुक- परवशः सम्बोध्य गौर-श्यामौ समुवाच—

श्रीधरी—तदाकर्ण्य = यह सुनकर, क्षण = थोड़ी देर के लिये, सर्वेऽपि कुटीरस्थाः = कुटी में स्थित सभी लोग, काष्ठविग्रहा इव = लकड़ी की मूर्ति के समान, चित्रलिखिता इव = चित्र लिखित से, सवृत्ता = हो गये, देवशर्माऽपि च = देवशर्मा ने भी, स्तब्धीभूतामिव कन्यकां = स्तब्ध हुई सी उस लकड़ी को, तस्मिन्नेवकुशविष्टरे = उसी कुशासन में, उपवेश्य = बिठाकर, चक्षुषी स्थिरीकृत्य = चक्षुओं को स्थिर करके, वत्सौ = बेटो, किं = क्या, वीरस्य खड्ग सिंहस्य तनयौ युवाम् = क्या तुम दोनों वीर खड्ग सिंह के बेटे हो, इति कथयन् = यह कहते हुये, वलीपलितौ = श्वेत रोमों से युक्त, वार्धक्य वेपमानौ = बुढ़ापे से काँपते हुये, बाहू = हाथों को, प्रससार = फैलाया, तौ चाऽऽत्मनः = उन दोनों ने अपने, पित्रोरपि पूजनीयं = पिता के भी पूजनीय, पुरोहित = पुरोहित को, साष्टाङ्गं प्रणेमतुः = साष्टाँग प्रणाम किया, स च = देवशर्मा ने कथमप्युत्थाय = किसी तरह उठकर, तौ समाश्लिष्य = उन दोनों को

गले लगाकर, स्वनयन वारिधाराभिः=अपने आँसुओं से, तावभ्य सिंचत् =उन दोनों को वहला दिया =ततो मुहूर्तंयावन्तु=इसके वाद थोड़ी देर तक तो, सा कुटी=वह कुटी, परितः प्रसार्पिभिः=चारों ओर फैली हुई, करुणोद्गार प्रवाहैरेव=करुणा की धारा से, पर्यपूर्यंत=आप्लावित हो गई।

अथ=इसके वाद, रिगत्तुंग तिमिंगल गिल-परिवर्त प्रसंग-संग सभंग-तरंग रंग प्रांगण सोदरीभूतं=तिमिगिल गिल के चारों ओर घूमने से छितरा जाने वाली लहरों के नर्तन के समान, हृदयं=अपने हृदय को, वशीकृत्य=वश में करके, सुवर्ण वर्णा- सौवर्णी नाम्ना वाल्य एव कोशलेति प्रसिद्धां अनुजां=सोने के समान रंग वाली सुवर्णा नामक वचपन में कोशला नाम से प्रसिद्ध वहिन को, अंके संस्थाप्य=गोद में विठाकर, समुपविष्टे गौरे=गौर सिंह के वैठ जाने पर, श्यामेऽपि च= श्याम सिंह के भी, तस्या एव समीपे समुपविश्य=उसी लड़की के पास वैठकर तस्या एव पृष्ठं परिमृजति=उसकी पीठ सहलाने पर, पूज्यपादे पुरोहिते च=पूज्य पुरोहित के, क्रियासमभिहारेणोद्गिरतो वाष्पान्= वार-वार निकलने वाले आंसुओं को, पटान्तेन परिहरति=दुपट्टे से पोंछने लगने पर, कुटीराध्यक्षः=कुटी का स्वामी, कुतुकपरवशः= उत्सुकता वश, गौरश्यामौ सम्वोध्य=गौरसिंह और श्याम सिंह को सम्वोधित करके, समुवाच=वोले।

हिन्दी—

उस रोदन को सुनकर कुटी के सभी लोग काठ की मूर्ति के समान किंवा चित्र के समान हो गये। देवशर्मा ने भी स्तब्ध हुई सी उस कन्या को उसी कुशासन में विठाकर और अपनी आंखों को स्थिर करके कहा—वेटों! क्या तुम दोनों वीर खड्ग सिंह के वेटे हो? यह कहकर श्वेत रोमों से भरी और वुढ़ापे के कारण कांपती हुई वाँहें फैला दीं। उन दोनों ने अपने पिता के भी पूजनीय पूज्य पुरोहित को

दण्डवत् प्रणाम किया। देव शर्मा ने किसी प्रकार उठकर और उन दोनों को उठाकर, उन्हें गले लगाकर अश्रु धारा से उन्हें नहला दिया। तदनन्तर थोड़ी देर के लिये वह कुटी चारों ओर फैली हुई करुणा की धारा से आप्लावित सी हो गई।

इसके वाद तिमिंगलगिल के चारों ओर घूमने से छिन्न-भिन्न हो जाने वाली लहरों की तरह अपने हृदय को वश में करके, सोने के समान रंग वाली सौवर्णी नामक, वचपन से कोशला नाम से प्रसिद्ध अपनी वहिन को गोद में विठाकर गौरसिंह के वैठ जाने पर, श्यामसिंह ने भी उस लकड़ी के पास ही वैठकर उसकी पीठ को सहलाने पर, पूज्य पुरोहित के वार-वार निकलने वाले आँसुओं को उत्तरीय से पोंछने पर उस कुटी का अध्यक्ष ब्रह्मचारी उत्सुकता वश गौरसिंह और श्यामसिंह को सम्वोधित करके वोला--

---

"वत्सौ गौर-श्यामौ! जानेऽहं वां क्षत्रियोचिताचारेषु चातन्द्रितौ सनातनधर्म-विप्लवासहनौ नीतिकुशलौ परोपकार-व्यसनिनौ-दुर्बलात्कार-परायण-तुच्छ-यवन-च्छेदेच्छोच्छल-च्छटाच्छन्नौ, वाला-वप्यवालपराक्रमौ, सकल-कला-कलाप-कोविदौ गुणि-गण-गण-नीयौ च, किन्तु नाद्यावधि कदाऽपि भवतोर्जन्मस्थानादि-प्रश्न-प्रसंगोऽभूत्, आकर्ण्यं च भवतोर्दुःखमयमपि विलापमयमपि चाऽऽलापं महद् कुतूहलमस्माकं वर्धते। तत्समाश्वस्य धैर्यमाधाय संक्षेपेण कथ्यतां का भवतोर्जन्मभूः? कथमत्राऽऽगतौ? किमेषा सहोदरा स्वसा? सत्यमेव किं भुवं विरहय्य लोकान्तरं समास्थितवन्तौ युष्मत्पितरौ? क्व यौष्माकीण-पैतृपितामहिक-सम्पत्तिः? किं भवतोरुद्देश्यम्?" इत्यादि।

तदाकर्ण्य चक्षुषी विमृज्य मुखं प्रोञ्छ्य कण्ठं रुन्धतो वाष्पान् कथमपि संरुध्य इन्दीवरयोरुपरि भ्रमतो भ्रमरानिव लोचनयोरुच्चतारा

कुञ्चित-कुञ्चितान् मेचकान् कचानपसार्य निस्तन्द्रेण मन्द्रेण स्वरेण गौरसिंहो वक्तुमारेभे—

श्रीधरी—वत्सौ गौर श्यामौ=वेटे गौ और श्याम। जानेऽहं=मैं जानता हूँ कि, वां=तुम दोनों, क्षत्रियोचिताचारेषु=क्षत्रियों का सा आचरण करने वाले, अतन्द्रितौ=आलस्यरहित, सनातन धर्म विप्लवासहनौ=सनातन धर्म का ह्रास सहन न कर सकने वाले, नीतिकुशलौ=नीति निपुण, परोपकारी, दुर्वलात्कार परायण-तुच्छ-यवन च्छेदोच्छोच्छलच्छटा च्छन्नौ=अत्याचारी दुष्ट यवनों को की काटने इच्छा से उत्पन्न कान्ति से युक्त, वालावप्यवाल-पराक्रमौ=बालक होते हुये भी महापराक्रमी सकल-कला-कलाप-कोविदौ=सभी कलाओं में निपुण, गुणिगण-गणनीयौ=गुणियों मे गिने जाने योग्य हो, किन्तु अद्यावधि=लेकिन आज तक, भवतोर्जन्मस्थानादि प्रश्न प्रसगो न अभूत=तुम दोनों का जन्म स्थान आदि पूछने का प्रसंग नहीं आया, भवतोर्दुःखमयमपि विलापमय मपि=आज तुम्हारे दुःख पूर्ण विलाप पूर्ण, चाऽऽलाप आकर्ण्य=बातचीत को सुनकर, अस्माकं महत्कुतूहल वर्वर्ति=मुझे अत्यन्त कौतूहल हो रहा है। तत्=इसलिये, समाश्वस्य=आश्वस्त होकर, धैर्यमाधाय=धर्य धारण करके, सक्षेपेण कथ्यता=सक्षेप मे बताओ, भवतोर्जन्मभूः का=तुम्हारा जन्म स्थान कहाँ है कथमत्र आगतौ=तुम दोनो यहाँ कैसे आये, किमेषा सहोदरा स्वसा=क्या यह तुम्हारी सगी वहिन है. सत्यमेव कि भुव विरहय्य लोकान्तर सनाथितवन्तौ युष्मत्पितरौ=क्या सच ही तुम्हारे माता-पिता ससार को छोड कर दूसरे लोक मे चले गये है, यौष्माकीण-पैतृपैतामहिक-सम्पत्तिः क्व=तुम्हारी पितृपितामहिक सम्पत्ति कहाँ है, कि भवतोरुद्देश्यम्=तुम्हारा उद्देश्य क्या है, इत्यादि ॥

तदाकर्ण्य=यह सुनकर, चक्षुषी विमृज्य=आँखों को पोंछ कर, मुखं प्रोञ्छ्य=मुख को पोंछ कर, कण्ठं रून्धतो वाष्पान् कथमपि संरुध्य=गला रूँधने वाले आँसुओं को किसी प्रकार रोक कर, इन्दीवरयो रुपरि=नीलकमल पर, भ्रमतोभ्रमरानिव=मडराते हुये भौंरों के समान, लोचननयो रञ्चितान्=आँखों को शोभित करने वाले, कुञ्चित-कुञ्चितान्=घुंघराले, मेचकान्=काले, कचानपसार्य=बालों को हटा कर, विस्तन्द्रेण=आलस्यरहित होकर, मन्द्रेण-स्वरेण=गम्भीर स्वर में, गौरसिंहो वक्तुमारभत=गौर सिंह ने कहना आरम्भ किया।

हिन्दी—

बेटे गौर और श्याम! मैं जानता हूँ कि तुम दोनों आलस्य रहित होकर, क्षत्रियों के से आचरण करने वाले, सनातन धर्म के ह्रास को न सह सकने वाले, नीति निपुण, परोपकारी, अत्याचारी नीच मुसलमानों को मारने की इच्छा से युक्त कान्ति वाले, बालक होते हुये भी महा पराक्रमी, सभी कलाओं में निष्णात, गुणियों में गिने जाने योग्य हो, किन्तु आज तक कभी भी तुम दोनों के जन्म स्थान आदि के बारे में पूछने का अवसर नहीं आया। आज तुम्हारे दुःखपूर्ण एवं विलाप पूर्ण बातचीत को सुनकर मुझे अत्यधिक कौतूहल हो रहा है, अतः आश्वस्त होकर, धैर्य धारण करके संक्षेप में बताओ कि तुम्हारा जन्म स्थान कहाँ है? तुम यहाँ कैसे आये? क्या यह तुम्हारी सगी बहिन है? क्या तुम्हारे माता-पिता सचमुच ही जीवित नहीं रहे? तुम्हारी पैतृक सम्पत्ति कहाँ है? तुम्हारा उद्देश्य क्या है? इत्यादि।

"अस्ति कश्चन धैर्य-धारि-धुरन्धरैः, धर्मोद्धार-धौरेयैः, सोत्साह-साहस-चञ्चच्चन्द्रहासैः, सुशक्ति-सुशक्तिभिः, सद्यश्छिन्न-परिपन्थि-गल-गलच्छोणित-च्छुरित-च्छन्न-च्छुरिकैः, भयोद्भेदनभिन्दिपालैः, स्व-प्रति-कूल कुलोन्मूलनानुकूल-व्यापार व्यासक्त-शूलैः, घन-विघ्न विघट्टक-घर्घरा-

घोष-घोर-शतघ्नीकैः, प्रत्यर्थि-शुण्डि शुण्डा-खण्ड-नोद्दण्ड-भुशुण्डीकैः प्रचण्ड-दोर्दण्ड-वैदग्ध्य-भाण्ड-काण्ड-प्रकाण्डैः, क्षत्रियवर्यैरार्यैरर्यवर्यैश्च व्याप्तो राज पुत्र-देशः।

यत्र कोष-पूरिताः काञ्चनमया इव सानुमन्तः, महार्ह-मणि-गण-जटिल जाम्बूनद-भूषण-भूषिता गन्धर्वा इव जनाः, विचित्र-गवाक्ष-जालाट्टालिकाङ्गण-कपोतपालिका-चत्वर-गोष्ठ—भित्तिकाः, विश्वकर्मर-चिता इव गृहाः, सादि-करस्थ-कशाग्र-चालन-सङ्केत सञ्च-लित-सिप्त-समूह-शफ-सम्मर्द-समुद्धूत-धूलि-धूसरिताश्च मार्गाः। अस्ति तस्मिन्नेव राजपुत्रदेशे उदयपुरनाम्नी काचन राजधानी, यत्रत्याः क्षत्रियकुलतिलका यवनराज-वशंवदता-कर्दम-सम्मर्दनै कदाऽप्यात्मानं कलङ्कयामासुः" इति कथयत्येव गौरसिंहे, ब्रह्मचारिगुरुरपि कोष्णं निःश्वस्य—

श्रीधरी—धैर्यधारि-धुरन्धरैः=धैर्य धारण करने वालों में—अग्रगण्य, धर्मोद्धार धौरेयैः=धर्म का उद्धार करने में अग्रसर, सोत्साह-साहस-चन्द्रहासै=उत्साहपूर्ण साहस से चमकती हुई तलवारों वाले, सुशक्ति-सुशक्तिभिः=सामर्थ्यशाली कृपाणों वाले, सद्यच्छिन्न-परिपन्थि-गल-गलच्छोणितच्छुरित-च्छन्न-च्छुरिकैः=शत्रुओं के तत्काल कटे हुये गले से बहने वाली खून की बूंदों से लिप्त छुरों वाले, भयोद्भेदन भिन्दि-पालैः=भय को दूर करने वाले पिस्तौलों वाले, स्व-प्रतिकूल-कुलोन्मूल-नानुकूल-व्यापार व्यासक्त शूलैः=अपने शत्रुओं के संहार में लगे हुये शूलों वाले, घन-विघ्न-विघट्टक-घर्घराघोषघोर-शतघ्नीकैः=भयंकर घर्घर ध्वनि से विघ्नों को दूर करने वाली तोपों वाले, प्रत्यर्थिशुण्डि-शुण्डा-खण्डनोद्दण्ड-भुशुण्डीकैः=शत्रुओं के हाथियों की सूँड काटने में दक्ष बन्दूकों वाले, प्रचण्ड-दोर्दण्ड-वैदग्ध्य-भाण्ड-काण्ड-प्रकाण्डैः=प्रबल भुजाओं की कुशलता से प्रशस्त बाणों वाले, क्षत्रियवर्यैः=क्षत्रिय वीरों, आर्यवर्यैः=श्रेष्ठ ब्राह्मणों, अर्यवर्यैश्च व्याप्तो=श्रेष्ठ वैश्यों से व्याप्त कश्चन=एक, राजपुत्रदेशः अस्ति=राजपूताना नामक देश है, यत्र

जहाँ, कोषपूरिताः=सुवर्ण की खानों से पूर्ण, काञ्चनमया इव सानुमन्तः=सुमेरु पर्वत के समान पहाड़, महार्ह=बहुमूल्य, मणिगण-जटिल जाम्बूनद भूषण भूषिता=मणिजटित स्वर्णभूषण पहनने वाले, गन्धर्वा इव जनाः=गन्धर्वों के समान मनुष्य हैं, विचित्र गवाक्ष=जहाँ के, अनेक प्रकार की खिड़कियों, जालाट्टालिकाङ्गण=झरोखों, रोशन दानों, अटारियों, आँगनों, कपोत पालिका=कबूतरों के दरबों, चत्वर=चबूतरों, गोष्ठ=गोशालाओं, भित्तिकाः=दीवारों वाले, गृहाः=महल, विश्वकर्मरचिता इव=विश्वकर्मा के बनाये हुये से प्रतीत होते हैं, सादि करस्थ-कशाग्र-चालन संकेत-संचालित-सप्तिसमूह शक संमर्द-समुद्धूत-धूलि धूसरिताश्च मार्गाः=सवारों के चाबुकों के हिलने से चलने का संकेत पाकर तेज दौड़ने वाले घोड़ों के खुरों से उड़ने वाली धूल से जहाँ के मार्ग धूसरित हैं. तस्मिन् एव राजपुत्र देशे=उसी राजपूताने देश में, उदयपुर नाम्नी काचन राजधानी अस्ति=उदयपुर नामक एक राजधानी है, यत्रत्याः=जहाँ के क्षत्रियकुल तिलकाः=श्रेष्ठ क्षत्रियों ने, यवनराज वशंवदता-कर्दम संमर्दैन न कदाप्यात्मानं कलङ्कयामासुः=मुसलमान राजाओं की अधीनता रूपी कीचड़ में अपने को कभी कलङ्कित नहीं होने दिया, इति-कथयत्येव गौरसिंहे=गौर सिंह के इतना कहने पर, ब्रह्मचारि-गुरुरपि कोष्ण निःश्वस्य=ब्रह्मचारि गुरु ने गरम साँस लेकर कहा—

हिन्दी—

धैर्य धारण करने वालों में अग्रगण्य, धर्म का उद्धार करने में अग्रसर उत्साहपूर्ण साहस से चमकती हुई तलवारों वाले, शक्तिशाली कृपाणों वाले शत्रुओं के तत्काल कटे हुए गले से बहने वाले, खून की बूँदों से सने छुरों वाले, भय को दूर कर देने वाली पिस्तौलों वाले, विपक्षियों के संहार में लगे हुए त्रिशूलों वाले, भयंकर घर्घर की ध्वनि से शत्रु समूह को दूर कर देने वाली तोपों वाले शत्रुओं के हाथियों की सूँड

काटने में दक्ष बन्दूकों वाले, प्रबल भुजाओं के कौशल से प्रशस्त बाणों वाले, वीर क्षत्रियों, श्रेष्ठ ब्राह्मणों और वैश्यों से व्याप्त एक राजपूताना नामक देश है। जहाँ सोने की खानों से पूर्ण पर्वत सुमेरु के समान तथा बहुमूल्य मणि जटित स्वर्णाभूषणों को पहनने वाले मनुष्य गन्धर्वों के समान हैं, जहाँ के अनेक तरह की खिड़कियों, झरोखों, रोशनदानों, अटारियों, आंगनों, कबूतरों के दरबों, चबूतरों, गोशालाओं दीवारों वाले महल विश्वकर्मा के बनाये हुए से प्रतीत होते हैं।जहां घुड़ सवारों के हाथ के चाबुक के हिलने से चलने का संकेत पाकर तेज दौड़ने वाले घोड़ों की टापों से उड़ी हुई धूल से सड़कें धूसरित हैं। उसी राजपूताना देश में उदय पुर नामक एक राजधानी है। जहाँ के क्षत्रियों ने मुसलमान राजाओं की अधीनता रूपी कीचड़ से अपने को कभी कलङ्कित नहीं होने दिया। गौरसिंह के इतना कहते ही ब्रह्मचारि गुरु गरम साँस लेकर बोले—

"को न जानीते उदयपुर-राज्यम् ? यदीय-चित्रपुर-दुर्गे परस्सहस्राः क्षत्रिय-कुलाङ्गनाः, कमला इव विमलाः, शारदा इव विशारदाः, अनसूया इवानसूयाः, यशोदाः, इव यशोदः,सत्या इव सत्याः, रुक्मिण्य इव रुक्मिण्यःसुवर्णा इव च सुवर्णाः, रत्य इव सत्यः, सम्भाव्यमान यवन-बलात्कार धिक्कारोर्जस्वल-तेजस्काः, योगाग्निनेव पतिविरहाग्निनेव स्वक्रोधाग्निनेव च सन्दीपितासु ज्वाला-जालाञ्चितासु चितासु- स्मारं स्मारं स्वपतीन्, पश्यतामेव स्वकीयानां परकीयाणां च क्षणात् पतङ्गतामङ्गीकृत्य, गङ्गाधरस्याङ्गभूषणतामगमन्"—इति मन्दं व्याजहार ।

तदाकर्ण्य करुणया दुःखेन कोपेन आश्चर्येण वैमनस्येन ग्लान्या च क्षालित-हृदयेषु निखिलेषु गौरसिंहः पुनः स्व-वृत्तान्तं वक्तुमुपचक्रमे यत्—

तद्राज्यर्म्यत्रान्यतमो भू-स्वामी खड्गसिंहो नामास्मत्तात-चरण आसीत् ।

खड्गसिंहनाम्ना परिचित इव ब्रह्मचारी समधिकमबाधित । स च पूर्ववदेव वक्तुं प्रावृतत् ।

श्रीवरी—उदयपुरराज्यम्=उदयपुर राज्य को, को न जानीते=कौन नहीं जानता, यदीय=जिसके, चित्रपूर दुर्गे=चित्तौड़ दुर्ग में, परस्सहस्राः=हजारों, क्षत्रिय-कुलाङ्गनाः=क्षत्राणियाँ, जो, कमला इव विमलाः=लक्ष्मी के समान विमल, शारदा इव विशारदाः=सरस्वती के समान विदुषी, अनुसूया इवानुसूया=अनसूया के समान ईर्ष्या रहित, यशोदा इव यशोदा=यशोदा के समान यश देने वाली, सत्या इव सत्याः=सत्यभामा के समान सच बोलने वाली, रुक्मिण्य इव रुक्मिण्यः=रुक्मिणी के समान स्वर्णाभरणों से विभूषित, सुवर्णा इव सुवर्णा=सुवर्ण के समान रंग वाली, सत्य इव सत्यः=सती के समान पतिव्रता थीं, सम्भाव्यमान-यवन-बलात्कार-तिरस्कारोर्जस्वल तेजस्काः=जिनका तेज सम्भावित यवन बलात्कार को तिरस्कृत करने में समक्ष था, योगाग्निनेव=योगाग्नि से मानो, पतिविरहाग्निनेव=वियोग जन्य अग्नि से मानो, स्वक्रोधाग्निनेव=अपने क्रोध रूपी अग्नि से मानो, सन्दीपितासु=जलती हुई, ज्वाला जालाञ्चितासु=भयंकर, लपटों वाली, चितासु=चिताओं में, स्वपतीन् स्मारं स्मारं=अपने पतियों का बार-बार स्मरण करती हुई, स्वकीयानां=अपने, परकीयानां च=पराये लोगों के, पश्यतामेव=देखते-देखते ही, क्षणात्=क्षण भर में, पतङ्गा सङ्गीकृत्य=पतिङ्गे के समान जल कर, गङ्गाधरस्य=शङ्कर के, अङ्गभूषणताम्=शरीर का आभूषण, अगमन्=हो गई, इति=इस प्रकार, मन्दं व्याजहार=धीरे से कहा ।

तदाकर्ण्य=यह सुनकर, करुणया=करुणा से, दुःखेन=दुःख से, कोपेन=क्रोध से, आश्चर्येण=आश्चर्य से वैमनस्येन=वैमस्य से, ग्लान्या च=और ग्लानि से, निखिलेषु=सबके, क्षालित-हृदयेषु=हृदय धुल जाने पर, गौरसिंहः= गौरसिंह ने, पुनः=फिर से, स्ववृत्तान्तं वक्तुमुपचक्रमे=अपना वृत्तान्त कहना आरम्भ किया, तद्रास्यैव=उसी राज्य का, अन्यतमो भूस्वामी=एक जमींदार, खड्गसिंहोनाम=खड्गसिंह नाम के, अस्मत्तात चरण आसीत्=हमारे पिता थे। खड्गसिंह, नाम्ना=खड्गसिंह के नाम से, परिचित इव=परिचित से, ब्रह्मचारी=ब्रह्मचारी गुरु ने, समधिकमवाधित=अधिक दुःख का अनुभव किया, स च =वह गौरसिंह, पूर्ववदेव = पहले की तरह, वक्तुं प्रावृतत = कहता गया।

हिन्दी—

उदयपुर राज्य को कौन नहीं जानता? जिसके चित्तौड़ दुर्ग में हजारों क्षत्राणियाँ जो लक्ष्मी के समान निर्मल, सरस्वती के समान विदुषी, अनसूया के समान ईर्ष्या रहित, यशोदा के समान यश देने वाली सत्यभामा के समान सत्य बोलने वाली, रुक्मिणी के समान स्वर्णाभरणों से विशपित, सुवर्ण के समान रंग वाली, सती के समान पतिव्रता थीं और जिनका तेज यवनों के सम्भावित बलात्कार को तिरस्कृत करने में समक्ष था, योगाग्नि से मानों, पति वियोग रूपी अग्नि से मानों, अपनी क्रोध रूपी अग्नि से मानो जलाई हुई भयंकर ज्वालाओं वाली चिताओं में अपने पतियों का बार-बार स्मरण करती हुई, अपने और पराये लोगों के देखते-देखते पतिंगे के समान जलकर भगवान शंकर के शरीर का आभूषण अर्थात् राख बन गई।

यह सुनकर करुणा से, क्रोध से, आश्चर्य से, वैमनस्य से और ग्लानि से सब लोगों के हृदयों के धुल जाने पर गौरसिंह ने फिर से अपना वृत्तान्त कहना आरम्भ किया। उसी उदयपुर राज्य के एक जमींदार खड्गसिंह हमारे पिता थे। खड्गसिंह के नाम से परिचित से ब्रह्मचारि

गुरु अधिक वेदना का अनुभव किया। गौरसिंह पहले की ही तरह कहता गया।

अस्मज्जननी तु बालावेवाऽऽवां स्तनन्धयामेव चास्मत्सहोदरीं मैवरणीं परित्यज्य भुव विरहयाम्बभूव। अस्मत्तातचरणाश्च कैश्चित्तुरुष्कैर्लुण्ठकप्रायैर्युद्ध-क्रीडां कुर्वन् पृष्ठतः केनापि विशालभल्लेनाऽऽहतो वीरगतिमगमत्। ततः पुरोहितेनैव पाल्यमानावावामपि यमलौ भ्रातरौ गौर-श्यामौ एकदा मित्रैः सहाऽऽखेटार्थं निःसृतौ तुरगौ चालयन्तौ मार्ग-भ्रष्टौ अकस्मात् काम्बोजीय-दस्यु-वारेणाऽऽवृत्तौ तेनैवापहृत-महार्ह-भूषणौ गृहीताश्वौ बद्धौ च सहेव वनाद्वनम-नायिष्वहि। "यद्यपि शत्रु-सन्ताना निर्दय हन्तव्या एव; तथाऽपि नासा-भूषण-मौक्तिके इव वीणा-तुम्बाविव श्यामकर्ण-हयाविव च मनोहर-रूपौ समानाकारौ समान-वयस्कौ समान-परिणाहौ समानस्वभावौ समान-स्वरौ समान-गुणौ केवल वर्णमात्रता भिन्नौ राम-कृष्णाविवामू गौर-श्यामौ बालकौ। तदयश्य बहुमूल्याविति कुत्रापि कस्यचिदपि महाधनस्य हस्ते विक्रयणीयौ" इति तेषां घोरतरान् संल्लापान् शृण्वन्तौ 'कथं पलायावहे? क र वा मुच्यावहे?" इत्यनवरतं चिन्तयन्तौ कथ कथञ्चित् कञ्चित समयमयापयाव।

श्रीधरी—आवां बालावेव=हम दोनों बच्च हो थे। स्तनन्धयामेव अस्मत् सहोदरी=हमारी वहिन तो दूध ही पीती थी। अस्मज्जननी परित्यज्य=हमारी माता हमें छोड़कर। भुव विरयाम्बभूव=पृथ्वी लोक मे चली गई। अस्मत्तातचरणाश्च=हमारे पिताजी ने। कैश्चित्तुरुष्कै=कुछ तुर्क। लण्ठकप्रायैर्युद्धक्रीडा कुर्वन्=लुटेरो से युद्ध करते हुए। पृष्ठतः=पीछे से। केनापि विशाल भल्लेनाऽऽहतो=किसी के द्वारा भीषण भाले से चोट कर देने के कारण। वीरगतिमगमत्=वीरगति को प्राप्त किया। ततः=इसके बाद। पुरोहितेनैव=पुरोहित के द्वारा

ही । पल्यमानौ==पाले जाते हुए । आवामपि-यमलौ भ्रातरौ गौरश्यामौ ==हम दोनों जुड़वां भाई गौर और श्याम । एकदा==एक दिन । मित्रै सह==मित्रों के साथ । आखेटार्थं निसृतौ==शिकार खेलने निकले । तुरगौ चालयन्तौ==घोड़ों को चलाते हुए । मार्ग भ्रष्टौ==रास्ता भूल गए । अकस्मात==अचानक । काम्बोजीय दस्यु वरेणाऽऽवृतौ==कम्बोज देश के लुटेरो से घिर गए । तेनैव उन्हीं के द्वारा । अपहृत मदीह भूषणौ ==हमारे बहुमूल्य आभूषण अपहृत करलिए गए । गृहीताश्वौ==घोड़ें छीन लिए गये । बद्धौ च==और हमें बाँध कर । सहैव==अपने साथ ही वनाद्वनमनयिष्वहि==एक जंगल से दूसरे जंगल में ले जाये गये। यद्यपि शत्रु सन्ताना=यद्यपि शत्रु की सन्तान । निर्दयं हन्तव्या एव== निर्दयताके साथ मार ही देनी चाहिए । तथापि==तो भी । नासाभूषण मौक्तिके इव==नथ की दो मोतियों के समान । वीणा-तुम्बाविव==वीणा की तुम्बी के समान । श्यामकर्णं हृदाविव==श्यामकर्ण घोड़ों के समान । मनोहर रूपौ==मनोहर रूप वाले । समानाकारौ=समान आकार वाले । समान वयस्कौ==समान अवस्था वाले । समान परिणाहौ==समान ऊँचाई वाले । समान स्वभावौ==समान स्वभाव वाले । समान स्वरौ==एक जैसे स्वर वाले । केवलं वर्णमात्रतो भिन्नौ==केवल रंग में भिन्न । अमू बाल-कौ==ये दोनों बच्चे । रामकृष्णाविव==राम-कृष्ण के समान हैं । तद्== इसलिये । अवश्यं बहुमूल्यौ==अवश्य ही बहुमूल्य हैं । कुत्रापि==कहीं भी । कस्यचिदपि महाधनस्य हस्ते=बड़े सेठ के साथ । विक्रमणीयौ=बेच देने चाहिए । इति==इस प्रकार । तेषां=उनके । घोर तरान् संलापान ==भयंकर बातों को । शृण्वन्तौ=सुनते हुऐ । कथं पलायावहे==कैसे भागें । कथं मुच्यावहे=कैसे छूटें । इति==इस प्रकार । अनवरतं चिन्त-यन्तौ==निरन्तर सोचते हुए । कथं कथञ्चिद्=येन-केन प्रकार से । कञ्चिद् समय मयापथाव==हमने कुछ समय बिताया ।

हिन्दी—

हम दोनों भाई अभी बालक ही थे तथा हमारी बहिन सौवर्णी तो दूध ही पीती बच्ची थी, हमारी माँ हमें छोड़कर परलोक चली गई। हमारे पिता ने कुछ लुटेरे तुर्कों से लड़ते हुए, पीछे से किसी के द्वारा भयंकर भाले से आघात कर देने के कारण वीरगति प्राप्त की।

इसके बाद पुरोहित जी के द्वारा ही पाले जाते हुए हम दोनों भाई श्याम और गौर एक दिन मित्रों के साथ शिकार खेलने के लिये निकले तथा घोड़ों पर चलते-चलते रास्ता भूल गये। अकस्मात् कम्बोज देश के लुटेरों के द्वारा घिर गये। उन्होंने हमारे बहुमूल्य आभूषण और घोड़े छीन लिये और हमें भी बन्दी बनाकर अपने साथ एक जंगल से दूसरे जंगल में ले गये। "यद्यपि शत्रु की सन्तान निर्दयता के साथ मार ही देनी चाहिए तथापि ये दोनों बच्चे नथ की दो मोतियों के समान, वीणा की तुम्बी के समान, श्याम कर्ण घोड़ों के समान, सुन्दर, एक से आकार वाले, एक सी अवस्था वाले, एक सी ऊँचाई वाले, एक से स्वभाव वाले, एक से स्वर तथा गुण वाले हैं। केवल वर्ण में अलग-अलग हैं। ये दोनों बलराम और कृष्ण के समान हैं। अतः अवश्य ही बहुमूल्य हैं। इसलिये किसी बड़े धनी के हाथ इन्हें बेच देना चाहिए।" इस प्रकार की उनकी भयंकर बातों को सुनकर हम किस तरह भागें? किस प्रकार इनके चुंगुल से छूटें? इसी बात पर निरन्तर सोचते हुए येन केन प्रकार से हमने कुछ समय व्यतीत किया।

अथैकदा कञ्चित्पान्थ-सार्थमवलोक्य तल्लुलुण्ठयिषया सर्वेष्वपि तस्य पन्थानमेवानुसृतेषु आवाभ्यामपि पलायनावसरो लब्धः। यावच्चा-ऽऽवां वस्त्राणि परिधाय, परिकरे असिधेनुकां बद्ध्वा, बाहुमूले निस्त्रिंशं चर्म्म च लम्बयित्वा, तत्र लुण्डिकानामेवैकामेकामल्पीय-सीमात्मोत्तो-

लन-योग्यां सज्जां करे धृत्वा, उपकारिकाया बहिर्निर्गतौ; तावद् दृष्टम्-यदेको रक्षकः खड्गहस्तो नौ बहिर्गमनाद् वारयतीति ।

अथाऽऽवाभ्यां भुशुण्डिकां सन्धायोक्तम्—"अलमलं कदर्य ! किमप्यधिकं वक्ष्यसि तत्स्थानात्पादमेकमपि च प्रचलिष्यसि चेत्; क्षणेन परेत-पति-पालित-पुरी-पान्थं विधास्यावः" इत्याकलय्य मदेन काष्ठभूते तस्मिन् भट-रक्षके; मयि च तथैव बद्ध-लक्ष्ये स्थिते; मदिङ्गि-तानुसारेण श्यामसिंहस्तस्या एवोपकार्य्यायाः प्रान्ते बद्धानां फेनवर्षिणामश्वानः कौचिच्चण्डवेगौ श्यामकर्णावाजानेयौ उन्मुच्य, वल्गामायोज्य सर्वतः सज्जीकृत्य चैकमारुह्य रक्षकोपरि भुशुण्डिकां तथैव सज्जीकृतवान् । ततश्चाहमप्यपरं हयमारुह्य तस्य ग्रीवामास्फोटय नर्तयन् रक्षकं साम्रेडं तर्जनैर्हृतोत्साहं मृतप्रायं च विधाय, श्यामसिंहमिङ्गितवान् ।

श्रीधरी—अथ कदा = इसके बाद एक दिन, कञ्चित्पान्थसार्थमवलोक्य = किसी पथिक समूह को आता हुआ देखकर, तल्लुलुण्ठयिषया = उसे लूटने की इच्छा से, सर्वेष्वपि = सभी के, तस्यपन्थानमेवानुसृतेषु = उसी ओर चले जाने पर, आवाभ्यामपि = हम दोनो को भी, पलायनावसरो = भागने का मौका, लब्धः = मिला, आवा = हम दोनो ने वस्त्राणि परिधाय = कपड़े पहिन कर, परिकटे = कमर मे, असिधेनुका बद्ध्वा = छुरा बांध कर, बाहुमूले = बगल मे, निस्त्रिंशं चर्म च लम्बयित्वा = ढाल और तलवार लटका कर, तद्भुशुण्डिकानामेव = उनकी बन्दूकों में से ही, मेकैकाम् = एक-एक, अल्पीयसीम् = छोटी, आत्मोत्तोलन योग्या = अपने चलाने लायक, सज्जां = भरी हुई बन्दूक को, करे कृत्वा = हाथ में लेकर, उपकारिकाया = खेमे मे, यावद् बहिर्निर्गतौ = ज्यो ही बाहर आये, तावत = त्यो ही, दृष्टम् = देखा, यद् = कि, उपरक्षकः = एक पहरेदार, खड्गहस्तो = तलवार हाथ मे लेकर, नौ = हमको, बहिर्गमनात् = बाहर जाने से, वारयति = रोक रहा है ।

अथ=इसके बाद, आवाभ्यां=हम दोनों ने, भुशुण्डिकां सन्धाय उक्तम्=बन्दूक तान कर कहा, अलमलं कदर्य=बस-बस, नीच, किमप्यधिकं वक्ष्यसि=यदि कुछ भी अधिक बोलोगे, तत् स्थानात्=उस जगह से, पाद मेक मपि च प्रचलिष्यसि=एक कदम भी चलोगे, क्षणेन =क्षण भर में, परेतेपति=यमराज के द्वारा, पालितपुरी पान्थ= पालित यमपुरी का पथिक, विधास्यामः=बना देंगे, इत्याकलय्य=यह सुन कर, भयेन काष्ठभूतेन तस्मिन् मूढ रक्षके=उस मूर्ख पहरेदार के भय से काठ सा हो जाने पर, मपि च तथैव वद्ध लक्ष्ये स्थिते=मेरे उसी तरह निशाना साध कर खड़े रहने पर, मदिङ्गितानुसारेण=मेरे इशारे के अनुसार, श्यामसिंहः=श्याम सिंह ने, तस्या एवोपकार्यायाः= उसी खेमे के, प्रान्ते वद्धानां=किनारे बंधे हुए, फेन वर्षिणां अश्वानां =फेन उगल रहे घोडों में से, कौचिच्चण्डवेगौ=कोई दो तेज चलने वाले, श्याम कर्णावाजानेयौ=श्यामकर्ण घोड़ों को, उन्मुच्य=खोल कर सर्वतः सज्जीकृत्य=हर तरह से सुसज्जित करके, वल्गामायोज्य= लगाम लगा कर, एक मारुह्य=एक घोड़े पर चढ़कर, रक्षकोपरि= पहरेदार पर, तथैव=उसी प्रकार, भुशुण्डिकां सज्जी कृतवान्=बन्दूक तानली, तनश्चाहमपि=इसके बाद में भी, हयमारुह्य=घोड़े पर चढकर, तस्य ग्रीवा मास्फोट्य=उसकी गरदन थपथपा कर, नर्तयन्= उसे नचाते हुए, रक्षक=पहरेदार को साम्रेड=वार-बार, तर्जनैः= धमकियो से, हतोत्साहं मृत प्राय च विधाय=निरुत्साहित और मृतप्राय करके, श्यामसिंहमिंगितवान्=श्यामसिंह को चलने का इशारा किया।

हिन्दी—

एक दिन किसी यात्रियो के समूह को आता हुआ देखकर, उसे लूटने की इच्छा से सभी डाकुओ के उसी ओर चले जाने पर हम लोगों को भी भागने का अवसर मिल गया। कपड़े पहन कर, कमर में छुरा बांध कर। वगल में तलवार और ढाल लटकाकर। उन्हीं की बन्दूकों

में से अपने चलाने योग्य एक-एक छोटी भरी हुई बन्दूकें लेकर ज्यों ही हम खेमें के बाहर आये त्यों ही हमने देखा कि एक पहरेदार तलवार हाथ में लिये हुए हमें बाहर जाने से रोक रहा है।

तब हम दोनों ने बन्दूकें तान कर कहा—बस, बस नीच। यदि कुछ भी अधिक बोला और उस जगह से एक कदम भी आगे बढ़ा तो तुम्हें क्षण भर में मौत के घाट उतार देंगे। यह सुनकर वह मूर्ख पहरेदार डर के मारे काठ बन गया। मैं उसी तरह उस पर निशाना साधे रहा। मेरे इशारे से श्यामसिंह ने उसी खेमे के पास बँधे हुए, फेन उगलते हुए घोड़ों में से दो तेज चलने वाले, श्यामकर्ण घोड़ों को खोल कर, उन्हें हर तरह से सुसज्जित करके, लगाम लगाकर एक घोड़े पर बैठ कर, उस पहरेदार पर उसी तरह बन्दूक तान ली, उसके बाद मैंने भी दूसरे पर बैठकर, उसकी गर्दन थपथपा कर उसे नचाते हुए, धमकियों से पहरेदार को हतोत्साहित और मृतप्राय बनाकर श्यामसिंह को चलने का इशारा किया।

अथाऽश्वौ द्वावपि वायुवेगाऽस्यामश्वाभ्यामज्ञातेनैवापथा, उपत्यकात उपत्यकाम्, वनाद् वनम्, प्रान्तराच्च प्रान्तरमुल्लङ्घमानौ तेनैव दिनेन गव्यूति-पञ्चक प्रयातौ। साय समये च कामपि ग्रामटिकामासाद्य अन्यतमस्य गृहस्य द्वार गतौ। तच्च हनुमन्मन्दिरमवगत्य तस्मिन प्रविष्टौ तदध्यक्षेण केनचित् साधुना च सस्वागतमाग्रहेण वासितौ, तत्रैव निवासमकुर्वहि।

अथ तत्प्रदत्तमेव हनूमत्प्रसादीभूत मोदकादि समास्वाद्य, तस्यैव भृत्येनाऽऽनीतं यवस-भार वाजिनोरग्रे पातयित्वा, मन्दिरस्यैव बहिर्वेदिकायामितस्ततः पर्यटन्तौ मुहूर्त मात्रामवातिष्ठावहि।

ततश्च दुग्धधाराभिरिव प्रथमं प्राचीं संक्षाल्य, मसितच्छुरितामिव विधाय, चन्दनैरिव समर्च्य, कुन्द-कुसुमैरिवाऽऽकीर्य, गगन-सागर मीने इव, मनोज-मनोज्ञ-हंसे इव, विरहि-निकृन्तन-रौप्य-कुन्त-प्रांते इव, पुण्डरीकाक्ष-पत्नी-कर-पुण्डरीकपत्रे इव शारदाभ्र-सारे इव, सप्तसप्ति-सप्ति-पाद-च्युते राजत-खुरत्रे इव, मनोहरता-महिला-ललाटे इव, कन्दर्प-कीर्तिलताङ्कुरे इव, प्रजा-जन-नयन-कर्पूरखण्डे इव, तमो-तिमिर-कर्त्तन-शाणोल्लीढ-निस्त्रिंशे इव च समुदिते चैत्र-चन्द्र-खण्डे; तत्प्रकाशेन स्फुटं प्रतीयमानासु सर्वासु दिक्षु, इह परितो दृक्पातमकार्षम्, अद्राक्षञ्च पुरुत्तराभिमुखम्, तद् विशाल मन्दिर-मन्ति, तद्द्वारस्योभयतः सुधा-लिप्त-भित्तिकायां विशालैः सिन्दूराक्षरैः 'जयति हनुमान्' रामदूतो विजयतेतराम्' विजयतामक्षयकारो'—इति बहूनि वाक्यानि गदादि-चिह्नानि च लिखितानि सन्ति । तत उत्तरस्यामेकः स्वल्पः शैलखण्डः, पूर्वस्यां गहनं वनम्, पश्चिमायां च स्वल्पमेकं पल्वलमासीत् । यद्य यत्रौ पर्वत-खण्डो नात्यन्तं भयानक इव, तथाऽपि विविधगण्डशैलावृत, झर-झर्झर-ध्वनि-पूरित-दिगन्तरालः, महीरुह-समूह-समावृतः, उच्चावच-सानु-प्रचय सूचित विविधकन्दरश्चाऽऽसीत् । चन्द्र-चन्द्रिका-चाकचक्यान् स्फुटमेवा लोक्यन्तेऽन्योपत्यकाः ।

श्रीधरी—अथ=इसके बाद । आवांद्वावपि=हम दोनों ही वायुवेगाभ्यां अश्वाभ्या=हवा के समान तेज चलने वाले उन घोड़ों से । अज्ञातेनैव पथा=अनजान रास्ते से । उपत्यकाल् उपत्यकाम्=एक तलहटी से दूसरी तलहटी में । वनाद् वनम्=एक जगल से दूसरे जगल में । प्रान्तराच्च प्रान्तरम्=एक सूनसान रास्ते से दूसरे सूनसान मार्ग को । उल्लध्यमानौ=पार करते हुए । तेनैव दिनेन=उसी दिन गव्यूति पञ्चकं प्रयातौ=दस कोस चले गये । सायं समये=शाम के समय, कामपि ग्रामटिका मासाद्य=किसी छोटे से गाव में पहुँच कर । अन्यतमस्य

=एक। गृहस्य=घर के। द्वारं गतौ=दरवाजे पर गये। तच्च=उसको। हनूमत्मन्दिरमवगत्य=हनूमान जी का मन्दिर जानकर। तस्मिन्नेव प्रविष्टौ=उसी में घुस गये। तदध्यक्षेण=उसके अध्यक्ष। केनचित्साधुना=किसी साधु ने। सस्वागतमाग्रहेण=स्वागत करते हुए आग्रह से। वासितौ=हमें ठहराया। तत्रैव निवासमकुर्वहि=हमने वहीं निवास किया। अथ=इसके बाद। तत्प्रदत्तमेव=उसके दिये हुए। हनूमत्प्रसादीभूतं=हनूमान के प्रसाद के। मोदकादिसमास्वाद्य=लड्डू आदि को खाकर तस्यैव भृत्येन=उसी के नौकर द्वारा। आनीतं=लाये हुए। यवसभारं=घास को। वाजिनोरग्रे पातयित्वा=घोड़ों के आगे डालकर। मन्दिरस्यैव वाहिर्वेदिकायां=मन्दिर के ही बाहरी चबूतरे पर। इतस्ततः=इधर उधर। पर्यटन्तौ=घूमते हुए, मुहूर्तमावामत्रा-स्थिष्वहि=हम लोग थोड़ी देर रुके। ततश्च=इसके बाद। प्रथमं प्राचीं=पहले पूर्व दिशा को। दुग्धधाराभिरिव सक्षाल्य=दूध की धाराओं से मानो धोकर। भसितच्छुरितामिवविधाय=मानो भस्म से लिप्त करके। चन्दनैरिव संचर्च्य=चन्दन सा लगाकर। कुन्द कुसुमैरिवा-कीर्य=कुन्द के फूलों को बिखरा सा कर। गगन सागर मीने इव=आकाश रूपी समुद्र में मछली के समान। मनोज-मनोज्ञ हंसे इव=कामदेव के सुन्दर हंस के समान, विरहि निकृन्तन रौप्यकुन्त प्रान्ते इव=विरही जनों को वेधने वाले चांदी के भाले की नोक के समान। पुण्डरीकाक्ष-पत्नी-कर पुण्डीरक पत्रे इव=लक्ष्मी के हाथ के कमल की पंखुड़ी के समान। शारदा भ्रसारे इव=शरत्कालीन बादलों के तत्व के समान। ससि-सप्ति-सप्ति पाद-च्युते राजत खुरत्रे इव=सूर्य के घोड़े के पैर से गिरी हुई चांदी की नाल के समान। मनोहरता-महिला ललाटे इव=सुन्दरता रूपी महिला के माथे के समान। कन्दर्प-कीर्ति लताङ्कुरे इव=कामदेव की कीर्ति के अंकुर के समान। तमी तिमिर कर्तन-शाणोल्लीढ़-निस्त्रिंशे इव=रात के अन्धकार को काटने के लिये सान पर धरे हुए तलवार के समान। चैत्रचन्द्रखण्डे=चैत्र के बालचन्द्र के। समुदितो=उदय होने

जाने पर। तत्प्रकाशेन = उसके प्रकाश से सर्वासु दिक्षु स्फुटं प्रतीयमानासु = सभी दिशाओं के स्पष्ट दिखाई देने पर। अहं = मैंने। परितो = चारों ओर। दृक्पातमकार्षम् = दृष्टिपातं किया। अद्राक्षञ्च = और देखा। यद् = कि। उत्तराभिमुखं तद् विशालं मन्दिरं अस्ति = उत्तराभिमुख जो विशाल मन्दिर है। तद्द्वारस्योभयतः = उसके मुख्य द्वार के दोनों ओर। सुधालिप्त भित्तिकायां = चूने से पुती हुई दीवारों पर। जयति हनूमान = हनूमान की जय हो। रामदूतो विजयतेतराम् = रामदूत की विजय हो। विजयतां अक्ष क्षयकारी = अक्षकुमार के विध्वंसक हनूमान विजयी हो। इति = इस प्रकार के। बहूनि वाक्यानि = बहुत से वाक्य। गदापि चिह्नानि च = गदा आदि के चिह्न भी। लिखितानि सन्ति = लिखे हुए हैं। तत उत्तरस्यां = उससे उत्तर की ओर। एकः स्वल्पशैल खण्डः = एक छोटी सी पहाड़ी। पूर्वस्यां गहनं वनम् = पूर्व में घना जंगल। पश्चिमायां च = पश्चिम में भी। स्वल्पमेकं पल्वल मासीत् = एक छोटा सा तालाब था। यद्यप्यसौ पर्वत खण्डः = यद्यपि यह पहाड़ी। नात्यन्त भयानक इव = अधिक भयानक सी नहीं थी। तथापि = फिर भी। विविध गण्डशैलावृतः = अनेक चट्टानों से घिरी होने से। झर-झर्झर-ध्वनि-पूरित दिगन्तरालः = झरनों की झर-झर ध्वनि से दिशाओं को गुञ्जित करने वाली। महीरुह समावृतः = वृक्षों से घिरी हुई। उच्चावच-सानु-प्रचय-सूचित विविध कन्दरश्चासीत् = ऊंची-नीची चोटियां उसमें अनेक गुफाओं के होने का संकेत करती थीं। चन्द्र-चन्द्रिका-चाकचक्यत् = चन्द्रमा की चाँदनी की चमक में। एतस्योपत्यकाः = इसकी तलहटियों। स्पष्टमवालोक्यन्त = स्पष्ट दिखाई पड़ रही थी।

हिन्दी—

हम दोनों हवा के समान तेज उन घोड़ों से अनजान रास्ते से ही एक तलहटी से दूसरी तलहटी, एक जंगल से दूसरे जंगल। एक वीरान

मार्ग से दूसरे वीरान मार्ग में होते हुए उसी दिन दस कोस चले गये। शाम को किसी एक छोटे से गांव में पहुँच कर वहाँ के एक घर के दरवाजे पर गये। उसे हनूमान जी का मन्दिर समझ कर उसमें घुस गये। उसके अध्यक्ष साधु ने स्वागत के साथ आग्रह पूर्वक हमें वहां रखा और हम वहीं रह गये।

उसी पुजारी के द्वारा दिये हुए हनूमान जी के प्रसाद के लड्डू आदि खाकर और उन्हीं के नौकर के द्वारा लाई हुई घास को घोड़ों के आगे डालकर, मन्दिर के बाहर के चबूतरे पर इधर उधर घूमते हुए कुछ देर रुके। इसके बाद पहले पूर्व दिशा को दूध की धाराओं से मानो धोकर, भस्म से पोत कर। चन्दन सा लगाकर। कुन्द कुसुमों को मा बिखेर कर, आकाश रूपी समुद्र के मछली के समान। कामदेव के सुन्दर हंस के समान। विरही जनों को बेधने के लिये चांदी के भाले की नोक के समान। कामदेव की कीर्ति लता के अंकुर के समान। लोगों की आँखों के लिये कपूर के समान। चैत के महीने के बाल चन्द्रमा के उदय होने पर। उसके प्रकाश में सभी दिशाओं के स्पष्ट दृष्टिगोचर हो जाने पर मैंने चारों ओर दृष्टि डाली। और देखा कि उत्तराभिमुख जो विशाल मन्दिर है, उसके मुख्य द्वार के दोनों ओर चूने से पुती हुई दीवारों पर हनूमान की जय हो, रामदूत की विजय हो। अक्षकुमार का विनाश करने वाले हनूमान जी विजयी हो। इत्यादि अनेक वाक्य और गदा आदि चिह्न अंकित हैं। उस मन्दिर के उत्तर की ओर एक छोटी सी पहाड़ी। पूर्व में घना जंगल और पश्चिम की ओर एक छोटा सा तालाब था, व पहाड़ी यद्यपि बहुत भयानक सी नहीं थी। फिर भी चट्टानों से घिरी, झरनों की झर-झर ध्वनि से दिशाओं को गुञ्जित करने वाली और पेड़ों से घिरी हुई थी और उसकी ऊंची-नीची चोटियां उसमें अनेक गुफाएं होने का संकेत देती थी। चांदनी

के आलोक में उसकी तलहटी तथा ऊँची-नीची चोटियां स्पष्ट रूप में परिलक्षित हो रही थीं।

ततश्च झिल्ली-झङ्कारेणेव केनचित् विलक्षणेन अनाहतध्वनिनेव पर्य्यपूर्यत वसुधा। विचित्र एव कश्चन परस्सहस्र-तानपूर-षड्जस्वर-सोदरो वन-रात्रि-ध्वनिः, तमेव स्वरं गम्भीरं विशकलय्य आकर्णयता समश्रावि कीचकध्वनिरपि, तत्राप्यवधयता साक्षात्कारि मधुकर-निकर-झंकारः, पुनरेकाग्रतामङ्गीकुर्वता समाकर्णि स्रोतस्संतरण-सत्कारः, तस्मिन्नपि च लयमिवाऽऽकलयता समन्वभावि समीरण-समीरित-किशलय-परिप्लवता-प्रभूत-स्वनः, तत्रापि च स्थिरतां बिभ्रता प्रत्यक्षीकृतं सुधा-धारामप्यधरीकुर्वत्, वीणा-रणनमपि तिरस्कुर्वत्, मधु विधुरयत्, मरन्दं मन्दयत्, कल-काकली-कलन-पूजितं कोकिल-कुल-कूजितम्। ततश्च बहूनामेव मधुर-कण्ठानां वन्य-पतत्रिणां स्थगित-मन्थराऽऽरावाः समाकर्ण्यन्त। अथानुभवन् धीर-समीर-स्पर्श-सुखम्, साम्रेडमवलोकयंश्च तारकितं नभः, स्मारं स्मारं स्वगृहस्य, महाचिन्ता-पारावारे इवाहं न्यमज्जम्। ततः पृष्ठतो भित्तिकामाश्रित्य, करौ कटि-प्रदेशे संस्थाप्य सम्मुखीन शिखरि-शिखरे चक्षुषी स्थिरयित्वा, आत्मानमपि विस्मृत्य व्यचारय यत्—

"अहह! दुरदृष्टोऽस्मि!! अस्यावयोः पितरौ यौ सुखिनावेवाऽऽवां परित्यज्य दिवं समाधितवन्तौ, न तयोरदृष्टे पुत्र-विश्लेष-दुःखं व्यलेखि धात्रा। नितान्तं पापिनौ चाऽऽवाम् यौ बाल्य एवेदृशीषु दुरवस्थासु पतितौ। का दशा भवेत् साम्प्रतमावयोरनुजायाः सौवर्ण्याः? हन्त!! हतभाग्या सा बालिका; या अस्मिन्नेव वयसि पितृभ्यां परित्यक्ता, आवयोरप्यदर्शनेन क्रन्दनैः कण्ठं कदर्थयति। अहह! सततमस्मत्क्रोडैक-क्रीडनिकाम् सततमस्मन्मुखचन्द्र-चकोरीम्, सततमस्मत्कण्ठ

रत्नमालाम्, सततमम्भरसह-भोजिनीम्, बाल्य-लुलितै, मधुर-मधुरैः, सुधा-स्यन्दनैः, दाद-दादेति भाषणैः श्रावयोः हृदयं हरन्तीम्. क्षणमात्रमस्मदनवलोकनेनापि बाष्प-प्रवाहैः कपोलौ मलिनयन्तीम्, कथमेनां वृद्धः पुरोहितः सान्त्वयिष्यति ? अस्म-ज्जनकाविशेषः पुरोहित एव वा कथं नौ विना जीविष्यति ? परमेश्वर ! तथा विधेहि यथा जीवन्तं वृद्धं पुरोहितं सौवर्णी साक्षात्कुर्वः—

श्रीधरी—ततश्च = इसके बाद । झिल्लीझङ्कारेणेव = झिल्ली झंकार के समान । विलक्षणेन अनाहतध्वनिनेव = अनाहत नाद की अनोखी ध्वनि से । वसुधा पर्यपूर्यत = पृथ्वी गूंज उठी । परस्सह स्र-तानपूर-षडजस्वर-सोदरो = हजारो तानपूरो के षड्जसर के समान । वनरात्रिध्वनि एष विचित्रः = वन रात्रि की वह ध्वनि बड़ी विलक्षण थी । तमेव स्वरं गम्भीरं विगकलय्य = उसी स्वर की गम्भीरता के विवेचना करके । अवदधता = सुनने पर । कीचक ध्वनिरपि समथावि = सूखे बांसों की आवाज भी सुनी । तत्रापि अवदधता = उस पर भी ध्यान देने पर । मधुकर-निकर-झंकारः साक्षादकारि = भौंरो की झंकार सुनाई दी । पुनः एकाग्रतामङ्गीकुर्वता = फिर एकाग्र होकर । स्रोतस्स-सरण सरत्कारः समाकर्णि = पानी के बहने की सरसराहट सुनी । तस्मिन्नापि = उसमें भी । लयमिवाऽऽकलयता = लीन सा हो जाने पर, समीरण-समीरित-किशलय परिप्लवता प्रभूत-स्वनः समन्वभावि = हवा के हिलने से कोमल पत्तों की मर्मराहट सुनाई दी । तत्रापि च = उसमे भी । स्थिरतां बिभ्रता = स्थिरता के साथ ध्यान देने पर । सुधा धारा मत्यधरीकुर्वन् = अमृत के निःस्यन्द को भी नीचा दिखाने वाली । वीणा रणनमपि विगणयन् = वीणा की ध्वनि का भी तिरस्कार करने वाली । मधु विधुरयत् = पुष्परस को अपमानित करने वाली । मरन्दं मन्दयत् = मरन्द को तिरस्कृत करने वाली । कल-काकली-कलन-पूजितं = सुन्दर

काकली से युक्त। कोकिल-कुल-कूजितं प्रत्यक्षीकृतं=कोयलों की कूक सुनाई दी । ततश्च=उसके बाद । बहूनामेव मधुरकण्ठानां=अनेक मधुर कण्ठ वाले। वन्यपतत्रिणां स्थागित मन्थरारावाः=जंगली पक्षियों के धीरे-धीरे और जोर जोर से होने वाले स्वर। समाकर्णित=सुनाई दिये। अथ=इसके बाद। धीर-समीर-स्पर्श सुखमनु भवन्=मन्द पवन के स्पर्श का अनुभव करता हुआ। तारकितं नभः=तारों भरे आकाश को। साम्रेडमवलोकयश्च=बार-बार देखता हुआ। स्वगृहस्य=अपने घर की। स्मारं-स्मारं=याद करता हुआ। महाचिन्तापारावारे इव=महाचिन्ता रूपी समुद्र में । न्यमाङ्क्षम्=डूब गया। ततः=इसके बाद। पृष्ठतो भित्तिकामाश्रित्य=दीवार से पीठ टिकाकर । करौ कटि प्रदेशे संस्थाप्य=हाथों को कमर पर रखकर। साम्मुखीन शिखरि-शिखरे=सामने वाले पहाड़ की चोटी पर। चक्षुषी स्थिरयित्वा=दृष्टि को स्थिर करके। आत्मानमपि विस्मृत्य=अपने को भी भुलाकर। ध्यातवान् यत्=सोचने लगा कि—

अहह दुरदृष्टोऽस्मि=हाय मैं बड़ा भाग्यहीन हूं । आवयोः पितरौ धन्यौ=हमारे माता-पिता धन्य थे । यौ=जो। सुखिनावेवा-ऽऽवां=हम दोनों को सुखी । परित्यज्य=छोड़कर। दिवंसनाथितवन्तौ =स्वर्ग चले गये। तयोरदृष्टे=उन दोनों के भाग्य में। पुत्र विश्लेष दुःखं न व्यलेखि धात्रा=विधाता ने पुत्र वियोग दुःख नहीं लिखा । आवां नितान्तं पापिनौ=हम दोनों अत्यन्त पापी है। यौ=जो। बाल्य एव ह्यदृशीषु दुखस्यासु, पतितौ=इस प्रकार की विपत्ति में पड़े हैं। साम्प्रतम्=इस समय । आवयोरनुजायाः सौवर्ण्याः=हमारी बहिन सौवर्णी की। का दशा भवेत्=क्या हालत होगी। हन्त हतभाग्या सा बालिका=हाय, वह लड़की बड़ी अभागी है। या=जो। अस्मिन्नेव वयसि=इसी उम्र में। पितृभ्यां परित्यक्ता=उसे माता पिता ने छोड़ दिया। अपयोरप्यदर्शनेन=हम दोनों को भी न देखकर । क्रन्दनैः कण्ठं

कदर्थयति=रोने से गला फाड़ रही होगी। अहह=हाय। सततमस्मत्क्रोडैक क्रीडिनिकाँ=सदा हमारी गोद में खेलने वाली। सततमस्मन्मुखचन्द्रचकोरीम्=चकोर की तरह हमेशा हमारे मुख को देखने वाली, सततमस्मत्कण्ठरत्नमालाम्=हमारे गले पर हमेशा पड़ी रहने वाली। सततमस्मत्सह भोजिनीम्=सदा हमारे साथ खाने वाली। बाल्यलुलितैः=तोतली। कधुर-मधुरैः=मीठी-मीठी। सुधास्यन्दनैः=अमृत की बूदों के समान। दाददादेतिभाषणैः=दद्दा-दद्दा-कहकर। आवयोर्हृदयं हरन्तीम्=हमारे मन को मोहित करने वाली। क्षणमात्रमस्मदनवलोकनेनापि=थोड़ी देर तक हमें न देख पाने पर भी। वाष्प प्रवाहैः कपोलौ मलिनयन्तीम्=गालों को गीला करने वाली। एनां=उस सौवर्णी को। वृद्धः पुरोहितः=वृद्ध पुरोहित, कथं सान्त्वयिष्यति=कैसे सान्त्वना देगे। अस्मज्जनकाविशेषः पुरोहित एव वा=हमारे पिता के समान पुरोहित ही। नौ बिना=हमारे बिना। कथं जीविष्यसि=कैसे जीवित रहेगे। परमेश्वर=हे ईश्वर। तथा विधेहि=वैसा करो। यथा =जिससे। जीवन्तं वृद्धं पुरोहित=बूढ़े पुरोहित। सौवर्णी साक्षात्कुर्वः =और सौवर्णी से मिल सकें।

हिन्दी—

उसके बाद झिल्लयों की झंकार के समान किसी अनाहत नांद से पृथ्वी गूंज उठी। सहस्रों तानपूरों के षड्ज स्वर के समान। वनराजि की वह ध्वनि अनोखी थी। उसी स्वर की गम्भीरता के साथ विवेचना करके सुनने पर सूखे हुए बांसों (कीचक) की ध्वनि भी सुनाई दी। उस पर भी ध्यान देने पर भौंरों की गुञ्जार सुनाई पड़ी। पुनः एकाग्र होकर सुनने पर पानी के बहते हुए सोते की सर-सराहट कर्ण गोचर हुई। उसमें भी लीन होने पर हवा से हिलते हुए कोमल पत्तों की मर्मराहट सुनाई पड़ी। अधिक स्थिर होकर ध्यान पूर्वक सुनने से अमृत की बूंदों को भी तिरस्कृत करने वाली। वीणा की आवाज को भी नीचा दिखाने

वाली। शहद की मिठास को भी लज्जित करने वाली, पुष्परस को भी अपमानित करने वाली, सुन्दर काकली से युक्त कोयलों की कूक सुनाई दी। तदनन्तर मधुर कण्ठ वाले, अनेक जंगली पक्षियों के जोर-जोर से तथा जल्दी-जल्दी होने वाले स्वर सुनाई दिये। इसके बाद शनैः-शनैः बहती हुई हवा के स्पर्श का अनुभव करता हुआ मैं चिन्ता में डूब गया। फिर दीवार पर पीठ लगा कर। दोनों हाथों को कमर पर रख कर सामने वाले पहाड़ की चोटी पर दृष्टि लगाकर। अपने को भी भूलकर मैं सोचने लगा—

हाय ! मैं बड़ा ही भाग्यहीन हूँ। हमारे माता-पिता धन्य थे जिन्होंने हम दोनों को सुखी छोड़कर स्वर्ग लोक को प्रस्थान किया। उनके भाग्य में पुत्र वियोग का दुःख नहीं लिखा था। हम दोनों अत्यन्त पातकी हैं जो बचपन में ही ऐसी दुर्दशा को प्राप्त हुए हैं। इस समय हमारी बहिन सौवर्णी की क्या हालत हो रही होगी ? ओह ! वह लड़की बड़ी अभागी है। इस अल्प अवस्था में उसे माता-पिता ने छोड़ दिया और हम दोनों को भी न पाकर वह गला फाड़ कर रो रही होगी। हाय ! हमारी गोद में ही हमेशा खेलने वाली, चकोरी के समान हमेशा हमारे मुख की ओर देखने वाली। हमारे गले में रत्न-माला के समान पड़ी रहने वाली। सदैव हमारे साथ ही भोजन करने वाली। बचपन की अमृत स्राविणी तोतली और मीठी बोली में दद्दा-दद्दा कहकर हमारा मन मोहित करने वाली। क्षण भर भी हमें न देखकर आँसुओं से अपने गालों को गीला कर देने वाली उस सौवर्णी को वृद्ध पुरोहित कैसे सान्त्वना देंगे ? अथवा हमारे पिता के समान वृद्ध पुरोहित भी हमारे बिना कैसे— जीवित रह सकेंगे ? हे ईश्वर ! ऐसा करो जिससे हम जीवित अवस्था में वृद्ध पुरोहित और सौवर्णी से मिल सकें।

इति चिन्ता-चक्रमारूढ एव आत्मानं विस्मृत्य भित्तिकासंसक्त एव शनैरस्खलम् । प्राप्तसंज्ञश्च समपश्यं यत् श्यामसिंहो मन्दिरपूजकाश्च मामुत्थापयन्ति—इति ।

अथाऽऽवां तेन साधुना मन्दिरस्यान्तर्नीतौ महावीर-मूर्तिसमीपे चोपवेशितौ ।

ततोऽवलोक्य तां वज्रेणेव निर्मिताम्, साकारामिव वीरताम्, गदामुद्यम्य दुष्ट-दल-दलनायोच्छलन्तीमिव केशरि-किशोर-मूर्तिम्, न जाने कथं वा कुतो वा किमिति वा प्रातरन्धकार इव, वसन्ते हिम इव, बोधोदयेऽबोध इव ब्रह्मसाक्षात्कारे भ्रम इव च झटित्यपससार आवयोः शोकः । प्राकाशि च हृदये यद्—

'अलं बहुल-चिन्ताभिः ! कश्चन पुरुषार्थः स्वीक्रियताम्, न खलु बुद्धयतां यदावामेव दुरदृष्टवशात् त्यक्त-कुटुम्बौ वने पर्यटावः—इति, कोशलेश्वरतनयौ राम-लक्ष्मणावपि चतुर्दश-वर्षाणि यावद् दण्डकारण्ये भ्रान्तवन्तौ ।" इति ।

ततः साधोश्चरणयोः प्रणम्य मयोक्तम्-भगवान् । नास्त्यविदितं किमपि भवादृशानां सदाचार-दृढव्रतिनाम् । तत्कथ्यतां किमावां करवाव ? कुतो गच्छाव ? कथमावयोः श्रेयः-सम्पत्तिः स्याद् ? इति ।

ततो हनूमत्पूजकेन सर्वमस्मद्वृत्तान्तं पृष्ट्वा ज्ञात्वा च काष्ठ-पट्टिकायां घृतोन्मथित-सिन्दूरेण किमपि यन्त्रमिवोल्लिख्य, चन्दनैः संचर्च्य, कुसुमैराकीर्य, धूपेन धूपयित्वा, किमपि क्षणं ध्यात्वेव च मम हस्ते पूगीफलमेकं दत्त्वा, "वत्स ! अस्मिन् यन्त्रे कस्मिन्नपि कोष्ठे यथारुचि क्रमुकफलमिदं स्थापय" इत्यवाचि । तत एकतमे कोष्ठे निहित-क्रमुके मयि मुहूर्तम् अङ्गुलिपर्वसु किमपि गणयित्वेव स मामवादीत्—

श्रीवरी—इति=इस प्रकार। चिन्ताचक्र मारूढ एव=चिन्ता-ग्रस्त होकर, आत्मनं विस्मृत्य=अपने को भूल कर, भित्तिकासंसक्त एव, शनैरस्खलम्=दीवार में टिका हुआ ही धीरे से गिर पड़ा। प्राप्त संज्ञश्च=होश में आने पर. समपश्यं=मैंने देखा, श्याम सिंहों मन्दिर पूजकाश्च=श्यामसिंह और मन्दिर के पुजारी लोग, मामुत्थापयन्ति=मुझे उठा रहे हैं। अथ इसके बाद, आवां=हम दोनों को, तेन साधुना=उस साधु के द्वारा, मन्दिर स्यान्तर्वेर्नीतौ=मन्दिर के अन्दर ले जाया गया, महावीर मूर्ति समीपेचोपवेशितौ=हनूमान जी के मूर्ति के पास बिठाया गया। ततः=अनन्तर, तां=उस, वज्रेणेव निर्मिताम्=वज्र से बनी हुई सी, साकारा वीरतामिव=मूर्तिमान वीरता के समान, गदामुद्यम्य=गदा उठाकर, दुष्टदल-दलनार्थमुच्छलन्तीमिव=दुष्टों का नाश करने के लिये उछलती हुई सी, केशरि किशोर-मूर्तिम् अवलोक्य=हनूमान जी की मूर्ति को देखकर, न जाने कथं वा=न मालूम कैसे, कुतो वा=किधर, किमित वा=किस लिये, प्रातरन्धकार इव=प्रात काल में अन्धकार के समान, वसन्ते हिम इव=वसन्त ऋतु में बर्फ के समान, बोधोदये अबोध इव=ज्ञान हो जाने पर अज्ञान के समान, ब्रह्मसाक्षात्कारे भ्रम इव=ईश्वर का साक्षात्कार हो जाने पर सन्देह की तरह, आवयो, शोकः=हम दोनों का शोक, झटिति अपससर=शीघ्र दूर हो गया। हृदये प्राकाशि च यद्=हृदय मे ये भाव उठे कि, ।

अल बहुना चिन्ताभिः=अधिक चिन्ता न करके, कश्चन पुरुषार्थः, स्वीक्रियताम्=कोई कार्य करो, न खलु बुध्यतां यद्=यह मत सोचो कि, आवामेव=हम दोनों ही, दुरदृष्टवशात्=दुर्भाग्यवश, त्यक्तकुटुम्बौ=घर-द्वार छोड़कर, वने पर्यटावः इति=जंगल में भटक रहे है, कौशले श्वर तनयौ=राजा दशरथ के पुत्र, राम-लक्ष्मणावपि=राम लक्ष्मण भी, चतुर्दश वर्षाणि यावत्=चौदह वर्षों तक, दण्डकारण्ये

भ्रान्तवन्तौ = दण्डकारण्य में भटकते रहे थे. ततः = इसके बाद, साधो-श्चरणयोः प्रणम्य = साधु के चरणों में प्रणाम करके, मयोक्तम् = मैंने कहा—भगवन् = महाराज, भवादृश्यानां = आप जैसे, सदाचारदृढ़व्रतिनां = दृढ़ता से सदाचार का पालन करने वाले महापुरुषों से, किमपि अविदितं नास्ति = कुछ भी छिपा नहीं है। तत् = इसलिये, कथ्यतां किमावां करवाव = कहिये हम दोनों क्या करें, कुतो गच्छाव = कहाँ जॉय, कथमावयोः श्रेयः सम्पत्तिः स्यात् = हमारा कल्याण कैसे होगा।

ततो = इसके बाद, हनूमत्पूजकेन = हनूमान के पुजारी ने, सर्व अस्मद् वृत्तान्तं दृष्टवा = हमारा सारा वृत्तान्त पूछकर, ज्ञात्वा च = जान कर, काष्ठ पट्टिकायां = लकड़ी की चौकी में, घृतोन्मथित सिन्दूरेण = घी मिले हुए सिन्दूर से, किमपि यन्त्रमिवोल्लिख्य = कुछ यन्त्र सा बना कर, चन्दनैः सचर्च्य = चन्दन लगाकर, कुसुमैराकीर्य = फल चढ़ा कर, धूपेन धूपयित्वा = धूप से धूपित करके, क्षणं = थोड़ी देर तक, किमपि ध्यात्वेव = कुछ ध्यान सा करके, मम हस्ते = मेरे हाथ में, एकं पूगीफलदत्वा = एक सुपारी देकर कहा, वत्स, अस्मिन् यन्त्रे = बेटे, इस यन्त्र में, कस्मिन्नापि कोष्ठे = किसी भी खाने में, इदं क्रमुकफलं स्थापय = यह सुपारी रख दो, ततः = तब, मयि = मेरे, एकतमे कोष्ठं निहित क्रमुके = एक खाने में सुपारी रख देने पर, मूहूर्तं = थोड़ी देर तक, अङ्गुलिपर्वसु किमपि गणयित्वा इव = अंगुलियों के पोरों पर कुछ गिनकर, समामवादीत् = वह मुझसे बोला—

हिन्दी—

इस प्रकार चिन्तित होकर मैं स्वयं को भी भूल गया और दीवार से टिका हुआ ही गिर पड़ा। होश आने पर मैंने देखा कि श्याम सिंह और मन्दिर के पुजारी मुझे उठा रहे हैं। इसके बाद उस साधु के के द्वारा हम दोनों को मन्दिर के अन्दर ले जाया गया और हनूमान जी की मूर्ति के पास बिठाया गया।

अनन्तर वज्र से बनी हुई सी, मूर्तिमती वीरता सी, गदा उठाकर दुष्टों का नाश करने के लिये उछलती हुई सी उस हनूमान जी की मूर्ति को देखकर, न मालूम कैसे, किधर और किस लिये प्रातः काल के समय अन्धकार के समान, वसन्त ऋतु में वर्फ के समान, ज्ञान हो जाने पर अज्ञान के समान, ईश्वर का दर्शन हो जाने पर सन्देह के समान, हमारा शोक शीघ्र दूर हो गया। हमारे हृदय में इस तरह के विचार आये कि—

अधिक चिन्ता न करके कोई कार्य करो। यह मत सोचो कि हम ही दुर्भाग्य से घर-द्वार छोड़कर जंगलों में भटक रहे हैं। राजा दशरथ के पुत्र राम और लक्ष्मण भी चौदह वर्षों तक दण्डकारण्य में भटके थे।

तदनन्तर उस साधु के चरणों में प्रणाम करके मैंने कहा—महाराज! आप सरीखे दृढ़ता के साथ सदाचार का पालन करने वाले महानुभावों से कोई बात छिपी नहीं रहती। अतः बताइये कि अब हम दोनों क्या करें? कहाँ जांय? हमारा कल्याण कैसे होगा? इसके बाद उस पुजारी ने हमारा सारा हाल पूछकर और जानकर लकड़ी की तख्ती पर घी मिले हुए सिन्दूर से एक यन्त्र सा बनाकर, चन्दन लगाकर, फूल चढ़ाकर और धूप दिखा कर, क्षण भर कुछ ध्यान सा करके मेरे हाथ में एक सुपारी देकर कहा—बेटे! इस यन्त्र के किसी भा कोने में अपनी इच्छानुसार इस सुपारी को रख दो। तब एक खाने में मेरे द्वारा सुपारी रख देने पर थोड़ी देर तक अंगुलियों की पोरों में कुछ गिनता हुआ सा वह साधु मुझ से बोला—

"वत्स! कदाऽपि मा स्म गमो गृहं प्रति, यतो मार्गे पर्वततटीषु अरण्यानीषु च बहवः काम्बोजीया यवन-दस्यवो भवतोर्ग्रहणाय [illegible]-

रन्ति । दस्युभिः क्रिय समभिहारेण चङ्क्रम्यमाणं देशमवलोक्य भवद्-ग्रामवासिनः सर्वेऽपि स्वं स्वमालयं परित्यज्य इतस्ततो गताः ।"

ततः 'सौवर्णि ! सौवर्णि ! पुरोहित ! पुरोहित !' इति सक्षोभं व्याहृतवतोरावयोः पुनः स साधुरवोचत्, यत्—

"पुरोहितोऽपि युष्मद्रत्नादिनिधिं क्वचन सङ्केतित-भूमि-कुहरे स्थापयित्वा, एकां धात्रीं दास-चतुष्टमेकं चाश्वं सह नीत्वा महाराष्ट्र-पञ्चानन-परिपूरितां कोङ्कणभूमिं प्रति प्रस्थितः ।"

तदाकलय्य "सत्यं सत्यमेवमेवम्" इति समस्तकान्दोलनं स्वीकृतवति पुरोहिते; 'ततस्ततः' इति मुखरीभूतेषु च कुटीरस्थ-सकल-जनेषु भूयस्तु किं व्याजहार गौरसिंहो यद्—

"न शोचनीयं भवद्भ्यां किमपि तयोर्विषये. गन्तव्यं च तस्मिन्नेव शिववीराधिष्ठिते गिरि—गरिष्ठे कोङ्कणदेशे । कियत्समयानन्तरं तत्रैव भगिन्या पुरोहितेन च सह साक्षात्कारोऽपि भविष्यति—" इति प्रावोचत् ।

श्रीधरी—वत्स=बेटे । कदापि=किसी तरह भी । मास्म गमो गृहं प्रति=घर की ओर मत जाना । यतो=क्योंकि । मार्गे=रास्ते में । पर्वत तटीषु=पहाड़ों की घाटियों । अरण्यानीषु च=जंगलों में भी । बहवः=बहुत से । काम्बोजीया यवन दस्यवो=कम्बोज देश के यवन लुटेरे, भवतोर्ग्रहणाय विचरन्ति=तुम्हें पकड़ने के लिये घूम रहे हैं । दस्युभिः=डाकुओं से । क्रियासमभिहारेण=बार-बार,चङ्क्रम्यमाणं देश-मवलोक्य=देश पर आक्रमण होता हुआ देखकर । सर्वेऽपि भवद्ग्राम वासिनः=तुम्हारे गाँव के सभी लोग । स्वं स्व मालयं परित्यज्य=अपने-अपने घर को छोड़ कर । इतस्ततो गताः=इधर उधर चले गये ।

ततः=इसके बाद। सौवर्णी-सौवर्णी। पुरोहित-पुरोहित, इति आवयोः=इस प्रकार हमारे। सक्षोभं व्याहृतवतो=क्षोभ के साथ कहने पर। स साधुः पुनः अवोचत्=वह साधु फिर बोला। यत्=कि—

पुरोहितोऽपि=पुरोहित भी। युष्मद्रत्नादिनिधिं=तुम्हारी रत्न आदि सम्पत्ति को। चवचन संकेतित भूमि कुहरे=किसी संकेतित गड्ढे में। स्थापयित्वा=गाड़ कर। एकां धात्रीं=एक धाय। दासचतुष्टयं=चार दास। चाश्वं सह नीत्वा=और घोड़ों को साथ लेकर। महाराष्ट्र पंचानन परियूतां=महाराष्ट्र केसरी शिवाजी से युक्त। कोंकण भूमि प्रति प्रस्थितः=कोंकण देश की ओर चले गये।

तदाकलय्य=यह सुनकर। सत्यं सत्यमेवमेवम्=सच है, ऐसा ही है। भूमि समस्तकान्दोलनं=सिर हिलाकर। स्वीकृत वति पुरोहिते=पुरोहित के स्वीकार करने पर=ततस्ततः=फिर क्या हुआ। इति कुटीरस्थ सकल जनेषु मुखरी भूतेषु=इस प्रकार कुटी में स्थित सभी लोगों के पूछने पर। गौरसिंहः=गौरसिंह। ने भूयः=फिर से। तदुक्ति व्यावहार=उस साधु के कथन को कहा।

भवद्भ्यां=आप दोनों के द्वारा। तयोर्विषये=उन दोनों के बारे में। किमपि न शोचनीयं=कुछ भी चिन्ता नहीं करनी चाहिए। च=और। तस्मिन्नेव=उसी। शिववीराधिष्ठिते=शिवाजी से रक्षित गिरि गरिष्ठे=पर्वत बहुल। कोङ्कण देशे=कोङ्कण प्रदेश में। गन्तव्यं=जाना चाहिये। कियत्समयानन्तरं=कुछ समय के बाद। तत्रैव=वहीं। भगिन्या पुरोहितेन च सह=बहिन और पुरोहित से। साक्षात्कारोऽपि=मुलाकात भी। भविष्यतीति=होगी। इति प्रावोचत्=ऐसा उसने कहा।

हिन्दी—

बेटे! घर की ओर कदापि मत जाना, क्योंकि रास्ते में पर्वतों की घाटियों और जंगलों में बहुत से कम्बोज देश के यवन लुटेरे तुम्हें

पकड़ने के लिये घूम रहे हैं। डाकुओं के द्वारा अपने देश पर निरन्तर आक्रमण होता हुआ देखकर तुम्हारे गाँव के सभी लोग इधर-उधर चले गये। इसके बाद हम दोनों के क्षुब्ध होकर सौवर्णी-सौवर्णी, पुरोहित-पुरोहित यह कह कर फिर बोला—

पुरोहित भी तुम्हारी सम्पत्ति को किसी निश्चित स्थान में गाड़ कर एक धाय, चार दास, और एक घोड़े को साथ लेकर महाराष्ट्र केसरी शिवाजी के कोंकण प्रदेश की ओर चले गये।

यह सुनकर। पुरोहित के सिर हिलाकर-सच है, सच है, यह कहकर स्वीकार करने पर और कुटी के सभी लोगो के फिर क्या हुआ? यह पूछने पर गौरसिंह ने उस पुजारी के कथन को फिर कहा—

आप दोनों को उन दोनों के सम्बन्ध में कोई चिन्ता नही करनी चाहिए और शिवाजी से रक्षित पर्वत बहुल कोंकण प्रदेश को चला जाना चाहिए। कुछ समय बाद अपनी बहिन और पुरोहित से तुम्हारा साक्षात्कार भी होगा। ऐसा उस पुजारी ने कहा।

ततस्तु भ्रमर-झङ्कारेणेव 'अहो! अहो! आश्चर्यमाश्चर्यम्, धन्यो मन्त्राणां प्रभावः, धन्यमिष्टबलम्, चित्रा धर्मनिष्ठा अवितर्क्यस्तपः प्रतापः, विलक्षणा नैष्ठिकी वृत्तिः" इति मन्द्र-स्वर मेदुरेण श्रोतृजन-वचन-कलापेन झंकृते तस्मिन् निकुञ्जे; "ततः कथं प्रचलितौ? कथमात्राऽऽयातौ? का घटना घटिता? क उपायः कृतः? किमाचरितम्?" इति कुतूहल-परवशे विस्फारितनयने उद्ग्रीवे समनुकूलितकर्णे विस्मृतान्यकथे कृतावधाने च परिकरवर्गे श्याम-सिंहस्यांके तत्त दृष्टि सौवर्णी तदङ्कं संस्थाप्य, पतितोभयजानु समुपविश्य, राजत-राजिका इव कपोलयोरुत्तरोष्ठे च समुद्भूताः स्वेदकणिका उत्तरीय-प्रान्तेन परिमृज्य पुनरात्म-वृत्तान्त वक्तुं प्रारभत गौरसिंहो यद्—

"अथ भगवन् ! श्रूयते सुदूरमस्मात्स्थानात् कोङ्कणदेशः, मध्ये च विकटा अटव्यः, शतशः शैल-श्रेणयः, त्वरितधारा धुन्यः, पदे-पदे च भयानक-भल्लूकानामध्यूकृत-सङ्कुलानाम्, मुस्ता-मूलोत्खनन-घुर्घुरायित-घोर-घोणानां घोणिनाम्, पङ्क-परीवर्त्तोन्मथित-कासाराणां कासराणाम्, नरमांसं बुभुक्षूणां तरक्षूणाम्. विकट-करटि-कट-विपाटन-पाटव-पूरित-संहननानां सिंहानाम्, नासाग्र-विषाण-शाणन-च्छल-विहित-गण्डशैल-खण्डानां खड्गिनाम्, दोदुल्यमान-द्विरेफ-दल-पेपीयमान-दान-धारा धुरन्धराणां सिन्धुराणाम्, कृपा-कृपण-कृपाण-च्छिन्न-दीनाध्वनीन-गल-तल-गलदवीन-धार-शोणित-बिन्दु-वृन्द-रञ्जित वारवाण-सारसनोष्णीष-धारणा-कलिताखर्व-गर्व दुर्वाराणां लुण्टक-निकराणां च सर्वथा साक्षात्कार-सम्भवः । बालावावाम्, अविज्ञातोऽध्वा, भोग-समयो दुर्ग्रहाणाम्, अन्धावेव रहायी. जनपद-शून्यमेतत् प्रान्तरम्, तत्कथं गच्छेव ? कथं धैर्यं धारयेव ? कथं वा कोङ्कणदेशं प्राप्नुयाव इति विश्वसेव ?" इति सचिन्त विनिवेदितवति मयि, स साधुरावयोः पृष्ठे हस्तं विन्यस्य—

श्रीधरी—ततस्तु=इसके बाद । भ्रमण-झङ्कारेणेव=भौंरों की गूँज के समान । अहो, अहो आश्चर्यमाश्चर्यम्=अहो ! आश्चर्य है । मन्त्राणां प्रभावः धन्यः=मन्त्रों का प्रभाव धन्य है । इष्टबलम् धन्यम्=इष्ट शक्ति धन्य है । धर्मनिष्ठा चित्रा=धर्मनिष्ठा आश्चर्य जनक है । अवितर्क्यस्तपः प्रभावः=तपस्या का प्रताप अवितर्क्य है । नैष्ठिकी वृत्तिः विलक्षणा=ब्रह्मचर्य की वृत्ति विलक्षण हैं । इति=इस प्रकार । मन्द्रस्वरमेदुरेण श्रोतु जन वचन कलापेन=श्रोताओं के द्वारा गम्भीर स्वर में कहे गये इन वाक्यों से । तस्मिन् निकुञ्जे झंकृते=उस निकुञ्ज के गूँज जाने पर । ततः कथं प्रचलितौ=फिर आप दोनों कैसे चले । कथमत्राऽऽयातौ=यहाँ कैसे आये । का घटना घटिता =क्या घटना घटी । का उपायः कृतः=क्या उपाय किया । किमाचरः-

तम्=क्या किया । इति=यह जानने के लिये । कुतूहल परवशे=उत्सुक होकर । परिकर वर्गे=पास में बैठे सभी लोगों के । विस्फारित नयेन=आंखें फाड़ कर । उदग्रीवे=गर्दन ऊंची करके । समनुकूलित कर्णे=कान लगा कर । विस्मृतान्यकथे=अन्य बातों को भूल कर । कृतावधाने च=सावधान् होकर । श्यामसिंहस्य अङ्के=श्यामसिंह की गोद में । दत्तदृष्टि सौवर्णी=नजर लगाई हुई सौवर्णी को । तदङ्के संस्थाप्य=उसकी गोद में रखकर । पावितो भयजानु समुपविश्य=घुटनों के बल बैठकर । राजत राजिका इव=चांदी के कणों के समान कपोलों । रुत्तरोष्ठे च=के गालों और ओठो के समान । समद्भूता स्वेदिणका=निकली हुई पसीने की बूंदों को, उत्तरीय प्रान्तेन=दुपट्टे के छोर से, परिमृज्य=पोंछ कर । पुनः फिर से । आत्म वृत्तान्तं प्राह्भत गौरसिंहः=गौरसिंह ने अपना वृत्तान्त करना आरम्भ किया ।

अथ=इसके बाद । भगवान्=महाराज । श्रूयते=सुनते है कि । अस्मात् स्थानात्सुदूरं कोङ्कणदेशः=यहाँ से कोङ्कण देश बहुत दूर है । म ये च=और बीच में । विकटा अटव्यः=भयंकर जंगल है । शतशः शैल श्रेणयः=सैकड़ों पहाड़ियां हैं । त्वरित=धारा धुन्यः=तेज धार वाली नदियां हैं । पदे-पदे=पद-पद पर । मम्बूकृत संकुलानां=भूकने के साथ शब्द करने वाले । भयानक भल्लूकानाम=भयंकर भालुओं । मुस्ता मूलोत्खनन घुर्घुरायित घोर घोणानां घोणिनाम=मोथ की जड़ खोदने में अपनी भयंकर नाक से घुर्र घुर्र की आवाज करने वाले जंगली सुअरों । पङ्क परीवर्त्तोन्मथित-कासाराणां=कीचड़ में लोट लगाकर तालाबों को गन्दा करने वाले । कासराणां=जंगली भैंसों । नरमांस बुभुक्षूणां तरक्षूणां=नर मांस के भूखे चीते । विकट करटि-कट-विटापन-पाटव-पूरित सहननानां=भयंकर हाथियों के भय से विदीर्ण करने वाले । सिंहानां=शेरों, नासाग्र-विषाण-शाणान्तच्छल-विहित-गण्डशैल-खण्डानां=नाक के सींग तेज करने के बहाने पहाड़ियों

के टुकड़े-टुकड़े कर डालने वाले। खड्गिनाम्=खड़ों। दोदुल्यमान-द्विर्दफ-दल पेपीयमान दान धारा धुरन्धराणाँ=बार-बार रड़ने वाले भौंरों के द्वारा पान की हुई मद धारा। वाले सिन्धुराणाँ=हाथियों, कृपा-कृपण कृपाण च्छिन्न-दीनाध्वनीन-गल-तल-गलत्पीन-धार शोणित-बिन्दु-वृन्द रञ्जित-वारबाण-सारसनोष्णीय-धारणा-कलिता खर्व-गर्व-वर्बराणाँ=निर्दय तलवार से कटे हुए दीन हीन पथिकों के गले से बहने वाली मोटी धारा के रक्त बिन्दुओं से रंगे अंगरखा मेखला और शिरस्त्राण धरण कर अध्याधिक अभियान करने वाले वर्बर लुण्ठक। निकराणां च=लुटेरों के समूहों। साक्षात्कार संम्भवः=मिल जाना सर्वथा सम्भव है। बालावावाम्=हम दोनों अभी बच्चे है। अविज्ञातोऽध्वा=रास्ता अपरिचित हैं। दुर्ग्रहाणा भोगसमयः=बुरे ग्रहों का भोग समय चल रहा है। अश्वावेव सहायौ=घोड़े ही हमारे सहायक हैं। एतत् प्रान्तरे जनपद शून्यमेतत्=इस ओर कोई वस्ती नहीं है। तत्कथं, गच्छेव=तब हम कैसे जाँय, कथं धैर्यधार मेव=कैसे धैर्य धारण करें। कोङ्कण प्राप्स्यान इति कथं विश्वसेय=कोंकण देश में पहुँच ही जायेंगे कैसे विश्वास करे। विनिवेदितवतिमार्ये सचिन्तं=चिन्ता पूर्वक कहने पर आवयो=हम दोनों से, साधुनावया पृष्ठं हलं विन्यै=हमारे पीठ पर हाथ रखकर उदाहरण कहा—

हिन्दी—

इसके बाद भौंरों की गुञ्जार के समान अहो, आश्चर्य है, आश्चर्य है, मन्त्रों का प्रभाव धन्य है, और इष्टदेव की शक्ति धन्य है। धर्म निष्ठा भी कितनी विस्मय कारी है और तपस्या का प्रभाव कितना अवितर्क्य है, ब्रह्मचर्य की साधना कितनी विलक्षण है? श्रोताओं के द्वारा गम्भीर स्वर में कहे गये इन वाक्यों से वह निकुञ्ज गूँज गया। फिर आप दोनों कैसे चले? यहाँ कैसे आये? यह जानने को उत्सुक होकर पास में बैठे हुए सभी लोगों ने आँखें फाड़ कर गर्दन ऊँची करके, कान लगा-कर, अन्य सारी बातों को भूलकर सावधान हो जाने पर, श्याम सिंह की

गोद की ओर देखती हुई सौवर्णी को उसकी गोद में बिठाकर, घुटनों के बल बैठकर, दोनों गालों और ओंठ के ऊपर चांदी के कणों के समान आये हुए पसीने की बूंदों को दुपट्टे के छोर से पोंछ कर, गौर सिंह ने फिर से अपना वृत्तान्त कहना आरम्भ किया।

महाराज ! सुनते है कि कोंकण देश यहाँ से बहुत दूर है। बीच में बड़े भयानक जंगल हैं, सैकड़ों पहाड़ियाँ हैं, तीव्र वेग से बहने वाली नदियाँ हैं और पद-पद पर भूकने के साथ शब्द करने वाले भयंकर भालुओं, मोथे की जड़ खोदने में भयंकर नाक से घुर्र-घुर्र की आवाज करने वाले जंगली सुअरों, कीचड़ में लोट-पोट लगाकर तालाब को गन्दा करने वाले जंगली भैंसों, मनुष्य के मांस को खाने के इच्छुक चीते, भयंकर हाथियों के गालों को फाड़ने में कुशल शेरों, अपनी नाक पर की सींग को तेज करने के लिये पहाड़ियों के टुकड़े-टुकड़े कर डालने वाले गैंडों, उड़-उड़कर आकर मद पीते हुए भौंरो वाले हाथियों तथा तलवार से निर्दयता से कटे दीन हीन पथिकों के गले से बहने वाले रुधिर की मोटी धार की बूंदों से रंगे अंगरखे, मेखला और शिरस्त्राण पहने हुए अत्यन्त घमण्डी लुटेरों के समूहों का मिल जाना बहुत सम्भव है। अभी हम दोनों बच्चे ही हैं। रास्ता भी अनजाना है। बुरे ग्रहों का भोग चल रहा है। हमारे पास सहायक के रूप में केवल घोड़े ही हैं। इस ओर कोई मनुष्यों की बस्ती भी नहीं है। फिर हम कैसे जांय ? कैसे धैर्य धारण करें ? कोंकण देश में हम पहुँच ही जायेंगे, इस बात का कैसे विश्वास करें ? मेरे इस तरह चिन्तित होकर निवेदन करने पर उस साधु ने हम दोनों की पीठ पर हाथ रखकर सान्त्वना देते हुए इस प्रकार कहा—

"हनूमान् सर्वं साधयिष्यति, मा स्म चिन्ता-सन्तान-नितान्त-सख्यालं दुःखाकुरुतम् । यथा लघुलेनोपायेन कोङ्कणदेशं प्राप्स्यथस्तथा

प्रभाते निर्देक्ष्यामि । साम्प्रतमित आगम्यताम्, पीयतामिद-मेला-गोस्तनी-केसर-शर्करा-सम्पर्क-सुधा-विस्पर्द्धि महिषी-दुग्धम्, दासा इमे पाद-संवाहनैस्तैल-सम्मर्दैर्व्यजन-चालनैश्च भवन्तौ विगतक्लमौ विधास्यन्ति । न किमपि भयमधुना वां हनूमतश्चरणयोः शरणमायातयोः । सुखेन सुप्यताम् । असंशयमेव प्रातरेव हनूमत्पूजन-समये सर्वं कार्यं सेत्स्यति"—इति समाश्वासयत् ।

आवां च तन्निर्दिष्टेनैव सोपानेन अट्टालिकामारुह्य एकस्मिन् गृहे प्रविष्टौ, तत्र च राजकुमार-योग्यां पर्यङ्कादि-सामग्रीमवलोक्य नितान्त चकितौ प्रसन्नौ च अभूव । अथ भूयस्तत्प्रदत्तं मोदकादि किञ्चिद् भुक्त्वा, पयः पीत्वा, ताम्बूलं चर्वयन्तौ, दासैःपादयोः पीड्यमानौ, व्यजनैर्वीज्यमानौ, स्वभाग्योदय-सोपानं साधोः साधुतां मनस्येव प्रशंसमानावेव चाशयिष्वहि । अयं चिरकाला-नन्तरमावाभ्यां निःशङ्क-शयन-समयो लब्धः, इत्येकयैवाऽऽनन्दमय्या वितर्क-विचारादि-सम्पर्क-शून्यया असम्प्रज्ञात-समाधि-सोदरयेव निद्रया समस्तां रजनीमजीगमाव ।

श्रीधरी—हनूमान सर्वं साधयिष्यति=हनूमान जी सब कार्य सिद्ध कर देंगे, चिन्तासन्तान वितानैः=चिन्ता करने से, आत्मानं=अपने को, मा स्मःदुःखा कुरुतम्=दुःखी मत बनाओ, यथा=जिस, सरलेन उपायेन=सरल उपाय से. कोंकण देशं प्राप्स्यथ=तुम कोंकण देश पहुँचोगे. तथा=वह, प्रभाते निर्देक्ष्यामि=सवेरे बताऊँगा, साम्प्रतम्=इस समय, इत आगम्यताम्=इधर आओ, इदं=इस, एला=इलायची, गोस्तनी=किशमिश केसर, शर्करा सम्पर्क=चीनी मिले हुए, सुधा विस्पर्धि=अमृत को लज्जित करने वाले, महिषी दुग्धम् पीयताम्=भैंस का दूध पिओ, इमे दासाः=ये नौकर, पादसंवाहनैः=पैर दबा कर, तैल सम्मर्दः=तेल मल कर, व्यजन-चालनैश्च=पंखा झलकर, भवन्तौ=तुम दोनों को, विगतक्लमौ विधास्यन्ति=थकान रहित कर

देंगे। हनूमत श्चरणयोः शरण मागतयोः=हनूमान जी के चरणों की शरण में आये हुए, वां=तुम दोनों को। अधुना किमपि भयं न=अब कोई भय नहीं है। सुखेन सुप्यताम्=सुख से सोओ, असशयमेव= निश्चय ही, प्रातरेव=सवेरे, हनूमत्पूजन समये=हनूमान जी की पूजा के समय, सर्व कार्य सेत्स्यति=सब काम हो जायेगा। इति=इस प्रकार, समाश्वासमत् (उसने) आश्वासन दिया।

आवां च=हम दोनों भी, तन्निर्दिष्टेनैव सोपानेन—उसके द्वारा बताई हुई सीढ़ियों से। अट्टालिकामारुह्य=दुमंजले पर चढ़कर, एकस्मिन् गृहे प्रविष्टौ=एक कक्ष में प्रविष्ट हो गये। तत्र च=और वहाँ राजकुमारयोग्यां=राजकुमार योग्य,पर्यङ्कादि सामग्री मवलोक्य=पलग आदि सामग्री को देखकर, नितान्त चकितौ=अत्यन्त चकित,प्रसन्नो च अभूव= और प्रसन्न भी हुए, अथ=इसके बाद, भूयः=फिर से, तत्प्रदत्तं मोदकादि किञ्चिद् भुक्त्वा=उसके दिये हुए, लड्डू आदि खाकर, पयः पीत्वा=दूध पीकर, ताम्बूल चर्वयन्तौ=पान चबाते हुए दासैः पादयोः पीडय मानौ=नौकरो से पैर दबवाते हुए, व्यजनैर्वीज्य मानौ=पखों से हवा किये जाते हुए, स्वभाग्योदय सोपानं=अपने भाग्योदय की सीढी, साधोः साधुतां=उस साधु की सज्जनता का, मनस्येव=मन ही मन प्रशंस मानावेव=प्रशंसा करते हुए, चाशयिष्वाहि=हम सो गये, अथ चिरकालानन्तर मावाभ्यां=बहुत दिनों के बाद, आवाभ्यां=हम दोनों को। निःशङ्क शयन समयो लब्धः किशङ्क=सोने का मौका मिला था। इति=इसलिये, एकयैव आनन्दमय्याया-वितर्क विचारादि-सम्पर्क शून्यया=एक ही आनन्दमयी, तर्क आदि से रहित, असम्प्रज्ञात समाधि सोदरमेव=असम्प्रजात समाधि के समान निद्रया=नींद से, समस्तां रात्रिं अभि गमाव=सारी रात बिता दी।

हिन्दी—

हनुमान जी सब कार्यों को सिद्ध करेंगे। चिन्ता करके अपने को

दुःखी मत करो। जिस सरल उपाय से तुम कोङ्कण देश पहुँच सकोगे, वह सवेरे बताऊंगा। इस समय इधर आओ और इलायची, किशमिश, केसर तथा चीनी मिले हुए अमृत को भी लज्जित करने वाली भैंस का दूध पिओ। ये नौकर हाथ पैर दबाकर, तेल मलकर, पंखा झल कर तुम्हारी थकान दूर कर देंगे। हनूमान जी की शरण आये हुए तुम दोनों को अब कोई भय नहीं है। आराम से सोओ। प्रातः काल हनूमान जी की पूजा के समय निश्चय ही तुम्हारा सब काम हो जायेगा। यह कहकर उस साधु ने आश्वासन दिया।

इसके बाद हम दोनों उसी साधु के बताये हुए सीढ़ियों से दुछत्ते पर गये और वहाँ एक कक्ष में प्रविष्ट हो गये। वहाँ राजकुमारों के योग्य पलंग आदि सामग्री को देखकर आश्चर्य चकित भी हुए और प्रसन्न भी। तदन्तर उन्हीं पुजारी जी के दिये हुए लड्डू आदि को दुबारा खाकर और दूध पीकर पान खाया। नौकरों के पैर दबाने और पंखा झलने पर अपने भाग्योदय की सीढ़ी तथा उस पुजारी की सज्जनता की मन ही मन प्रशंसा करते हुए सो गये। बहुत दिनों के बाद हमें निश्चिन्त होकर सोने का मौका मिला था। इसलिये हमने तर्क-वितर्क रहित आनन्दमयी असम्प्रज्ञात समाधि के समान एक ही नींद में रात बिता दी।

ततः केनापि धमद्धामद्ध्वनिनेव बोधितौ, दक्षतो वामतश्च परिवृत्य, चक्षुषी परिमृज्य, साङ्गुलि-ग्रथन-हस्त-प्रसारण ससनायु-पीडनं च विजृम्भ्य, भूमिं प्रणम्य, पर्यङ्काडुत्तीर्य, कोष्ठाद् बहिरागत्य, साञ्जलि मारुति-ध्वजमवलोक्य, करतले निरीक्ष्य, भित्तिकाव-लम्बित-मुकुरेष्वात्मानं साक्षात्कृत्य, भगवन्नामानि जपन्तौ, कांश्चित्प्रातःस्मरण-श्लोकांश्च रटन्तौ, परस्परं "सुखमावामभ्वाप्स्व, प्रसन्नं नौ चेतः"

कोकः=चकोर वराकीं कोकीं न उपसर्पति=बेचारी चकोरी के पास नही जा रहा है।

हिन्दी—

उसके बाद किसी के धम-धम की आवाज करने से जगकर, दायें बायें करवट लेकर, आँखें मलकर, अंगुलियों को परस्पर गूँथ कर, हाथों को फैला कर, नसों को तानते हुए, जँभाई लेकर, भूमि को प्रणाम करके, पंलग से उतर कर, कमरे से बाहर आकर, हाथ जोड़ कर, हनूमान जी के झंडे की ओर देखकर, हथेलियों का दर्शन करके, दीवारों पर लटके हुए शीशो पर अपना प्रतिविम्ब देखकर भगवच्चिन्तन करते हुए, प्रातः स्मरणीय कुछ श्लोकों का पाठ करते हुये, आपस में हम सुख से सोये, मन प्रसन्न है। इस प्रकार धीरे-धीरे बात चीत करते हुए, उसी मन्दिर के ऊपर वाले भाग में टहलने लगे तभी वही आवाज जोरों से सुनाई पड़ी। मैंने झुककर झरोखे से देखा कि सिर पर कपड़ा लपेटे और पास में जल से भरे हुए बरतनों को रखे हुए पँच-छः साधू पत्थर के टुकडों से दाँतून के अग्रभाग को मुलायम करने के लिये कूट रहे हैं। और देखा कि अभी रात के अन्धकार ने आकाश को पूर्णतया छोड़ा नही है। पूर्व दिशा स्वच्छ होती हुई भी अभी लाल नहीं हुई। पक्षी चह-चाहा तो बहुत रहे हैं किन्तु अभी अपने घोंसले वाले पेड़ों को छोड़ कर उड़ नही रहे है। वृक्ष पहाड़ियों गाँवों और घरों से भिन्न तो दिखाई दे रहे हैं। पर अभी अपने फल फूल और पत्तों के आकार से अपनी जाति का परिचय नहीं दे रहे हैं। तरुण तित्तिरी जोर-जोर से शब्द करती हुई अपनी काम वेदना को प्रकट तो कर रही है, किन्तु अभी पेड़ से उतर नहीं रही है। चकोर पक्षी ने प्रकाश को देखकर कुछ शोक तो कम कर दया है किन्तु बेचारी चकोरी के पास चकोर नही जा-रहा है।

अथेदृशीमेव मनोहारिणीं शोभामवलोकयन्तौ कम्पित-कुन्दकलापस्य, उन्मीलन्मालती-मुकुल-मकरन्द-चौरस्य पाटलि-पटल-पराग-पुञ्ज-पिञ्जरितस्य शनैः शनैः फरफरायमाण-शुक-पिकादि-पतगोन्मथ्यमानस्य पलाशि-पलाशाग्र-विलुलत्तुषार-कणिकापहरण - शीतलस्य समीरस्य स्पर्शसुखमनुभवन्तौ, तत्रत्र पूर्वस्या अट्टालिकाया दक्षिणस्याम् दक्षिणस्याञ्च पश्चिमायाम्. पश्चिमाया अप्युत्तरस्याम्, ततश्च पुनः पूर्वस्यामिति पौनः पुन्येन पर्य्यटन्तौ मुहूर्त्तमयापयाव ।

तस्मिन्नेव समये एकेन ब्रह्मचारिवटुनाऽऽगत्य निवेदितं, यत् "झपदि प्रभात-क्रिया निर्वहणीयेत्यादिशति तत्रभवान् साधु-शिरोमणिः" तदाकर्ण्य, वाढमित्यङ्गीकृत्य, षष्टिसहस्र-वालखिल्य-कषायवसन विधूतायामिव, मन्देह-देश-शोणित-शोणितायामिव, अरुणा-रुणिम-रञ्जितायामिव. मोमुद्यमान-नरीनृत्यमान-परस्कोटि-ताम्रचूड-चूडा-प्रतिबिम्ब-संवलितायामिव, पोस्फुटयमान-स्वर्गङ्गा-कोकनद-पटल-व्याप्तायामिव, भक्तजन-भक्ति-प्रभाव भाविताविर्भाव-च्छिन्न-मस्ता-कन्धरोच्छल-च्छोणित स्नातायामिव. वसन्तोत्सवोच्छालित- सिन्दूरान्धकारान्धीकृतायामिव, तानप्यमान-ताम्रद्युति-चौरायां प्राच्याम्, तत्प्रभया शोण-शोणैः सोपानैर वतीर्य, मारुतिमन्दिर-द्वारि मस्तक-मवनम्य. झटित्येव स्नानपूर्वाः क्रिया समाप्य, तेनैव ब्रह्मचारिवटुना निर्दिश्यमान-मार्गौ, पूर्वावलोकित-वेशन्ता दारादेव रश्मिमतः किञ्चिदमृतोदं नाम महासरः समासादितवन्तौ ।

श्रीचरी-अथ = इसके बाद, ईदृशीमेव = इस प्रकार की,मनोहारिणी-शोभामवलोकयन्तौ = मनोहर शोभा को देखते हुए,कम्पित-कुन्द कलापस्य = कुन्द पुष्पों को कँपा देने वाले, उन्मीलन्मालती-मुकुल-मकरन्द चौरस्य = खिलती हुई मालती के पराग को चुराने वाले, पाटिल-पटल-पराग-पुञ्ज-पिञ्ज-रितस्य = गुलाबों के पराग से पीले पड़े हुए, शनैःशनैः = धीरे-धीरे

फरफरायमाण=पंख फड़-फड़ाते हुए, शुक-पिकादि पतगोन्मथ्यमानस्य=तोता-कोयल आदि पक्षियों से विलोड़ित, पलाशि पलाशाग्र=पेड़ों के पत्तों के अग्रभाग पर, विलुलत्=हिलती हुई, तुषार कणिकापहरण शीतलस्य=ओस की बूँदों को ग्रहण करने से शीतल, समीरस्य=हवा के, स्पर्श सुखमनुभवन्तौ=स्पर्श के सुख का अनुभव करते हुए, तत्रैव=वहीं, पूर्वस्या अट्टालिकाया दक्षिणस्याम=अटारी के पूर्व से दक्षिण, दक्षिणस्याञ्च पश्चिमायां=दक्षिण से पश्चिम, पश्चिमाया अपि उत्तरस्याम्=पश्चिम से भी उत्तर, ततश्च पुनः पूर्वस्यां=वहाँ से फिर पूर्व की ओर, इति=इस प्रकार, पौनः पुन्येन=बारंबार, पर्यटन्तौ=घूमते हुए, मुहूर्त मयापयाव=हमने थोड़ा समय बिताया।

तस्मिन्नेव समये=उसी समय, एकेन ब्रह्मचारु वटुनाऽऽगत्य=एक ब्रह्मचारी बालक ने आकर, निवेदितं यत्=कहा कि, सपदि=जल्दी, प्रभात क्रिया निर्वहणीया=प्रातः कृत्य से निवृत्त हो जांय, इति=ऐसा, आदिशति तत्रभवान्-साधु शिरोमणिः=साधु शिरोमणि का आदेश है, तदाकर्ण्य=यह सुनकर, बाढ़मित्यङ्गीकृत्य=बहुत अच्छा कहकर उसे स्वीकार करके, षष्टिसहस्र-बाल खिल्य-काषाय वसन विधूतायामिव=साठ हजार बालखिल्यों के गेरुए वस्त्रों से, उत्कम्पित सी, सन्देह-देह-शोणित शोणिताया मिव=सन्देह राक्षसों के शरीर के रक्त से लाल हुई सी, अरुणिमरञ्जितायामिव=अरुण की लालिमा से रञ्जित सी, मोमुद्यमान=प्रसन्न होकर, नरीनृत्यमान=नाचते हुए, परस्कोटि ताम्रचूडा प्रतिबिम्ब-संवलितायामिव=करोड़ों मुर्गों की कलंगियों से युक्त सी, पोस्फुट्यमान=खिलते हुए, स्वर्गगंगा कोकनदपटल व्यासाया मिव=आकाश गंगा के लाल कमलों से आच्छादित सी, भक्त जन भक्ति प्रभाव-भावितां विभविताभविच्छिन्नमस्ता कन्धरोच्छल-च्छोणित स्नातायामिव=भक्तों को भक्ति के प्रभाव से प्रकट हुई भिन्न मस्ता की गरदन से निकलते हुए रक्त से नहाई हुई सी, वसन्तोत्सवोच्छालित

सिन्दूरान्धकारान्धीकृतायामिव=होलिकोत्सव में उड़ाये हुए गुलाल के अन्धकार में अन्धी हुई सी, तापध्यमान ताम्रद्युति चौरायां=तपे हुए तांबे के समान लाल कान्ति वाली, प्राच्याम् तत्प्रभया शोण-शोणः सोपानैरवतीर्य=प्राची की कान्ति से लाल-लाल सीढ़ियों से उत्तर कर, मारुत मन्दिर द्वारि मस्तक मवनमय्य=हनूमान जी के मदिर के द्वार पर सिर झुका कर, झटित्येव स्नानपूर्वाः क्रियाः समाप्य=शीघ्र नित्य कर्म समाप्त करके, तेनैव ब्रह्मचारी बटुना निर्दिश्यमान मार्गो=उसी ब्रह्मचारी बालक से रास्ता दिखाये जाते हुए, पूर्वविलोकित वेशन्तादारादेव पश्चिमतः अमृतोदं नाम महासरः समासादित वन्तौ=अमृतोद नामक सरोवर में पहुंचे।

हिन्दी—

इसी समय एक ब्रह्मचारी बालक ने आकर कहा कि—ब्रह्मचारी जी को आज्ञा है कि आप शीघ्र नित्य क्रिया से निवृत्त हो जांय। उसकी बात सुनकर, बहुत अच्छा कहकर, साठ्हजार बालखिल्यों के काषाय वस्त्रों से उत्कम्पित सी सन्देह राक्षसों के शरीर के रक्त से रक्तिम सी, अरुण की लालिमा से रञ्जित सी, प्रसन्न होकर नाचते हुए करोड़ों मुर्गों की कलंगी के प्रतिबिम्बों से प्रतिबिम्बित सी, आकाश गंगा में खिलते हुए लाल कमलों की आभा से आच्छादित सी, भक्तों की भक्ति के प्रभाव से प्रकट हुई छिन्न मस्ता की गरदन से निकलते हुए रक्त से नहाई सी, होलिकोत्सव में उड़ाये हुए गुलाल के अन्धकार से अन्धी सी, तपे हुए तांबे के समान कान्ति वाली प्राची दिशा की कान्ति से लाल-लाल सीढ़ियों से उतर कर, हनूमान जी के मन्दिर के द्वार पर सिर झुकाकर हम दोनों ने शीघ्र ही नित्य क्रिया को समाप्त कर लिया, उस ब्रह्मचारी बालक के द्वारा बताये हुए रास्ते से चलकर हम लोग पहले देखे हुए उस छोटे से तालाब के पश्चिम की ओर थोड़ी ही दूर पर स्थित अमृतोद नामक बहुत बड़े सरोवर के पास पहुँचे।

तत्र वरटाभिरनुगम्यमानानां राजहंसानाम्, पक्षति-कण्डूति-कषण-चञ्चल-चञ्चुपुटानां मल्लिकाक्षाणाम्, लक्ष्मणा कण्ठ-स्पर्श-हर्ष-वर्ष-प्रफुल्लाङ्गरुहाणां सारसानाम्, भ्रमद्भ्रमर-झङ्कार-भार-विद्रावित-निद्राणां कारण्डवानाञ्च तास्ताः शोभाः पश्यन्तौ, तडागतट एव परिफुल्यमानानां मकरन्दतुन्दिलानामिन्दीवराणां समीपत एव मसृण-पाषाण-पट्टिकासु कुशासनानि मृगचर्मासनानि ऊर्णासनानि च-विस्तीर्यो-पविष्टानाम्, गायत्री-जप-पराधीन-दशनवसनानाम्, कलित-ललित-तिलकालकानाम्, दर्भाङ्गुलीयकालङ्कृताङ्गुलीनां मूर्तिमतामिव ब्रह्मतेजसाम्, साकाराणामिव तपसाम्, धृतावताराणामिव च ब्रह्मचर्या-णां मुनीनां दर्शनं-कुर्वन्तौ, कृतनित्यक्रिय परिपुष्ट-तुलसी-मालिकाङ्कित-कण्ठं सिन्दूरोर्द्ध्वपुण्ड्रमण्डित-ललाटं रामचरण चिह्नमुद्रा-मुदित-बाहुदण्ड वक्षस्थलं हनूमन्मन्दिराध्यक्षं प्रणतवन्तौ।

तेन चाऽऽज्ञप्तम्—"यद्यायुष्मन्तौ सपदि महाराष्ट्रदेशं जिगमि-षथश्चेदचिरेणैव मस्तके सम्मृद्य एतद् राम-रजः तडागे निमज्जतम्" इत्यवधार्य्य आवां तथैव व्यधिष्वहि।

तदाज्ञया वस्त्राणि परिधाय च तत्समीपे समुपविश्य, तेन च समन्त्र-जपं कुश-जलेनाभ्युक्षितौ हनूमदङ्ग-रञ्जित-सिन्दूरेण विहित-तिलकौ स्वकीयौ सैन्धवौ समारुक्षव। ततः पञ्चषान् व्यूढ-वयस्कान् जटिलान् सुपरिणाहान् वाहानारूढान् आवाभ्यां सह गन्तुमाज्ञाप्य मन्दिराध्यक्षोऽभाषिष्ट—

श्रीधरी—तत्र=वहाँ। वरटाभिरनुगम्यमानानां=राजहंसियों से अनुगम्यमान। राजहसानां=राजहंसों के। पक्षति कण्डूति कषण-चञ्चल-चञ्चुपुटानां=पंखों के मूल भाग की खुजली शान्त करने के लिये अपनी चञ्चल चोंचों से उन्हें कुरेदते हुए। मल्लिकाक्षाणां=मल्लिकाक्ष

नामक हंसों के। लक्ष्मणा-कण्ठ-स्पर्श हर्ष-वर्ष-प्रफुल्लाङ्गरुहाणां सारसानां=सारसियों के कण्ठ स्पर्श के आनन्द से रोमाञ्चित शरीर वाले सारसों के। भ्रमत्=उड़ते हुए। भ्रमर झंकार-भार-विद्रावित निद्राणां कारण्डवानां च=भौंरों की गुञ्जार से दूर हो गई है, नींद जिनकी ऐसे कारण्डवों की। तास्ताः शोभाः पश्यन्तौ=उन-उन शोभाओं को देखते हुए। तडाग तट एव=तालाब के किनारे ही। परिस्फुरन्यमानानां=खिले हुए। मकरन्द तुन्दिलानां=पराग से भरे हुए। इन्दीवराणां समीपत एव=नील कमलों के पास ही। मसृण पाषाण पट्टिकासु=चिकनी प्रस्तर शिलाओं में। कुशासनानि=कुशासनों को। मृग चर्मासनानि=मृग चर्म के आसनों को। ऊर्णासनानि च विस्तीर्य=ऊनी आसनों को बिछाकर। उपविष्टानां=बैठे हुए गायत्री जप पराधीन दसन वसनानां=गायत्री जप में लगे ओठों वाले। कलित-ललित-तिलकालकानां=सुन्दर तिलक लगाये हुए। दर्भाङ्गुलीयकालङ्कृताङ्गुलीयानां=अंगुलियों में कुश की पवित्री पहने हुए। मूर्तिमानिव ब्रह्म तेजसाम्=मूर्तिमान ब्रह्म तेज के समान। साकाराणामिव तपसाम्=मूर्तिमान तपस्या के समान। कृतावताराणामिव च ब्रह्मचर्याणां=अवतार धारण किये हुए ब्रह्मचर्य के समान। मुनीनां दर्शनं कुर्वन्तौ=मुनियों के दर्शन करते हुए। कृत नित्य क्रिय=नित्य क्रिया से निवृत्त होकर। परिपुष्टतुलसी मालिकाङ्कित कण्ठं=बड़े दानों की तुलसी की माला को पहने हुए। सिन्दूरोर्ध्वपुण्ड्र मण्डित ललाटं=माथे पर सिन्दूर उर्ध्वपुण्ड्र लगाये हुए। रामचरण चिह्न मुद्रा-मुद्रित-बाहुदण्ड-वक्षस्थलं=राम चरणों के चिह्नों से अंकित भुजा और वक्षःस्थल वाले। हनूमन्मन्दिराध्यक्षं=हनूमान मन्दिर के अध्यक्ष को। प्रणमन्तौ=हम दोनों ने प्रणाम किया।

तेन च आज्ञप्तं=उन्होंने आज्ञा दी। यद्=कि। आयुष्मन्तौ सपदि महाराष्ट्रदेशं जिगमिषथश्चेत्=यदि तुम दोनों अभी महाराष्ट्र देश को जाना चाहते हो तो। अचिरेणैव=शीघ्र ही। एतद् रामरजः

=इस राम रज को। मस्तके सम्मृच्य=मस्तक में लगाकर । तडागे निमज्जतम्=तालाव में स्नान करो। इत्यवधार्य=यह सुनकर। आवां=हम दोनों ने। तथैव व्यविध्वाहि=वैसा ही किया। तदाज्ञया=उनकी आज्ञा से। वस्त्राणि परिधाय=वस्त्रों को पहनकर। तत्समीपे समीपे समुपविश्य=उनके पास वैठकर। तेन च=उनके द्वारा। समन्त्र जपं कुशजलेन अभ्युक्षितौ=मन्त्र पढ़ते हुए कुश से हमारा अभिषेक किये जाने पर। हनुमदङ्गरञ्जित सिन्दूरेण विहित तिलकौ=हनूमान जी की मूर्ति में लगे हुए सिन्दूर से तिलक लगाये जाने पर। स्वकीयौ सैन्धवौ समारुक्ष्व=हम दोनों अपने घोड़ों पर वैठ गये। ततः=इसके वाद। पञ्चषान्=पाँच-छः, व्यूढवयस्कान्—वयस्क। जटिलान्=जटाधारी, सुपरिणाहान्=लम्वे चौड़े। वाहानारूढान्=घुड़ सवारों को, आवाभ्यां सह गन्तुं=हमारे साथ जाने की। आज्ञाप्य=आज्ञा देकर। मन्दिराध्यक्षोऽभासिष्ट=मन्दिराध्यक्ष ने कहा—

हिन्दी—

वहाँ राज हंसियों से युक्त राज हंसों को पंखों की खुजली शान्त करने के लिये अपनी चञ्चल और मलिन चोंचों से उन्हें कुरेदते हुए हंसों को। सारसियों के कण्ठ स्पर्श से आनन्दित एवं रोमाञ्चित शरीर वाले सारसों को, उड़ते हुए भ्रमरों की गुञ्जार से जगे हुए कारण्डवों की उन शोभाओं का अवलोकन करते हुए, सरोवर के किनारे ही पराग से भरे हुए खिले हुए कमलों के पास ही चिकनी प्रस्तर शिलाओं में कुशासन, मृग चर्म एवं ऊनी आसन विछाकर वैठे हुए। ओठों से गायत्री का जप करते हुए। मूर्तिमान ब्रह्म तेज के समान, साकार तपस्या के समान, अवतार धारण करके आये हुए ब्रह्मचर्य के समान मुनि जनों के दर्शन करते हुए हम दोनों ने नित्य क्रिया से निवृत्त होकर, गले में बड़े दानों की तुलसी की माला पहने हुए। माथे पर सिन्दूर का ऊर्ध्व-

पुण्ड लगाये हुए, श्री राम चरणों के चिह्नों से अंकित भुजा और वक्षः स्थल वाले हनूमान मन्दिर के अध्यक्ष को प्रणाम किया।

उन्होंने आज्ञा दी कि—यदि तुम दोनों अभी महाराष्ट्र देश को जाना चाहते हो तो शीघ्र इस रामरज को माथे पर लगाकर तालाब मे स्नान करो। यह सुनकर हम दोनों ने वैसा ही किया। उनकी आज्ञा से वस्त्रों को पहन कर हम उनके पास बैठ गये। उन्होंने मन्त्र पढ़कर कुशों के जल से अभिषेक किया और हनूमान जी की मूर्ति में लगे सिन्दूर से हमने तिलक लगाया। इसके बाद अपने घोड़ों पर सवार हो गये। फिर पाँच-छः जटाधारी और लम्बे चौड़े वयस्क घुड़सवारों को हमारे साथ जाने की आज्ञा देकर मन्दिराध्यक्ष ने कहा—

"कुमारौ! इतः पुण्यनगर-पर्य्यन्तं प्रतिगव्यूत्यन्तरालं महाव्रताश्रम-परम्पराः सन्ति। सर्वत्र कुटीरेषु संन्यासिनो भक्ता विरक्ताश्च निवसन्ति। कियद्दूरपर्यन्तं पञ्चषाः सहाया युवयोः सहचरा भविष्यन्ति, परस्तात्तिच्छथिलिते लुण्ठक-भये एकेनैव केनचिदश्वारोहेण प्रदर्शित-मार्गौ सुखेन यथाभिलषितं देशं यास्यथः। सहायक-परिवर्त्तनं स्थाने स्थाने स्वयमेव भविष्यति, न तत्र युवयोः कयाऽपि विचिकित्सया भाव्यम्। श्रान्तैः श्रान्तैराश्रमेषु विश्रमणीयम्, निदिद्रासद्भिः कुटीरेष्वेव निद्रा द्राघणीया, विलेपनाभ्यङ्गस्नान-पानाशन-संवाहनादि-सौकर्यं सर्वत्र सहायकाः साधयिष्यन्ति"—इति।

ततस्तं प्रणम्य तथैव ससहायौ आवां प्रचलितौ। सहचर निर्दिष्टेनैव सर्वैरविज्ञयेन वन्य-द्रुम-जाल-रुद्धेन गण्डशैल-परिक्रमणाधित्यकाधिरोहणोपत्यका-परिलङ्घन-तटिनी-तरणाद्यायास-दीक्षा-दक्षेण पथा प्रचलन्तौ मध्ये मध्ये कुटीरेषु विरमन्तौ तत्र तत्र सुस्वादु-भोजनैः सकल-समुचित-सामग्री-साहाय्यैः सुखेन विश्रान्ति-सुख-मनुभवन्तौ तत्र तत्र परिवर्तितसहायकौ दिनकतिपयैरेकस्या नद्यास्तट-मयासिष्व। तत्रैकस्य

चिञ्चा-वृक्षस्य स्कन्धे प्रलम्ब-रज्ज्वा निजाजा-नेयावाबध्य निकटस्थ-यूप-तरु शाखायां च वस्त्रादीनि संलम्ब्य स्नातुं जलमवागाहिष्वहि । अस्मत्सहचरश्च निजाश्वस्य पृष्ठमार्द्रयन्निव तं वल्गायां गृहीत्वा पर्य्यट-यितुमारब्ध ।

श्रीधरी—कुमारौ=बच्चों, इतः=यहाँ से, पुण्यनगर पर्यन्तं=पूना नगर तक, प्रतिगव्यूत्यन्तरालं=प्रत्येक दो कोस के अन्तर पर, महाव्रताश्रम परम्पराः सन्ति=महाव्रत आश्रम हैं । सर्वत्र=सभी जगह । कुटीरेषु=कुटियों में, सन्यासिनो भक्ता विरक्ताश्च निवसन्ति=सन्यासी, भक्त, और विरक्त निवास करते हैं । कियद्दूरपर्यन्तं=कुछ दूर तक, पञ्चषाः सहायाः=पाच-छः सहायक, युवयोः सहचरा भविष्यन्ति=तुम दोनों के साथ रहेंगे. परस्ताच्छिथिलितेलुण्ठक भये=बाद में लुटेरों का भय कम हो जाने पर, एकेनैव केनचिदश्वारोहेण=किसी एक ही अश्वारोही के, प्रदर्शित मार्गौ=मार्ग प्रदर्शन से, सुखेन यथाभिलाषितं देशं यास्यथः=आराम से अभीष्ट स्थान पर पहुँच जाओगे, स्थाने-स्थाने=स्थान-स्थान पर, सहायक परिवर्तनं=सहायकों का परिवर्तन, स्वयमेव भविष्यति=अपने आप हो जायेगा, तत्र==इस कार्य में, युवयोः=तुम दोनों, कयापि विचिकित्सया न भाव्यम्=कोई शंका मत करना, श्रान्तैः श्रान्तैः=थक जाने पर, आश्रमेषु विश्रमणीयम्, आश्रमों में विश्राम करना, निदिद्रासद्भिः=नींद लगने पर, कुटीरेष्वेव कुटीरों में ही, निद्रा द्रावणीया=नींद निकाल लेना, विलेपनाभ्यङ्ग स्नान पानाशन संवाहनादि सौकार्य=तुम्हारे विलेपना उबटन, स्नान, भोजन, पाद संवाहन आदि की सुविधा, सहायकाः=सहायक लोग, सर्वत्र=सब जगह । साधयिष्यन्ति इति=करेंगे ।

ततः=इसके बाद, तं प्रणम्य=उनको प्रणाम करके, तथैव ससहायो=वैसे ही सहायकों के साथ, आवां प्रचलितौ=हम दोनों

चल पड़े । सहचर निर्दिष्टेनैव=साथियों के द्वारा दिखाये गये, अवि-ज्ञयेन=अपरिचित, वन्य-द्रुम-जाल-रुद्धेन=जंगली वृक्षों से रुंधे, गण्ड-शैल-परिक्रमणाधित्यकाधिरोहणी पत्थका-परिलंघन-तटिनी-तरणा-द्यायास-दीक्षा-क्षणेन-पथा प्रचलन्तौ=पहाड़ों से गिरे विशाल शिला खण्डों पर घूम कर जाने, अधित्यकाओं पर चढ़ने, घाटियों को लांघते, नदियों को पार करने का कष्ठ उठाते हुए, बीहड़ रास्तों से चलते हुए, मध्ये मध्ये=बीच-बीच में, कुटीरेषु विरमन्तौ=कुटीरों में विश्राम करते हुए, तत्र तत्र=वहाँ-वहाँ, सुस्वादुभोजनैः=स्वादिष्ट भोजन, सकल समुचित सामग्री सहाय्यैः=सारी समुचित सामग्री की सहायक से, सुखेन=सुख से, विश्रान्ति सुख मनु भवन्तौ=आराम का अनुभव करते हुए, तत्र-तत्र=जगह-जगह, परिवर्तित सहायकौ=बदलते हुए सहायकों के साथ, कतिपयै दिनैः=कुछ ही दिनों में, एकस्यानद्यारतट-मयामिष्व=एक नदी के किनारे पहुँच गये । तत्र=वहाँ, एकस्य=एक । चिञ्चावृक्षस्य स्कन्धे=इमली के पेड़ के तने में, प्रलम्ब रज्वा=लम्बी रस्सी से, निजानेयावाबध्य=अपने घोड़ों को बांधकर, निकटस्थ =पास में स्थित, यूपतरु शाखायां=शहतूत के पेड़ की डाल पर, वस्त्रा-दीनि सलम्बय्य=कपड़े आदि को टाँग कर, स्नातु=नहाने के लिये, जलमगाहिष्वहि=जल में प्रविष्ट हुए, अस्मत्सहचरश्च=हमारा साथी भी, निजाश्वस्य पृष्ठमार्द्रयन्निव=अपने घोड़े की पीठ ठंडी करते हुए तं वल्गायां गृहीत्वा=उसकी लगाम पकड़ कर, पर्यटयितुमारब्ध= घुमाने लगा ।

हिन्दी—

बच्चो ! यहाँ से पूना नगर तक प्रत्येक दो कोस के फासले पर महाव्रत के आश्रम हैं । सभी जगह कुटियों में सन्यासी, भक्त और विरक्त लोग निवास करते है । कुछ दूर तक पांच-छः सहायक तुम्हारे साथ रहेंगे । फिर लुटेरों का भय कम हो जाने पर, तुम दोनों किसी

एक ही अश्वारोही के पथ-प्रदर्शन से आराम से अभीष्ट स्थान पर पहुच जाओगे। स्थान-स्थान पर सहायकों का परिवर्तन अपने आप ही हो जायेगा। इसमें तुम्हें जरा भी सन्देह नही करना चाहिये। थक जाने पर आश्रमों में विश्राम करना और नीद लगने पर कुटीरों में ही नीद निकाल लेना।' तुम्हारे स्नान, उबटन, भोजन-पान आदि की सारी व्यवस्था सभी स्थानों पर सहायक लोग करेंगे।

इसके बाद उन्हें प्रणाम करके सहायकों के साथ हम दोनों चल दिये। साथियों के द्वारा दिखलाये हुए मार्ग से जो अत्यन्त बीहड़ और जंगली पेड़ों से अवरुद्ध और शिला खण्डो से घूम कर जाने, अधित्यकाओं पर चढ़ने, घाटियों को लाँघने तथा नदियों को तैरते हुए, जाकर, बीच-बीच में कुटीरों में आराम करते हुए, स्वादिष्ट भोजन और सारी समुचित सामग्री से सुख पूर्वक आराम करते हुए। कुटीरों में परिवर्तित होते रहने वाले सहायकों के साथ, कुछ ही दिनों में हम दोनों भीमा नदी के किनारे पहुँच गये।

वहाँ एक इमली के वृक्ष के तने में लम्बी रस्सी से अपने घोड़ों को बांध कर, समीप के शहतूत के पेड़ की टहनी पर कपड़ो को लटका कर, हम दोनों ने स्नान करने के लिये जल में प्रवेश किया। हमारे साथी ने अपने घोड़े की पीठ ठण्डी करने के लिये, उसकी लगाम पकड़ कर उसे घुमाना आरम्भ कर दिया।

ततो जलाद् बहिरागत्य, तिन्तिडी-शाखात उत्तार्य शुष्क-वस्त्रे परिधाय इतस्ततः पर्यटथापि च कां भूमिमायातौ-इति निश्चेतुं नापार-याव। तावदकस्माद् दृष्ट यद्-उत्तरतः खुर-धूलिभिः पार्श्व परिवर्त्ति लता-कुसुम-परागान् द्विगुणयन्त लाङ्गूल चामरेण वीजयन्त मुखफेनैः पुष्पाणीव वर्षन्तं कञ्चित् श्यामकर्ण-शारदाभ्रश्वेत वाजिन-मारुह्य

लोलखड्ग-वर्म्मच्छिन्न पृष्ठदेशः कवच-शिञ्जित-विजित-कोकिल-शावक निकर-कूजितो वीर-वेशः कश्चिच्छ्यामो युवा समायातीति ।

स च क्षणेनैवाऽऽगत्य, नौ सकलं वृत्तान्तं पृष्ट्वा, विज्ञाय च प्रावोचत्-"अवगतम्, भवतोरेव विषये दृष्टस्वप्नः शिववीरो भवन्तौ स्मरति, तत्सपद्यश्वावारुह्य आगम्यताम्, न वां भयं किमपि, व्यतीतो भवतोर्दुःखमयः समयः"—इति ।

ततः साश्चर्य सपदि वस्त्राणि परिधाय सहचरमाकार्य तेन सहाश्वावारुह्य तमनुसृत्य तत्प्रदिष्टं वासादि-सौकर्यमङ्गीकृत्य सपद्येव निविवृत्सन्तं जटिल-सहचरं साश्लेषमनुज्ञाप्य यथासमयं शिववीरं साक्षात्-कृत्यावगतम् यदेष एव महात्मा भटवेषेणास्मन्निकटे भीमा-नद्यास्तटं गत आसीदिति ।

तत्कालमारभ्याद्यावधि तस्यैव करकमलच्छायायां वसावः, भगिनी-वियोग-तापश्चिरादासीत्, सोऽप्यद्य निवृत्तः, पुरोहितचरणावपि दृष्टौ, इति सर्वं शुभमेव परस्तात्—सम्भाव्यते—इत्येष आवयोर्वृ-त्तान्तः ।"

ततो मुहूर्तं सर्वेऽप्येतद्वृत्तान्तस्यैव पौर्वापर्य-स्मरण परावीता इवाऽऽसिषत परिशेषे च पुटपाकवदन्तरेव दन्दह्यमानेन बाष्पव्रातेन आविलस्यापि अप्रकटित-बहिश्चेष्टस्य ब्रह्मचारिगुरोः प्रार्थनया देव-शर्म्मणा तोरण-दुर्ग समीपे हनूमन्मन्दिरे एव निवासः स्वीकृतः । तदेव च प्रबन्धुं सर्वेऽपि कुटीरादुत्थिताः ।

इति तृतीयो निश्वासः ।

श्रीधरी—ततः=इसके बाद । जलाद्वहिरागत्य=पानी से बाहर आकर । तिन्तिणी शाखातः शुष्क वस्त्रे उत्तार्य=इमली के वृक्ष

की शाखा से सूखे वस्त्रों को उतार कर। परिधाय=पहन कर। इतस्ततः पर्यट्यापि=इधर-उधर घूम कर भी। कां भूमिमायतौ=हम किस जगह आये हैं। इति निश्चेतुं नापारयाव=यह निश्चय न कर सके। तावत्=तभी। अकस्मात् दृष्टं यत्=अचानक देखा कि। उत्तरतः=उत्तर की ओर से। खुरधूलिभिः पार्श्वपरिवर्त्ति लता-कुसुम परागान्=खुरों की धूलि से आस-पास की लताओं के पुष्प पराग को। द्विगुणयन्तं=दूना करते हुए। लाङ्गूल-चामरेण वीजयन्तं=पूँछ का चँवर डुलाते हुए। मुखफेनैः पुष्पाणीव वर्षन्तं=मुख से गिरने वाले झाग से फूल सा बरसाते हुए। कञ्चित् श्यामकर्णं=किसी श्याम कर्ण। शारदाभ्र श्वेतं=शरत्कालीन बादलों के समान शुभ्र। वाजिन-मारुह्य=घोड़े पर चढ़कर। लोलत्खड्ग-वर्माच्छन्न पृष्ठ देशः=पीठ पर हिलती हुई तलवार और ढाल वाले। कवच शिञ्जित-विजित-कोकिल-शावक-निकर कूजितः=कवच के शब्दों से कोयल के बच्चों की चहचहाहट को जीतने वाले। वीरवेष=वीर वेष धारी, कश्चिच्छ्या-मो युवा=कोई सावले रंग का युवक. समायातीति=आ रहा है। स च क्षणेनैवाऽऽगत्य=उसने क्षण भर में आकर, नौ सकलं वृत्तान्तं पृष्ठा= हमारा सारा हाल पूछकर। विज्ञाय च प्रावोचत्=और जानकर बोला। अवगतम्=समझ गया। भवतोरेव विषये=तुम्हीं लोगों के विषय में. दृष्टस्वप्नः=स्वप्न देखकर, शिववीरो भवन्तौ स्मरति= शिवाजी ने तुम दोनों को याद किया है। तत्=इसलिये। सपदि अश्वावारुह्य=घोड़ों पर चढ़कर आगम्यताम्=शीघ्र घोड़ों पर सवार होकर आओ, वां किमपि भयं न=अब तुम लोगों को कोई भय नहीं है। भवतोर्दुःखमय समयः व्यतीतः=तुम लोगों के दुःख का समय बीत गया।

ततः=इसके बाद, साश्चर्यं=आश्चर्य के साथ। वस्त्राणि परिधाय=कपड़ों को पहन कर। सहचर माकार्य=साथी को बुलाकर

तेनसहाश्वावारुह्य=इसके साथ घोड़ों पर बैठकर। तमनुसृत्य-न्तिका=अनुसरण करते हुए। तत्प्रदिष्ट=उसके द्वारा बताई हुई। वासादि सौकर्यमङ्गीकृत्य=निवास आदि की सुविधा को स्वीकार करके, सपद्येव निविवृत्सन्तं=तत्काल ही लौटने के लिये उत्सुक, जटिल सहचरं=जटाधारी साथी को, साश्लेषमनुज्ञाप्य=गले लगाकर और लौटने की आज्ञा देकर, यथा समयं=ठीक समय पर, शिववीर साक्षात्कृत्यावगतम्=शिवाजी का दर्शन करके जाना कि। एष-एव महात्मा=यही महापुरुष. भटवेषेण=वीर वेष में, अस्मन्निकटे= हमारे पास, भीमानद्यान्तरं गत आसीदिति=भीमा नदी के किनारे गये थे।

तत्काल मारभ्याद्यावधि=तब से लेकर आज तक। तस्यैव =उन्हीं के। कर कमलच्छायायां वसावः=कर-कमलों की छाया में रहते हैं। भगिनी वियोग तापश्चिरादासीत्=बहुत दिनों मे बहिन से बिछुड़ने का दुःख था। स्नेऽप्यद्य निवृतः=वह भी आज दूर हो गया। पुरोहित चरणावपि दृष्टौ=पुरोहित जी के भी दर्शन हो गये। इति =इसलिये, सर्वं शुभमेव पश्चात सभाव्यते=भविष्य में सब मंगल ही होगा, ऐसी संभावना है। इत्येद आवयोर्वृत्तान्तः=यही हम दोनों का वृत्तान्त है।

ततः=इसके बाद। मुहूर्तं=थोड़ी देर तक। सर्वेप्येतद् वृत्तान्तस्यैव=सभी लोग इसी वृत्तान्त के। पौर्वापर्य स्मरण परवशा इव=पौर्वापर्य स्मरण करते हुए से। अभिपत्=बैठे रहे। परिशेषे च=इसके बाद। पुटपाक वदन्तरेण दन्दह्यमानेन=पुटपाक के समान अन्दर ही अन्दर जलते हुए। वाष्पस्रातेन आविल स्यापि=आंसुओं से क्षुभित होते हुए भी। अप्रकटित बहिश्चेष्टस्य=बाहर से शान्त। ब्रह्मचारि गुरोः प्रार्थनया=ब्रह्मचारि गुरु की प्रार्थना से। देवशर्मणा=देव शर्मा ने। तोरण दुर्ग समीपे=तोरण दुर्ग के पास, हनूमन्मन्दिरे एव=

हनूमान के मन्दिर में ही। निवासः स्वीकृतः=रहना स्वीकार कर लिया। तदेव च प्रबन्धं=उसी का प्रबन्ध करने के लिये। सर्वेऽपि= सभी लोग। कुटीरादुत्थिता=कुटी से उठ पड़े।

[इति तृतीयो निश्वासः]

हिन्दी—

उसके बाद जल से बाहर आकर, इमली के पेड की टहनी से से सूखे वस्त्रों को उतार कर, पहन कर, इधर उधर घूम कर भी हम दोनों यह नहीं जान सके कि हम किस जगह आये? इसी बीच अचानक हमने देखा कि उत्तर दिशा की ओर से, खुरों से उड़ने वाली धूल से आस-पास की लताओं के पुष्पों के पराग को दूना करते हुए पूँछ का चँवर डुलाते हुए, मुख से निकलने वाले झाग से फूल सा बरसाते हुए किसी काले कान वाले, शरत्कालीन बादलों के समान सफेद घोड़े पर बैठा हुआ, पीठ पर हिलती हुई तलवार और ढाल वाला, कवच के शब्द से कोयलों के बच्चों की चह चहाहट को जीतने वाला, वीरवेष धारी कोई सांवले रंग का युवक आ रहा है।

वह क्षण भर में ही आकर, हम दोनों का सारा हाल पूछ कर और जानकर बोला—मैं समझ गया। आप ही के बारे मे स्वप्न देखकर वीर शिवाजी ने आप दोनों को याद किया है। अतः इसी समय घोड़ो पर चढ़कर चलिये। अब आपको कोई भय नही है। आपका दुःख मय समय बीत गया।

इसके बाद आश्चर्य चकित होकर। वस्त्रों को पहिन कर साथी को बुलाकार। उसके साथ घोड़ों पर बैठकर। उसी का अनुसरण करते हुए; उसके द्वारा बताई हुई निवास आदि की सुविधा को स्वीकार करके, उसी समय लौटने को इच्छुक उस जटाधारी साथी को

आलिगन पूर्वक विदा देकर, यथा समय शिवाजी से मिलने पर मालूम हुआ कि यही महापुरुष भीमा नदी के किनारे हमारे पास गये थे।

तब से आज तक हम दोनों उन्ही के कर-कमलों की छाया में रह रहे हैं। बहुत दिनों से बहिन से बिछुड़ने का दुःख था। वह भी आज दूर हो गया। पुरोहित जी के दर्शन भी हो गये। अब भविष्य में मंगल की ही संभावना है। यही हम दोनों का वृत्तान्त है।

इसके बाद क्षण भर सभी लोग इसी वृत्तान्त के पौर्वापर्य का स्मरण करते हुए बैठे रहे। अनन्तर पुटपाक के समान अन्दर ही अन्दर जल रहे तथा आंसुओ से क्षुब्ध होने पर भी बाहर से शान्त ब्रह्मचारि गुरु की प्रार्थना से देवशर्मा ने तोरण दुर्ग के पास हनूमान के मन्दिर में रहना स्वीकार कर लिया। उसी का प्रबन्ध करने के लिये सब लोग कुटी से उठ पड़ो।

[तृतीय निश्वास का हिन्दी अर्थ समाप्त]

॥ श्रीः ॥

अथ चतुर्थो निश्वासः

"कार्यं वा साधयेयम्, देहं वा पातयेयम्"

—स्फुटवाक्

मासोऽयमाषाढः, अस्ति च सायं समयः, अस्तं जिगमिषुर्भगवान् भास्करः सिन्दुर- द्रव-स्नातानामिव वरुण-दिगवलम्बिना-मरुण-वारिवाहानामभ्यन्तरं प्रविष्टः। कलविङ्काश्चाटकैरस्तैः परि-पूर्णेषु नीडेषु प्रति-निवर्तन्ते। वनानि प्रतिक्षणमधिकाधिकां श्यामतां कलयन्ति। अथा-कस्मात् परितो मेघ-माला पर्वतश्रेणीव प्रादुरभूत्। क्षणं सूक्ष्मविस्तारा, परतः प्रकटित-शिखरि-शिखर-विडम्बना, अथ दर्शित-दीर्घ-शुण्ड-मण्डित-दिगन्त-दन्तावल-भयानकाकारा, ततः पारस्परिक-संश्लेष-विहित-महा-न्धकारा च समस्तं गगनतलं पर्यच्छदीत्।

अस्मिन् समये एकः षोडशवर्षदेशीयो गौरो युवा हयेन पर्वत-श्रेणीरुपर्युपरि गच्छति स्म। एष सुघटित-दृढ़-शरीरः, श्यामश्यामै-र्गुच्छ-गुच्छैः कुञ्चित-कुञ्चितैः कच- कलापैः कमनीय-कपोलपालिः, दूरागमनायास-वशेन सूक्ष्म-मौक्तिक -पटलेनेव स्वेद-विन्दु-व्रजेन समा-च्छादित-ललाट-कपोल-नासाग्रोत्तरोष्ठः, प्रसन्न-वदनाम्भोज-प्रदर्शित-दृढ़-सिद्धान्त-महोत्साहः, राजत-सूत्र-शिल्पकृत-बहुल-चाकचक्य-वक्र-हरितोष्णीष-शोभितः, हरितेनैव च कञ्चुकेन प्रकटीकृत व्यूढ-गूढचरता कार्यः, कोऽपि शिववीरस्य विश्वासपात्रं सिंहदुर्गात् तस्यैव पत्रमादाय तोरणदुर्गं प्रयाति।

श्रीधरी —वा = या तो । कार्य = काम को । साधयेयम् = सिद्ध करूंगा । वा = अथवा, देहं = शरीर का, पातयेयम् = नष्ट कर दूंगा ।

अयं आषाढ मासः = अषाढ़ का महीना है । च = और, सायं समयः अस्ति = शाम का समय है । अस्तं जिगमिषु भगवान् भास्करः = अस्त होने के इच्छुक भगवान् सूर्य, सिन्दूर-द्रव स्नातानामिव = सिन्दूर के घोल से नहाये हुए से, वरुणदिगवलम्बिना = पश्चिम दिशा में स्थित, अरुणवारिवाहानामभ्यन्तर = लाल रंग के बादलों में । प्रविष्टः = प्रविष्ट हो गये हैं । कलविङ्का = गौरैया, चाटकैररुतैः = अपने बच्चों के कलख से, परिपूर्णेषु नीडेषु = पूर्ण घोसलों में । प्रतिनिवर्तन्ते = लौट रहे हैं । वनानि = जंगल, प्रतिक्षण = प्रतिक्षण, अधिकाधिकां = अधिक-अधिक । श्यामतां कलयन्ति = अन्धकार पूर्ण हो रहे हैं । अथ = इसके बाद । अकस्मात् = अचानक । परितः = चारों ओर से । मेघमाला = बादल । पर्वत श्रेणीव = पर्वत माला के समान । प्रादुर्भूत् = उत्पन्न हो गये । क्षण = थोड़ी देर तक । सूक्ष्म विस्तारा = कम विस्तृत होकर परतः = बाद में प्रकटि = शिखरि-शिखर विडम्बना = पर्वत शिखरों के समान हो गये । अथ = इसके बाद दर्शित-दीर्घ शुण्ड-मण्डित-दिगन्त-दन्तावल-भयानका कास = बड़ी-बड़ी सूंडों वाले दिग्गजों के समान भयानक आकार वाले हो गये । ततः = फिर । पारस्परिक संश्लेष = परस्पर मिल जाने से । विहित महान्धकारा = भयंकर अन्धकार करके । समस्तं गगन तल पर्यच्छदीत् = उन्होंने सारे आकाश को छा दिया ।

तस्मिन् समये = उसी समय । एकः षोडशवर्ष देशीयो = लगभग सोलह वर्ष का । गौरो युवा = युवक, हयेन = घोड़े पर । पर्वत श्रेणी रुपर्युपरि गच्छति स्म = पहाड़ी के ऊपर चला जा रहा था । सुघटित शरीरः = इसका शरीर सुडौल था । श्याम-श्यामैः = काले-काले

गुच्छ-गुच्छैः = घने । कुञ्चित कुञ्चितैः कचकलापैं = घुंघराले बालो से। कमनीय कपोल पालिः = शोभित गालों वाला । दूरगमना यासवशेन = दूर से आने के कारण । सूक्ष्म मौक्तिक पटलेनेव = महीन मोतियों के समान। स्वेद-विन्दु-व्रजेन = पसीने की बूंदो से । समाच्छादित-ललाट-कपोल-नासाग्रोत्तरोष्ठः = मस्तक, गाल, नाक और ओठ व्याप्त है जिसका ऐसा । प्रसन्न-वदनाम्भोज-प्रदर्शित-दृढ सिद्धान्त-महोत्साहः = अपने प्रसन्न मुख-मण्डल से दृढ़ सिद्धान्त के उत्साह को प्रकट करने वाला। राजत-सूत्र-शिल्पकृत-बहुल - चाक-चक्य-वक्र - हरितोष्णीष-शोभितः = चांदी के तार का काम किये हुए तथा चमकते हुए हरे साफे से सुशोभित। हरितेनेव च कञ्चकेन = और हरे ही अंगरखे से। प्रकटीकृत व्यूढ-गूढ़चरता कार्यः = गुप्तचर होने की सूचना देने वाला । कोऽपि = कोई । शिववीरस्य = शिवाजी का । विश्वासपात्र = विश्वास पात्र । सिंह दुर्गात् = सिंह दुर्ग से । तस्यैव पत्रमादाय = शिवाजी का पत्र लेकर । तोरण दुर्ग प्रयाति = तोरण दुर्ग को जा रहा है ।

चतुर्थ निश्वास

हिन्दी—

"या तो कार्य को ही सिद्ध करूँगा या फिर शरीर को ही नष्ट कर दूँगा ।"

अषाढ़ का महीना है और सायङ्काल का समय । अस्त होने के लिये तैयार भगवान् भुवन भास्कर पश्चिम दिशा में स्थित सिन्दूर के घोल में नहाये हुए से लाल रंग के बादलो मे छिप गये है। गौरैया पक्षी अपने बच्चों के कलख से युक्त घोंसलों में लौट रहे हैं। जंगल क्षण-क्षण में अधिक अन्धकार पूर्ण होते जा रहे है। तभी अचानक चारों ओर से पर्वत माला के समान बादल उत्पन्न हो गये। ये बादल थोड़ी देर तक तो कम विस्तृत रहे। तदनन्तर पर्वत शिखिरों के समान हो गये। बाद में विस्तृत सूंड़ वाले दिग्गजों के समान भयंकर आकार धारण करके इन्होंने सारे आकाश को ढक दिया ।

इसी समय लगभग सोलह वर्ष का एक गोरा युवक घोड़े पर सवार होकर पहाड़ी के ऊपर जा रहा था। उसका शरीर सुडौल था। काले, गुच्छेदार और घुंघराले बालों से उसके गाल सुशोभित हो रहे थे। दूर से आने के कारण थकान से उसके माथे, गाल, नाक और ओठ में महीन मोतियों के समान पसीने की बूंदें आ गई थीं। वह अपने प्रसन्न मुख मण्डल से दृढ़ सिद्धान्त के प्रति असीम उत्साह को प्रकट कर रहा था। चांदी के तार के काम के कारण चमकते एव तिरछे बंधे हुए हरे साफे मे सुशोभित एव हरे ही अगरखा पहिने हुए होने से अपने गुप्तचर होने की सूचना देता हुआ, शिवाजी का कोई विश्वास पात्र नवयुवक। उन्हीं का पत्र लेकर सिंहदुर्ग की ओर जा रहा है।

तावदकस्मादुत्थितो महान् झञ्झावात:, एक: सायंसमय-प्रयुक्त: स्वभाव-वृत्तोऽन्धकार:, स च द्विगुणितो मेघमालाभि:। झञ्झावातोद्धूतै रेणुभि: शीर्णपत्रै: कुसुम-परागै: शुष्कपुष्पैश्च पुनरेव द्वैगुण्य प्राप्त:। इह पर्वत-श्रेणीत:, पर्वत श्रेणी:, वनाद् वनानि, शिखराच्छिखराणि, प्रपातात् प्रपाता:, अधित्यकातोऽधित्यका: उपत्यकात् उपत्यका:, न कोऽपि सरलो मार्ग:, नानुद्भेदिनी भूमि:, पन्था अपि च नावलोक्यते। क्षणे क्षणे हयस्य खुराश्चिक्कण-पाषाण-खण्डेषु प्रस्खलन्ति। पदे पदे दोधूयमाना वृक्ष शाखा: सम्मुखमाघ्नन्ति, परं दृढ-संकल्पोऽयं सादी न स्वकार्याद् विरमति। परित: स-हडहडा-शब्द दोधूयमानानां परस्सहस्र-वृक्षाणाम्, वाताघात-संजात-पाषाण-पातानां प्रपातानाम्, महान्धत-मसेन ग्रस्यमानानामिव सत्त्वानां क्रन्दनस्य च भयानकेन स्वनेन कवलीकृतमिव गगन-तलम्। परं नैष वीर: स्वकार्याद् विरमति। कदाचित् किञ्चिद् भीत इव घोटक: पादाभ्यामुत्तिष्ठति, कदाचिच्चलन्नकस्माद् परिवर्तते, कदाचिदुत्प्लुत्य च गच्छति। परिमेष वीरो वल्गां संयच्छन्

मध्ये मध्ये सैन्धवस्य स्कन्धौ कन्धरां च करतलेनाऽऽस्फोटयन्, चुचुत्कारेण सान्त्वयश्च न स्वकार्याद् विरमति। तावदारब्धश्चञ्चञ्चञ्चल-चामीकर-रेखाकाराभि-श्चञ्चलाभिरपि स्व-चमत्कारः। यावदेकस्यां दिशि नयने विक्षपन्ती, कर्णौ स्फोटयन्ती, अवलोचकान् कम्पयन्ती, वन्यांस्त्रासयन्ती, गगनं कर्त्तयन्ती, मेघान् सौवर्ण-कषेणेव घ्नती, अन्धकारसग्निनेव दहन्ती, चपला चमत्करोति; तावदन्यस्यामपि अपरा ज्वालाजालेनेव वलाहकानावृणोति, स्फुरणोत्तरं स्फुरणं गर्ज्जनोत्तरं गर्ज्जनमिति परश्शत-शतघ्नीप्रचार जन्येनेव कन्दरि-कन्दर-प्रतिध्वनिभिश्चतुर्गुणितेन महाशब्देन पर्यपूर्यत साऽरण्यानी। परमधुनाऽपि-देहं वा पातयेयं कार्यं वा साधयेयम्" इति कृतप्रतिज्ञोऽसौ शिववीर-चरो न निजकार्यान्निवर्त्तते।

श्रीधरी—तावत्=तब तक। अकस्मादुत्थितो महान् झञ्झावातः=अचानक जोर से भयंकर आंधी उठ खड़ी हुई। एकः सायं समय प्रयुक्तः स्वभाव-प्रवृत्तोऽन्धकारः=एक तो सायङ्काल के कारण स्वाभाविक अन्धकार था। स च द्विगुणितो मेघमालाभिः=उसको बादलों ने दुगुना कर दिया। झञ्झावातोद्धूतैः रेणुभिः=आंधी से उड़ी हुई धूल से, शीर्ण पत्रैः=सूखे पत्तो से, कुसुम-परागैः=फूलों के पराग से। शुष्क पुष्पैश्च=सूखे हुए फूलों से। पुनरेष द्वैगुण्य प्राप्तः=यह अन्धकार और दुगुना हो गया। इह=यहाँ। पर्वत श्रेणीत=पर्वत श्रेणी, पहाड़ो की पंक्ति के बाद पहाड़ो की पंक्ति। वनाद् वनानि=एक जंगल से दूसरा जंगल। शिखरात् शिखराणि=एक शिखर से दूसरे शिखर। प्रपातात् प्रपाताः=झरने के बाद झरने। अधित्यकातोऽधित्यका=एक ऊंची भूमि से दूसरी ऊंची भूमि। उपत्यकात् उपत्यकाः=एक तलहटी से दूसरी तलहटी। न कोऽपि सरलो मार्गः=कोई सीधा रास्ता नहीं। नानुद्भेदिनी भूमिः=कोई

समतल भूमि नहीं। पन्था अपि च नावलोक्यते=रास्ता भी नहीं दिखाई देता। क्षणे-क्षणे=क्षण क्षण में। हयस्य खुरा=घोड़े के खुर। चिक्कण पाषाण खण्डेषु=चिकने पत्थर के टुकड़ों पर। प्रस्ख्लन्ति=फिसल जाते हैं। पदे-पदे=कदम कदम पर। दोधूयमाना वृक्षः शाखा=हिलती हुई पेड़ की टहनियां। सम्मुख मारुन्ति=सामने लड़ जाती हैं। परं=लेकिन। दृढ़ संकल्पोऽयं सादी=यह दृढ़ निश्चयी घुड़सवार। न स्वकार्यात् विरमति=अपने कार्य से विरत नहीं होता परितः=चारों ओर। स-हड़हड़ा शब्दं दोधूयमानां परम्महत्-वृक्षाणां =हहराने के शब्द के साथ हिलते हुए वृक्षों के। वाताघात-पाषाण-पातानां प्रपातानाम्=हवा के आघात से गिर रहे पत्थरों वाले झरनों में। महान्धतमसेन ग्रस्यमानानामिव=भयंकर अन्धकार में ग्रस्त सी। सत्वानां क्रन्दनस्य च=और वन्य पशुओं के क्रन्दन से। भयानकेन रवनेन =भयानक शब्द से। गगन तलम् कवली कृतमिव=आकाश व्याप्त हो गया। पर=लेकिन। नैष वीरः स्वकार्याद् न विरमति=किन्तु यह वीर अपने कार्य से विराम नहीं लेता। कदाचित्=कभी। किञ्चित् भीत इव=कुछ डरा हुआ सा। घोटकः=घोड़ा। पादाभ्यां उत्तिष्ठति=पैर उठाकर खड़ा हो जाता है। कदाचित्=कभी चलन्नकस्मात्=चलते हुए अकस्मात्। परिवर्तते=लौट पड़ता है। कदाचिदुत्प्लुत्य=कभी उछल कर। गच्छति=जाता है। परमेष वीरो वल्गा संयच्छन्=लेकिन यह वीर लगाम रोककर। मध्ये मध्ये=बीच बीच में। सैन्धवस्य=घोड़े के। स्कन्धौ=कन्धों को। कन्धरां च= गर्दन को करतलेनाऽऽस्फोटयन्=थपकारियों से सान्त्वना देता हुआ। स्वकार्याद् न विरमति=अपने कार्य से विरत नहीं होता। तावदारब्ध चञ्चल श्चञ्चल चामीकर रेखा कारामिः=तब तक चमकती हुई स्वर्ण रेखाओं के आकार वाली। चञ्चलाभिरापि स्व चमत्कारः =आरम्भ कर दिया। यावदेकस्योदिशि नयने विक्षिप्यन्ते=जब तक एक

ओर नेत्रों में चकाचौंध पैदा करने वाली। कर्णौ स्फोटयन्ती=कानों को फोड़ती हुई। अवलोचकान् कम्पयन्ती=देखने वालों को कंपाती। वन्यांस्त्रासयन्ती=जंगली जन्तुओं को डराती हुई। गगनं कर्त्तयन्ती= आकाश को काटती हुई। मेघान्=बादलों को। सौवर्ण कषेणेव घ्नती= सोने के कोड़े से मारती हुई। अन्धकारमग्निनेव दहन्ती=अन्धकार को आग से जलाती हुई सी। चपला चमत्करोति=बिजली चमकती हुई। तावदन्यस्यामपि अपरा ज्वाला जालेनेव=तब तक दूसरी ओर भी ज्वाला समूहों से मानो। बलाहका नावृणोति=बादलों को ढक लेती है। स्फुरणोत्तरं स्फुरणं=चलकने के बाद चमकना। गर्जनोत्तरं गर्जनमिति=गर्जन के बाद गर्जन। परश्शत शतघ्नीप्रचार जन्येनेव= सैंकड़ों तोपों के छूटने से उत्पन्न स्वर के समान। कन्दिर कन्दर प्रति- ध्वनिभिश्चतुर्गुणितेन=पहाड़ की कन्दराओं की प्रतिध्वनि से चौंकने। महाशब्देन=भयंकर शब्द से। पर्यपूर्यत सा अरण्यानी=वह जंगल पूर्ण हो गया। परं अधुनाऽपि=फिर अब भी। देहं वा पातयेयं कार्यं वा साधयेयं इति कृति प्रतिज्ञः=प्रतिज्ञा करके अपने कार्य मे विरत नहीं होता।

हिन्दी—

तब तक अचानक जोर से आंधी आ गई। सायंकाल के समय स्वाभाविक ढंग से होने वाले अन्धकार को बादलों ने दूना कर दिया। आंधी से उठी हुई धूल, गिरे हुये पत्तों, पुष्पों के पराग और सूखे फलों. से यह अंधेरा और भी दूना हो गया। यहां पर्वत श्रेणी के बाद पर्वत श्रेणी, जंगल के बाद जंगल, पहाड़ की चोटियों से पहाड़ की चोटियां, झरने के बाद झरने, ऊँची भूमि के बाद ऊंची भूमि, तलहटी के बाद तलहटी हैं। कोई सीधा रास्ता नहीं। कहीं समतल भूमि नहीं और रास्ता भी दृष्टिगोचर नहीं होता। थोड़ी-थोड़ी देर के बाद घोड़े के खुर चिकने पत्थरों पर फिसल रहे हैं। कदम-कदम पर हिलती हुई

पेड़ों की शाखाएं सामने टकरा जाती हैं। किन्तु दृढ़ निश्चयी यह घुड़ सवार अपने कार्य से विरत नहीं होता।

चारों ओर हहराने के शब्द के साथ हिलते हुये वृक्षों, वायु के आघात से गिरते हुये पत्थरों वाले झरने तथा घोर अंधकार से त्रस्त वन्य पशुओं के क्रन्दनमय भयानक शब्दों से आकाश गूंज उठा। किन्तु फिर भी यह वीर अपने कार्य से विरत नहीं होता। कभी-कभी कुछ डरा हुआ सा इसका घोड़ा दोनों पैर उठाकर खड़ा हो जाता है, कभी कभी चलते-चलते अचानक लौट पड़ता है तथा कभी कूदकर चलता है। किन्तु यह वीर लगाम को साधे हुये बीच-बीच में घोड़े के कन्धों को हाथ से थपथपाता हुआ, चुमकारियों से सान्त्वना देता हुआ, अपने कार्य से नहीं रुकता। तब तक चमचमाती हुई स्वर्ण रेखाओं के आकार वाली बिजली ने अपना चमत्कार दिखाना आरम्भ कर दिया। जब तक एक ओर आँखों में चकाचौंध पैदा करती हुई, कानों को फोड़ती हुई, देखने वालों को कम्पित करती हुई, जंगल में रहने वालों को डराती हुई, आकाश को काटती हुई, बादलों को सोने के कोड़ों से मारती हुई, अन्धकार को अग्नि से जलाती हुई बिजली चमकती है, तब तक दूसरी ओर भी ज्वाला समूहों से बादलों को ढक देती है। चमकने के बाद चमकना, गर्जन के बाद गरजना, इस तरह सैकड़ों तोपों के गर्जन के समान स्वर से पहाड़ों की गुफाओं से टकरा कर चौगुने महा-शब्दों से वह जंगल गूंज उठा। किन्तु फिर भी—या तो कार्य को पूरा करूंगा या शरीर को नष्ट कर दूंगा, यह प्रतिज्ञा किये हुए शिवाजी का गुप्तचर अपने कार्य से मुंह नहीं मोड़ रहा है।

यस्याध्यक्षः स्वयं परिश्रमी; कथं स न स्यात् स्वयं परिश्रमी? यस्य प्रभुः स्वयं साहसी; कथं स न भवेत् स्वयं साहसी? यस्य स्वामी स्वयमापदो न गणयति; कथं स गणयेदापदः? यस्य च महाराजः स्वयं

सङ्कल्पितं निश्चयेन साधयति; कथं स न साधयेत् स्व-संकल्पितम् ? अस्त्येष महाराज-शिववीरस्य दयापात्रं चरः, तत्कथमेष झञ्झा-विभीषिकाभीर्विभीषितः प्रभु-कार्यं विगणयेत् ? तदितोऽप्येष तथैव त्वरितमश्वं चालयश्चलति ।

अथ किञ्चित् स्रोतस्समुल्लङ्घमानोऽस्य तुरङ्गः कस्यापि दोधूयमानतरोः शाखया तथाऽभिहतो यथोच्छलन् भूमौ पपात, सादिनं चैकतः सयपीपतत् । किन्तु तत्क्षणादेव सादी समुत्थितो वाजिनो वल्गां गृहीत्वा सचुचुत्कारं ग्रीवां पृष्ठं चाऽऽस्फोट्य, आज्ञासीद् यदश्वः स्वेदैः स्नातोऽस्तीति । तच्चक्षुषी विस्फार्य, पार्श्वस्थ-पलाशिनं निपुणं निरीक्ष्य, तच्छाखायामेव कानिचिन्निजवस्तून्यासज्य, दक्षिण-कर-धृत-रश्मिरश्वं शनैः शनैः परिश्रमयितुमारेभे । अश्वश्च फेनान् पातयन् कन्धरामुद्धूनयन् हेषा-रवैश्चिरं-परिश्रमं प्रकटयन्, प्रस्यन्द-जल-सिक्त-भूभागः, समुत्सृष्ट-पुरीषः, शुष्क-स्वेदः, मुहूर्तार्द्धेनैव विस्मृत-परिश्रमः, सगतिस्तभं खुराग्रैर्भूमिमुत्खनन्, कर्णावुत्तम्भयन्, लाङ्गूलं लोलयन्, सादिनो दक्षिणदेशे पृष्ठं निकटयन्, पुनरेनं वोढुं परतो धावितुं च समीहां समसूसुचत् ।

श्रीधरी—यस्याध्यक्षः = जिसका स्वामी, स्वयं परिश्रमी = स्वयं परिश्रमी है, कथं स न स्यात् स्वयं परिश्रमी = वह स्वयं परिश्रमी क्यों न होगा, यस्यप्रभुः = जिसका स्वामी, स्वयं साहसी = स्वयं साहसी है, कथं स न भवेत् स्वयं साहसी = वह स्वयं साहसी क्यों न होगा, यस्य स्वामी = जिसका स्वामी, स्वयं आपदो न गणयति = स्वयं ही आपत्तियों की परवाह नहीं करता, स आपदः कथं गणयेत = वह आपत्तियों की परवाह कैसे करे, यस्य महाराजः = जिसके महाराज, स्वयं = अपने आप ही, संकल्पितं = सोचे हुये को, निश्चयेन साधयति = निश्चय के साथ सिद्ध करते हैं, कथं स न साधयेत् स्व संकल्पितम् = वह अपने संकल्पित

कार्य को क्यों पूरा न करे, एष महाराजस्य शिववीरस्य दयापात्रं चरः अस्ति=यह महाराज शिवाजी का कृपापात्र गुप्तचर है, तत्कथं=तो कैसे, झञ्झा-विभीषिकाभिर्विभीषितः=आँधी की भयानकता से डर कर, प्रभुकार्यं विगणयेत्=महाराज के कार्यों की उपेक्षा करे, तदितोप्येष तथैव त्वरित मश्वं चालयश्चलित=अब भी वह घोड़ा बढ़ता हुआ तेजी से चला जा रहा है।

अथ=इसके बाद, किञ्चित् स्त्रोतस्समुल्लङ्घमानोऽस्य तुरङ्गः=किसी सोते को पार करता हुआ इसका घोड़ा, कस्यापि=किसी, दोधूयमानतरोः=किसी हिलते हुये वृक्ष की, शाखया=टहनी से, तथाऽभिहतो=इस प्रकार लड़ गया कि, यथोच्छलन् भूमौपपात=उछल कर भूमि में गिर पड़ा, सादिनचैकतः समपीपतत्=सवार को एक ओर फेंक दिया. किन्तु तत्क्षणादेव=लेकिन उसी क्षण, सादी समुत्थितः=घुड़सवार ने उठकर, वाजिनो वल्गां गृहीत्वा=घोड़े की लगाम पकड़ कर, सचुचुत्कारं ग्रीवां पृष्ठं चाऽऽस्फोटय=चुमकारते हुए उसकी पीठ और गर्दन थपथपाते हुए, अज्ञासीद्=जाना, यदश्वः स्वेदैः स्नातोऽतीति=कि घोड़ा पसीने से तर है, तच्चक्षुषी विस्फार्य=इससे बाद विस्फारित नेत्रों से पार्श्वस्थ-निकटस्थ, पलाशिनं निपुणंनिरीक्ष्य=पेड़ को अच्छी तरह देखकर, तच्छाखायामेव=उसकी टहनी में ही, कानिचित् निजवस्तून्यासज्य=अपनी कुछ वस्तुओं को लटका कर, दक्षिण करधृति-रश्मिरश्वं शनैः शनैः परिभ्रमयितुमारम्भे=दाहिने हाथ से लगाम पकड़कर धीरे-धीरे टहलाने लगा, अश्वश्च=घोड़ा भी, फेनान् पातयन्=झाग गिराता हुआ, कन्धरानुद्धूनयन्=गरदन हिलाता हुआ, हेषारवैश्चिर-परिश्रयं प्रकटतन्=हिनहिनाहट से अत्यधिक श्रम को प्रकट करता हुआ, प्रसयन्द जल-सिक्त भूभाग=पसीने से भूमि को गीला करता हुआ, समुत्सृष्ट पुरीषः=लीद करके, शुष्कस्वेदः=पसीना सूख जाने पर, मूहार्तार्द्धेनैव विस्मृत परिश्रमः=थोड़ी देर में थकान भूला

कर, सगतिस्तम्भं, खुराग्रैर्भूमिमुत्खनन्=हाथों से भूमि खोदता हुआ, कर्णावुत्तम्भयन्=कान उठाये हुये, लांगूलं लोलयन्=पूछ हिलाता हुआ, सादिनो दक्षिण देशे पृष्ठं निकटयत्=सवार की दाहिनी ओर अपनी पीठ बढ़ाता हुआ, पुनरेनंवोढ़ु=फिर इसे सवार करने, परतो धावितुं च=इसके बाद दौड़ने की, समीहां समसूसुचत्=अपनी इच्छा को सूचित करने लगा।

हिन्दी—

जिसका अध्यक्ष स्वयं ही परिश्रमी है, वह कैसे परिश्रमी न हो, जिसका स्वामी स्वय साहसी है, वह साहसी कैसे न हो, जिसका स्वामी स्वयं ही आपत्तियों की परवाह नहीं करता, वह कैसे आपत्तियों को गिने ? जिसका राजा अपने सोचे हुये कार्य को दृढता के साथ पूर्ण करता है, वह अपने सोचे हुये कार्य को कैसे पूरा न करे ? यह शिवाजी का कृपा पात्र गुप्तचर है। अतः यह आँधी की भयकरता से डर कर अपने स्वामी के कार्य की कैसे उपेक्षा करे ? अब भी वह अपने घोड़े को बढ़ाता हुआ उसी तरह तेजी से जा रहा है।

इसके बाद किसी सोते को पार करते हुये उसका घोडा किसी हिलते हुये पेड़ की टहनी से इस तरह से लड़ गया कि उछलता हुआ भूमि पर गिर पड़ा और सवार को भी एक ओर डाल दिया, पर, सवार ने उसी समय उठकर, घोड़े की लगाम पकड़ कर चुमकारते हुए, उसकी गरदन और पीठ को थपथपा कर जान लिया कि घोड़ा पसीने से तर है। तब आँखों को खोल कर सावधानी से पास के पेड़ को देखकर उसकी शाखा में ही अपनी कुछ वस्तुओं को लटकाकर और दाहिने हाथ से लगाम पकड़ कर धीरे-धीरे घोड़े को टहलाना आरम्भ किया। घोड़ा झाग गिराता हुआ, गर्दन हिलाता हुआ, हिनहिनाहट से अत्यधिक परिश्रम को सूचित करता हुआ, पसीने से भू भाग को तर करता हुआ नीद; करके, पसीना सूख जाने पर, क्षण भर में ही परिश्रम

को भूल कर, पैरों से भूमि को खोदता हुआ, कान उठाये हुये, पूँछ हिलाता हुआ, सवार की दाहिनी ओर अपनी पीठ बढ़ाता हुआ फिर उसे सवार करने और दौड़ने की अपनी इच्छा को प्रकट करने लगा।

तावदकस्मात् पूर्वस्यामतिरक्ताऽतिप्रलम्बाऽतिभयानका स-डकडाशब्दं सौदामिनी समदेदीप्यत, तच्चमत्कार-चकितं चाश्वमेव यावत्स्थिरयति; तावत्स-तडतडा-शब्दं पूग-स्थूलबिन्दुभिर्वर्षितुमारब्ध मघवा, परं राम-कार्यार्थि प्रतिष्ठमानेन मारुतिनेव न सह्यते कार्यहानिः शिववीर-चरेण। तत्क्षणमेवासौ पुनः सज्जीभूय समुत्प्लुत्य घोटक-पृष्ठमारुरोह। घोटकश्च पुनस्त्वरितगत्या प्रचलितः। यदा यदा विद्युद् विद्योतते; तदा तदा पन्था अवलोक्यते, तदनुसन्धानेनैव चहोऽयं शिला-तलानि परिक्राम्यन् लताप्रतानानि त्यजन् स्रोतांस्युल्लङ्घमानः, गर्तांश्च परिजहदुच्चचाल। तावद् दूरत एवाऽऽलोक्यत तोरण-दुर्ग-दीपः, इतश्च चरस्यैतस्य दृढप्रतिज्ञतां निर्भीकतां सोत्साहतां स्वामिकार्य-साधन-सत्य-सङ्कल्पतां च परीक्ष्येव प्रशशाम वृष्टिः। अम्ल-बलेन दुग्धमिव च खण्ड-शोऽभून्मेघमाला, ददृशे च पूर्वस्यां कलानाथः।

अथ क्षणेनैव पार्वत नदी इव निर्जगाम झञ्झावातोत्पातोऽपि। ततो नूतन-वारिधारा-क्षालन-प्रकटित-परम-हरित्यानां परस्कोटि-कीर-पटल-परीतायामिव समवालोक्यत लोचन-रोचिका शोभा पलाशिनाम्। सादी च चञ्चच्चन्द्रचमत्कारेण द्विगुणितोत्साहः "मा भूद्-रोधो मन्द-गमनात् पूर्वमेव" इति सत्वर-सत्वरः झिल्ली-रव-मिश्रित-कवच-शिञ्जितः, वार्ष-वारि-व्रज-विधूत-स्वेद-विन्दु-सन्दोहः, साधुवाद-संवर्द्धित-हेपमाण-हतोत्साहः सपद्येव तोरण-दुर्ग-यामिक-पादचार-परिमर्दितायां भुवि समाजगाम।

श्रीधरी—तावत्=तब तक, अकस्मात्=अचानक, पूर्वस्यां= पूर्व दिशा में, अतिरक्ता=अत्यन्त लाल, अतिप्रलम्बा=अत्यन्त लम्बी,

अतिभयानकाकारा:=अत्यन्त भयानक आकर की, सौदामिनी=विजली, सकडकडाशब्दं समदेदीप्यत=कड़कड़ाहट के साथ चमक उठी, तच्चमत्कारचकितं=उसकी चकाचौंध से चकित, अश्वं=घोड़े को, यावत्स्थिरयति=जब तक रोके, तावत्=तब तक, सतड़तड़ा शब्दं=तड़-तड़ की आवाज के साथ, पूगस्थूलैर्विन्दुभि:=सुपारी के दानों के बराबर बूंदों से, मघवावर्षितुमारब्ध=इन्द्र ने बरसना आरम्भ कर दिया, परं=लेकिन. = रामकार्यर्थि = राजा के कार्य के लिये, प्रतिष्ठाभनेन = जाते हुए, मारूतिना इव = हनुमान की तरह, न सह्य ते कार्य हानि: = कार्य की हानि सह्य नहीं है, शिवबीर चरेण = शिवाजी के गुप्तचर को, तत्क्षणमेव = उसी समय, असौ पुन: सऽजीभूय = फिर सज्जित होकर, समुत्प्लुत्य = उछलकर, घोटकपृष्ठमारोरुह = घोड़े की पीठ पर चढ़ गया, घोटकश्च = घोड़ा भी, पुन: = फिर, त्वरितगत्यां = तेज चाल से प्रचलित: = चल पड़ा, यदा-यदा = जब-जब, विद्युत विद्योतते = विजली चमकती थी, तदा-तदा = तब-तब, पन्था अवलोक्यते = रास्ता दिखाई पड़ता है, तदनुसन्धानेनैव = उसी के आधार पर, अयं वाह: = यह घुड़सवार, शिलातलानि परिक्याम्यन् = पत्थरों को लांघता हुआ, लताप्रतानानित्यजन = लताओं के झुटमुटों को बचाता हुआ, स्त्रोतांसिउऽह्यमान: = सोतों को लांघता हुआ, गर्ताश्च पारिजहद् = गड्ढों को बचाता हुआ, उच्चचाल = चल पड़ा, तावद् = तभी, दूरतअवलोक्यत = दूर से ही दिखाई पड़ा, तोरण दुर्ग दीप: = तोरण दुर्ग का दीपक, इतश्च,=और इधर,एतस्य चरस्य = इस गुप्तचर की, दृढ़ प्रतिज्ञतां = दृढ़ निश्चयता को, निर्भीकतां = निर्भीकता को, सोत्साहतां = उत्साह पूर्णता को, स्वामिकार्य-साधन सत्य-सङ्कल्पतां = स्वामी के कार्य को पूर्ण करने के संकल्प की, परीक्ष्यं व वृष्टि: प्रशशाम = परीक्षा लेकर भी, वर्षा शान्त हो गई, अम्लवलेन दुग्धमिव = खटाई पड़ने से दूध की तरह, मेघमाला खण्डोशोऽभूत = वादल फट गये, पूर्वस्यां च = और पूर्व में,

कलानाथः ददृशे = चन्द्रमा दिखाई पड़ा, अथ = इसके बाद, क्षणेनैव = क्षण भर में ही, पार्वत नदी वेग इव = पहाड़ी नदी के वेग के समान, झञ्झावातोत्पातोऽपि = आंधी का उत्पात भी, निर्जगाम = निकल गया, ततः = फिर, नूतन-वारिधारा-क्षालन = नवीन जलधारा से धुले, प्रकटित परम-हारित्यकानां = अत्यधिक हरियाली को प्रकट करने वाले, परस्कोटि = करोड़ों, कीरपटल-परीतानामिव = तोतों के समूह से व्याप्त, पलाशिनां = पेड़ों की, लोचनरोचिका शोभा = आंखों को लुभाने वाली शोभा, समालोक्यत = दिखाई दी, सादी च = घुड़ सवार की, चञ्चच्चन्द्र-चमत्कारेण द्विगुणितोत्साहः = चमकती हुई चांदनी से दूना उत्साहित होकर, मद्गमनात्पूर्वमेव = मेरे जाने से पहले ही, द्वाररोधोभाभूत् = मुख्यद्वार बन्द न हो जाय, इति = यह सोचकर, सत्वर-सत्वरः = जल्दी-जल्दी, झिल्लीस्वमिश्रित-कवच-शिञ्जितः = झींगुर के स्वर में अपने कवच के स्वर को मिलाता हुआ, वार्ष-वारि-वृजविधूत-स्वेद-बिन्दु सन्दोहः = वर्षा के जल से धुली हुई पसीने की बूंदों वाला, साधुवाद-संवर्द्धित-हेषमाण-हयोत्साहः = शाबाशी दे-देकर हिन हिनाते हुए घोड़े के उत्साह को बढ़ाता हुआ, झटित्येव = शीघ्र ही, तोरणदुर्ग यामिक पादचार-परिमर्दितायां = तोरण दुर्ग के पहरेदार को पैरों से मसली हुई, भुवि = भूमि पर, समाजगाम = आ पहुंचा ।

हिन्दी—

तब तक अचानक पूर्व दिशा में अत्यन्त लाल रंग की, बहुत लम्बी और अत्यन्त भयानक बिजली कड़कड़ाहट के साथ चमक उठी। उसकी चकाचौंध से चौंधियाये हुये घोड़े को जब तक सवार रोके, तब तक तड़तड़ाहट के साथ बादलों ने सुपारी के दाने के बराबर बूंदें बरसाना आरम्भ कर दिया, किन्तु राम के कार्य को सम्पन्न करने के लिये जाने वाले हनुमान की तरह शिवाजी के दूत को भी कार्य हानि सह्य नहीं हुई। वह उसी समय पुनः सुसज्जित होकर, कूद कर घोड़े

को पीठ पर बैठ गया और घोड़ा फिर तेज चाल से चल दिया, जिस समय बिजली चमकती थी, उस समय रास्ता दिखाई पड़ जाता था, उसी के आधार पर यह घुड़ सवार शिलाओं को लांघता हुआ, लताओं को बचाता हुआ, सोतों को कूद कर पार करता हुआ और गड्ढों को बचाता हुआ चल दिया। उसे दूर से ही तोरण दुर्ग का दीपक दिखाई दिया। इधर उस दूत की दृढ़ प्रतिज्ञा, निर्भीकता, उत्साहपूर्णता और अपने स्वामी के कार्य को सिद्ध करने की सकल्पना की परीक्षा सी करके वर्षा शान्त हो गई। खटाई से दूध की तरह बादलों का समूह छिन्न भिन्न हो गया और पूर्व दिशा में चन्द्रमा दृष्टिगोचर हुआ।

इसके बाद ही क्षण भर बाद पहाड़ी नदी के वेग की तरह की आंधी भी निकल गयी। फिर नवीन जल धारा से धुले होने के कारण अत्यधिक हरियाली को प्रकट करने वाले करोड़ों तोतों के समूह से व्याप्त से वृक्षों की नयनाभिराम शोभा दिखाई दी, चचल चन्द्रमा की घटा से दूना उत्साहित होकर, कहीं मेरे पहुंचने से पहले मुख्य द्वार बन्द न हो जाय-यह सोच कर और भी जल्दी करता हुआ, झींगुर के स्वरों में अपने कवच के झंकार को मिलाता हुआ, वर्षा के जल मे धुली हुई पसीने की बूंदों वाला, शाबाशी दे देकर हिन-हिनाते हुए घोड़े को उत्साहित करता हुआ, शीघ्र ही वह सवार तोरण दुर्ग के पहरेदार से कुटी हुई भूमि पर आ पहुंचा।

अथ "को भवान्? कुतो भवान्?" इति यामिकैन पृष्टः, दत्त-निज-परिचयः, द्वारपालेनापि—"साधु! साधु! महता परिश्रमेण समायातोऽसि उच्चैर्निश्वसिति तेऽश्वः, स्विन्नानि तव गात्राणि, आर्द्राणि, नव वस्त्राणि धन्योऽसि, तथाऽपि खेदं नाऽऽवहसि, समये समागतोऽसि, अवेक्षते तवैव पन्थानं दुर्गाधीशः। प्रविश्यताम्, अश्व उन्मुच्यताम्, सत्वरमेव च तेनापि साक्षात्कारो विधीयताम्" इतिसादरमाप्यमानो दुर्गं प्रविवेश।

अश्वमुन्मुच्य परस्सहस्र-पतग-पटल-कलकलोन्निद्रस्य सुदूरवितत-काण्ड-प्रकाण्डस्य चैकस्य पनस-वृक्षस्य शाखायामाबध्य अविश्रान्त एव दुर्गाध्यक्ष-समीपमगमत् ।

तत्र तयोरेवमभूदालापः—

दुर्गाध्यक्षः—[दूरत एव] एहि, एहि, समये समायातोऽसि' मुहूर्तं नायास्यश्चेद् द्वारेषु बहिरेव समस्तां रजनीमत्रस्यः

सारी—विघ्नाम्त्वभूवन् परं माहात्म्यमेतत् प्रभु-प्रतापस्य, यत् तदीया विघ्नैर्न व्याहन्यते ।

दुर्गाध्यक्षः—(त शिरो नमयन्त जीवेत्युक्त्वा) उपविश, उपविश ।

ततो दुर्गाध्यक्षस्तु चुम्बित-यौवनामप्यत्यक्त-बालभावां तस्य मधुरामाकृतिं पश्यन्, सचकित विचारयितुमारेभे यत्—"कथ बाल एव प्रेषितः श्रीमता महाराष्ट्र-राजेन गुप्त-विषय-सन्धानेषु" क्षणमवस्थाय च "द्रक्ष्यामि प्रथम किमेतेनाऽऽनीत पत्रादिकम्"—इति निश्चित्य "भगवन् ! प्रभुणैकान्ते मामाहूय प्रदत्तमिदं पत्रमस्ति, तत् स्वीक्रियताम्" इति कटिबन्धनान्निःसार्य ददतो हस्तादादाय: उत्थाय च स्तम्भावलम्बित-दीप प्रकाशेन तूष्णीं मनस्येव पठित्वा, आकुञ्च्य, पूर्वोपविष्ट-मञ्चे उपविश्यपुनः पौनःपुन्येन अलि-पटल-विनिन्दकांस्तस्य कुञ्चित-कच-गुच्छान्, उत्पत्स्यमानकेशांकुर-स्विन्नमुत्तरोष्ठम, अतिमसृण-कमलोदर-किसलय-सोदरौ कपोलौ, खन्नतमसम्, दर्घौ बाहू, माधुर्य-वर्षिणी अक्षिणी, विनय-भरेणेव विनतां कन्धराम, तेजसेव गौरमङ्गम्, दाक्षिण्येनेवाङ्कित ललाटम्, मद्रतयेव च स्नातं शरीर विलोकयन् वारं वार विचिन्तयंश्च मशर्करध्यगङ्कनीयम्, मक्षिकाभिरप्यनीक्षणीयम्, समीरणेनाप्यनीर-णीयम् प्रकाशेनाप्यप्रकाशनीयम् लेखन्याऽप्य लेखनीयम्, पत्रेणापि चाप्रकटनीयम् गुप्ततमं वृत्तान्तम् उपबर्हलग्न-पृष्ठः,

भ्रूमध्य-स्थापिताचल-दृष्टिः क्षणं समाधिस्थित इव विचारपरवशोऽभूत् ।

धौधरी—अथ = इसके बाद, को भवान् = आप कौन हैं । कुतो भवान् = आप कहाँ से आये हैं । इति = इस प्रकार, यामिकेन पृष्टः = पहरेदार के द्वारा पूछे जाने पर । दत्त निज परिचयः = अपना परिचय देकर, द्वारपालेनापि = द्वारपाल के द्वारा भी । साधु-साधु = शाबाश-शाबाश, महता परिश्रमेण समायातोऽसि = बड़े परिश्रम से आये हो । ते अश्वः = तुम्हारा घोड़ा । उच्चैर्निश्वसिति = जोरों से हाँफ रहा है । स्विन्नानि तव गात्राणि = तुम्हारे अंग पसीने से तर हैं । आर्द्राणि तव वस्त्राणि = तुम्हारे वस्त्र गीले हैं । धन्योऽसि = तुम धन्य हो । तथापि खेदं नाऽऽवहसि = तो भी खिन्न नहीं हो । समये समायातोऽसि = समय पर आ गये हो । तवैव पन्थानं दुर्गाधीशः अवेक्षते = दुर्गाध्यक्ष तुम्हारी ही राह देख रहे हैं । प्रविश्यताम् = जाओ । अश्व उन्मुच्यताम् = घोड़ा खोल दो । सत्वरमेव च तेनापि साक्षात्कारो विधीयताम् = शीघ्र ही उनसे भी भेंट कर लो । इति = इस प्रकार । सादरमालप्यमानो = आदर के साथ बात किया जाता हुआ । दुर्गं प्रविवेश = उसने किले में प्रवेश किया ।

अश्वमुन्मुच्य = घोड़े को खोलकर परस्सहस्र पतग-पटल कलकलोन्निद्रस्य = हजारों पक्षियों के चहचहाने से मुखर, सुदूर-विततकाण्ड प्रकाण्डस्य = दूर तक फैले हुए शाखा और तने वाले । एकस्य पनस वृक्ष शाखायामाबध्य = एक कटहल के पेड़ की टहनी से बांधकर अविश्रान्त एव = बिना विश्राम किये ही । दुर्गाध्यक्ष समीप मगमत् = दुर्गाध्यक्ष के पास गया । तत्र तयोरेवमभूदालापः = वहाँ उन दोनों में इस प्रकार बातें हुईं । दुर्गाध्यक्षः = दुर्गाध्यक्ष ने । दूरत एव = दूर से ही । एहि एहि = आओ न आओ । समये समागतोऽसि = समय पर आये,

मुहूर्तं नायास्यश्चेद्=थोड़ी देर तक नहीं आते तो. रुद्धेपु द्वारेषु=द्वारों के वन्द हो जाने पर। वहिरेव समस्तां रजनी अवत्स्य:=वाहर ही सारी रात रहना पड़ता। सादी=अश्वारोही ने कहा। विघ्नास्त्वभूवन् =विघ्न तो आये। परं महात्म्य मेतत् प्रभु प्रतापस्य=पर यह प्रभु प्रताप की महिमा है कि। तदीया=उनके लोग। विघ्नैर्नव्या हन्यन्ते= विघ्नों से वाधित नहीं होते। दुर्गाध्यक्ष:=दुर्गाव्यक्ष ने, शिरो नमयन्तं तं जीवेत्युक्त्वा=प्रणाम करते हुए उसको जीते रहो, ऐसा कहकर। उपविश उपविश=वैठो वैठो कहा, तत:=इसके वाद, दुर्गाव्यक्ष, स्तु=दुर्गाव्यक्ष. चुम्बित यौवनामपि अत्यक्त वालाभावा=यौवन को छूती हुई भी वाल भाव का त्याग न करने वाली, तस्य=उसके. मधुरामाकृति पश्यन्=सुन्दर आकृति को देखते हुए। सचकित विचारयितु मारेभे यत्=चकित होकर सोचने लगे कि. कथं=क्या श्रीमता महाराष्ट्र राजेन=श्रीमान् शिवाजी ने, गुप्तविषय सन्धानेषु=गुप्त वातों के ज्ञान के लिये। वाल एष प्रेषित:=वच्चा ही भेज दिया। क्षण मवस्थाय=कुछ देर रुक कर, प्रथमं द्रक्ष्यामि=पहले देखूँ किमेतेनाऽऽनीतं पत्रादिकम्=क्या कोई पत्र आदि लाया है। इति निश्चित्य= यह निश्चय करके। भगवन्=महाराज. प्रभुणा एकान्ते वाम् आहूय प्रदत्तमिद पत्र मस्ति=स्वामी ने एकान्त में मुझे वुलाकर यह पत्र दिया है। तत स्वीक्रियताम्=इसे स्वीकार कीजिये। इति=यह कहकर, कटिवन्धनान्निसार्थं दादतो=कमर वन्द से पत्र निकाल कर देने वाले अश्वारोही से. आदाय=लेकर, उत्थाय च=और उठकर, स्तम्भावलम्वित-दीप-प्रकाशेन=खम्वे पर स्थित दीपक के प्रकाश में, तूष्णीं मनस्येवपठित्वा=चुपचाप मन ही मन पढकर आकुञ्च्य=माड़कर. पूर्वोपविष्ट मञ्चे उपविश्य=पहले वाली कुर्सी पर वैठकर. पुन:= फिर, पौन: पुन्येनालिपल्लवविनिन्दकान्=वार-वार भ्रमरों को भी तिरस्कृत करने वाले, तस्य कुञ्चित-कचगुच्छान्=उस सवार के घुंघराले वालों के गुच्छों को उत्पतत्स्यमान=निकलती हुई, केशाङ्कुरस्विन्न-

मुत्तरोष्ठम् = पसीने से भीगे मूंछों की रेख वाले ओठों। अतिमसृण कमलोदर-किशलय सोदरौ कपोलौ = अत्यन्त कोमल कमल की पखुड़ी के समान गालों, उन्नतमंसम् = ऊंचे कन्धो, दीर्घौ बाहू = लम्बी भुजाओं माधुर्य वर्षिणी अक्षिणी = माधुर्य की वृष्टि करने वाले आंखों, विनय, भरेणेव विनतां कन्धराम = नम्रता के भार से झुकी हुई गरदन, तेजसेव गौर अग = तेज से मानो गौर वर्ण वाले, दाक्षिण्यनैवाङ्कित ललाटम् = ' उदारता से युक्त मस्तक, भद्रतैथेव च स्नानं शरीरं विलोकयन् = भद्रता से मानो नहाये हुए शरीर को देखते हुए, वारं वारं विचिन्तयंश्च = वार-वार सोचते हुए। मशकैरपि अशङ्कानीयम् = मच्छरों से भी अशङ्क-नीय, मक्षिकाभिरपि अनीक्षणीयम् = मक्खियो से भी न देखे जा सकने वाले, समीरणेनापि अनीरणीयम् = हवा से न हिलाये जा सकने वाले, प्रकाशे-नापि अप्रकाशनीयम् = प्रकाश मे प्रकाशित न किये जा सकने वाले, लेखन्यापि अलेखनीयम् = लेखनी से भी न लिखे जा सकने वाले, पत्रे-णापि चा प्रकटनीयम् = पत्र से भी प्रकट न किये जा सकने वाले ।

हिन्दी—

इसके बाद—आप कौन हैं? कहाँ से आये है ? इस प्रकार द्वारपाल के पूछने पर, अपना परिचय देकर, द्वारपाल के द्वारा भी शावाश, शावाश, बहुत परिश्रम से आये हो, तुम्हारा घोड़ा हाँफ रहा है, तुम्हारा शरीर पसीने से तर है, तुम्हारे वस्त्र भीग गये है, तुम धन्य हो, जो फिर भी नहीं थके, समय पर आ गये हो। दुर्गाध्यक्ष तुम्हारी ही प्रतीक्षा कर रहे हैं। जाओ, घोडा खोल दो। शीघ्र ही उनसे मिल लो। इस प्रकार आदर पूर्वक बात किये जाते हुए सवार ने किले मे प्रवेश किया।

वह घोड़े को खोल कर और उसे सहस्रों पक्षियों के कलरव से मुखर एक दूर तक फैली शाखाओं और तने वाले कटहल की शाखा

से बांध कर, विना विश्राम किये ही दुर्गाध्यक्ष के पास चला गया। वहीं उन दोनों में इस प्रकार बातें हुईं।

दुर्गाध्यक्ष ने दूर से ही उसे देखकर कहा—आओ, आओ, ठीक समय पर आ गये। यदि थोड़ी देर और न आते तो मुख्य द्वार के वन्द होने जाने पर सारी रात तुम्हें बाहर ही रहना पड़ता। घुड़सवार ने कहा—आपत्तियां तो बहुत आईं, किन्तु प्रभु के प्रताप की महिमा है कि उनके लोग विघ्नों से बाधित नहीं होते। दुर्गाध्यक्ष ने प्रणाम करते हुए उस सवार को 'जिओ' ऐसा कहकर कहा—बैठो-बैठो।

तब दुर्गाध्यक्ष यौवन को छूती हुई होने पर भी बचपन का त्याग न करने वाली उसकी मधुर आकृति को देखते हुए सोचने लगे कि—महाराज शिवाजी ने गुप्त विषयों को जानने के लिये इस बच्चे को कैसे भेज दिया ? थोड़ी देर रुक कर—पहले देखूं, क्या यह कोई पत्र आदि लाया है ? यह निश्चय करके, महाराज, शिवाजी ने मुझे एकान्त में बुलाकर यह पत्र दिया है, इसे स्वीकार कीजिये। यह कह कर कमरबन्द से पत्र निकाल कर देने वाले उस घुड़ सवार के हाथ से पत्र लेकर, उठ कर, खम्भे के दीपक के प्रकाश में उसे मन ही मन पढ़कर मोड़कर, पुनः पहले वाली कुर्सी में बैठकर दुर्गाध्यक्ष भ्रमरों को तिरस्कृत करने वाले उस सवार के घुंघराले बालों के गुच्छों, रेख निकलती हुई, पसीने तर ओठों, अत्यन्त कोमल गालों, ऊंचे कन्धों, लम्बी भुजाओं, माधुर्य की वृष्टि करने वाली आंखों, मानो नम्रता के भार से झुकी गरदन, तेज से मानों गौर वर्ण वाले अंगों, उदारता से युक्त माथे, शान्त भाव से नहाये हुए से शरीर को बार-बार देखते हुए, तथा मच्छरों से भी अशङ्कनीय, मक्खियों से भी आदर्शनीय, हवा से भी न हिलाये जा सकने वाले, प्रकाश से भी प्रकाशित न किये जा सकने वाले, कलम से भी न लिखे जा सकने वाले, पत्र से प्रकट न किये जा सकने वाले, अत्यन्त गुप्त बातों के सम्बन्ध में बार-बार सोचते हुए, मसनद में पीठ

लगाकर। भौंहों के बीच अचल दृष्टि को स्थापित करके। थोडी देर तक समाधि स्थित से होकर विचार मग्न हो गये।

ततश्च पुनः सादिन आननं समवलोक्य, समप्राक्षीत्—वत्स ! तत्रभवतः समीपात् कदा प्रचलितोऽसि ?

स ऊचे—भगवन् ! मार्त्तण्ड-मण्डले निम्लोचति।

तेनोक्तम—कथं तर्हि प्रलम्बमुत्कट चाध्वानमुल्लङ्घ्य, वात्या विधूय, अल्पेनैव समयेन समायातोऽसि ?

स चाह—श्रीमन् ! ईदृश एवाऽऽसीदादेशोऽत्र भवतः।

ततः परं च—"अस्मै गुप्तसन्देशाः कथनीया न वा ? एष स्वस्मादप्याच्छाद्य मदुक्तं प्रभुकर्णातिथीकरिष्यति न वा ? यतो लिपिः कस्यापि कर्णेजपस्य हस्तेऽपि पतेद्, इति वाग्भिरेवादीरणीयो मम सन्देशः, इति परीक्षेयं न वाग्जालैः" इति विविच्य दुर्गाधीशस्तेन बहुशः समालपत्। अन्ततश्च तं सर्वथा गुप्त-सन्देश योग्यमाकलय्य, मनस्येव हर्षमनुभवश्चिरं प्रशशंस शिवराजं यत्—"नैतेषु विषयेषु कदाऽपि तन्द्रोऽवतिष्ठते महाराजः, स सदा योग्यमेव जनं पदेषु नियुनक्ति, नूनं बालोऽप्येषोऽबालहृदयोऽस्ति, तदस्मै कथयिष्याम्यखिलं वृत्तान्तम्, पत्रं च केषुचिद् विषयेषु समर्पयिष्यामि।" एवमालपच्च—

श्रीधरी—ततश्च=इसके बाद। पुनः=फिर। सादिन आननं=घुड़सवार के मुख को। समवलोक्य=देखकर। समप्राक्षीत्=दुर्गाध्यक्ष ने पूछा। वत्स=बेटे। तत्र भवतः समीपात्=महाराज के पास से। कदा प्रचलितोऽसि=कब चले हो। स ऊचे=उसने कहा। भगवन्=महाराज। मार्तण्ड मण्डले=सूर्य के। निम्लोचति=अस्त होते समय। तेनोक्तम्=दुर्गाध्यक्ष ने कहा। कथं तर्हि=तो कैसे। प्रलम्बं

=लम्बे। उत्कटं = भयंकर। अध्वानमुल्लंघ्य = रास्ते को पार करके। वात्या विधूय = आंधी को चीर कर। अल्पेनैव समयेन = थोड़े समय में। समायातोऽसि = आ गये। स चाह = उसने भी कहा। श्रीमन् = श्रीमान जी। ईदृशएवासीत् = ऐसा ही था। आदेशोऽत्रभवत: = आदरणीय शिवाजी का आदेश। तत: परं च = इसके आगे भी। अस्मै गुप्त सन्देशा कथनीया न वा = इससे गुप्त सन्देश कहने चाहिये या नहीं। एप = यह। स्वस्मादप्याच्छाद्य = अपने से भी छिपाकर, मदुक्तं = मेरी कही हुई बात को। प्रभुकर्णातिथी करिष्यति न वा = स्वामी के कानों तक पहुचा देगा, या नहीं। यत: = क्योंकि। लिपि: = लिखा हुआ। कस्यापि कर्णेजपस्य = किसी चुगलखोर के। हस्तेऽपि पतेत् = हाथ में भी पड़ सकता है। इति = इसलिये। वाग्भिरेवोदीरणीयो मम सन्देश: = बातों से ही मेरा सन्देश कहने लायक है। इति = इसलिये। एनं = इसको। वाग्जालै: परीक्ष्य = बातों से इसकी परीक्षा करूं। इति विविच्य = ऐसा सोचकर। दुर्गाधीश: = दुर्गाधीश ने। तेन बहुश: समालपत् = उससे बहुत बातें की। अन्ततश्च: = अन्त में। तं = उसको। सर्वथा = हर प्रकार से। गुप्त सन्देश योग्यमाकलय्य = गुप्त सन्देश देने लायक सोचकर। मनस्येव हर्प मनुभवन् = मन में ही हर्प का अनुभव करते हुए। शिवराजं चिर प्रशशंस यत् = महाराज शिवाजी की बहुत देर तक प्रशंसा की कि। एतेपु विपये = इन विपयों में। कदापि = कभी भी। सतन्द्रोनावतिप्ठते महाराज: = महाराज असावधान नहीं रहते। स: = वह। सदा = हमेशा। योग्य मेव जनं = योग्य व्यक्ति को ही। पदेपु नियुनक्ति = पदों पर नियुक्त करते हैं। नूनं = निश्चय ही। एप = यह। बालोऽपि = बालक होने पर भी। अबालहृदयोऽस्ति = प्रौढ़ हृदय वाला है। तद् = इसलिये। अस्मै = इससे। अखिलं वृत्तान्तं कथयिष्यामि = सारा वृत्तान्त कहूँगा। केपुचित् विपयेपु = किन्हीं विपयों में। पत्रं च = पत्र भी। समर्पयिष्यामि = दूँगा। एवमालपच्च = फिर इस प्रकार बात चीत की—

हिन्दी—

दुर्गाध्यक्ष ने फिर सवार के मुख को अच्छी तरह से देखकर पूछा—बेटे, महाराज शिवाजी के पास से किस समय चले थे ? उसने कहा—महाराज , सूर्य अस्त होते समय । दुर्गाध्यक्ष ने कहा—तो कैसे इतने लम्बे और विकट रास्ते को पार करके, आँधियों का चीर कर इतने कम समय में आ गये ? उसने उत्तर दिया—महाराज शिवाजी की ऐसी ही आज्ञा थी ।

उससे आगे भी—इससे गुप्त सन्देश कहने चाहिये या नहीं, यह मेरी कही हुई बातों को अपने से भी छिपाकर महाराज शिवाजी के कानों तक पहुँचा देगा या नहीं ? क्योंकि लिखी हुई बात तो किसी चुगलखोर के हाथ में भी पड सकती है । अत. मेरा सन्देश तो मौखिक ही कहने योग्य है । बातों में इसकी परीक्षा लूँ—यह सोचकर दुर्गाध्यक्ष ने उसके साथ बहुत बात-चीत की । अन्त में उसे हर प्रकार का गुप्त सन्देश कहने योग्य समझकर, मन ही मन हर्ष का अनुभव करते हुए । महाराज शिवाजी की बहुत देर तक प्रशंसा की कि ऐसे विषयों में वे कभी भी असावधान नहीं रहा करते । वे सदा योग्य व्यक्तियों को ही उच्च पदों पर नियुक्त करते है । अवश्य ही यह बालक होने पर प्रौढ हृदय वाला है । इसलिये सारा गुप्त वृत्तान्त इससे कह दूँगा । फिर उससे इस तरह बात चीत की—

दुर्गाधीश.—मन्ये क्षत्रियोऽसि ।

सादी—आम् श्रीमन् !

दुर्गा०— [स्मित्वा] नान्येषामपत्यान्येव तेजस्वीनि दृढ़-हृदयानि प्रभुभक्तानि च भवन्ति । [पुनः सम्मुखमवलोक्य] किं ते नाम ?

सादी—[अञ्जलिं बद्ध्वा] आर्य ! मा रघुवीरसिंह इति वदन्ति जना. ।

दुर्गा०—चिरञ्जीव [क्षण विरम्य] अस्तु, सम्प्रति दुर्गात् बहिरेव साम्मुखीने हनूमन्मन्दिरे रात्रिमतिवाहय, श्वस्तु किञ्चिदुदञ्चति मरीचिमालिनि आगत्य पत्रादिकं गृहीत्वा महाराज-निकटे यातासि।

रघुवीरः—'बाढम्'!

इति शिरो नमयित्वा, प्रतिनिवृत्य, पनस-शाखातोऽश्वमुन्मुच्य, दुर्गाध्यक्ष-प्रेषितस्य भृत्यस्यैकस्य हस्ते वल्गादान-पुरःसरं समर्प्य, अपर-दासेरकेण व्यादिष्ट-मार्गो नव-वारिद-वारि-बिन्दु-वृन्द-सम्पर्क-प्रकटित निधुर-सन्दोह-सन्तर्पण-मधुरगन्धि रजनीकर-कर-निकर-विरोचितां भूमिमालोकयन्, मन्द मन्दमाससाद मारुति-मन्दिरम्।

श्रीधरी—दुर्गाधीशः—दुर्गाध्यक्ष ने कहा, मन्ये क्षत्रियोऽसि=लगता है, क्षत्रिय हो, सादी=घुड़सवार ने कहा, आम् श्रीमन्=हाँ श्रीमन्, दुर्गाधीशः=दुर्गाध्यक्ष ने कहा, स्मित्वा=मुस्करा कर, अन्येष-अपत्यानि=दूसरों की सन्तानें, एवं=इस प्रकार, तेजस्वीनि=तेजस्विनी, दृढ़-हृदयानि=मजबूत हृदय वाली। प्रभुभक्तानि च=स्वामी के भक्त, न भवन्ति=नहीं हुआ करती। पुनः सम्मुख मवलोक्य=फिर सामने देखकर, किं ते नाम=तुम्हारा नाम क्या है। सादी अञ्जलिबद्ध्वा=घुड़सवार ने हाथ जोड़कर कहा। आर्य=हे आर्य, मां=मुझको, जनाः=लोग, रघुवीर सिंह इति वदन्ति=रघुवीर सिंह कहते हैं। दुर्गाधीशः=दुर्गाध्यक्ष ने कहा, चिरञ्जीव=चिरंजीव, क्षणं विरम्य क्षण भर रुक कर, अस्तु=खैर, सम्प्रति=इस समय, दुर्गात् वहिरेव=किले से बाहर ही, साम्मुखीने=सामने वाले, हनूमन्मन्दिरे=हनूमान जी के मन्दिर में, रात्रिमतिवाहय=रात बिताओ। श्वस्तु=कल, किञ्चिदुदञ्चति मरीचिमालिनि=प्रातः सूर्य के कुछ निकलते ही,

अत्रागत्य=यहाँ आकर, पत्रादिकं गृहीत्वा=पत्र आदि लेकर महाराज निकटे यातासि=महाराज शिवाजी के पास जाना, रघुवीरः=रघुवीर सिंह ने, वाढम् इति=बहुत अच्छा ऐसा कहकर। शिरो नमयित्वा=शिर झुका कर, प्रति निवृत्य=लौटकर। पनस शाखातो अश्वमुन्मुच्य=कटहल की टहनी से घोड़े को खोलकर, दुर्गाध्यक्ष प्रेषितस्य=दुर्गाध्यक्ष के द्वारा भेजे हुए। एकस्य भृत्यस्य हस्ते=एक नौकर के हाथ में. वल्गादान पुरस्सर समर्प्य=घोड़े की लगाम सौंप कर, एकेन अपर दासेन व्यादिष्ट मार्गः=एक दूसरे नौकर के बताये हुए मार्ग से. नव-वारिद-वारि-बिन्दु-वृन्द सम्पर्क=नये बादलों के जलकणों के सम्पर्क से, प्रकटित-सिन्धुर-सन्दोह-सन्तर्पण-मधुर गन्ध=हाथियों के समूह को तृप्त करने वाली और मधुर गन्ध प्रकट करने वाली, रजनीकर-कर-निकर-विरोचितां=चन्द्रमा की किरणों से सुशोभित, भूमिमालोकयन्=भूमि को देखता हुआ, मन्दं-मन्दं=धीरे-धीरे, मारुति मन्दिर माससाद=हनुमान जी के मन्दिर मे गया।

हिन्दी—

दुर्गाध्यक्ष ने कहा—मालूम पड़ता है, क्षत्रिय हो!

घुड़सवार ने कहा—हाँ, महाराज।

दुर्गाध्यक्ष से मुस्कराकर कहा—अन्य लोगों की सन्तानें ऐसी तेजस्विनी, मजबूत हृदय वाली और स्वामिभक्त नहीं हुआ करतीं। फिर सामने की ओर देखकर, तुम्हारा नाम क्या है?

घुड़सवार ने हाथ जोड़ कर कहा—आर्य! मुझे लोग रघुवीर सिंह कहते हैं।

दुर्गाध्यक्ष ने थोड़ी देर रुक कर कहा—खैर, इस समय किले से बाहर ही सामने वाले हनुमान जी के मन्दिर में रात बिताओ। कल सवेरे सूर्योदय होते ही यहाँ आकर पत्र आदि लेकर महाराज के

पास चले जाना। रघुवीर सिंह ने बहुत अच्छा, यह कहकर, प्रणाम करके, लौट कर कटहल की शाखा से घोड़े को खोल कर, दुर्गाध्यक्ष के द्वारा भेजे हुए एक नौकर के हाथ में उसकी लगाम देकर दूसरे नौकर के बताये हुए रास्ते से नये बादलों के जल कणों के सम्पर्क से हाथियों के समूहों को तृप्ति देने वाली और मधुर गन्ध को प्रकट करने वाली चन्द्रमा की किरणों से शोभित भूमि को देखता हुआ रघुवीर सिंह धीरे-धीरे हनुमान जी के मन्दिर में गया।

तत्र चाऽऽगन्तुकानामेव निवासाय कलित-यथोचित-साधनानां प्रकोष्ठानामन्यतमे प्रविश्य, गवाक्षानुन्मुद्रय, वाताभिमुखं नागदन्तिकासु वर्म वस्त्राणि चावलम्ब्य आसन्न- कूपाज्जलमुत्तोल्य हस्त-पादं प्रक्षाल्य, हनूमन्मूर्तिं दृष्ट्वा कमपि नित्य-नियममिव निर्वाह्य, दुर्गाध्यक्षप्रेदित्त किञ्चिदाहारादिकमुपगृह्य, ग्रीष्मसुखावहानां वातानां सुखमनुभवन्, कदाचिच्चन्द्रम्, कदाचित्तारकाः, कदाचिद् गिरिशिखराणि, कदाचिद् दुर्ग- प्राचीरम्, कदाचित् सुदूर-पर्यटद्यामिक-यातायातम्, कदाचिन्नतोन्नतभूभागान्, कदाचिच्चाभ्रङ्कुपान् हनूमन्मन्दिर-कलशान् अवलोकयन्, मन्दिरात् पश्चिमतः परिक्रमा- पर-पादाहति-विच्छल-पाषाण-पट्टिका-परिष्कृत-वेदिकायां पर्यटन् कञ्चित् समयमतिवाहयाम्बभूव।

श्रीधरी— तत्र चागन्तुकानामेव=वहाँ अतिथियो के निवास के लिये, कलित यथोचित साधनानां=उपयुक्त सामग्री से सम्पन्न, प्रकोष्ठानामन्यतमे=कमरों में से किसी एक में प्रविश्य=प्रवेश करके। गवाक्षानुन्मुद्रय=खिड़कियों को खोल कर। वाताभिमुखं=हवा के रुख की ओर, नागदन्तिकासु=खूँटियों में। वर्म=कवच, वस्त्राणि चावलम्ब्य =और वस्त्रों को लटका कर, आसन्नकूपात्=निकटवर्ती कुँए में जलमुत्तोल्य=पानी भरकर, हस्त-पादं प्रक्षाल्य=हाथ पैर धो कर

हनूमन्मूर्ति दृष्टवा=हनूमान जी की मूर्ति को देखकर । कमपि-नित्य नियममिव निर्वाह्य=किसी नित्य नियम को सम्पन्न करके, दुर्गाध्यक्ष प्रेपितं=दुर्गाध्यक्ष के द्वारा भेजा हुआ । किञ्चिदाहारादिकं-उपगृह्य=भोजन आदि करके । ग्रीष्म सुखावहानां=ग्रीष्म ऋतु में अच्छी लगने वाली । वातानां=हवा के । सुखमनुभवन्=स्पर्श सुख का अनुभव करते हुए । कदाचिच्चन्द्रम्=कभी चन्द्रमा को । कदाचित्तारकाः=कभी तारों को । कदाचिद् गिरिशिखराणि=कभी पहाड़ की चोटियों को । कदाचित् दुर्ग प्राचीरं=कभी किले की चहार दीवारी को । कदाचित्=कभी, सुन्दर पर्यटत्=दूर तक गश्त लगाते हुए । यामिक यातायातम्=पहरेदार के आने जाने को । कदाचित्=कभी, उन्नतोन्नत भूभागान्=ऊंची नीची भूमि को । कदाचित्=कभी, अभ्रङ्कषान्=गगन चुम्बी । हनूमन्मन्दिर कलशान्=हनूमान मन्दिर के कलशों को । अवलोकयन्=देखता हुआ । मन्दिरात् पश्चिमतः=मन्दिर के पश्चिम की ओर, परिक्रमा-पर पादाहति-पिच्छिल-पाषाण पट्टिका-परिष्कृत वेदिकायां=परिक्रमा करने वाले लोगों के पैरों से पङ्किल और प्रस्तर खण्डों से शोभित चबूतरे पर । पर्यटन्=टहलते हुए । कञ्चित समयं=कुछ समय । अतिवाहयाम्बभूव=व्यतीत किया ।

हिन्दी—

वहाँ आगन्तुको के लिये सभी उपयुक्त सामग्री से सम्पन्न कमरों में से किसी एक कमरे में जाकर, खिडकियों को खोलकर । हवा के रुख की ओर कवच और वस्त्रों को खूँटियों में टाँगकर, पास के कुँए से पानी भर कर, हाथ-पैर धो कर, हनूमान जी के दर्शन करके, अपने नित्य-नियम का सम्पादन कर, दुर्गाध्यक्ष के द्वारा भेजे हुए भोजन को खाकर, ग्रीष्मऋतु में अच्छी लगने वाली वायु के स्पर्श का सुख अनुभव करते हुए, कभी चन्द्रमा को, कभी तारों को, कभी पर्वत शिखरों को कभी किले की चहार दिवारी को, कभी दूर तक गश्त लगाते हुए पहरे

दार के आवागमन को, कभी ऊँची-नीची भूमि को, तथा कभी हनूमान मन्दिर के गगनचुम्बी कलशों को देखते हुए, मन्दिर के पश्चिम की ओर, परिक्रमा करने वाले लोगों के पैरों के आघात से पङ्किल और पत्थरों से सुशोभित चबूतरे के ऊपर टहलते हुए कुछ समय व्यतीत किया।

तावत् तेन पयः-फेनासार-च्छवि-विजित्वरया ज्योत्स्नया द्विगुणितोत्साहेन, धीर-समीर-स्पर्श-शान्त-श्रमेण, प्रस्फुरच्चन्द्रकला कलिका भ्रमद्-भ्रमर-झङ्कार-भर-मन्द्र-स्वर-पीयूष-शीकर-परिमार्जित-श्रवणेन समश्रूयन्त केचित् शुकीर्मूकयन्तः, हंसीर्ध्वंसयन्तः, सारिकाः सारयन्तः, कोकिलान् विकलयन्तः, वीणां च विगणयन्तः, काकली-कलमयाः स्वरालापाः। श्रवणेनैव तेनावगतं यत् आलापा एते कस्या अपि बालिकायाः, सा च लज्जा-परवशा; यतो नोच्चैर्गायति, उच्च-कुलप्रसूता; यतो नान्यासामेवमुदारा वाक्, समीपवर्तिनी; यतः स्फुटः स्वरः, पूर्वस्यामुपविष्टा च; यतस्तत एव मूर्च्छन्ति मूर्च्छनाः।

अथ कर्णाविव गृहीत्वा आकृष्टो रघुवीरसिंहो मन्दिरं दक्षिणा प्रदक्षिणीकृत्य तयैव प्रदक्षिणा-वेदिकया तत्क्षणमेव मन्दिरस्याग्निकोणे कपोत-पोतक-गुंकार-मधुर-कपोतपालिकास्तम्भारम्भ-निकटे समुपतस्थे अवलोकयच्च-यत् पूर्वस्यामस्ति विशाला पुष्पवाटिका, यस्यामतिमुक्तलताः सौरभेण विष्णुपदमपि मदयन्ति, यूथिकाः सुगन्ध-तरङ्गैर्हरितामपि हृदयं हरन्ति, पाटिल-पटलानि अलि-पटल-रसानाश्चटुलयन्ति, मालतिकाश्च मरन्द-विन्दु-सन्दोहैर्वसुमतीं वासयन्ति। तस्यां मन्दिर-पूर्वद्वार-सम्मुखे एवास्त्येका परम-रमणीया ज्योत्स्ना-स्पर्श-प्रकटित-द्विगुणतर-चाकचक्या सोपानत्रयालङ्कृत-चतुरवरोहा हंसपक्ष-वलक्ष-च्छवि-विजित्वर-धवल-ग्राव-वेदिका। अस्यामागन्तुकानामुपवेशाय रचिताः पाषाणमया एव कतिचन मञ्चाः, तेषामन्यतमे उपविष्टा

वालिकैका । सेयं वर्णेन सुवर्णम्, कलरवेण पुंस्कोकिलान्, केशै रोलम्ब-कदम्बानि, ललाटेन कलाधर-कलाम्, लोचनाभ्यां खञ्जनान्, अधरेण बन्धुजीवम्, हासेन ज्योत्स्नां तिरस्कुर्वती, वयसा एकादशमिव वर्षं स्पृशन्ती, श्याम-कौशेय-वस्त्र-परिधाना, श्वेत-बिन्दु-सन्दोह-सङ्कुल-रक्ताम्बर-कञ्चुकिका, कण्ठे एकयष्टिकां नक्षत्रमालां बिभ्रती, सिन्दूर-चर्चा-रहित-धम्मिल्लेन परिशिष्टं पाणिपीडनमिति प्रकटयन्ती, हस्ते पाटलि-कुसुमस्तवकमेकमादाय शनैः शनैर्भ्रामयन्ती, तमेवावलोकयन्ती च, अविदित-बहुल-तान-तारतम्यं मन्द-मन्द मुग्ध-मुग्धं मधुर मधुरं किञ्चिद् गायतीति ।

श्रीधरी—तावत् = तब तक, तेन = उसने, पयः फेनासार च्छवि विजित्वरया ज्योत्स्नया = दूध के भाग को छटा को जीतने वाली चाँदनी से, द्विगुणितोत्साहेन = दूने उत्साह वाले, धीर-समीर-स्पर्श-शान्त-श्रमेण = मन्द वायु के स्पर्श से शान्त परिश्रम वाले, प्रस्फुरच्चन्द्र-कलाकलिका भ्रमद् = छिटकी हुई चाँदनी से विकसित कलियों पर मँड-राते हुए, भ्रमर-झङ्कार-भर मन्द्रस्वर-पीयूष-शीकर परिमार्जित-श्रवणेन भ्रमरों के गुन्जन भार से मन्द्र स्वर रूपी अमृत कणों से शुद्ध हुए कर्णों वाले, शुकीर्मूकयन्तः = शुकों को मूक बनाने वाले, हंसीर्व्वसन्तः = हंसियों को जीतने वाले, सारिकाः सारयन्तः = सारिकाओं भगाने वाले कोकिलान् विकलयन्तः = कोयलों को विकल बनाने वाले, वीणां च विगणयन्तः = वीणा को निन्दित करने वाले, काकली कलमयाः स्वरा-लापाः = काकली के स्वरों के आलाप समश्रूयन्त = सुनाई दिये, श्रवणे-नैव = सुनते ही, तेनावगतं = उसने जान लिया, यत् = कि, एते आलापाः = ये आलाप, कस्या अपि वालिकायाः = किसी लड़की के हैं, सा च = और वह, लज्जा परवशाः = लज्जा से दबी होने के कारण, उच्चैर्न गायति = जोरों से नहीं गा रही है, उच्चकुल प्रसूता—बड़े कुल में उत्पन्न हुई, यतः = क्योंकि, नान्यास्मिदमुहारा वाक् = औरों की वाणी

ी उतार नहीं हो सकती, समीप वर्तिनी=पास में ही है, यतः=
ंकि, स्फुटः स्वरः=स्वर स्पष्ट है, पूर्वस्याँ उपविष्टा च=पूर्व में
ो है, यतः=क्योंकि, तत एव मूर्च्छना मूर्च्छन्ति=उधर से ही स्वर
हरियाँ आ रही हैं, अथ=इसके बाद, कर्णाविव गृहीत्वा=कान पकड़
र खीचे गये के समान, रघुवीर सिंहः=रघुवीर सिंह ने, मन्दिर दक्षिणा
दक्षिणीकृत्य=दक्षिण ओर से मन्दिर की प्रदक्षिणा करके, तस्यैव=
उसी, प्रदक्षिणा वेदिकया=प्रदक्षिणा की वेदी से, तत्क्षणमेव=उसी
समय मन्दिरस्याग्नि कोणे=मन्दिर के अग्निकोण में स्थित, कपोत-
पोतक, गुञ्जार-मधुर=कबूतरों के बच्चो के 'गुटर गूँ' के मधुर शब्द
से, कपोत पालिकाधस्त स्भारम्भ=कपोत पालिका के निचले खम्भे के,
निकटे=पास में, समुपतस्थे=खड़ा होकर, अवालोकयच्च=देखा,
यत्=कि, पूर्वस्यां=पूर्व की ओर, विशालःपुष्पवाटिका अस्ति=बड़ी
फुलवारी है, यस्यां=जिसमें, अतिमुक्त लतः=माधवी लताएँ, सौर-
भेण=सुगन्ध से, विष्णुपदमपिमदयन्ति=आकाश को भी मादमस्त
बना रही हैं । यूथिकाः=जुही, सुगन्धतरगैः=सुगन्ध की तरगों से,
हरितामपि हृदयं हरति=दिशाओं के हृदय को भी हर रही हैं, पाटलि
पटलानि=गुलाबो के समूह, अलिपटल-रसना वहुलयन्ति=भौंरो की
जीभ को चचल बना रहे है । मालतिकाश्च=मालती, मरन्द-
बिन्दुसन्दोहैर्वसुमती वासयन्ति=पराग विन्दुओं से पृथ्वी को सुगन्धित
कर रही है । तस्या=उस वाटिका में, मन्दिर पूर्वद्वार सम्मुखे एव=
मन्दिर के पूर्वद्वार के सामने ही, एका परम रमणीया=एक अत्यन्त
सुन्दर, ज्योत्स्ना स्पर्श प्रकटित द्विगुणतरचाकचक्यया=चांदनी के स्पर्श
से दूनी चमक स्फुट करने वाली, सोपानत्रयालंकृत चतुरवरोहा=तीन
सीढ़ियों से शोभित चार अवरोहो वाली हसपक्ष-वलक्ष-च्छवि विजित्वर-
धवल ग्राव वेदिका=हस के पंख की सी उज्वल छवि को जीतने वाले,
श्वेत पत्थरों से बना चबूतरा है, अस्यां=इस पर, आगन्तुकानामुप
वेशाय=आगन्तुकों के बैठने के लिये, पाषाणमया एव रचिताः कतिचन

मञ्चा=पत्थर की ही बनी हुई कुछ कुर्सियां हैं। तेपामन्यतमे एका बालिका उपविष्टा:=उनमें से किसी एक पर एक लड़की बैठी है, सेयं=यह लडकी, वर्णेन सुवर्णम्=अपने उज्वल वर्ण से सुवर्ण का, कलरवेण पुंस्कोकिलान्=मधुर शब्द से नर कोयल का, केशैरोलम्वकदम्वान्=बालों से भौंरों का, ललाटेन कलाधर कलाम्=माथे से चंद्रकला का, लोचनाभ्यां खञ्जनान्=नेत्रों से, खञ्जनों का, अधरेण बन्धुजीवम्=अधर से दुपहरी पुष्प का, हासेन ज्योत्स्नां तिरस्कुर्वंती=हँसी से चाँदनी का तिरस्कार करती हुई, वयसा एकादशमिव वर्षं स्पृशंती=अवस्था में ग्यारह वर्ष का स्पर्श करती हुई, श्याम कौशेय-वस्त्र परिधाना=काले रेशमी वस्त्र पहने, श्वेत-विंदु संदोह-सङ्कुल रक्ताम्वर से कञ्चुकिका=श्वेत बुँदियों वाली लाल ओढ़नी पहने, कण्ठे एक यष्टिकां नक्षत्रमालां बिभ्रती=गले में सत्ताईस मोतियों वाली एक लड़ वाली माला पहने हुए, सिंदूर चर्चारहित धम्मिल्लेन=सिंदूर रहित माँग से. परिशिष्टंपाणि पीडनमिति प्रकट-यन्ती=अभी विवाह नहीं हुआ, इस बात को प्रकट करती हुई, हस्ते पाटलि कुसुम स्तवक मेकमादाय=हाथ में गुलाब फूलों का गुच्छा लेकर, शनैः शनैर्भ्रामयंती=उसे धीरे धीरे घुमाती हुई, तमेवावलोक-यंती च=उसी को देखती हुई, अविदित बहुल तान तारतम्यं=तानों के क्रम के विचार से रहित, मंद मंदं=धीरे धीरे, मुग्ध मुग्धं=मधुर-मधुर, किञ्चिद् गायति=कुछ गा रही है।

हिन्दी—

तब तक दूध के झाग की शोभा को जीतने वाली चाँदनी से दूने उत्साह वाले और मंद वायु के स्पर्श से शांत परिश्रम वाले तथा छिटकी हुई चाँदनी से खिली हुई कलियों पर मँडराते हुए भौंरों के गुञ्जन से मन्द्र स्वर रूपी अमृत कणों से शुद्ध हुए कानों वाले उस घुडसवार ने, शुकों को मूक बना देने वाले, हंसियों को विजित करने वाले, मैंनाओं को पलायित करने वाले, कोयल को विकल बनाने वाले

एवं वीणा को विनिन्दित करने वाले, काकली स्वरो से युक्त स्वरों के आलाप सुने। सुनते ही उसने समझ लिया कि ये आलाप किसी बालिका के हैं तथा वह लज्जा से दबी हुई है, क्योंकि ऊंचे स्वर से नही गा रही है, बड़े कुल में पैदा हुई है, क्योंकि औरों की वाणी इतनी मधुर नहीं हो सकती और वह यही पास ही में बैठी है, क्योंकि स्वर पूर्णतः स्पष्ट है, पूर्व दिशा में बैठी है, क्योंकि पूर्व की ओर से ही ये स्वर-लहरियाँ आ रही हैं।

इसके बाद कान पकड़ कर खींचे हुए के समान रघुवीर सिंह ने दक्षिण की तरफ से मन्दिर की प्रदक्षिणा करके, उसी प्रदक्षिणा की वेदी से उसी समय, मन्दिर के अग्निकोण में स्थित कबूतरों के बच्चों के मधुर गुटर गूँ शब्द से गुञ्जित कबूतरो के दरबे के निचले खम्भे के पास खड़े होकर देखा कि—पूर्व की ओर एक विशाल बगीचा है, जिसमें खिली हुई माधवी लताएं अपने सौरभ से आकाश को भी मद मस्त बना रही है। जुही के पेड़ सुगन्धित तरंगों से दिशाओं के भी हृदय को हर लेते हैं, गुलाब के समूह भौंरो की रसनाओं को चञ्चल बना रहे हैं और मालती लताएं अपने पराग के समूह से पृथ्वी को सुगन्धित कर रही हैं।

उस बगीचे में मन्दिर के पूर्व द्वार के सामने ही एक अत्यन्त सुन्दर, चाँदनी के स्पर्श से दूनी चमक प्रकट करने वाली तीन सीढ़ियों तथा चार अवरोह वाली, हंस के पंखों की उज्वल छवि को जीतने वाला, श्वेत पत्थरों से बनी हुई आगन्तुओं के लिये कुछ कुर्सियां बनी हुई हैं जिनमें से किसी एक पर लड़की बैठी हुई है। यह लड़की अपने उज्वल वर्ण से सुवर्ण का, मधुर स्वर से नर कोयल का, बालों से भौंरों का, माथे से चन्द्रमा की कला का, नेत्रों से खञ्जनों का, ओठ से दुपहरिया के फूल का, हँसी से चाँदनी का तिरस्कार करती हुई, अवस्था से लगभग ग्यारह वर्ष का स्पर्श सा करती हुई, श्याम रंग के रेशमी वस्त्रों को पहने, सफेद बुंदियों से युक्त लाल रंग की ओढ़नी

धारण किये, गले में सत्ताइस मोतियों की एक लड़ वाली हार पहने हुए, सिंदूर की रेखा से रहित माँग से अभी विवाह नहीं हुआ है, इस बात को सूचित करती हुई, हाथ में गुलाब के फूलों का एक गुच्छा लेकर उसे शनैः शनैः घुमाती हुई तथा उसी को देखती हुई, स्वरों के आरोहावरोह के विचार से रहित कुछ धीरे-धीरे, मधुर-मधुर गा रही है।

यद्यपि नैतया सरस्वती-रूपया अज्ञात-तातोत्सङ्ग शयनातिरिक्त- सांसारिक- सुखया कदाऽपि गातुं शिक्षितम्, न वा गायकानां तान्ताः कर्ण-रसायन-मूर्छनाः कर्णातिथीकृताः, तथाऽपि भज्यमानमपि त्रुटयमानमपि, आम्रेड्यमानमपि, अदर्शित-रागविषमपि, आरोहावरोह-ध्रुवाभोगालङ्कारादि-कथा-शून्यमपि, निजकल्पनामात्रम्, तद्देशीय-ग्राम्यस्त्री-गानानुकल्पम्, सुदीर्घ-स्वर-रणनं गानमिदं परम- सरस परम-मधुरं परमहारि चाऽऽसीत्।

रघुवीरसिंहस्तु स्वरालाप-श्रवणेनैव परवशो दिल्लीश्वरैनां 'कोऽहम् ? काहम् केयम् ? किमिदम् ?' इत्यखिलं यौगपद्येनैव विसस्मार।

अहो ! आश्चर्यम्, य एष फणि-फणा-फूत्कारेष्वपि सक्रोध-हर्यक्ष-जृम्भारम्भेष्वपि भल्ल-तरलजाग्र-परिस्फुर्वि-छर-नखर-भरल-धावनेष्वपि घन-घनाघन-घर्षण-विघट्टित-गैरिक-व्रात-जल-प्रपात-गिरि-गह्वरोत्पातेष्वपि तरलतर-तरङ्ग-तोयावर्त्त-शताकुल-तरङ्गिणी-तीव्र-तर-वेगेष्वपि गण्डक-मण्डल-घोणा-दर्शन-घोर-दर्शनाघोर-घोरतर-प्रान्तरेष्वपि च धैर्यं नात्याक्षीत्, कार्यजातं न व्यस्मार्षीत्, आत्मानं च न न्यक्कार्षीत्; तस्याधुना स्विद्यन्त्यङ्गानि, एजते गात्रयष्टिः, विमनायते हृदयम् अञ्चन्ति रोमाणि, क्षुभ्यति च मनः। तत् कथमिदम् ? कुत इदम् ? अहह ! सत्यम् ! वीरबालोऽप्येष प्राप्यावसरम् आहतो मदन मृगयुना।

श्रीधरी—यद्यपि = यद्यपि, सरस्वती-सरूपया = सरस्वती के समान रूप वाली, तातोत्संग शयनातिरिक्त = पिता की गोद में सोने के अलावा, सांसारिक-सुखया = सांसारिक सुख के बारे में जानकारी न रखने वाली, एतया = इस लड़की ने, कदापि गातुं न शिक्षितम् = न कभी गाना ही सीखा, न वा गायकानां = और न गाने वालों की, तास्ताः कर्ण रसायन-मूर्च्छनाः = कानों को आनन्दित करने वाली स्वर लहरियों को, कर्णातिथी कृताः = सुना, तथापि = तो भी, भज्यमानमपि = स्खलिताक्षर होने पर भी, अटद्यमानमपि = पूर्वापर सम्बन्ध से रहित होने पर भी, आम्रेडयमानमपि = बार-बार दुहराया हुआ होने पर भी, अदर्शित-रागविशेषमपि = किसी विशेष राग से रहित होने पर भी, आरोहावरोह-ध्रुवाभोगलङ्कारादि-कथा-शून्यमपि = आरोह अवरोह, ध्रुव, राग विस्तार एवं अलकार आदि के तत्व से रहित होने पर भी, निज कल्पना मात्रम् = केवल अपनी कल्पना मात्र, तद्देशीय ग्राम्यस्त्री गानानुकल्पम् = उस प्रान्त की ग्राम्य स्त्रियों के गाने के समान, सुदीर्घ स्वर रगानं गानमिद = ऊँची आवाज में गाया हुआ यह गीत, परम सरमं = अत्यन्त सरस परममधुरं = अत्यन्त मधुर, परमहारि च आसीत् = अत्यन्त हृदयहारी था।

रघुवीर सिंहस्तु = रघुवीर सिंह, स्वरालाप श्रवणेनैव = उस स्वर लहरी के सुनते ही, परवशः = परवश होकर, एनां विलोक्य = इस लड़की को देखकर, कोऽहम् = मैं कौन हूँ, क्वाहम् = मैं कहाँ हूँ, कोयम् = यह कौन है, किमिदम् = यह क्या है, इत्यखिलं = इत्यादि सारी बातों को, यौगपद्येनैव विसस्मार = एक साथ ही भूल गया, अहो आश्चर्यम् = अहो आश्चर्य है, य एष = जिसने, फणि-फणा फूत्कारेष्वपि = सर्पों के फनों की फुंफकारों से भी, सक्रोध हर्यक्ष-जृम्भारम्भेष्वपि = क्रुद्ध सिंहों की जमुहाई के समय भी, भल्ल-तल्लजाग्र-परिस्पर्धि-खर-नखर-भल्ल धावनेष्वपि = श्रेष्ठ भालो की नोक के समान तेज नाखून वाले रीछों

के दौड़ने के समय भी, घन-वनाघन–घर्षण–विघट्टित-गैरिक-व्रात-जल-प्रपात-गिरि-गह्वारोत्फलिष्वपि = घन बरसते हुये बादलों के घर्षण से विदलित एवं गेरू मिले पत्थरों पर गिरती हुई जल धाराओं वाली पहाड़ी गुफाओं में कूदने में भी, तरलतर-तरङ्ग–तोयावर्त-शत-कुल-तरंगिणी-तीव्रतरवेगेष्वपि = चंचल तरंग वाले जल में सैकड़ों भँवरों से भरी हुई नदियों के तीव्रतर वेग में भी, गण्डक-मण्डल-घोणा-घर्षण-घोर घर्घरा घोष घोरतर प्रान्तरेष्वपि = गैंडों के नाकों के घर्षण से उत्पन्न भयंकर घर्घर शब्द के कारण भयानक तथा दूर तक फैले शून्य मार्गों में भी. धैर्यं नात्याक्षीत् = धैर्य नहीं छोड़ा, कार्यं जातं न व्यस्मार्षीत = अपना काम नही भुलाया आत्मानं च न न्यक्कार्षीत् = अपने को पतित नहीं किया तस्य = उसी के, अधुना = इस समय, अंगानि स्विद्यन्ति = अंग पसीने से तर हो रहे हैं, गात्रयष्टिः एतते = शरीर कांप रहा है, विमनायते हृदयं = मन खिन्न हो रहा है, अञ्चन्ति रोमाणि = रोमाञ्च हो रहा है. क्षुभ्यति च मनः = मन क्षुब्ध हो रहा है, तद् कथमिदम् = को यह कैसे ? किमिदम् = यह क्या है. कुतइदम्—यह कहां से है. अहह सत्यम्—ओह सच है, वीर बालोऽपि—वीर बालक को भी, प्राप्यावसरं—मौका पाकर, मदन-मृगयुना—शिकारी कामदेव ने, आहतः =घायल कर दिया है ।

हिन्दी—

यद्यपि सरस्वती के समान रूप वाली और पिता की गोद में सोने के अतिरिक्त सांसारिक सुख को न जानने वाली इस लड़की ने न तो कभी गाना ही सीखा था और न गायकों की कानों को तृप्त करने वाली स्वर-लहरियों को ही सुना था । फिर भी स्खलिताक्षर होने पर भी, [illegible] रहित होने पर भी, बार-बार दुहराये जाने पर भी, राग विशेष से रहित होने पर भी, आरोहावरोह, ध्रुव, राग विस्तार एवं अलंकार आदि से रहित होने पर भी, केवल अपनी कल्पना मात्र, उपसान्त की ग्राम्य स्त्रियों के गाने के समान, ऊंची आवाज में गाया

हुआ वह गीत अत्यन्त सरस, अत्यन्त मधुर, एवं अत्यन्त हृदय हारी था।

रघुवीर सिंह तो उसे सुनते ही परवश होकर, उस लड़की को देखकर, मैं कौन हूँ ? मैं कहाँ हूँ ? यह कौन है ? यह क्या है ? इत्यादि सारी बातों को एक साथ ही भूल गया। अहो आश्चर्य है। जिसने सर्पों के फनों की फुंफकार में भी, क्रुद्ध शेर की जमुहाई के समय भी, श्रेष्ठ भालों की नोकों के समान तेज नाखून वाले रीछों के दौड़ने के समय भी, घने बरसते हुए बादलों के वर्षण से विदलित गेरू मि। पत्थरों पर गिरती हुई जल धाराओं वाली पहाड़ी गुफाओं में कूदने में भी, अत्यन्त चंचल तरग वाले जल में सैकड़ों भंवरों से भरी हुई नदियों के तीव्रतर वेग में भी, गैंडों के नाकों के घर्षण से उत्पन्न घोर घर्र शब्द के कारण भयानक एवं दूर तक फैले हुये निर्जन मार्गों में भी धैर्य नहीं छोड़ा, अपना काम नहीं भुलाया, अपने को पतित नहीं किया. उस समय उसी के अंग पसीने से तर हो रहे हैं, मन खिन्न हो रहा है, रोमाञ्च हो रहा है, हृदय क्षुब्ध हो रहा है। यह कैसे ? यह क्या है ? ओह. सचमुच इस वीर बालक को भी मौका पाकर शिकारी कामदेव ने घायल कर दिया है।

तावदकस्माद् "रघुवीर ! रघुवीर ! त्वं शिववीरस्य चरोऽसि, गूढाभिसन्धिषु प्रेष्यसे, अल्पं तव वेतनम्, साधारणी तवावस्था, खड्ग-धारावलेहनमिव कष्टतरं तव कार्यम्, कैशोरं वयः, अबहुदर्शि हृदयम्, सर्वत्र जागरूको राजदण्डः, अवितर्कणीया च भाविनी घटना। तन्मा स्म त्वं मुखचन्द्रावलोकनैरधर-सीधु तृष्णाभिः कोमलाङ्गाऽऽलिलिङ्क्षाभिः, मधुरालाप-शुश्रूषाभिश्चाऽऽत्मानं विक्रीणीथा"-इत्यन्तःकरणेन स्वनेव प्रबोधितो नेत्रे प्रमृज्य, स्तम्भावष्टम्भं परिहाय, लोचनयोरुपरि स्फुरतः कुञ्चित-कचानपसार्य, शीतलं निःश्वस्य च, आत्मनो दशां स्मरन्निव

पुनस्तामेव कौमारात्परं वयश्चुचुम्बिषन्तीं कुसुम-कुड्मल घूर्णन-व्याजेन यूनां मनो घूर्णयन्तीं सौन्दर्य-सारावतार-स्वरूपामैक्षिष्ट ।

अथ सा तु "सौवर्णि ! सौवर्णि ! तातस्त्वामाकारयति"-इति कस्यापि वटोरिव वाचमाकर्ण्य, आम् ! एषा आगच्छामि"-इति मधुर-मुदीर्य, उत्थाय, वेदिकातोऽवतीर्य,वाटिकायामेव दक्षिणतः सुधा-धवल-मेकं गृहं प्राविशत् ।

रघुवीरसिंहस्य समीप त एव गतेति गमन-समये सचकित सगति स्तम्भं परिवृत्त-ग्रीव 'कोऽयम् ? इत्येनं क्षणमवलोकयाः मास । परतश्च "स्यात् कोयऽपि" इति समुपेक्ष्य गृहं प्रविष्टेत्यपरोऽपि जातो वशीकार-प्रयोग-प्रचारः ।

रघुवीरश्च ततः प्रतिनिवृत्य, पुनः स्वाधिकृत-कोण-कोष्ठ-मेवाऽऽयातः ।

श्रीधरी—तावदकस्मात्=तभी अचानक, रघुवीर-रघुवीर : = रघुवीर-रघुवीर, त्व=तुम, शिववीरस्य चरोऽसि=शिवाजी के गुप्तचर हो, गूढ़ाभिसन्धिषु=गुप्त कार्यो में,प्रेष्यसे भेजे जाते हो, अल्पं तव-वेतनम्=तुम्हारा थोड़ा वेतन है, साधारणी तवावस्था=तुम्हारी स्थिति साधारण है, खड्गधारावलेहनमिव कष्टतरं तव कार्यम्=तल-वार की धार को चाटने के समान तुम्हारा कार्य कठिन है, कैशोर वयः =तुम्हारी अवस्था अभी किशोर है, अबहुदर्शी हृदयम्=अल्पदर्शी हृदय है, सर्वत्र जागरूको राजदण्डः=राजदण्ड सर्वत्र सतर्क रहता है, अवितर्कणीया च भाविनी घटना=भविष्य की घटनायें अवितर्क्य हैं, तद्=इसलिये, त्वम्=तुम मुखचन्द्रावलोकनै.=मुख चन्द्र के अवलो कन से, अधर-सीधुतृषाभिः=अधर-वारुणी को पीने की तृष्णा से, कोमलाङ्गालिलिङ्गिषाभिः=कोमल अगों को आलिगन करने की इच्छा से, मधुरालाप-शुश्रूषायिश्च=मधुर शब्दों को सुनने की आकांक्षा से, आत्मानं अपने को, मा विक्रीणीष्व=मत बेंचो, इति =इस प्रकार, अन्तः करणेन=स्वयमेव प्रबोधित=अन्तःकरण

ने उद्बुद्ध होकर, नेत्रे प्रमृज्य=आँखों को पोंछ कर, स्तम्भावष्टम्भंपरिहाय=खम्बे के सहारे को छोड़कर, लोचनमोरुपरि=आँखों के ऊपर, स्फुरतः=लहराते हुये, कुञ्चित कचानपसार्य=घुंघराले बालों को हटाकर, शीतल निःश्वस्य च=ठण्डी सांस लेकर, आत्मनो दशां स्मरन्नेव=अपनी स्थिति का स्मरण करता हुआ सा, पुनः=फिर, तामेव=उसी, कौमारात्पर वयश्चुचुम्बिषन्तीं=युवावस्था को छूने की अकांक्षिणी, कुसुम कुड्मल घूर्णनव्याजेन=पुष्पकली को घूरने के बहाने, यूनां मनोघूर्णयन्तीं=युवकों के मन को घूरती हुई, सौन्दर्य सारावतार स्वरूपां=सौन्दर्य की अवतार स्वरूप, सैक्षिष्ट=उस कन्या को निहारनेलगा।

अथ सा तु=और वह तो, सौवर्णि ! सौवर्णि ! तातस्त्वामाकारयति=सौवर्णी ! सौवर्णी ! पिता जी तुम्हें बुला रहे है, कस्यापि बटोरिव वाचमाकर्ण्य=किसी बच्चे की जैसी आवाज सुनकर, आम्, एषा आगच्छामि=अच्छा आ रही हूं, इति=इस प्रकार, मधुर मुदीर्य=मीठे स्वर से कहकर, उत्थाय=उठकर, वेदिकातोऽवतीर्य=चबूतरे से उतर कर, वाटिकायामेव=बगीचे में ही, दक्षिणतः=दक्षिण की ओर स्थिति, सुधाधवल मेकं गृह प्राविशत्=एक चूने से पुते हुये घर में प्रविष्ट हो गई। रघुवीर सिंहस्य समीपत एव=रघुवीर सिंह के पास से ही, गता=गई, इति=इस लिये, गमन समये=जाते समय, सचकितं=चकित होकर, सगतिस्तम्भं=रुककर, परिवृत्तग्रीवं=गरदन को घुमाकर, कोऽयं=यह कौन है, इति=इस प्रकार, क्षणमवलोकयामास=क्षण भर उसे देखा, परतश्च=बाद में, स्यात् कोऽपि=होगा कोई, इति समुपेक्ष्य=इस तरह उसकी उपेक्षा करके, गृहं प्रविष्टा=घर में चली गई, इति अपरोऽपि=यह दूसरा, वशीकार प्रयोगप्रचारः जातः=उसके लिये वशीकरण का अनुष्ठान हो गया, रघुवीरश्च=रघुवीर सिंह, ततः=फिर प्रतिनिवृत्य=लौटकर, पुनः=फिर,

स्वाधिकृत-कोण-कोष्ठमेवाऽऽयातः=अपने अधिकार में स्थित कोने के कमरे में ही आ गया ।

हिन्दी—

तब तक अचानक रघुवीर ! रघुवीर ! तुम महाराज शिवाजी के गुप्तचर हो। गुप्त कार्यों में भेजे जाते हो, तुम्हारा वेतन थोड़ा है। तुम्हारी स्थिति साधारण है, तलवार की धार को चाटने के समान तुम्हारा कार्य कठिन है। तुम्हारी अवस्था अभी छोटी है, हृदय अल्प-दर्शी है, राजदण्ड सर्वत्र ही जागरूक रहता है और भविष्य कल्पना अवितर्क्य है। अतः तुम मुख चन्द्र के अवलोकन से, अधर-मदिरा की प्यास से कोमल अंगों को आलिङ्गन करने की अभिलाषा से तथा मधुर शब्दों को सुनने की इच्छा से अपने को मत बेचो, अर्थात् इन आकांक्षाओं के दास मत बनो। इस प्रकार अन्तःकरण से स्वयं ही अपने को समझाकर, आँखों को पोंछ कर उसको देखने से उत्पन्न जड़ता को छोड़ कर आँखों पर लहराते हुये बालों को हटाकर, ठन्डी सांस लेकर, अपनी हालत को याद करते हुये फिर एक बार उस यौवन का स्पर्श करने की आकांक्षिणी फूल की कली को घुमाने के बहाने नव युवकों के मन को घुमाने वाली, सौन्दर्य की अवतार कन्या को देखने लगा।

और वह, सौवर्णि ! सौवर्णि ! पिता जी तुम्हें बुला रहे हैं। इस प्रकार किसी बच्चे की सी आवाज को सुनकर, अच्छा, यह आई, ऐसा मधुर स्वर में कहकर उठकर, और चबूतरे से उतर कर, बगीचे में ही दक्षिण की ओर स्थित एक चूने से पुते हुए घर में प्रविष्ट हो गई। वह रघुवीर सिंह के पास से ही गई। उसने उसे कुछ चौक कर, कुछ रुक कर, गर्दन घुमाकर यह कौन है ? इस प्रकार थोड़ी देर रघुवीर सिंह को देखा, फिर होगा कोई, इस तरह उसकी उपेक्षा सी करके घर में चली गई। उसकी इस प्रकार की उपेक्षा उस युवक के लिये वशीकरण के दूसरे प्रयोग के समान हो गई।

तत्र च गवाक्ष-जाल-प्रसारितैः राजत-मार्जनी-निभैः कला-निधि-कर-निकरैः समूह्य संशोधित इवान्धकारे; पयः-पयोधि-फेनैरिवाऽऽस्तृते शयनीय-पीठे उपविश्य, कदाचिदध इव मुखं विदधत्, कदाचित् कपोलं करे कलयन्, कदाचिज्जालान्तरेण तारकमण्डलमवलोकयन्, कदाचित्किमिति मृषा-चिन्तनैरित्यात्मनैवाऽऽत्मानं सान्त्वयन्, कदाचिच्च 'निद्रे ! कुत इव विद्रुताऽसि ?' इत्यशान्तिं बिभ्रत्, पार्श्वे ! परिवर्त्तमानो होरामेकामयापयत् ।

ततश्च "अहह ! शिववीरकार्येष्वसम्पादितमेकमवशिष्यते" इति किञ्चित् संस्मृत्येव, कशयेव ताडितः सपद्युत्थाय 'मन्दिर पुरोहितः क्व ? इति कांश्चिदापृच्छ्य, केनचिन्निर्दिष्टमार्गस्तस्यामेव वाटिकायां तदेव बालिकया प्रविष्टचरं गृहं प्रविवेश ।

तत्र चैकस्मिन् प्रकाण्ड-कोष्ठे निरैक्षिष्ट यद् एकस्यामारकूट दीपिकायां प्रदीप एको ज्वलति, कुश-काशासनान्यनेकानि आस्तृतानि, आरक्त-वेष्टनेषु बहुशः पुस्तकानि पीठिका अधिष्ठापितानि, नागदन्तिकासु धौत वस्त्राणि पट्टाम्बराणि च लम्बन्ते, एकस्मिन् शरावे मसीपात्रम्, लेखनी, छुरिका, गैरिकम्, उपनेत्रं चाऽऽतोजितमस्ति । पात्रान्तरे च खादिरं चूर्णम्, आर्द्र-वस्त्र-वेष्टितानि नागवल्लीदलानि, पूगानि, शंकुला, देवकुसुमानि, एलाः, जाति-पत्राणि, कर्पूरं च विन्यस्तमस्ति । तन्मध्यत एव च महोपबर्हमेक पृष्ठत आश्रित्य पादौ प्रसार्य उपविष्ट एको वृद्धः सम्मुखस्थश्च छात्र एकः पादौ संवाहयति, अपरश्च किश्चत् तालीपत्र-पुस्तक दीप-समीपे पठति, वृद्धश्च किञ्चिन्निद्रा-मन्थरश्छात्र-प्रश्नानुसारेण मध्ये मध्ये आलस्यमुन्मुच्य, किमप्यर्द्ध-विशिथिल-शब्दैरुत्तरयति-इति ।

श्रीधरी—तत्र च=और वहाँ, गवाक्ष-जाल-प्रसारितैः=खिड़कियों की जाली से प्रविष्ट हुई, राजत मार्जनीनिभैः=चाँदी की झाड़ू

के समान, कलानिधि-कर-निकरैः=चन्द्रमा की किरणों के समूह से समूह्य=इकट्ठा करके, संशोधित इवान्धकारे=अन्धकार के साफ सा कर दिये जाने पर, पयः-पयोधि-फेनैरिवाऽऽस्तृते शयनीय पीठे=क्षीर सागर के झाग के समान स्वच्छ बिछे हुये विस्तर पर, उपविश्य=बैठ-कर. कदाचिदध इव मुख विदधत्=कभी नीचे की ओर मुख करता हुआ, कदाचित् कपोल करे कलयन्=कभी हाथ पर गाल रखता हुआ, कदाचित् जालान्तरेण तारकमण्डलमवलोकयन्=कभी जाली के भीतर से तारों को देखता हुआ, कदाचित्=कभी, किमिति मृषा चिन्तनैः= इस तरह व्यर्थ सोचने से क्या लाभ, इति=इस प्रकार, आत्मनैवाऽऽत्मानं सान्त्वयन्=अपने को अपने आप ही समझाता हुआ. कदाचित्=कभी, निद्रे, कुत्र इव विद्रुताऽसि:=निद्रे तू कहाँ चली गई, इत्यशान्ति बिभ्रत, =इस प्रकार अशान्त होता हुआ, पार्श्वतः पार्श्वे=इधर से उधर, परिवर्तमानो=करवटें बदलता हुआ, होरामेकामयापत=उसने एक घण्टा व्यतीत किया।

ततश्च=इसके बाद, अहह शिववीर-कार्येष्वसम्पादितमेकमव-शिष्यते=ओह. शिवाजी के कार्यों में एक बाकी ही रह गया, इति= इस प्रकार, किञ्चित्सस्मृत्येव=कुछ याद सा करके, कशयेव ताडितः= कोड़े से प्रताड़ित सा, सपद्युत्थाय=जल्दी उठ कर, मन्दिर पुरोहितः क्व = मन्दिर के पुजारी कहाँ हैं, इति-काश्चिदापृच्छ्य=इस बात को किन्हीं लोगों से पूछ कर, केनचिन्निर्दिष्टमार्गः=किसी के द्वारा मार्ग दिखाये जाने पर, तस्यामेव वाटिकायां=उसी बगीचे में, तदेव बालिकया-प्रविष्टचर=जिसमें पहले वह लड़की गई थी, गृहं=उसी घर में, प्रवि-वेश=प्रविष्ट हो गया।

तत्र च=वहाँ, एकस्मिन् प्रकाण्ड कोष्ठे=एक बड़े कमरे में, निर्-दिक्षिष्ट=उसने देखा, यद्=कि, एकस्यामारकूट दीपिकायां एक=पीतल के दीयट में, प्रदीप एको ज्वलति=एक दीपक जल रहा है, कुश-काशा-

मनानि=कुश और कांस के आसन, आस्तृतानि=बिछे हुये हैं. आरक्त-वेष्टनेषु=लाल कपड़े के वेष्ठन में. बहुशः पुस्तकानि=बहुत सी पुस्तकें, पीठिकाअधिष्ठापितानि=चौकियों पर रखी हुई हैं, नागदन्तिकासु=खूंटियों पर, धौत वस्त्राणि=धुले हुये वस्त्र, पट्टाम्बराणि लम्बन्ते=दुपट्टे लटक रहे हैं, एकस्मिन् शरावे=एक प्याले में, मसीपात्रम्=दवात, लेखनी=कलम, छुरिका=चाकू, गैरिकम्=गेरू, उपनेत्रम्=चश्मा, च आयोजित मस्ति=रखा हुआ है, पात्रान्तरे=दूसरे वर्तन में, खादिर चूर्णम्=कत्था. आर्द्रवस्त्र वोष्टितानि=गीले कपड़े में लपेटे हुए, नागवल्लीदलानि=पान. पूगानि=सुपारी, शंकुला=सरौता, देव कुसुमानि=लौंग, एलाः=इलायची, जाति पत्राणि=मालती के पत्ते, कर्पूरं च विन्यस्तमस्ति=रखा हुआ है. तन्मध्यएव=उनके बीच में ही, महोपर्हमेकं=एक बड़े मसनद पर. पृष्ठमाश्रित्य=पीठ टिकाये हुये, पादौ प्रसार्य=पैरों को फैलाकर, एकः वृद्धः उपविष्टः=एक वृद्ध बैठे हुये हैं. सम्मुख स्थश्च छात्र एकः=सामने बैठा एक छात्र. पदौ सम्वाहयदि=पैर दबा रहा है. अपरश्च=दूसरा, किञ्चित् तालीपत्र पुस्तक=किसी ताड़ पत्र पर लिखी हुई पुस्तक को. दीप समीपे पठति=दीपक के पास पढ़ रहा है. वृद्धश्च=वृद्ध भी, किञ्चित् निन्द्रामन्थर=कुछ नींद के वशीभूत होकर, छात्रप्रश्नानुसारेण=छात्र के पूछने के अनुसार, आलस्यमुन्मुच्य=आलस्य छोड़कर, किमपि अर्द्ध विशिथिल शब्दैरुत्तरयति टूटे फूटे शब्दों में उत्तर दे रहा हूँ।

हिन्दी—

और वहाँ पर खिड़कियों की जाली से प्रविष्ट चाँदी की झाड़ू के समान चन्द्रमा की किरणों से इकट्ठा करके अन्धकार के साफ सा कर दिये जाने पर क्षीर सागर के फेन की तरह बिछे हुए बिस्तर पर बैठकर कभी नीचे की ओर मुँह करता हुआ, कभी हाथ पर गाल रखता हुआ, कभी जाली के भीतर से तारामण्डल को देखता हुआ,

कभी इस प्रकार सोचने से क्या लाभ ? इस प्रकार स्वयं अपने को ही समझाता हुआ, कभी निद्रे ! तू कहां चली गई, इस प्रकार अशान्त होता हुआ इधर से उधर करवट वदलता रहा। इस प्रकार एक घण्टा व्यतीत हो गया।

इसके वाद- अरे, शिवाजी के कार्यों में एक अभी रह ही गया, इस तरह कुछ याद सा करके, रघुवीर सिंह कोड़े से प्रताड़ित सा एक दम उठकर मन्दिर के पुजारी जी कहाँ हैं ? इस तरह कुछ लोगों से पूछ कर, किसी के द्वारा मार्ग वतलाये जाने पर, उसी वगीचे में, जिसमें पहले वह रुकी गई थी, उसी घर में प्रविष्ट हो गया। वहाँ पर एक वड़े कमरे में उसने देखा कि पीतल के दीयट पर एक दीपक जल रहा है। कुश और काश के अनेक आसन विछे हुए हैं। रक्त वस्त्रों में लिपटीं वहुत सी पुस्तकें चौकियों पर रखी हुई हैं, खूँटियो पर धोती और दुपट्टे लटक रहे हैं एक प्याले में दवात, कलम, चाकू, गेरू, और चश्मा रखा हुआ है। दूसरे पात्र में कत्था चूना, गीले कपड़े में लपेटे हुए पान, सुपारी, सरौता लौंग, इलायची, मालती के पत्ते रखे हुए है : उनके बीच में ही एक वड़े मसनद पर पीठ टिकाये हुए पैरों को फैलाये हुए एक वृद्ध वैठे हुए हैं, सामने वैठा हुआ एक छात्र उनके पैर दवा रहा है और दूसरा छात्र ताड़पत्र पर लिखी हुई किसी पुस्तक को दीपक के पास पढ़ रहा है। वृद्ध व्यक्ति कुछ नींद के वशीभूत होकर छात्र के प्रश्न के अनुसार वीच वीच में आलस्य छोड़ कर टूटे फूटे शब्दों में कुछ उत्तर दे रहे हैं।

अथ न पाद-सवाहन-परश्छात्रोऽवलोक्य 'को भवान्' इत्य पृच्छत्। एष च श्रीमतां समर-विजयिनां महाराष्ट्र-राजानां भृत्योऽस्मि" इति मन्दाम्यधात्। तदवधार्य वृद्धोऽपि नेत्रे विस्फार्य निद्रासन्थरेण स्वरेण 'आस्यतामास्यताम्" इति प्रणमन्तमुवाच। सोऽपि प्रणम्य, समुपविश्य, दत्त-निज-परिचयः, कुशलादि-वार्त्ता आलप्य, क्षणानन्तरं तदादेशानुसारेण करौ सम्पुटीकृत्य न्यवेदयत्—

"भगवन् ! प्रणम्य भवन्तं तत्रभवान् महाराष्ट्र-राजः कथयति यत्-साम्प्रतं शाहिस्तखान-द्वारा पुण्यनगरमधिष्ठितवता दिल्लीश्वरेण सह योद्धुमुपक्रान्तमस्मि, परमल्पीयसी मम सेना, अस्मद्योगिनः पार्श्वस्थ-पृथिवीपतयः, श्रृङ्ग-वङ्ग कलिङ्गेष्वपि समुद्धूत-ध्वजाः परिपन्थिनः, शैशवादेव यवनवराकैर्महाप्रवृद्धं मम वैरम्, स्वप्नेऽपि कथा-मात्रमपि न सन्धोभवीति, यद्यप्यपरेऽपि मामका युद्ध-विद्यासु कुशलाः सन्ति; तथाऽपि किं भावीति मध्ये मध्ये सशेते हृदयम्, भवांस्तु प्रसिद्धोऽस्मद्देशे दैवज्ञः तद् विचार्य कथ्यतां किं भावि ?" इति ।

तदवगत्य, पादावाकुञ्चय "विजयतां शिवराजः" इत्यभिधाय, ताम्बूल-वीटिकां रचयितुं छात्रमेकमिङ्गितेनाऽऽदिश्य, पृष्ठस्थद्वाराभिमुखं ग्रीवां परिवर्त्य, "वत्से ! सौवर्णि ? वत्से ! सौवर्णि !" इत्याकार्य, "इयमस्मि तात !" इत्यागतां च तां वत्से ! तासां यूथिकामालिकानामेकां मालां प्रसाद-मोदकं चैवमानय"-इत्यभिधाय, बाढमित्युक्त्वा तथा विहितवत्यां च तस्याम्, रघुवीराभिमुखं "गृहाण कुरुष्वेद प्रसाद-मधुरान्न निद्रामनुसर, यादृशं च स्वप्नमवलोकयितासि; तथा प्रातरेव मां कथयितासि, व्येति रजनी, तद् गच्छ शेष्व" इत्युदीर्य समागतां सौवर्णीमेव मोदकमर्पयितुं मालां च कण्ठे निक्षेप्तुमिङ्गितवान् ।

श्रीधरी—अथ=इसके बाद, पादसंवाहनच्छात्रः=पैर दवाने वाले छात्र ने, एनं अवलोक्य=इस रघुवीर सिंह को देखकर, को भवान् इत्यपृच्छत्=आप कौन हैं, यह पूछा, एष च=मैं समर विजयिनां=समर विजयी, श्रीमतां महाराष्ट्रराजानां=महाराष्ट्र के महाराज का, भृत्योऽस्मि=सेवक हूँ, इति=इस प्रकार, मन्दमभ्यधात्= धीरे से कहा, तदवधार्य=यह सुनकर, वृद्धोऽपि=वृद्ध ने भी, नेत्रे विस्फार्य=आँखों को फैलाकर, निद्रामन्थरेण स्वरेण=निद्रा-मन्थर स्वर से, प्रणमन्त=प्रणाम करते हुए, आस्यतां मान्यताम्=बैठिये-

बैठिये, इति उवाच=इस प्रकार कहा, सोऽपि=उसने ने भी, प्रणम्य= प्रणाम करके, समुपविश्य=बैठकर, दत्तनिज परिचयः=अपना परिचय देकर, कुशलादिवार्ता आलप्य=कुशल आदि की बात करके, क्षणानन्तरं =थोड़ी देर बाद, तदादेशानुसारेण=वृद्ध की आज्ञानुसार, करौ सम्पुटीकृत्य न्यवेदयत्=हाथ जोड़कर निवेदन किया।

भगवन् भवन्तं प्रणम्य=भगवन् आपको प्रणाम करके, तत्र भवान् महाराष्ट्रराज. कथयति=माननीय महाराज शिवाजी कहते है, यत्=कि, साम्प्रत=इस समय, शाइस्त खान द्वारा=शाइस्त खां के द्वारा, पुण्यनगरमपि हस्तगतवता=पूना नगर को हथयाने वाले, दिल्लीश्वरेण सह=दिल्लीश्वर के साथ. योद्धुमुपक्रान्तमस्ति=युद्ध छिड़ गया है, परम=लेकिन, अल्पीयसी अस्मत्सेना=हमारी सेना थोड़ी है, पार्श्वस्थ पृथ्वीपतय.=पड़ौसी राजा लोग, असहयोगिनः= साथ नही दे रहे हैं, अङ्ग, वङ्ग कलिङ्गेष्वपि समुद्धूत ध्वजाः परिपन्थिनः=शत्रु लोग अंग वंग और कलिंग देश में अपनी पताका फहरा चुके है, शैशवादेव=बचपन से ही, यवन वर्कै=मुसलमानो के साथ मम वैरं महाप्रवृद्धम्=मेरा वैर बढ़ता गया, सन्धेश्च कथा मात्रमपि न सम्भवति=सन्धि की बात भी सम्भव नही, यद्यपि=यद्यपि, अल्पेऽपि=थोड़े होने पर भी, मामका=हमारे लोग, युद्धविद्यासु कुशलाः सन्ति=युद्ध विद्या मे निपुण हैं, तथापि=तो भी, किं भावी= क्या होगा, इति=इस प्रकार मध्ये मध्ये=बीच बीच में, संशेते हृदयम्=मेरा हृदय सन्देह करता है, अस्मद्देशे=हमारे देश में, भवांस्तु =आप तो, प्रसिद्धो दैवज्ञः=प्रसिद्ध ज्योतिषी हैं. तद्=इसलिये, विचार्य कथ्यतां=विचार कर बताइये, किं भावि=क्या होगा।

तदवगत्य=यह जानकर, पादावाकुञ्च्य=पैरों को सिकोड कर. विजयतां शिवराज=महाराज शिवाजी की जय हो, इत्यभिधाय =यह कहकर, छात्रमेक=एक छात्र को, ताम्बूल वीटिकां रचयितुं =

पान का बीड़ा बनाने के लिये, इङ्गितेनादिश्य = इशारे से आदेश देकर, पृष्ठस्य द्वाराभिमुखं = पीछे के दरवाजे की ओर, ग्रीवां परिवर्त्य = गर्दन घुमा कर, वत्से सौवर्णि, वत्से सौवर्णि = बेटी सौवर्णी, बेटी सौवर्णि, इत्या कार्य = इस प्रकार पुकार कर, इयमस्मि तात = आई पिताजी, इत्यागतां च तां = यह कहकर उसके आने पर, वत्से = बेटी, तासां-यूथिका मालिकानां = उन जुही की मालाओं में से, एकां मालां = एक माला, एक प्रसाद मोदक आनय = और एक प्रसाद का लड्डू ले आओ, इत्यभिधाय = ऐसा कहकर, बाढ़मित्युक्त्वा = बहुत अच्छा, ऐसा कहकर, तथा विहित वत्यां च तस्यां = उस के वैसा करने पर, रघुवीरा-भिमुख = रघुवीर की ओर मुख करके, गृहाण = लो, इदं प्रसाद मधुरान्न मुक्त्वा = इस प्रसाद के मधुरान्न को खाकर, निद्रामनुभव = सो जाओ, यादृशं च स्वप्नमवलोकितासि = जैसा स्वप्न देखोगे, तथा, प्रातरेव मां कथयितासि = वैसा सवेरे मुझसे कहना, व्येति रजनी = रात बीत रही है, तद् गच्छ = इसलिये जाओ, शेष्व = सो जाओ, इत्युदीर्य = ऐसा कहकर, समागतां सौवर्णिमेव = आई हुई सौवर्णी को ही, मोदक पुर्यर्पितुं = लड्डू देने, मालां च कण्ठे निक्षेप्तुं = और माला पहनाने के लिये, इङ्गितवान = इशारा किया।

हिन्दी—

इसके बाद पैर दबाने वाले विद्यार्थी ने रघुवीर सिंह को देख कर, आप कौन हैं ? यह कहा। मैं समर विजयी महाराज शिवाजी का सेवक हूँ, उसने धीरे से कहा। यह सुनकर वृद्ध ने भी आँखों को खोल-कर निद्रामन्थर स्वर से प्रणाम करते हुए कहा—बैठिये, बैठिये। रघुवीर सिंह ने प्रणाम करके, बैठकर अपना परिचय देकर, कुशल–क्षेम पूछकर, थोड़ी देर बाद वृद्ध की आज्ञा से हाथ जोड़ कर निवेदन किया—

श्रीमन् ! आपको प्रणाम करके माननीय महाराज शिवाजी ने कहा है कि इस समय शाइस्त खाँ के द्वारा पूना नगर का हस्तगत कर लेने वाले दिल्लीश्वर के साथ हमारा युद्ध छिड़ गया है। किन्तु हमारी सेना थोड़ी हैं और पड़ोसी राजा लोग सहयोग नहीं कर रहे हैं। अंग, वंग और कलिंग देश में शत्रुओं ने अपनी पताका फहरा दी है। बचपन से ही इन मुसलमानों के साथ हमारा वैर बढ़ता आया है, सन्धि की बात भी सम्भव नहीं है। यद्यपि थोड़े होने पर भी हमारे लोग युद्ध विद्या में निपुण हैं. फिर भी क्या होगा ? यह विचार मेरे मन को बीच बीच में शङ्कित कर देता है। आप हमारे राज्य के विख्यात ज्योतिर्विद् हैं। अतः विचार करके बताइये कि—क्या होगा ?

यह जानकर, पैरों को समेट कर, महाराज शिवाजी की जय हो', यह कहकर, पान लगाने के लिये इशारे से एक विद्यार्थी को आदेश देकर, पीछे के द्वार की ओर गर्दन घुमाकर, बेटी सौवर्णी, बेटी सौवर्णी ! कहकर कन्या को आवाज देकर आई पिताजी यह कहकर उसके आ जाने पर. उससे बेटी ! उन जूही की मालाओं में से एक माला और एक प्रसाद का लड्डू ले आओ, ऐसा कहकर. बहुत अच्छा, यह कहकर, उसके वैसा कर लेने पर रघुवीर सिंह की ओर मुख करके—लो इस प्रसाद के लड्डू को खाकर सो जाओ. जैसा स्वप्न देखना, वैसा सवेरे मुझे बताना। रात बीत रही है, जाओ सो जाओ। यह कहकर वृद्ध ने सौवर्णी को ही लड्डू देने और माला पहनाने का संकेत किया।

सा चावलोक्य तमेव पूर्वावलोकितं युवानम्, व्रीडा—भर-मन्थराऽपि ताताज्ञया बलादिव प्रेरिता ग्रीवां नमयन्ती, आत्मनाऽऽत्मन्येव निविशमाना, स्वपादाग्रमेवाऽऽलोकयन्ती, मोदक भाजन-सभाजितं सव्येतर-करं तदग्रे प्रासारयत्। स चाऽऽत्मनो भावं कष्टेन सवृण्वंस्तद्धस्तादुदत्त लुलत्। पुनश्च सा अञ्चलकोणं कटि-कच्छ-प्रान्ते आयोज्य, हस्ता-

भ्यां मालिकां विस्तार्य नत-कन्धरस्य रघुवीरस्य ग्रीवायां चिक्षेप, ईषत्कम्पित-गात्रयष्टिश्च शनैर्यथागतं निववृते ।

सैवेयं गौर-श्याम-सिंहयोरनुजा सौवर्णी; या शैशव एव यवन-तनयेनापहृता; यस्याश्च वास्तविकं नाम कोशलेति, स चायं देवशर्मा ब्राह्मणः, यो गौरसिंहस्य कुल-पुरोहितः कोशलायाश्च रक्षकः ।

श्रीधरी—सा च=उसने, तमेव=उसी, पूर्वावलोकित युवानं अवलोक्य=पहले देखे हुए युवक को देखकर, व्रीडाभर-मन्थरापि=लज्जा के भार से धीरे चलती हुई भी, ताताज्ञया=पिता की आज्ञा से, बलादिव प्रेरिता=बल पूर्वक प्रेरित की गई, ग्रीवां नमयन्ती=गर्दन झुकाती हुई, आत्मनाऽऽत्मन्येव निविशमाना=स्वयं ही अपने में सिमटती हुई सी, स्वपादाग्रमेवाऽऽलोकयन्ती=अपने पैर के अग्र भाग को देखती हुई, मोदक भाजन सभाजितं=लड्डू के पात्र से सुशोभित, सव्येतरं करं=दाहिने हाथ को तदग्रे प्रासारयत्=उसके आगे बढ़ाया, स च=रघुवीर सिंह ने भी, आत्मनो भावं=अपने मनो भाव को, कष्टेन=कठिनाई से, संवृण्वन्त=छिपाते हुए, तद्धस्तादुदत-तुलत्=उसके हाथ से उसे लिया, पुनश्च सा=फिर उसने, अञ्चल कोणं=अपने आंचल के कोने को, कटि-वस्त्र प्रान्ते आयोज्य=कमर में खोंस कर, हस्ताभ्यां=हाथों से, मालिकां विस्तार्य=माला को फैला कर नतकन्धरस्य=सिर झुकाकर, रघुवीरस्य-ग्रीवायां =रघुवीर सिंह के गले में, चिक्षेप=डाल दी, ईषत्कम्पितगात्रयष्टिश्च थोड़ा सा शरीर हिला कर, शनैर्यथागतं निववृते=जैसे आई थी वैसे ही निववृते ।

सैवेयं=यही, गौर-श्याम सिंहयोरनुजा=गौर-श्याम सिंह की बहिन, सौवर्णी=सौवर्णी है, या=जो, शैशव एव=बचपन में ही, यवन तनये-नापहृता=यवन युवक हर ले गया, यस्याश्च=जिसका, वास्तविकं नाम=वास्तविक नाम कोशलेति=कोशला है । स चायं देवशर्मा

ब्राह्मणः=यह वही देव शर्मा ब्राह्मण हैं। यः गौरसिंहस्य कुल पुरोहितः =जो गौरसिंह के कुल पुरोहित। कोशलायाश्च रक्षकः=और कोशला के रक्षक हैं।

हिन्दी—

वह उसी पहले देखे हुये युवक को देख कर, लज्जा के भार से शनैः शनैः चलती हुई भी पिता की आज्ञा से बल पूर्वक प्रेरित की हुई, गरदन झुकाकर अपने आपको अपने में सिमेटती हुई सी, अपने पैरों के अग्रभाग को देखती हुई आगे बढ़ी और उसने लड्डू के पात्र से सुशोभित अपने दाहिने हाथ को आगे बढाया। रघुवीर सिंह ने कष्ट के साथ अपने मनोभावों को छिपा कर उसके हाथ से लड्डू ले लिया। फिर उसने आँचल के छोर को कमर में खोंस कर दोनों हाथों से माला को फैला कर, सिर झुकाये हुये रघुवीर सिंह के गले में पहना दी। थोड़ा सा अपने शरीर को हिला कर धीरे से, जैसे आई थी वैसे ही चली गई।

यही गौरसिंह और श्यामसिंह की छोटी बहिन सौवर्णी है जिसे बचपन ही में एक मुसलमान युवक हर ले गया था और जिसका वास्तविक नाम कोशला है। यही वह देव शर्मा ब्राह्मण हैं जो गौरसिंह के कुल पुरोहित और कोशला के रक्षक हैं।

ततः प्रणम्य, देवशर्म्मच्छात्रदत्तां वीटिकामादाय प्रतिनिवृत्य, रघुवीरोऽपि तथैव सुप्तः। को जानाति कोशलारघुवीरयोः काभिर्भावनाभिरघ्यतनी रजनी व्यत्येतीति।

अथोषस्येवोत्थाय नित्यकृत्यानि निर्वर्त्य, यावद्देवशर्म्मणः समीपमुपतिष्ठासते; तावद्दौर्गिक-दूतेनाऽऽकारितो दुर्गाध्यक्ष-मासाद्य, तद्दत्तं पत्रादिकं वाचनिक-सन्देशं चाऽऽदाय, पुण्यनगरमधिवसतः शारितखानस्य प्रवृत-वृत्तान्तं तत्प्रश्नानुसारं व्याहृत्य, निवृत्य, देवशर्म्माणं प्रणम्य, संक्षिप्य स्व-स्वप्न-वृत्तान्तमकथयत्, यद्—

"यथा मया प्रभुणा च खड्गः समुत्तोलितः, शास्तिखानश्च दृष्ट्वैवैतत्पलायितः" इति।

स चाङ्गुलिपर्वसु किमपि गणयित्वेव प्रोवाच यद् "यवनैः सह विजयः, आर्यैश्च पराजयः!"

पुनश्च त प्रणम्य, जिगमिषन्तमुवाच, यत्—

"तावद् बहिरेवोद्याने पर्य्यट, यावद् हनूमत्प्रसाद-सिन्दूर प्रेषयामि, यत्कृततिलको दुर्द्धर्षो भवति जनानाम्" इति।

श्रीधरी—ततः=उसके बाद, प्रणम्य=प्रणाम करके, देवशर्म्माच्छात्रदत्तां=देवशर्मा के छात्र द्वारा दिये गये, पीटिकामादाय=पान के वीड़े को लेकर, प्रतिनिवृत्य=लौटकर, रघुवीरोऽपि=रघुवीर सिंह भी तथैव सुप्तः=वैसे ही सो गया, को जानाति=कौन जानता है, कोशला रघुवीरयोः=कोशला और रघुवीर की, काभिर्भावनाभिः=किन भावनाओं से, अद्यतनी रजनी व्यत्येति=बीत रही है।

अथ=तत्पश्चात, उपस्येवोत्थाय=प्रातःकाल ही उठकर, नित्यकृत्यानि निर्वर्त्य=नित्य क्रिया से निवृत्त होकर, यावत्=जब तक, देवशर्मणः समीपमुपतिष्ठासते=देवशर्मा के पास जाना चाहता था, तावत्=तब तक, दौर्गिक दूतेन आकारितः=दुर्ग के दूत द्वारा बुलाये जाने पर, दुर्गाध्यक्ष मासाद्य=दुर्गाध्यक्ष के पास जाकर, तद्दत्तं=उनके दिये हुये, पत्रादिकं=पत्र आदि को, वाचनिक सन्देशंचाऽदाय=मौखिक सन्देश को लेकर, पुण्यनगरमधिवसतः=पूना स्थित, शास्तिखानस्य=शाइस्त खाँ का, प्रकृतवृत्तान्तं=वास्तविक वृत्तान्त को, तत्प्रश्नानुसारेण=उसके प्रश्नों के अनुसार बताकर, निवृत्य=लौटकर, देवशर्माणं प्रणम्य=देवशर्मा को प्रणाम करके, संक्षिप्य स्वस्वप्न वृत्तान्तमकथयत्=संक्षेप में अपने स्वप्न का वृत्तान्त कहा, यत्=कि, यथा मया प्रभुणा

च = ज्यों ही मैंने और महाराज ने, खड्गः समुत्तोलितः = खड्ग उठाया, शास्तिखानश्च = शाइस्त खाँ, दृष्टवैवेतत्पलायितः = देखकर ही भाग गया, स च = उन्होने, अंगुलिपर्वमु = अंगुलियों की पोरों पर, किमपि गणयित्वैव = कुछ गिन कर सा, प्रोवाच = बोले. यवनैः सह = मुसलमानों के साथ युद्ध में विजय होगी, आर्यैश्च पराजयः = हिन्दुओं के साथ युद्ध हो तो पराजय होगी, पुनश्च = फिर, तं प्रणम्य = उनको प्रणाम करके, जिगमिषन्तं = जाने के इच्छुक रघुवीर सिंह से, उवाच यत् = कहा कि, तावद् = तब तक, बहिर्वोद्याने = बाहर ही बगीचे में, पर्य्यट = टहलो, यावद् = जब तक, हनूमत्प्रसाद सिन्दूरं = हनूमान जी के प्रसाद का सिन्दूर, प्रेषयामि = भेजता हूँ, यत्कृत तिलको = जिसका तिलक लगा लेने पर मनुष्य, दुर्धर्षो भवति शत्रूणाम् = शत्रुओं के लिये दुर्धर्ष हो जाता है।

हिन्दी—

उसके बाद प्रणाम करके देवशर्मा के छात्र के द्वारा दिये हुये पान के बीड़े को लेकर, लौट कर रघुवीर सिंह भी वैसे ही सो गया। कौन जानता है कि कोशला और रघुवीर सिंह की आज की रात किन भावनाओं से बीत रही है ?

अनन्तर सवेरे उठ कर प्रातःकालीन नित्य क्रियाओं से निवृत्त होकर ज्यों ही वह देवशर्मा के पास जाना चाहता था त्यों ही दुर्ग के दूत के द्वारा बुलाये जाने पर दुर्गाधीश के पास जाकर, उनके दिये हुये पत्र आदि तथा मौखिक सन्देश को लेकर, पूना में स्थित शाइस्त खाँ के समाचार के उनके पूछने के अनुसार बताकर, लौटकर, देवशर्मा को प्रणाम कर रघुवीर सिंह ने संक्षेप में अपने स्वप्न का वृत्तान्त कहा कि—ज्यों ही मैंने और महाराज शिवाजी ने तलवार उठाई, त्यों ही शाइस्त खाँ उसे देखते ही भाग गया।

यह सुनकर, उँगली के पोरों पर कुछ गिनकर मा. देवशर्मा बोले—मुसलमानों के साथ युद्ध होने पर विजय होगी और हिन्दुओं के साथ युद्ध होने पर पराजय। फिर उन्होंने प्रणाम करके जाने के इच्छुक रघुवीर सिंह से कहा— थोड़ी देर बाहर बगीचे में टहलो, अभी हनूमान जी के प्रसाद का सिन्दूर भेजता हूँ, जिसका तिलक लगा लेने पर मनुष्य शत्रुओं के लिये दुर्धर्ष होता है।

स च तथेत्युक्त्वा बहिरागत्य पर्यटन् पूर्वेद्यु: सौवर्ण्या सनाथितां वेदिकां समायात:, स्मृतवांश्च पूर्वदिन-वृत्तान्तम्, अवालोकयच्च सौवर्ण्य-ध्युषित-चर पाषाण-मञ्चम्। तावन्निपुणं निरीक्ष्य दृष्टवान्—यदेका एक-यष्टिका मौक्तिकमाला तत्र पतिताऽस्तीति, ताञ्चोत्थाप्य तस्या एवेय-मिति निश्चित्य, तस्यै समर्पयामीति विचार्य इतस्ततश्चक्षुर्निचिक्षेप।

अथ व्यलोकयद्-यद् वाटिकायामेव कोशलाऽपि कदलीदल-पुटकमेकं वामकरे संस्थाप्य, दक्षिण-कर-पल्लवेन कुसुमपतङ्गान् उद्धूय कुसुमान्यवचिनोति।

ततश्च क्षणं विचार- भारैर्निरुद्ध—गतिरपि शङ्कातङ्कमपास्य, मालां हस्ते आदाय शनैस्तदभिमुखमेव प्रतस्थे। सा च तस्मिन्नति-समीप-मायाते पादाहतिमाकर्ण्य अवालुलोकत्। तस्याञ्चाति-चकितायामिव स्तब्धायामिव च रघुवीरोऽवादीत्—

"भगवति! भवत्या इयं मालिका तत्र पतिता, मया लब्धेति प्रत्यर्पयितुमायातोऽस्मि-इति, अनुमन्यसे चेदेनां यथास्थानं निवे-शयामि"।

सा च व्रीडया कुलाङ्गनाङ्गीकृत—महाव्रतेन च स्तब्धवाग् न किञ्चन प्रावोचत्। रघुवीरश्च वाचंयमतामप्यङ्गीकारभङ्गीमङ्गीकृत्य तदन्तिकमागत्य, सौवर्णीचित्र मानस-भित्तिकायामालिख्य नक्षत्रमालां

तत्कण्ठे प्राक्षिपत्, पवित्रतमानि स्फुटतम-यौवनोद्भेद लक्ष्म--रहितानि च तदङ्गानि नास्प्राक्षीत् ।

ततस्तस्यां मौनिनैवैकतः प्रयातायाम्, स्वयं पुनर्मन्दिरद्वारमागत्य देवशर्म्मणोऽन्यतमच्छात्रेणाऽऽनीतं सिन्दूरमादाय पुनरश्वमारुह्य, मारुत-नन्दनं सस्मृत्य तोरणदुर्गात् सिंहदुर्गं प्रतस्थे ।

इति चतुर्थो निश्वासः

॥ इति प्रथमो विरामः समाप्तः ॥

श्रीधरी—स च=उसने, तथेत्युक्त्वा=बहुत अच्छा यह कह कर बहिरागत्य=बाहर आकर, पर्य्यटन्=घूमता हुआ, पूर्वेद्युः=पहले दिन, सौवर्ण्या सनाथिता=सौवर्णी से सनाथित, वेदिकां समायातः=चबूतरे तक आया, स्मृतवांश्च पूर्वदिन वृत्तान्तम्=और पहले दिन की बात को याद किया । अवालोकयच्च=और देखा, सौवर्ण्याधिष्ठित चरं पाषाण मञ्चम्=जिस पर सौवर्णी बैठी थी, उसको देखा, तावन्निपुण निरीक्ष्य=अच्छी तरह देखने पर, दृष्टवान् यत्=देखा कि, एकाएक-यष्टिका नक्षत्र मालिका=एक लड़ वाली मोतियों की माला, तत्र पतिताऽस्तीति=वहाँ गिरी हुई है । ताञ्चोत्थाप्य=उसे उठाकर, तस्याएवेयमिति निश्चित्य=उसी की है, यह निश्चय करके, तस्मै समर्पयामीति विचार्य=उसी को दूंगा, यह सोचकर, इतस्ततश्चक्षुर्नि-चिक्षेप=इधर-उधर दृष्टि डाली, अथ=इसके बाद, व्यलोकयद् यत्=देखा कि, वाटिकायामेव=बगीचे में ही, कोशलाऽपि=कोशला भी, कदलीदल पुटक मेकं=केले के पत्ते का एक दोना वामकरे=बाँये, हाथ में, संस्थाप्य=लिये हुए, दक्षिण कर पल्लवेन=दाहिने हाथ से, कुसुम पतंगान=तितलियों को उद्धूय=उड़ा कर, कुसुमान्यवचि-नोति=फूल तोड़ रही है । ततश्च विचार भौरे निरुद्ध गतिरपि

=सोचने से गति धीमी हो जाने पर भी, शङ्का तङ्क मपास्य=सन्देह के डर को दूर करके, हस्तेमाला मादाय=हाथ में माला लेकर, शनैः= धीरे-धीरे, तदभि मुखमेव प्रतस्थे=उसकी ओर ही गया। सा च= उसने, तस्मिन् अतिसमीपमायाते=उसके अत्यन्त निकट आ जाने पर, पादाहतिमाकर्ण्य=पैरों की आहट सुनकर, अवालुलोकत्=देखा, तस्याञ्च= उसके, अति चकितायामिव=अत्यन्त चकित सी, स्तब्धायामिव च=स्तब्ध सी हो जाने पर, रघुवीरोऽवादीत्=रघुवीर सिंह ने कहा, भगवति=देवि, भवत्या इयं मालिका=आपकी यह माला, तत्र पतिता=वहाँ पड़ी हुई, मया लब्धा=मुझे मिली है। प्रत्यर्पयितु मायातोऽस्मि=इसे लौटाने के लिये आया हूँ। अनुमन्यसेचेत् एनां=आप की आज्ञा हो तो इसको, यथा स्थान निवेशयामि= यथा स्थान पहना दूँ। सा च=वह, व्रीडया=लज्जा से, कुलाङ्गनागीकृत महाव्रतेन च=कुल ललनाओं महाव्रत से, स्तब्धवाग् =चुप रही, न किञ्चन प्रावोचत्=कुछ भी नहीं कह सकी, रघुवीरश्च =रघुवीर सिंह ने, वाचयमतामपि=उसके मौन को भी, अंगीकार भगीमंगीकृत्य=स्वीकृत सूचक समझ कर, तदन्तिक मागत्य=उसके पास आकर, सौवर्णि चित्र=सौवर्णी का चित्र, मानस भित्तिकाया मालिख्य=मन मे लिखकर, नक्षत्रमाला तत्कण्ठे प्राक्षिपत्=मोती की माला को उसके गले मे डाल दिया। पवित्र तमानिस्फुटतम यौवनोद्भेद लक्ष्य रहितानि च=यौवन के स्पष्ट चिह्नों से रहित पवित्र अगों का। मास्प्राक्षीत्=स्पर्श नहीं किया। ततः=इसके बाद। तस्यां=कोशला के, मौनेनेव कृत्त प्रयातायां=चुपचाप चली जाने पर, स्वय पुनः मन्दिर द्वारमागत्य=अपने आप भी मन्दिर के द्वार पर आकर, देवशर्मणोऽन्यतम छात्रेण=देवशर्मा के छात्र द्वारा। आनीतं=लाये हुए। सिन्दूर मादाय=सिन्दूर को लेकर, अश्वमारुह्य=घोड़े पर चढ़कर, मारुत

नन्दनं संस्मृत्य = हनूमान का स्मरण करके। तोरण दुर्गात् सिंह दुर्गं प्रतस्थे = तोरण दुर्ग से सिंह दुर्ग को गया।

हिन्दी—

रघुवीर सिंह बहुत अच्छा, यह कहकर, बाहर आकर, घूमता हुआ, पिछले दिन जिस पर सौवर्णी बैठी थी, उस चबूतरे के पास गया और पिछले दिन के वृत्तान्त को याद किया तथा जिस पत्थर पर वह बैठी थी, उसको देखा। अच्छी तरह देखने पर उसने देखा कि मोतियों की एक लड़ वाली माला वहाँ गिरी है। उसे उठाकर, यह उसी की है, यह निश्चय करके, इसे उसी को दे दूँगा—यह सोचकर इधर-उधर दृष्टि डाली। तदनन्तर उसने देखा कि कोशला भी उसी बगीचे में बांये हाथ में केले के पत्ते का दोना लिये हुये और दाहिने हाथ से तितलियों को उड़ा कर फूल तोड़ रही है।

सोचने से मन्द गति वाला होकर, सन्देह के भय को निकाल कर माला को हाथ में लेकर वह शनैः शनैः उसी की ओर गया। रघुवीर सिंह के बहुत पास आ जाने पर, उसके पैरों की आहट सुनकर कोशला ने देखा। कोशला के स्तब्ध और चकित सी हो जाने पर रघुवीर सिंह ने कहा—देवि! आपकी माला वहाँ पर गिरी हुई थी, मैंने इसे पाया है। इसलिये इसे आपको लौटाने आया हूँ। यदि आपकी आज्ञा हो तो इसे इसके योग्य स्थान पर पहना दूँ।

लज्जा और कुल-ललनाओं के महाव्रत के कारण कोशला प्रत्युत्तर में कुछ भी न कह सकी। उसके मौन को स्वीकृति का ही सूचक समझ कर रघुवीर सिंह ने उसके पास जाकर अपने मन रूपी दीवार पर सौवर्णी का चित्र लिख कर उस माला को उसके गले में डाल दिया। यौवन के स्पष्ट चिन्हों से रहित उसके पवित्र अंगों का स्पर्श नहीं किया।

इसके बाद चुपचाप ही कोशला के एक ओर चली जाने पर, स्वयं फिर से मन्दिर के द्वार पर जाकर, देवशर्मा के छात्र के द्वारा दिये हुये सिन्दूर को लेकर, घोड़े पर चढ़कर, हनूमान जी का स्मरण करके, तोरणदुर्ग से सिंह दुर्ग की ओर प्रस्थान किया।

॥ इति चतुर्थो निश्वासः ॥

[चतुर्थ निश्वास का हिन्दी अर्थ समाप्त]

(इति प्रथमो विरामः समाप्तः)

—:o:—

अमृत-बिन्दवः

शिवराज विजयः

(अमृत बिन्दवः)

प्रथमो निश्वासः—पृष्ठ संख्या—६०—१०२ :

मरीचिमाली = मरीचीनां मालाऽस्यास्तीति मरीचिमली, सूर्यः, मणिः = रत्नम्, खेचर चक्रस्य = नक्षत्रसमूहस्य, चक्रवर्ती = सम्राट, आखण्डलदिशः = प्राच्या, पुण्डरीकाना = कमलानां पटलस्य = समूहस्य, प्रेमान् = अतिशयेन प्रियः, कोकानाम् = चक्रवाकानाम्, लोकस्य = समुदायस्य, शोक विमोकः = शोकापहारकः, रोलम्वानाम् = कदम्वानाम्, कदम्वस्य = समूहस्य, सूत्रधारः = प्रवर्तयिता, इनः = स्वामी, विभिनक्ति = विभजते, अयनम् = सूर्य मार्गः, युगानाम् = कृतत्रेताद्वापर कलीनां, परमेष्ठिनः = विधातुः, परार्द्ध संख्या = अन्तिमा संख्या, वन्दिनः = स्तुतिपाटकाः, ब्रह्मनिष्टाः = वेद पारगाः उपतिष्ठन्ते = उपासते, भास्वन्तं = सूर्यम्, पटुः = कुशलः, विप्रवटु = ब्राह्मण ब्रह्मचारी, स्वप्न जाल-परतन्त्रेण = निद्रा एव आनाय: तत्परतन्त्रेण = तदायत्तेन, सपदि = सत्वरम्, अवचिनोमि = सफलयामि, कदली दलम् = रम्भा पत्रम्, आकुञ्चय = भुग्न विधाय, तृणशकलं = तृणानां खण्डैः सन्धाय = सम्मेल्य पुष्पावचय = पुष्पाणाम् लवनम्, आकृत्या = आकारेण, कम्बु कण्ठः = शङ्ख ग्रीवः, कुञ्जायतिस्ये = लतादिपिहितोदरस्य, समन्तात् = परितः, पत्रसहस्राणाम् = सहस्त्रावेकानाम्, पुण्डरीकाणाम् = सिताम्भोजानाम्, पटलेन = समूहेन, पटिलसितम् = सर्वतः शोभितम् पतत्रिणां गणस्य = पक्षिणां समूहस्य, कूजितेन = शब्देन, पूजितं = विराजितं, पयसां पूरेण = जलानां प्रवाहेण ध्वनितम् = नादितम्, फल पटलस्य = फलानां समूहस्य, आस्वादेन = भक्षणेन, चञ्चव = त्रोटव, विनताः =

नम्रीभूताः, शाखाः = शिखा, शाखिनः = वृक्षाः, व्याप्तः = आवृतः, ब्रह्मचारी = ब्रह्म वेदः, तदध्ययनार्थं व्रतं चरतीति ब्रह्मचारी, अलिपुञ्जम् = भ्रमर राशिम्, अवघूर्य = निवार्य, कुसुमकोरकाः = पुष्प कलिकाः, अवचिनोति = संकलयति, सतीर्थ्यः = सहाध्यायी, कस्तूरिकायाः = मृगनाभेः, रेणुभिः = रजोभिः, रुषित इव = छुरित इव, कर्पूरस्य = घनसारस्य, क्षोदेन = चूर्णेन, छुटितम् = व्याप्तम्, सुगन्ध पटलै = सौरभ समूहैः, निद्रामन्थराणि = निद्रया अलसानि, कोरकाणाम् = कलिकानाम्, निकुरम्बकाणि = वृन्दानि, अन्तराले = अभ्यन्तरे, सुप्तानि = शयनानि, मिलिन्द वृन्दानि = भ्रमर समूहनि उन्निद्रयन्निव = जागरयन्निव, समवर्ष-कल्पाम् = असमाप्त सप्तवर्षाम्, कलित मानव देहमिव सरस्वती = मानव-रूपेणावतीर्णां सरस्वतीमिव, मरन्देन = पुष्प रसेन, मधुराः = मिष्ठाः, कन्दाः = खाद्य विशेषाः, त्रियामायाः = रात्रेः, यामत्रयं = प्रहरत्रयम्, परिमार्गणीयानि = अन्वेषणीयानि, वक्तु मियेष = कथयितुमिच्छति स्म, ग्रामण्यः = ग्रामाधिपाः, ग्रामीणाः = ग्रामवासिनः, ग्रामाः = समूहाः, सत्कार्यः आदरणीयः, सम्भ्रान्तो = क्षुभितो, सहकारेण = साहाय्येन, प्रस्तुतासु = सन्नद्धासु, काष्ठपीठं = काष्ठ निर्मितवासनम्, सान्द्राम् = घनाम्, अंगार प्रतिमे = अंगार सदृशे, पृच्छा परवश = प्रश्न परतन्त्रे, ह्यः = गत दिवसे, कुशास्तरणम् = कुशासनम्, आन्दोल्यमानासु = सञ्चाल्यमानासु, व्रततिषु = लतासु, यामिनी-कामिनी = निशानायि-कायाः पतंगकुलेषु = पक्षि समूहेषु ।

(पृष्ठ संख्या १०३ से ११६)

प्राणान् = असून्, शोक ज्वालावलीढम्: शोकाग्निना व्याप्तम्, क्रोडे = अङ्के मुग्धतया = बालस्वभावतया वाक्पाटवम् = भाषण चातुर्यम्, विशिथिलः = अस्यव्यस्तः, चकित चकितेव = अति भीतेव, नेदीयसि = अतिनिकटे आकलय्य = निश्चित्य, असिधेनुकाम् = छुटिकाम्, विभीषिकया = भय प्रदर्शनेन, घृणा अरन्यानेन = संयोगेन, विगृह्य =

परित्यज्य. विच्छिद्य=विपाटच, वीथिषु,=पथिषु. धूमध्वजेषु=वह्निषु, पिष्टवा=चूर्णीकृत्य, भ्राष्ट्रेषु=भर्जन पात्रेषु, दाराः=भार्याः. पर्वतीयान्=पर्वत प्रान्त स्थान्, आदित्यपद लाञ्छनः=आदित्यपद विभूषितः समुद्‌धूयन्ते=विराजन्ते, निरुद्धाः=अन्तर्नियमिताः, निश्वासाः =प्राणाः, विजितानि=वशीकृतानि, आज्ञाचक्रम्=भ्रुवोर्मध्ये द्विदलात्मकं चक्रम्, चन्द्रमण्डल=षोडष दलात्मकं चक्रम्, तेजः पुञ्जम्= महाप्रकाशम्. सहस्र कमलस्य=सहस्रारचक्रस्य, तत्रैव=ब्राह्मणि, रममाणं=विहरद्भिः, मृत्युञ्जयैः=स्वायत्तीकृत-कालवृत्तिभिः, आनन्द मात्र स्वरूपैः=ब्रह्माणि लीन त्वात् तत्स्वरूपैः ।

दम्भोलिघटिता=वज्रमयी दारुणानाम्=भयानकानाम्, दानवानाम्=म्लेच्छानाम्, उदन्तस्य=वृत्तान्तस्य; उदीरणैः=कथनैः लोह सारमयं=लौह निर्मितम्, विमनायमानम्=दुर्मनायमानम्, क्षालितमिव=धौतमिव, निपतन्तः=स्खलन्तः, वारि विन्दवः= अश्रुकणाः, अञ्चित रोम कञ्चुकम्=सरोमाञ्चम्, जिग्लापयिषामि= ग्लपयितुमिच्छामि, चिरवेद यिषामि=खेदयितुमिच्छामि ।

(पृष्ठ संख्या ११७ से १२९ तक)

कलनः=निर्माता, सकल कालनः=सबल जरयिता, कालः= महाकालः, अकूपार तलानि=समुद्रतलानि, मरूकरोति=मरुतुल्यानि करोति, गण्डकः=खड्गी, फेरवः=शृगालाः, मन्दिराणि=देव निवासाः प्रासादाः=राज भवनाः हर्म्यम्=धनिकावासाः शृङ्गाटकम्=चतुष्पथम्, चत्वरम्=अङ्गणम् उद्यानं=वाटिका, गोष्ठम=गोस्थानकम्, काननीकरोति=जगली करोति, यायजूकैः=इज्याशीलैः, व्ययाजिषत= कृताः, अतापिषत=तप्तानि, मन्दुरी क्रियन्ते=वाजिशाली क्रियन्ते, पात्यन्ते=व्यभिचार्यन्ते, धीर धौरेयः=धीरधुरन्धरः, विधुरयसि= विकलयसि, शश्रूषते=श्रोतुमिच्छति, तत्रभवति=श्रेष्ठे, विशिथिलीकृतानि=शिथिल तामापादितानि, भामिनीनाम्=तरुणीनाम् भ्रूभंगाः

=सकटाक्षेक्षणानि, भूरिभावा:=हावाद्या:, पराभूतानि=तिरस्कृतानि, वैभवानि=धनानि, अलुलुण्ठत=लुण्ठितवान्, गुर्जर देश चूडायितम्=गुर्जर देश भूषण तुल्यम्, धूलीचकार=नाशयामास, वलभी=गोपानसी, चकितीकृत:=विस्मेरीकृत:, अवलोचक लोचनानाम् द्रष्टृजन नयनानाम्, निचय:स=मूह:, उदतूतुलत्=उदतिष्ठिपत मा स्प्राक्षी:=मा स्पृश, अतुऋ्रत्=अभिनत्, उच्छलितानि=उत्पतितानि, दग्ध मुख:=दुष्ट क्रमेलका:=उष्ट्रा:, विजय ध्वजनीम्, अध्वनीनम्=पान्थम्, चतुरङ्गिणी=चतुर्भिरङ्गैः समेता, अनीकिन्या=सेनया शीतल शोणितान्=अनुष्णरक्तान्, असयन्=असिनाघ्नन्, अश्वयाम्बभूव=अश्वेरतिचक्राम, विशस्य=घातयित्वा, अस्थिगिरय:=कीकस पर्वता:, रिङ्गन्त:=चलन्त:, तरङ्ग भङ्गा:=उर्मि भेदा:, शोणीकृता=शोणनदतामापादिता, भूमिसात्कृतानि=धूलीकृतानि, राक्षसा:=हिंसाप्रिया:, अदीदलन्=अजीघतन्, गूढशत्रु:=गुप्त रिपु:, अवरङ्गजेब:=औरङ्गजेब:, अरण्यानि=महदरण्यम् सङ्कुल:=व्याप्त:, हस्तयितम्=हस्ते कुर्तुम्. सीमन्तिनी=ललना, सीमन्ते=केशवेशे, सान्द्र=घनं, सिन्दूरदानं=नागकेसरचर्चनम्. स्वधर्मस्य=सनातन धर्मस्य, आग्रहग्रह:=हठादपि पालनम्. गहिल =दृढतर:, पुण्यनगरात्=पूनानगरात्, नेदीयासि=अत्यन्त समीपे ।

(पृष्ठ संख्या १३० से १४७ तक)

सन्तानम्=परम्परा. वितान=विस्तार:, योगबलेन=योग सामर्थ्येन, गोप्यतम वृत्तान्त:=रहस्यात्मक वृत्तान्त', रोरुध्यमानै:=भृशं वार्यमाणै:. उररीकृत्य=स्वीकृत्य. उदतीतरत्=उत्तरयाञ्चकार, सान्त्वना वचनानि=सामवाक्यानि, उपत्यकाम्=अद्रेरधः सन्निहितां भूमिम्, गण्डशैलान्=स्थूल पाषाणान् अधित्यकाम्=अद्रेरूर्ध्वां भूमिम् निर्मक्षिके=एकान्ते, उपन्यस्तुम्=कथयितुम्. मर्मर:=शुष्कपर्णध्वनि,:

एकतानेन=एक चित्तेन, निष्कुटकाः=गृहारामाः, कूटं=समूहे, वलीके=पटले, रिक्त हस्तेन=शून्य करेण, कपोलतल विलम्बमानान्=गण्ड संलग्नान्, किञ्चित्कोपेन=ईषत्क्रोधेन, कषायिते=कलुषिते, कृपा कृपणः=दयाशून्यः, आरिराधयिषुः=सेवितु मिच्छुः, लतानां=वल्लीनाम् वेष्टितम्=वलयितम्, कञ्चुकः=चोलकः, श्यामवसनेन=कृष्ण वस्त्रेण, आनद्धम्=आच्छादितम्, काकासनेन=चिबुकार्पित जानुयुगलासनेन, अधोमुखस्य=निम्नाननस्य, त्सरौ,=मुष्ठौ न्यस्तम्=स्थापितम्; विपर्यतम्=न्युब्जीभूतम्, हस्त युगलम् =करद्वयम्, किसलयानि=नव पल्लवानि, नवाङ्कुरितायाः=नवस्फुरितायाः, कलङ्कः=दुर्यशः, पङ्कः=कर्दमः, कलङ्कितम्=भ्रष्टम्, विंशति वर्षकल्पम्, विंशति वर्ष वयस्कम्, चाक्षुषे=प्रत्यक्षे, उत्प्लुत्य=उत्पत्य, युयुत्सुः=योद्धमिच्छुः, अवतस्थे=स्थितः, कन्दरेषु=गुहासु, आखेट क्रीडया=मृगया खेलया, सत्वा=प्राणिनः, वृत्तयः=जीवन साधनानि येषां ते, दावदहनः=वनाग्निः, भुजंगिनी=सर्पिणी, कलकलम्=कोलाहलम्, वलीकात्=पटल प्रान्तात्, तया=कन्यकया, अध्युषितस्य=सेवितस्य, कवोष्णस्य=ईषदुष्णस्य, तृषितः=पिपासितः, व्यालीढम्=युद्धावस्था विशेषः, दिनकर कराणाम्, सूर्यकिरणानाम्, चतुर्गुणीकृतम्=वर्द्धितम्, मुष्णतः=चोरयतः, हतकस्य=दुष्टस्य, कलितेन=व्याप्तेन, सञ्जातस्य=उत्पन्नस्य क्लेदेन=श्रमेण, स्वेद जलस्य, घर्मजलस्य, विशिथिलाः=इतस्ततः परिभ्रष्टाः, कचानाम्, केशानाम्=कुलस्य=समूहस्य, माला=पंक्तिः, भग्नया=छिन्नया, भयानकम्=भीषणम्, भालम्=ललाटम्, वसुधायां=पृथिव्याम्, शयानम्=पतितम्, गाढेन=घनीभूतेन, रुधिरेण=रक्तेन, दिग्धायां=लिप्तायाम्, आस्तरेण=विष्टरेण, चितायां=व्याप्तायाम्; ज्वलदङ्गारैः=अङ्गार निभैः, निर्जीवीभवताम्=निष्प्राणतां गच्छताम्, अंगबन्धानां=शरीर सन्धीनाम् परम्=निरतम्, शोणितसंघात व्याजेन=रुधिर प्रवाहच्छलेन, रजोराशिः=

रजोगुण समूहः, उद्गिरन्तम्=वमन्तम्, कलितः=धारितः, सायन्तनस्य=सायंभवस्य, घनाडम्बरस्य=मेघ विडम्बनायाः, विभ्रमः=विलासः, ताम्रचूडस्य=कुक्कुटस्य, भक्षण=अशनम्, पातकम्=पापम्, ताम्रीकृतम्=रक्तीकृतम्, छिन्नकन्धरम्=कृत्तग्रीवम्, कटिबन्धः=जघन पट्टिका, उष्णीषम्=शिरोवेष्टनम् ।

(इति प्रथमे विरामे प्रथमो निश्वासः)
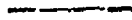
द्वितीयो निश्वासः

(पृष्ठ संख्या १४८ से १६६ तक)

स्वतन्त्रम् = स्वच्छन्दम, भुज्यमानस्य = शाम्यमानस्य, प्रेषितः = प्रहितः, प्रक्षालितानि = धौतानि, गण्डशैलानाम् = स्थूल शिलानाम्, निर्झराणाम् = जल निर्गम स्रोतसाम्, वारिधारापूरैः = जलधारा समूहैः, पूरितः = भरितः, गिरिग्रामः = पर्वत समूहः, प्रान्ते = निकट प्रदेशे, गर्भतः = मध्यात्, निर्गतायाः = समुत्पन्नायाः, चञ्चुरायाः = चञ्चलायाः, रिङ्गताम् = सञ्चरताम्, तरंगाणां = उर्मीणाम, भंगैः = छेदैः उद्भूताः = उत्पन्नः, आवर्ताः = अम्भसांभ्रमः, भीमायः = भयदायिन्यः, अनवरतम् = सततम्, निपतताम् = प्रच्यवताम् कदम्बेन = समूहेन, सुरभीकृतम् = सुगन्धितामापादितम् वगाहमानानाम् = प्रविशताम्, मत्तानाम् = दानभरितानाम्, मतगजानां = करिणाम्, मदधाराभि = दानजलैः, हयनाम् = अश्वानाम्, हेषा = ध्वनिः, वधिरीकृतः = श्रुतिसामर्थ्य विकली कृतः, गव्यूतिमध्यमः = कोशद्वयान्तरालवर्ती, अध्वनीनवर्गः = पथिक समूहः, पटकुटीराणाम् = उपकारिकाणाम् कूटैः = समूहैः, शारदाम्भोधराणाम् = शारद्मेघानाम्, विडम्वना = अनुकृतिः, संमद्धूयमानैः = कम्पमानैः, नीलध्वजैः = नीलपताकाभिः, निरेपराधानाम् = निर्दोषाणाम् भारताभिजनानाम् = भारतीयानाम्, अन्यतमः = प्रमुखः, प्रभाजालम् = दीमममहम्, आकुण्य = माकुञ्च्य, सम्मुद्रय = सङ्कोच्य, कोकान् = चक्रकान्, मशोकीकृत्य = दुःखिनो विधाय, चराचरस्य = स्थावर जङ्गमात्मकस्य, चक्षुणाम् = नेत्राणाम्, सञ्चार शक्तिम् = कार्यकरण सामर्थ्यम्, आशा—दिशा वारुणी = पश्चिमादिग्, मद्यञ्च, मञ्जिमा = रक्तिमा, सुपुप्सुः = स्वप्तुमिच्छु, म्लेच्छ गणस्य = यवन समूहस्य, दुःखाक्रान्तायः

=कष्टपीडितायः, वसुमत्याः=पृथिव्याः, वेदनाम् पीडाम्, समुद्रशायिनि =विष्णौ, निविनेदयिषु=निवेदयितुमिच्छुः, वैदिक धर्मस्य=सनातन धर्मस्य, ध्वंसदर्शनेन=विनाशावलोकनेन, विर्वेदः=वैराग्यः, गिरिगहनेषु =पर्वतदुर्गमेषु. चिकीर्षुः तुकर्तुमिच्छुः, सिस्नासुः=स्नानमिच्छुः विधित्सुः =चिकीर्षुः, सकण्ठग्रहं=कण्ठं गृहीत्वा, याज्ञियान्=पवित्रात, क्रूर-करान्=तीव्र किरणान्, कलिकौतुकेन=कलियुग कौतूहलेन, कवलितस्य =विनष्टस्य, पातक पुञ्जेन=पाप समूहेन, पिञ्जरितस्य=पीत वर्णस्य, अन्धतमसे=अन्धकारे, चक्षुषामगोचरः=अदृश्यः।

हरित्सु=दिक्षु, आगत प्रत्यागतम्=यातायातम्. विदधानः= कुर्वाणः, दौवारिकः=द्वारपालः पादक्षेपध्वनिम्=चरणचङ्क्रमण शब्दम्, अवतमसम्=क्षीण ध्वान्तम्, मुमूर्षुः=मर्तुमिच्छुः. मन्द्रस्वरेण =गम्भीरनादेन, अपश्यता=अनवलोकमानेन, प्रहरिणा=यामिकेन, सनाथितः=भूषितः, तुरीयाश्रमसेवी=चतुर्थाश्रमवासी, अपरिचाययन्तः =परिचयमददतः, शिरसा वहामः=सर्वथा पालयामः, अन्तरायाणां= विघ्नानाम्, हन्ता=निवारयिता, प्राह्णे=पूर्वाह्णे, तुम्बी=अलाबू-पात्रम्, धर्षितः=भीषितः, निष्णातः=निपुणः, परीक्षिष्ये=परीक्षां करिष्ये, निरीक्षस्व=अवलोकय, तत्त्वम्=सामर्थ्यम्, परिष्कृतम्= सुसाधितम्, तुला=पलानां शतम्, जाम्बूनदम्=सुवर्णम्, काच मञ्जूषा रक्तवर्तिका, अपांगः=नेत्र प्रान्तभागः, निर्भीकेण=भयशून्येन, हारिणा मनोहरेण. पर्यचिनोत्=परिचितवान्. समुत्तोलनेन=उत्थापनेन, किणः =चिह्न विशेष, कर्कशस्य=कठोरस्य, नेदीयस्याम्=समीप वर्तिन्याम्, अगक्षिका=कञ्चुकिका, पक्ष्मणोः,=अक्षिलोम्नोः छुरिताम्=व्याप्ताम् प्रोञ्छ्य=दूरीकृत्य.मेचकान्=कृष्णवर्णान्,चन्द्रचुम्बिन्याम्=अत्युच्छ्रायाम् सान्द्रेण=घनेन, सलिसः रूपितः, गजदन्तिका=भित्तिशङ्कुः. परिलम्ब-मानानाम्=निवसताम्, कल कूजितैः=मधुर भाषणैः, पूजितायाम्= भूषितायाम्, शुकः=कीराः, पिकः=कोकिलाः, सारिकाः=शारिकाः,

खर्वां=ह्रस्वाम्, अखर्वाम्=अनल्प पराक्रमाम्, श्यामाम्=कृष्णाम् यशः समूहेन=कीर्तिकूटेन, श्वेतीकृतम्=धवलितम्, कुशासनम्=विष्टरः, सुशासनम्=शोभन राष्ट्रस्थितिः, सूक्ष्मदर्शनम्=कर्तव्याकर्तव्य-विचारः, ध्वंसकाण्डस्य=विधर्मि हिंसनस्य, धर्म धौरेयो=धर्मभार-धारणीयम्, शोणापाङ्गाम्=रक्त कटाक्षाम्, सुनद्धा=शोभनतयाश्लिष्टा, धारिता=गृहीता, विग्रहिणीमिव=शरीरवतीमिव, कटान्=तृणनिर्मि-तान् आसन् विशेषान्, आरिप्सुषु=प्रारम्भ चिकीर्षुषु, न्यवीविदत्=निवेदितवान्, दिदृक्षते=द्रष्टुमिच्छति ।

(पृष्ट संख्या १७० से १८४ तक)

प्राणीविशत्=अन्तर्णीतवान्, जुष्टम्=सेवितम्, प्रत्नः=पुरा-तनः, अद्यतन समये=सम्प्रति, महाव्रतम्=महान् नियमः, रंगुद्याः=पिण्याकस्य, पर्यन्वेषणाम्=सर्वतोमार्गणाम्, जटिलाः=जटायुतः, काषा-यिणः=गैरिकवसनः, अन्तःस्थितम्=मानसेविद्यमानम्, जाल्माः=अविवेकिनः, लुण्ठन्ते=चोर्यन्ते, निशीथेषु=अर्धरात्रिषु, वारवाणेषु=हस्तिसमूहेषु, कन्यापहारकस्य=बालिका चोरस्य, मृतस्य=गतासोः वस्त्रान्तः=वस्त्रान्तराले, वितस्थिरे=स्थितः, शुश्रूषाम्=श्रोतुमिच्छाम् सर्पाकारैः=वक्रैः, पारस्यानाम्=पारसीकानाम्, भाषायाम्=वाचि, प्रशस्यः=श्लाघ्यः, प्रस्थापितः=प्रेषितः, विशदीकृत्य=स्पष्टीकृत्य, अरुणकौशेयस्य=लोहित पट्टवस्त्रस्य, बालभास्करस्य=नवोदित सूर्यस्य, तद्विडम्बनाम्=तदनुकृतिम्, धीरताधुराम्=धैर्यभारम्, अधरी कृत-वान्,=त्यक्तवान्, पदवृद्धि=स्थानोन्नतिम्, साक्षात्करिष्यामि=द्रक्ष्यामि, व्यवसितम्=उद्योगम्, कर्णान्तिकम्=श्रवण समीपम्, चातुरीम्=कौशलम्, व्याहन्मि=नाशयामि, परिपन्थिनः=शत्रवः, अत्यन्त निर्दयाः=दयाशून्यः, अतिकदर्या=अत्यन्त नीचः, अतिकूट नीतयः=कपटाचार चतुरः ।

(पृष्ट संख्या १८५ से २०१ तक)

इंगतेन=संकेतेन, प्रसाधनिकया=कंकतिकाया, सौवर्णेन= सुवर्णविरचितेन, विचित्रताम्=संवलिताम्, शोणपट्ट, निर्मितम्=रक्त-कौशेय रचितम्, अधोवसनम्=चरणेनधारणीय वसनम्, दन्तावलस्य= करिण:, पटवासैः=सुगन्धित द्रव्यैः, दन्तुरयन्=सुगन्धयन्, शरदमेघ मण्डलायितम्=शरत्समय मेघमण्डल सदृशम्, कोकनदच्छविना=रक्त-कमल कान्तिना, काव्यश्यामा=अतिश्यामला, कर्वुरम्=अनेक वर्णम्, शोणश्मश्रुः=रक्तमुखकेशः, वर्तुलया=गोलाकारया, पित्तल पट्टिकया= धातुफलकिया, परिकलितम्=भूपितम्, सावष्टम्भम्=सप्रतिरोधम्, समार्दवं=सकोमलतम् उपार्जितान्=संचितान्, पुण्यलोकान्=स्वर्गा-दिकान्, मरणादुत्तरन्=देहत्यागानन्तरम्, प्राप्तेन=लब्धेन, चुक्रम्= वृक्षाम्लम्, वितुन्नकम्=छत्रा, शृंगवेरं=आर्द्रकम्, रामठम्=हिंगु, मत्स्यण्डी=फाणितम् पललम्=मांसम्, विद्रावयत=दूरयत, कुतू= चर्मपात्रं, कण्डोलः=पिटः, कटः=किलिञ्जकः, कम्विः=दर्विः कडम्वः कलम्वः, शूलाकुर्वतः=संस्कुर्वतः, तेमनानि=व्यञ्जनानि, तिन्तिडीरसैः =चक्ररसैः, मिश्रयतः=सयोजयतः, निश्च्योतयतः=क्षारयतः, ताम्र-चूडान्=कुक्कुटान् आरनालम् काञ्जिकम्, पारस्परिकेण=अन्योन्येन, यौवनेन=नववयसा, अनवरतम्=सततम्, आक्षिप्ताः=कुसुमेषु वाणा, =कामवाणाः, महोत्कटम्=अत्युग्रम्, पूतिगन्धेन=दौर्गन्धेन प्रकटीकृता=व्यक्तीकृता, अस्पृश्यता=स्पर्शायोग्यता, दुराधर्षता= दुरभिभवनीयता, द्विशिरा=द्विशीर्षः, जपतीव=मन्दकथयतीव, भ्रूकुंसक=स्त्रीवेषधारी नर्तकः, आसवेन=मद्येन, जीवन-रत्नम्= वहमूल्यं जीवनम्, आहव क्रीडा=युद्ध क्रीडा, शकुनिमण्डले=पक्षि समूहे, नीरसान्=शुष्कान्, छदानीव=पत्राणीव, आकर्षयन्=वशी कुर्वन्, आवरणम्=आच्छादन वस्त्रम्, प्रवालम्=वीणादण्डम्, साक्षीकुर्वतः=साक्षाद्दर्शिनां नयतः, काकलाम=सूक्ष्म कलम्, निष्ठ-

यूनदानम् = पतद्ग्रहः, कुसुमकुड्मललताः = पुष्पकलिकावल्यः, प्रतानैः = वितानैः अङ्कितः = चिह्नति ।

(पृष्ठ संख्या २०२ से २०४ तक)

महोपबर्हम् = महोपधानम्, विविध फेन फेनिलस्य = प्रचुर-डिण्डीर सवलितस्य, क्षीरधेः = दुग्ध वारिधे, छविम् = शोभाम्, अङ्कीकुर्वत्याम् = धारयन्त्याम् वास्तव्यः = निवासी, पर्याटयति = सर्वतो भ्रामयति, एधमानः = वृद्धिगच्छन्, अटाय्याम् = पर्यटनम्, अवालुलोकत् = अवलोकयाञ्चकार, प्ररूढाम् = समुद् भूताम्; पद्यावलीम् = पद्यश्रेणीम्, पद्येव = श्रीखि; द्रवीभूता = प्रस्नुता, ब्रह्मपुत्रः = गरल विशेषः, फूत्कारेण = मुखवायुना, उड्डायिता = उद्धूना, ज्वलदङ्गाराः = प्रकाशमानाङ्गाराः, विजित्वराः = जयनशीला, भयङ्करैः = भीतिजनकैः, प्रत्याभोगम् = प्रत्येक गेय खण्डम् ध्रुवेण = स्थिरपदेन, सगच्छते = सम्मेल्येत, दक्षहस्तस्य = वामेतर करस्य, मुरली रणकै = वंशीस्वनैः, पापिजनानाम् = पापिनाम्; भैयरूपः = भयङ्कर, सताम् = सज्जनानाम्, सुरवरैः = इन्द्रादिभिः, क्षिपीयमान = सन्नालसवीक्ष्यमाण चपलेव = विद्युतदेव, श्रीवत्सेन = भृगुपदेन, श्रीलाः = श्रीमानः, श्रीदः = धनप्रदः, सर्व श्रीभियुतः = सारी सेवाओं में युक्त, गवीशः – वाणीनाम्, सारंगै = हरिणानाम्] लाञ्छनो हृदये = इन्द्रियाणाम् ईशः = लक्ष्मीणाम स्वामी, गवाम् = पशूनां स्वामी, भावितः = ध्यानंकरति, कनककशिपुकदनः = हिरण्यकश्यपु महारकः, बलिमथनः = बलिध्वंसी, गुणग्राहितां = गुणज्ञताम्, नैरेयम् = मद्यम, सैन्धवारोहविद्यायाः = अश्वारोहण कलायाः, वीरवारवरः = वीराग्रगण्यः, विलक्षण विचक्षणः = विशिष्ट विद्वान्, ऊर्ध्वस्वलः = बलशाली, महेन्द्र मन्दिरस्य = इन्द्रभवनस्य, खण्डमिव = अंशमिव, तपनीयस्य = हिरण्यस्य, जटितानाम् = खचितानाम्, महारत्नानाम् = हरिकाहीनाम्, वितन्यमानस्य = विस्तार्य माणस्य,

विरोचितेन=शोभितेन, प्रतापेन=तेजसा, तापित:=ज्वलित:, परिपन्थिनिवह:=शत्रु समूह:, चन्द्रचुम्बने=इन्दुस्पर्शे, रक्षकाणाम्=रक्षानिरतानाम्, कुलेन = समूहेन, दोधूयमानानाम् = भृशंसञ्चलनाम्, निर्मथित:=विलोडित:, याचन्ते = प्रार्थयन्ते ।

(पृष्ठ संख्या २०५ से २१७ तक)

अस्तमनस्का = समाहितचेना, सादिनाम् = अश्वारोहिणाम्, पत्तीनाम्=पदातीनाम्, विश्वस्य=विश्वास विधाय, समस्तककूर्चान्दोलनम् = सशिरोदाढ़िकासञ्चालनम्, सान्प्रासम् = ईषद्हास्ययुक्त, सकूर्चोद्धूननम् =श्मश्रूल्लासनेन सह, सोपधानताडनम्=उपधानप्रहारेण-साकम्,पर्यङ्किकाम् = लघुपर्यङ्कम्, कैङ्कर्यम्=दासताम्, कुलीना:= सद्वंशजा:, अवदधामि = सावधानोऽस्मि, सवर्त्स्यामि = वर्तिष्य से, प्रसविन्या:=जनन्या:, रजतश्वेताम्=रूप्यधवलाम्, पक्ष्मपङ्क्तिम्=नेत्रलोमश्रेणीम्, अश्रुप्रवाहेण = अश्रुधारया, पक्वणीकृत्य=शबरसदनीकृत्य, दासेरकताम्= भृत्यताम्, प्रसीदामितराम् = अत्यन्तप्रसीदामि, निशीथे=अर्द्धरात्रे, सेनानिवेश देशे=सेना संस्थान सम्बन्धे, सम्मन्त्र्य= परामृश्य, होरात्रयम्=घण्टात्रिकम्, अरुणश्मश्रव:=यवना:, प्रहरिपरीवारम्=दौवारिकसङ्घम्,विकाश:=काशात्रिसार्य, विकचताम्=विकासभावम्, कवचानाम्= उरच्छदानाम् ।

(पृष्ठ संख्या २१८ से २४३ तक)

प्रबबन्ध=व्यवस्थापितवान्, वज्रक जटित:= हीरकखचित:, परिपूरितम्=भरितम्, स्यूतानि= खचितानि, वर्णनीयाम्=प्रशंसनायाम्, आश्लेषाय=आलिंगनाय, व्यपाटयत्=व्यदारयत्, ध्वजिन्यां= सेनायाम्, रोदसी = द्यावापृथिव्यौ, दन्दह्यमानै:=नितरां ज्वलद्भि: परस्कोटीनाम् = असंख्यानाम्, स्फुलिङ्गानाम् = अग्निकणानाम्, पिङ्गीकृता:=पिञ्जरीकृता:, दोधूयमानानाम्=नितान्त कम्पन्तीनाम्,

परिपात्यमानैः = समन्ततो विकीर्यमाणैः, भसितैः = भस्मभिः, सितीकृताः = शुभ्रीकृताः, अनोकहाः = वृक्षा, सकलकलध्वनि = कल-कल शब्देन सह, पतत्रि पटलैः = पक्षिसमूहैः, मोमूच्यमानाः = वोवुध्यमाना, शिविर-घस्मराः = परगृहभक्षिकाः. दन्दश्यमानाः = भृशं दश्यमाना, साम्रेडम् = वारं वारम्, दस्यवः = चोराः. मक्ष्वेडम् = स सिंह नादम्, सुमनसः = पुष्पाणि, प्रलम्बानाम् = दीर्घानाम्. वेणुदण्डानाम् = वंशानाम्. समुत्तोल्य = उत्थाप्य, कदम्बानि = समूहाः, कदुष्णैः = ईषदुष्णैः, रुधिर दिग्ध = रक्तक्लिन्नम्. कान्दिशीकाः = भीताः, मातुः = जनन्याः, प्रणाम = नमस्कृतवान् ।

(इति प्रथमे विरामे द्वितीयो निश्वासः)

— :o: —

तृतीयो निश्वासः

(पृष्ठ संख्या २३४ से २५६ तक)

कुसुमगुच्छैः=पुष्पस्तवकैः, श्यामश्यामैः=अतिश्यामैः, आसन्ना=समीपवर्तिनी, ग्रामटिका=लघुग्रामः, शूली=शकर, खड्गिनी=दुर्गा, चक्री=विष्णुः, पाशी=वरुणः, हली=वलभद्रः, अवहेलयति=तिरस्करोति, जृम्भारातिः=इन्द्रः, दम्भोलीनां=वज्राणाम्, घातैः=ताडनैः, आरम्भेषु=उपक्रमेषु, धर्मादपि निर्भीकान्= धार्मिक भय शून्याम्, अभीकान्=कामुकान्, एकतानः= स्थिर चित्तः, वर्षीयसा=वृद्धेन, क्षालितम्=धौतम्, उपनयनम्=उपनेत्रम्, कम्पिता=वेदमाना, युक्तः=अप्रतिहतः, धर्मराजस्य=यमस्य, अध्वनि=मार्गे अध्वन्य= पान्थः, आखेटे=मृगयायाम्, महार्हैः=वहुमूल्यैः, भूषणैः=अलङ्करणैः, वन्धुवियोग दुःख समावितः=इष्टवियोग क्लेशमनुभावितः, वाष्पाणाम्=अश्रूणाम्, व्रजस्य=समूहस्य, ग्लपितम्=ग्लानम्, मुखं=आननम्, कपोलपाली=गण्डप्रान्तः, उदञ्चिता= प्रोद्गता, रोमवल्ली=रोमावली, त्वरिताभ्यां=शीघ्रयुताभ्याम्, कदुष्णाभ्याम्=ईषदुष्णाभ्याम्, सर्वंगीसार्वभौमस्य=चन्द्रस्य, किरणानाम्=दीधितीनाम्, प्रापितः=लम्भित, भज्यमानेन=त्रुटयता, कम्पमानेन=सवेपथुना, अभ्यषिञ्चत्=आर्द्रीकृतवान् प्रसर्पिभिः=विसारिभिः, करुणोद्गारस्य=करुणरसोद्गमस्य प्रवाहैः=धाराभिः, पर्यपूर्यत=पूरिताऽभूत्, प्रसंगस्य=अवसरस्य, रंगप्राङ्गणस्य=नर्तनचत्वरस्य, परिमजन्ति=हस्तस्पर्शं कुर्वति, क्रियासमभिहारेण=पौनःपुन्येन, कुतुक परवशः=सकौतूहलः, दुर्वलारकारे=दुष्टसाहसे तुच्छानाम्=नीचानाम्, कलाकलापस्य=कलासमूहस्य, कोविदौ=विज्ञातारौ गुणिनाम्=कलाविदाम्, गणे=समुदाये, गणनीयौ=

गण्यौ, समाश्वस्य = समाचाय, पैतृ ितामहिकीम् = वंशपरम्परा प्राप्ता, उपरिभ्रमतः = ऊर्ध्वंचलन्तः, परिपन्थिनः = शत्रूणाम्, गलेभ्यः = कण्ठेभ्यः, भिन्दपालाः = नालिकास्त्राणि, स्वप्रतिकूलानां = शत्रूणाम्, घनानाम् = विपुलानाम्, विघ्नानाम् = प्रत्यूहानाम्. विघट्टिकाः = विमर्दिकाः, घर्घराघोषेण = घर्घरध्वनीना, घोरा = भयावहा. प्रत्यर्थि शुण्डिनाम् = शत्रुगजानाम्, कोषपूरिता = निधानपूर्णाः, मर्गानाम् = हरिकाहीनाम्, गर्जेन = अमूर्हेन, भूपिताः = शोभिताः, विचित्राः = विविधाः, गवाक्षः = वातायनम्, जालम् = वायु प्रवेश मार्गः, अट्टालिका = महासदनम्, अङ्गणम् अजिरम्, गाण्ठम् = गोशाला, वि नकर्मणा = देवशिल्पिना, सादिकरस्थानाम् = अश्ववार हस्तस्थितानाम् कशानाम् = अश्वताडनीनाम्, अग्रस्य = प्रान्तस्य, सञ्चलितस्य = गच्छतः, सप्तिसमूहस्य = वाजिनिवहस्य, शफसम्मर्दः = खुरकुट्टनैः, समुद्धूनाभिः = उच्छलिताभिः, धुलिभिः = रजाभिः, धूसरिताः = ईषच्छुभ्राः, कमला इव श्रिय इव, विशारदा = पाण्डता, अनसूया = अभिपत्नी. अनसूया = ईर्ष्यारहिता. यशोदा = नन्द पत्नी, यशोदा = यशोदायिन्यः, सत्या = सत्यभामा. सत्या = सत्यभाषिण्यः, रुक्मिणी = कृष्णपत्नी, रुक्मिण्यः = सुवर्णवत्यः, सुवर्णा इव = कनकवर्णा इव, सुवर्णा = शोभन वर्ण वत्यः, सती = शंकर पत्नी, सत्य. = पतिव्रता, सम्भाव्यमानस्य = अनुमीय मानस्य, धिक्कारे = तिरस्कारे, सन्दीपितासु = ज्वालितासु, ज्वालाजालाञ्चितानाम् = कीलसमूह व्याप्तासु, पतगताम् = शलभनाम्, अङ्गभूषणताम् = भस्मताम्, समधिकम् = अत्यन्तम्, अवाधित = पीडामन्वभूत्, प्रावृतन = प्रवृत्तः. स्तनन्धयाम् = पयः पानरताम्, विरहयाम्बभूव = परितत्याज, वरगतिम् = उत्तम लोकम् ।

(पृष्ठ संख्या २६० से २७२ तक)

यमलौ = सहजौ, काम्बोजीयदस्युवारेण = काम्बोजदेशीयतस्कर समूहेन. अपहृतमहार्हभूषणौ — लुण्ठितबहुमूल्यालंकरणौ, अनायिष्वहि =

नीतौ, शत्रुसंताना=रिपुवंशाः, समानपरिणाहौ=समविशालतौ, पान्थ-सार्थम्=पथिकसमूहम्, परिकरे=गात्रबन्धे, असिधेनुकाम्=छुरिकाम्, बाहुमूले=कक्षे, निस्त्रिंशम्=खड्गम्, आत्मोत्तोलनयोग्याम्=स्वोत्थापनार्हाम्, उपकारिकायाः=परभवनात्, परेतपतिना=यमेन, पालितायाः रक्षितायाः, आजानेयौ=कुलीनौ, इङ्गितवान्=चेष्टयाबोधितवान्, अपथा=कुमार्गेण, प्रान्तरम्=शून्यो मार्गः, यवसभारम्=घासभारम्, समभ्यर्च्य=अनुलिप्य, विरहिणाम्=वियोगिनाम्, पुण्डरीकाक्षपत्न्याः=विष्णुस्त्रियः, शारदम्=शरत्कालीनम्, सप्तसप्तिः=सूर्यः, तमीतिमिर-कर्तनाय=रात्र्यन्धकारनाशाय, शाणेन=कषेण, निस्त्रिंशे=खड्गे, प्रतीयमानासु=दृश्यमानासु, पल्वलम्=अल्पोदकम्, झरस्य=जल-प्रवाहस्य, महीरुहाणाम्=वृक्षाणाम्, उच्चावचानाम्=निम्नोन्नतानाम्, प्रचयेन=समूहेन, चन्द्रचन्द्रिकाचाकचक्यात्=चन्द्रज्योत्स्ना दीप्तेः, अना-हतध्वनिना=अव्यक्त शब्देन, विशकलय्य=विविच्य, कीचकध्वनिः=वेणुविशेष शब्दः, समश्रावि=श्रुतः, साक्षादकारि=प्रत्यक्षी कृतः, अङ्गीकुर्वता=स्वीकुर्वाणेन, समीरणेन=पवनेन, समीरितानाम्=संचालितानाम्, किसलयानाम्=पल्लवानाम्, अधरीकुर्वत्=निम्नांशे स्थापयत्, विगणयत्=अभिभवत्, कला=मधुरा, आरावाः=शब्दाः, समाकर्णयत्=श्रुताः, तारकितम्—उडुगणसमेतम्, पारावारे=समुद्रे न्यमाङ्क्षम्=निमग्नोऽभवम्, क्रन्दनैः=रोदनैः, क्रीडनकम्=खेलसाध-नम्, जनकाविशेषः=पितृतुल्यः, अस्खलम्=अपतम्, साकाराम=शरीरधारिणीम्, केशरिकिशोरस्य=केशरितनयस्य, प्राकाशि=स्फुरितम्, काष्ठपट्टिकायाम्=दारुफलके, घृतेन=सर्पिषा, उन्मथितम्=मेलितम्।

(पृष्ठ संख्या २७३ से ३०८ तक)

अंगुलिपर्वसु=हस्तांगुलिग्रन्थिषु, मास्मगमः=मा याहि, अरण्या-नीषु=महावनेषु, कुहरे=विवरे, धात्रीम्=उपमातरम् परिपूरिताम्=भरिताम्, कुतूहलपरवशे=कौतुकाधीने, विस्फारितनयने=विस्फारित

नेत्रे, उद्ग्रीवे = उत्थितकण्ठे, समनुकूलित कर्णे = अभिमुखीकृत श्रोत्रे, राजतराजिका इव = दीर्वर्णकृष्णिका इव, त्वरिता = द्रुतगामिनी, धुन्यः = नद्यः, संकुलानाम् = व्याप्तानाम्, मुस्तामूलोत्खनने = कुरुविन्द-मूलोत्पाटने, घोणिकानाम् = शूकरगणाम्, पङ्कपरीवर्तन = कीचोल्ललनेन, उन्मथिताः = विलोडिताः, कासाराः = सरांसि, बुभुक्षूणाम् = खादितु-मिच्छताम्, नासाग्रे = घोणाग्रे, विषाणस्य = शृंगस्य, शाणनच्छलेन = तेजन व्याजेन, खड्गिनाम् गण्डकानाम्, पेपीयमानया = पुनःपुनरास्वाद्य-मानया, दानधारया = मदपङ्क्त्या, धुरन्धराणाम् = अग्रेसराणाम्, सिन्धु-राणाम् = गजानाम्, कृपाकृपणैः = दयादरिद्रैः, कृपाणैः = असिभिः, छिन्नेभ्यः = कृत्तेभ्यः, अध्वनीनाम् = पथिकानाम्, गलत्पीनधारस्य = निपतत्स्थूल-प्रवाहस्य, बिन्दुवृन्देन = पृषत्समूहेन, आकलितः = आहितः, अखर्वः = विपुलः, बर्बराः = कर्कशाः, दुर्ग्रहाणाम् = दुष्टखेचराणाम्, विश्वसिव = विश्वासं कुर्व, सुधाविस्पर्धि = अमृततुल्यम्, समाश्वासयत् = धैर्यमापाद-यत्, सोपानम् = अधिरोहिणी, अशयिष्वहि = अस्वाप्स्व, आनन्दमय्या = आनन्दसंवलितया, रजनीम् = रात्रिम्, अजीगमाव = अयापयाव, शर्वरीतमांसि = रात्र्यन्धकाराः, जहति = त्यजति, अरुणिमानम् = लौहि-त्यम्, नीडस्य = कुलायस्य, अधिष्ठानानि = निवास भूमितां गतानि, कुटाः = वृक्षाः, व्यावर्तमानाः = भिन्नत्वेन प्रतीयमानाः, उत्तरोत्तरतः = अधिकाधिकम्, तारतार तरैः = अत्युच्चैः, रुतैः = आरावैः, रतातिम् = कामपीडाम्, ईरयन्ती = कथयन्ती, तरुणतित्तिरी = युवक तित्तिरिवधूः, कोकः = चक्रवाकः, वराकीम् = दुःखिनीम्, कम्पितः = दोलितः, उन्मी-लन्तीनाम् = विकाशमभ्यागच्छन्तीनाम्, मालतीनाम् = जातीनाम्, मुकुलानाम् = कलिकानाम्, मकरन्दस्य = पुष्परसस्य, चोरस्य = अपहर्तुः, पिञ्जरितस्य = पीतवर्णस्य, फरफरायमाणानाम् = पक्षास्फोटनंकुर्वताम्, पतत्रैः = पक्षैः, उन्मथ्यमानस्य = विलोड्यमानस्य, तुषाराणाम् = अव-श्यायानाम्, कणिकानाम् = बिन्दूनाम्, वालखिल्यानाम् = तदाख्य ऋषि विशेषाणाम्, वसनैः = वस्त्रैः, विधूतायामिव = उत्कम्पितायाः

मिव. मोमुद्यमानानाम् = परमंहर्षमधिगच्छताम्, नरीनत्यमानानाम् =अतिशयेन नृत्यताम्; संवलितायाम् =प्रावृतायाम्, पोस्फुटयमानानाम् =अत्यन्त विकास मधिगच्छताम्, कोकनदानाम् =रक्तकमलानाम्; भावित: = सम्पादित:, आविर्भाव: = प्रकटीभवनम्, उच्छलता = उद्गच्छता, उच्छालितेन = उत्फालितेन. तातप्यमानस्य= तप्तस्य, चोरायाम् = अपहारिकायाम्, वेशन्तात=अल्पसरस:, वरटाभि: = हंसीभि:, मल्लिकाक्षाणाम् = मलिन चञ्चुचरण हंसानाम्, प्रफुल्लानि = विकसितानि, अंगरुहाणि = लोमानि, भ्रमताम् = सञ्चरताम्, विद्राविता = उत्सारिता, तुन्दिलानां = पिचण्डिलानाम् कलिता: = धारिता:, ललिता: = शोभना:, दर्भाङ्गुलीयकै: = कुशनिर्मिताङ्गुलि धारणीयै:, अलंकृता:=भूषिता: मुद्रितम्=अङ्कितम् समासक्व= आरूढौ, व्यूढम् =पृथुलम्, वाहान्=घोटकान्, विचिकित्सया= संशयेन, निद्रालुभि: =निद्रामिच्छुभि: विलेपनम् =कस्तूरिकादि सुगन्धित द्रव्य चर्चनम्, संवाहनम् = चरणमर्दनम् अयासिष्व= अगच्छाव, चिञ्चावृक्षस्य= तिन्तिड़ीवृक्षस्य, स्कन्धे=प्रकाण्डे, अवेगाहिष्वहि=प्रविष्टौ ।

(पृष्ठ संख्या ३०९ से ३१३ तक)

द्विगुणयन्तम्=वर्धयन्तम्, लालङ्घ्याम्=सञ्चरन्त्याम्, कवचशिञ्जितेन=वारवाण शब्देन, शावक-निकर-कूजितम् = शिशुसमूह रणितम्; निविवृत्सन्तम्=निवर्तयितुमिच्छन्तम्, साश्लेषम् = सालिङ्गनम्, आसिषत्=स्थिता:, आविलस्य: कलुषस्य ।

(इति प्रथमे विरामे तृतीयो निश्वास:)

चतुर्थो निश्वासः

(पृष्ठ संख्या ३३४ से ३३६ तक)

स्नातानामिव = कृतस्नानानामिव, तदवलम्बिनाम् = तदाश्रितानाम्, कलविङ्काः = चटकाः, प्रतिनिवर्तन्ते = पलायन्ते, कलयन्ति = धारयन्ति, मेघ-माला = वारिदपंक्तिः, पर्वत श्रेणीव = भूधर पंक्तिरिव, प्रकटितम् = प्रदर्शितम्, शिखरि शिखराणाम् = पर्वत शृंगाणाम्, शुण्डेन = करेण, पारस्परिकसंश्लेषेण = इतरेतर मिलनेन, सुघटित दृढतर शरीरः = सुसंहित पुष्टाङ्गः, कमनीय कपोलपालिः = कमनीय गण्डस्थलः, सूक्ष्म-मौक्तिकपटलेनेव = मुक्तानिचयेनेव, स्वेदबिन्दुव्रजेन = घर्मजलकणसमूहेन, समाच्छादितम् = व्याप्तम्, वदनाम्भोजेन = मुखकमलेन, राजतसूत्रस्य = रौप्यतन्तोः, व्यूढम् = अंगीकृतम्, गूढचरताकार्यम् = गुप्तचरताकृत्यम्, प्रपातः = जलोत्पन्नस्थानम्, चिक्कणपाषाणखण्डेषु = स्निग्धाश्मशकलेषु, आघ्नन्ति = ताडयन्ति, सादी = अश्वारोहः, सत्वानाम् = प्राणिनाम्, परिवर्तते = परावर्तते, सैन्धवस्य = अश्वस्य, आस्फोटयन् = आस्फालयन्, चामीकरस्य = सुवर्णस्य, चञ्चलाभिः = विद्युद्भिः, अवलोचकान् = दर्शकान्, कर्तयन्ती = विदारयन्ती, सौवर्णकषेणेव = हैरण्यशाणेनेव, बलाहकान् = मेघान्, अभिहतः = ताडितः, उच्छलन् = उत्पतन्, समपीपतत् = पातयामास, विस्फार्य = विकास्य, पलाशिनम् = वृक्षम्, उद्धूनयन् = कम्पयन्, प्रस्यन्दजलेन = स्वेदम्भसा, सगतिस्तम्भम् = सचलनावरोधम्, समीहाम् = इच्छाम्, समसूचयन् = प्रकटितवान्, पूगस्थूलैः = क्रमुकफल-महत्तरैः, मघवा = इन्द्रः, मारुतिना = हनूमता, परिजहत् = परित्यजन्, आलोक्यत = दृष्टः, प्रशशाम = शान्ताऽभवत्, लोचनरोचिका = नेत्रा

नन्ददायिनी, नूतनया = नवीनया हारित्यम् = हरिद्वर्णता, परीतान् = व्याप्तान्, मिश्रितम् = सम्पृक्तम्, वार्षेण = वर्षभवेन, वारिव्रजेन = जलनिचयेन, सन्दोहः = समूहः, साधुवादेन = प्रशंसनेन, पादचारैः = चरण भ्रमणैः, परिमर्दितायाम् = अतिक्षुण्णायाम्, पटलस्य = समूहस्य, कलकलेन = कोलाहलेन, वितताः = विस्तृता काण्डाः = शाखाः, प्रकाण्डाः = स्कन्धाः, पनसवृक्षस्य = कण्टकितरोः, नायास्यः = नागमिष्यः, अवत्स्यः = निवासमकरिष्यः, न त्यक्तः = न दूरीकृतः, गुप्तविषयाणाम् = रहो विचार्याणाम्, सन्धानेषु = अनुसन्धानेषु, मञ्चे = पर्यङ्के, अलिपटल विनिन्दकान् = भ्रमर समूहाभिभावकान् ।

(पृष्ठ संख्या ३३७ से ३५२ तक)

केशाङ्कुरेषु = श्मश्रुप्ररोहेषु, अतिमसृणकमलस्य = सुचिक्कण कमलस्य, विनताम् = नम्राम्, दाक्षिण्येन = औदार्येण, भद्रतया = शान्ततया, अनीक्षणीयम् = अनवलोकनीयम्, उपबर्हलग्न पृष्ठः = उपधान संपृक्तपृष्ठांशः, निम्लोचति = अस्ताचलंगच्छति, कर्णेजपस्य = सूचकस्य = परीक्षेय = परीक्षांकुर्याम्, तन्द्रया = आलस्येन, साम्मुखीने = सम्मुखस्थे, अतिवाहय = यापय, उदञ्चति = उदयंप्राप्नुवति, मरीचिमालिनि = सूर्ये, यातास्मि = गन्तास्मि, अपरदासेरकेण = इतरभृत्येन, व्यादिष्टमार्गः = प्रदर्शिताध्वः, प्रकटितः = प्रादुर्भावितः, सन्तर्पणः = तृप्तिजनकः, निकरेण = समूहेन, विरोचिताम् = विशेषतः शोभिताम्, आगन्तुकानाम् = अतिथीनाम्, कलितानि = सम्पादितानि, यथोचितम् = यथायोग्यम्, प्रकोष्ठानाम् = कक्षाणाम्, गवाक्षान् = वातायनानि, उन्मुद्र्य = उद्घाट्य, नागदन्तिकासु = कीलिकासु, अवलम्बयित्वा = लम्बयित्वा, उत्तोल्य = उद्धृत्य, वातानाम् = वायूनाम्, पादाहतिभिः = चरणताडनैः, पिच्छिलाभिः = पङ्किलाभिः, पाषाणपट्टिकाभिः = प्रस्तर खण्डैः, अतिवाहमाम्बभूव = गमयाञ्चकार, पयः फेनानाम् = दुग्धडिण्डीराणाम्, आसारस्य = धारासम्पातस्य, विजित्वरया = जयनशीलया, द्विगुणितो-

त्साहेन=प्रवर्धितहर्षेण, परिमार्जिते=शोधिते, लज्जापरवशा=अपाचीना, कपोतपोतकानाम् = पारावतशावकानाम्, अतिमुक्तलताः=माधवीलताः, विष्णुपदं=नभः, पाटलिपटलानि=मोघासमूहानि, चटुलयन्ति=चञ्चलयन्ति, मरन्द बिन्दु सन्दोहैः=मकरन्दपृषद्गणैः, वसुमतीम्=पृथ्वीम्, वासयन्ति = सुगन्धयन्ति, परमरमणीया=अत्यन्त हृद्या, सोपानेन=आरोहणत्रयेण, अलंकृता=विभूषिता।

(पृष्ठ संख्या ३५३ से ३८७ तक)

विजित्वराणाम्= जयन शीलानाम्, हंसपक्षाणाम्=कादम्ब पत्राणाम्, धवलानाम्=स्वच्छानाम् रोलम्बकदम्बानि=भ्रमर समूहान्, बन्धुजीवकम्=रक्तकम्, कौशेय वस्त्रम्=पट्टवस्त्रम्, रक्ताम्बरस्य=रक्तवस्त्रस्य, नक्षत्रमालाम्=सप्तविंशतिमुक्तामयीम्, सिन्दूरचर्चारहितेन=कुङ्कुमसम्पर्क शून्येन, धम्मिल्लेन=संयतकेशसमूहेन, पाणिपीडनम्=विवाहः, परिशिष्टम्=अवशिष्टम्, सांसारिकं सुखम् = विषयानन्दम्, रसायनानि=आनन्ददायिन्य, कर्णातिथीकृताः श्रोत्रगोचरीकृता, त्रुटयमानम्=विच्छिन्नप्रायम्, आम्रेडयमानम् = पुनः पुनः उच्चार्यमाणम्, दर्शितः=प्रकटीकृतः, आभोगः=रागविस्तारः, गानस्य=गीतेः, अनुकल्पम्=तुल्यम्, फणिफणाफूत्कारेषु=सर्पस्फटाक्षेपु, सक्रोधस्य=कुपितस्य, हर्यक्षस्य=केशरिणः, जृम्भारम्भेषु= मुखव्यादनोपक्रमणेषु, भल्ल तल्लजानाम्=प्रशस्त भल्लानाम्, पारम्पर्यिनः=प्रतिद्वन्द्विनः खराः=कठोराः, नखराः=नखाः, घनानाम्= सान्द्राणाम्, घर्षणेन=घट्टनेन, विघट्टितेषु=विदलितेषु, गैरिकव्रातेषु=गैरिकमिलितप्रस्तरखण्डेषु, तोयानां=वरीणां, आवर्तशतैः= असंख्यलहरिकाभिः, आकुलानां=क्षुभितानां, तरंगिणीनां= नदीनाम्, तीव्रतरेषु=अतितीव्रेषु, वेगेषु=ओघेषु, गण्डक मण्डलस्य= खड्गि समूहस्य, घोणानाम्=नासानाम्, घोरः=भयावहः, घर्घरारावः=घर्घररवः, प्रान्तराः=दूरशून्याध्वानः, न परत्याक्षीत्=न त्यक्तवान्, न व्यस्मार्षीत्=न विस्मृतवान्, न व्यग-

व्यार्षीत्=न त्यक्कारमकरोत्, विमनायते=वैक्तव्यमधिगच्छति. ग्रन्द-न्ति=उद्गतानि भवन्ति. क्षुभ्यति=क्षोभ मनुभवति, मृगयु:=व्याध:, गूढाभिसन्धिषु=गुप्तकार्येषु, अलम्=सम्यकनिर्वाहायोग्यम्, अवलेहनम् रसनयाऽऽस्वादनम्, जागरूक: = अनिद्रित:, मीधुन: = ऐक्षवमद्यस्य, तृषाभि:=तृष्णाभि:, कोमलाङ्गालिलिङ्क्षिषाभि: = मृदुतन्वाश्लेषवाञ्छाभि:, मधुरालापशुश्रूषाभि:=हृद्यशब्दश्रवण मनोरथै:, प्रमृज्य=प्रोञ्छ्य, कौमारात्परं वय:=यौवनम्, चुचुम्बिषन्तीम्= चुम्बितुमिच्छन्तीम्, कुसुमकुड्मलघूर्णनव्याजेन= कुसुमकलिका परिचालन कपटेन, घूर्णयन्तीम्=परिचालयन्तीम्, सौन्दर्य सारस्य=सुन्दरतातत्वस्य, सुधाधवलम्=चूर्णकसितम्, चकितेन=विस्मयेन, सगतिस्तम्भम्=सगमनावरोधम्, परिवृत्तग्रीवम् = परिवर्तितकन्धरम्, वशीकारप्रयोगप्रचार:=स्वायत्तीकरणविधान प्रसार:, गवाक्षजालप्रसारितै:= वातायन रन्ध्रविकीर्णै:, राजतमार्जनीनिभै:=रौप्यमयी बहुकरी तुल्यै:, कलानिधि कर निकरै:=चन्द्रकिरण समूहै:, सशोधिते=दूरीकृते, पय:पयोधिफेनै:=क्षीरसागर फेनै:, आस्तृते=विस्तर्णे, जालान्तरेण=वातायन रन्ध्रेण, विद्रुतासि=पलायितासि, होराम्=घटिकाम्, निर्दिष्टमार्ग =प्रदर्शित पथ:, प्रकाण्ड कोष्ठे=विशाल कक्षे, आरकूट दीपिकायाम्=धातु विशेष दीपिकायाम्, शरावे=विस्तृत पात्रे, नागवल्लीदलानि=ताम्बूलवल्ली पत्राणि, पूगानि=क्रमुकाणि, शङ्कुला=पूग कर्त्री, देव कुसुमानि=लवङ्गानि, जातिपत्राणि= मालतीपत्राणि, महोपबर्हम्=महदुपधानम्, तालीपत्रपुस्तकम्=ताड़पत्रपुस्तकाम्, निद्रामन्थर:=निद्रयालस:, अर्धविशिथिल शब्दै:=स्वल्पत्रस्तै: पदै:, अभ्यधात् = अकथयत्, सम्पुटीकृत्य=हस्तौ संयोज्य, हस्तितवता=स्वायत्तीकृतवता. पार्श्वस्थपृथ्वीपतय: =निकटस्थभूमिपाला:, समुद्धूतध्वजा:=समुड्डीनपताका: परिपन्थिन:= शत्रव:, संशेते = संशय मापद्यते, दैवज्ञ:=ज्योतिषिक:, आकार्य= आहूय. यूथिमालिकानाम्=माधवी स्रजानाम्, प्रसादमोदकम्=भगवदर्पित

मिष्ठान्नम्, व्येति = अतियाति, शेष्व = स्वपिहि, उदीर्य = उक्त्वा, निक्षेप्तुं = निधातुम्, इङ्गितवान् = चेष्टया बोधितवान्, मोदक भाजनेन = मिष्ठान्नपात्रेण, सभाजितम् = युक्तम्, संवृण्वन् = समाच्छादयन्, उदतूतुलत् = उत्थापयामास, अञ्चलकोणम् = वस्त्रदशाम्, कटिकच्छ-प्रान्ते = कटिकच्छभागे, आयोज्य = निवेश्य, विस्तार्य = प्रसार्य, ईषत् = अल्पम्, अनुजा = अवरजा, भावनाभिः = विचारैः, उषसि = प्रातः, निर्वर्त्य = सामाप्य, उपतिष्ठासने = उपस्थातुमिच्छति, दौर्गिकदूतेन = दुर्गाध्यक्ष सेवकेन, वाचनिक सन्देशम् = वाचिक सन्देशम्, अंगलिपर्वसु = आङ्गुलिग्रन्थिषु, मनाथिताम् = अधिष्ठिताम्, अध्युषितचरम् = पूर्वमुपनिष्टम्, पाषाणमञ्चम् = प्रस्तर वेदिकाम्, एकयष्टिका = एकावली, निक्षेप = निधये, कुसुमपतङ्गान् = पुष्पभ्रमरिका, निरुद्धगतिः = अवरुद्धगमनः, शङ्कातङ्कम् = सन्देह भयञ्च, पर्यर्पयितुम् = प्रतिदातुम्, अनुमन्यसे = स्वीकरोषि कुलाङ्गनाभिः = सद्वंश्यस्त्रीभि, अंगीकृतेन = स्वीकृतेन, वाचंयमता = तूष्णीम्भवनम्, अंगीकारप्रणालीम् = स्वीकार प्रकारम्, स्फुटतमस्य = नितान्त प्रकटस्य, यौवनस्य = तारुण्यस्य, लक्ष्मभिः = चिन्हैः, न अस्प्रक्षात् = न स्पृष्टवान् ।

(इति प्रथमे विरामे चतुर्थो निश्वासः)